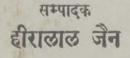
the is

77 0





पुस्तक २

खंड १

a min

भाग १

जीवस्थान - सत्प्ररूपणा २

षट्खंडागमः

धवला-टीका-समन्वितः

श्री

श्री भगवत्-पुष्पदन्त-भूतवलि-प्रणीतः



# श्रीवीरसेनाचार्य-विरचित-धवला-टीका-समन्वितः।

तस्य

# प्रथम-खंडे जीवस्थाने

हिन्दीभाषानुवाद-संदृष्टि-प्रस्तावनानेकपरिशिष्टैः सम्पादिता

# सत्प्ररूपणा २

सम्पाद्कः

अमरावतीस्थ-किंग-एडवर्ड-काळेज-संस्कृताध्यापकः एम्. ए., एट् एट्. बी., इत्युपाधिधारी हीरालालो जैनः

सहसम्पादको

पं. फूलचन्द्रः सिद्धान्तशास्त्री

संशोधने सहायकौ

च्या. या., सा. सू., पं. देवकीनन्दनः \* डा. नेमिनाथ-तनय-आदिनाथः सिद्धान्तशास्त्री उपाध्यायः; एम्. ए., डी. लिट्.

> <sub>प्रकाशकः</sub> श्रीमन्त सेठ ज्ञितावराय लक्ष्मीचन्द्र

> > जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालयः

अमरावती ( बरार )

वीर-निर्वाण-संवत् २४६६ [ ई. स. १९४०

\* पं. हीरालालः सिद्धान्तज्ञास्त्री, न्यायतीर्थः

वि. सं. १९९७ ]

## मूल्यं रूष्यक-दशकम्

Jain Education International

प्रकाशकः

# श्रीमन्त सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द्र,

जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालय

अमरावती ( बरार )



मुद्रक--टी. एम्. पार्टील, मॅनेजर सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस, अमरावती ( बरार )

•

۰.

# <sup>тне</sup> ŞAŢKHAŅ**Ņ**ĀGAMA

#### OF

# PUȘPADANTA AND BHŪTABALI

WITH

THE COMMENTARY DHAVALA OF VIRASENA

# SATPRARUPANA

Edited

with introduction, translation, notes, and indexes

BY

HIRALAL JAIN, M. A., U.L. B.

C. P. Educational Service, King Edward College, Amraoti.

ASSISTED BY

20

Pandit Phoolchandra Siddhānta Shāstri – Pandit **Hira1a1** Siddhānta Shastri, Nyāyatirtha.

With the cooperation of

Pandit Devakinandana Siddhānta Shastri

Χ.

Dr. A. N. Upadhye, M. A., D. Litt.

Published by

Shrimanta Seth Shitabrai Laxmichandra,

Jaina Sāhitya Uddhāraka Fund Karyālaya.

AMRAOTI (Berar).

### 1940

Price rupees ten only.

Published by--Shrimant Seth Shitabrai Laxmichandra, Jaina Sāhitya Uddhiataka Fund Karyūlaya, AMRAOTI (Berar).

.

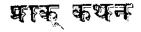


Printed by-T. M. Patil, Manager, Saraswati Printing Press, AMRAOTI (Becar):

# विषय सूची

-----

विषय	पृष्ठ नं.	विषय	વૃષ્ઠ નં.	
<b>प्राक् कथन</b>	१–३	५ वारहचें श्रुतांग दृष्टिवादका		
्रत्रस्तावना		परिचय	४१-६८	
ग्रंथकी प्रस्तावना (अंग्रेजीमें)	I-VI	१ परिकर्म	કર	
१ ताड्पत्रीय प्रतिके लेखनकालका		२ सूत्र	ક્ર	
निर्णय	१-१४	३ पूर्वगत	84	
१ सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति	ę	४ प्रथमानुयोग	10/6	
२ धवळाके अन्तकी प्रशस्ति	ې	५ चूळिका	49	
२ सत्प्ररूपणा विभाग	<i>হ</i> ও 	महाकम्मपयडिपाहुड	દ્વ	
३ वर्गणाखंड विचार	१५-३३	कसायपाहुड	१७	
१ वेयणकसिण पाहुड और वेदनाखंड	१६	६ ग्रंथका विषय	34	
प्रतालड २ वर्गणा नामपर खंडसंझा	२.५ २.५	७ रचना और भाषाशैली	०१	
३ वेदनाखंडके आदिका		विषय-सूची		
मंगलाचरण	१९	१ सत्प्ररूपणा-आठापसूची	હર	
४ वेदनाखंड समाप्तिकी पुष्पिका	રશ્	२ आलापगत विशेष-विषयस्ची ८२		
५ इन्द्रनन्दिकी प्रामाणिकता	રર			
६ मूडविद्वीसे प्रतिस्तिपि		হ্যট্রি্বর	<u> </u>	
करनेवालेकी प्रामाणिकता	રર	सत्प्ररूपणा २		
७ वेदनाखंडके आदि अवतर-		📔 मूल, अनुवाद और संदर्षियां	કર્ટ-૮५५	
णोंका ठीक अर्थ १ वेदना और वर्गणाखंडोंकी	સ્પ્	परिशिष्ट		
र् वदना आर पगणासडाफा सीमाओंका निर्णय	૨૦	१ पारिभाषिक शब्दसूची	۶	
२ बर्भणा निर्णय	રશ	२ अवतरण गाथासूची	Ę	
४ णमोकार मंत्रके आदिकर्ता	રૂર-૪१	३ प्रतियोंके पाठमेद	2	
१ धवलाकारका मत	રર	४ प्रतियोंमें छूटे हुए पाठ	१३	
२ इवेताम्बर मान्यता विचार	<u> R</u> K	५ विशेष टिप्पण	£ ta	
		<u></u>		



श्रीधवलसिद्धान्त प्रथम विभागके प्रकाशित होनेसे हमें जें। आशा था, उसकी सोलहों आने पूर्ति हुई । हमें यह प्रकट करते हुए अत्यन्त हर्ष और संतोष है कि मूडबिद्री मठको मेंट की हुई शाखाकार और पुस्तकाकार प्रतियोंके वहां पहुंचनेपर उन्हें विमानमें विराजमान करके जुद्धस निकाला गया, श्रुतपूजन किया गया और सभा की गई, जिसमें वहांके प्रमुख सज्जनों और विद्वानोंद्वारा हमारी संशोधन, सम्पादन और प्रकाशन व्यवस्थाकी बहुत प्रशंसा की गई और यह मत प्रगट किया गया कि आगे इस सम्पादन कार्यमें वहांकी मूल प्रतिसे मिलानकी सुविधा दी जाना चाहिये, नहीं तो ज्ञानावरणीय कर्मका बंध होगा। यह सभा मूडबिद्री मठके भट्टारकजी श्री चारकीर्ति पंडिताचार्यवर्यके ही समापतित्वमें हुई थी।

उक्त समारंभके पश्चात् स्वयं भट्टारकजीने अपना अभिप्राय हमें सूचित किया और प्रति मिळानकी व्यवस्थादिके लिये हमें वहां आनेके लिये आमंत्रित किया। इसी बीच गोम्मटस्वामीके महामस्तकाभिषकका सुअवसर आ उपस्थित हुआ। यद्यपि छुट्टियां न होनेके कारण हम उक्त महोत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये नहीं जा सके, किंतु हमोरे कार्यमें अमिरुचि रखने और सहायता पहुंचानेवाले अनेक श्रीमान् और धीमान् वहां पहुंचे और उनमेंसे कुछने म्डविद्री जाकर प्रंथराज महाधवलकी भी प्रतिलिपि कराकर प्रकाशित करानेके लिये भट्टारकजी व पंचोंकी अनुमति प्राप्त कर ली। समयोचित उदारता और सद्धावनाके लिये मुडविद्री मठका अधिकारी वर्ग अभिनन्दनीय है और उस दिशामें प्रयत्न करनेवाले सज्जन भी धन्यवादके पात्र हैं। अब हम उस सम्बंधमें पत्र-व्यवहार कर रहे हैं, और यदि सब सुविधाएं मिल सकीं, जिनके लिये हम प्रयत्नशील हैं, तो हम शोन्न ही मूडविद्रीकी समस्त ववलादि श्रुतोंकी प्रतियोंकी ( फोटोस्टाट मशीन या माइक्रो फिल्मिंग मशीन द्वारा) प्रतिलिपियां कराकर प्रंथराजका चिरस्थायी उद्वार करनेमें सफ्लीभूत हो सकेंगे। इस महान् कार्यके लिये समस्त धर्मिष्ठ और साहित्यप्रेमी सज्जनोंकी सहानुभूति हो सकेंगे। इस महान् कार्यके लिये समस्त धर्मिष्ठ और साहित्यप्रेमी सज्जनोंकी सहानुभूति और क्रियात्मक सहायताकी आवझ्यकता है, जिसके लिये हम समाजभर का आह्वान करते है

प्रथम विभागका प्रकाशनोत्सन ४ नवम्बर सन् १९३९ को किया गया था। तबसे आज ठीक आठ मास हुए हैं। इतने अल्पकाल्टमें द्वितीय विभागका संशोधन सम्पादन होकर मुद्रण भी पूरा हो रहा है, यद्यपि कार्यमें कठिनाइयां अनेक उपस्थित होती रहती हैं। इस सफलतामें समाजकी सद्भावना और दैवी प्रेरणा बहुत कुल कार्यकाश दिखाई देती है। यदि समय अनुकूल रहा तो आगे प्रायः दर्षमें दो भागोंका प्रकाशन करानेका प्रयत्न किया जायगा।

इस विभागके सम्पादनमें भी पूर्वोक्त सहयोग पूर्ववत् ही चलता रहा है, अर्थात्

पं. फूलचंद्रजी शास्त्री और पं. हीरालालजी शास्त्री स्थायी रूपसे सम्पादन कार्यमें हमारे साथ संलग्न रहे, तथा पं. देवकीनन्दनजी शास्त्री और डा. आदिनाथजी उपाध्यायसे होने संशोधनमें यथावसर बछित साहाय्य मिलता रहा ) धवलाकी जो प्रशस्तियां इस विभागके साथ प्रकाशित हो रही हैं, उनका सहारनपुरकी प्रतिसे अक्षरशः मिलान बीरसेवामंदिरके अधिष्ठाता पें. जुगलकिशोरजी ने करके भेजनेकी कृपा की । उन्हीं प्रशस्तियोंके कनाडी पाठोंके संशोधनका अत्यन्त कठिन कार्थ डा. उपाध्येके सहयोगी, राजाराम काळेज, कोल्हापुरमें कनाडीके प्रोफेसर श्रीयुत कुन्दनगारजी द्वारा किया गया है। वीरसेवामंदिरके पं. परमानन्दजी शास्त्रीने प्रस्तुत विभागमें आई हुई अवतरण-गाथाओंके प्राकृत पंचसंप्रहमें होने न होने की हमें सूचना दी । बीनाके पं. वंशीधरजी व्याकरणा-चार्यने ए. ४४१-४४३ पर आये हुए व्याकरण संबंधी कठिन प्रकरणपर अपनी सम्मति विस्तारसे हमें लिख भेजनेकी छुपा की। पं. महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्यने इस भागके प्रथम फार्मका प्रुफ देखकर मुद्रण-संबंधी अनेक सूचनाएं देनेकी कृपा की । इस सब सहायताके लिये हम इन विद्वानोंके बहुत ही अनुगृहीत हैं । और भी अनेक विद्वानोंने अपनी बहुमूल्य सम्मतियां हमें या तो व्यक्तिगत पत्र द्वारा या समालोचनाके रूपमें पत्रोंने प्रकाशित कराकर देनेकी कृपा की । उन सबसे भी हमने लाम उठानेका प्रयत्न किया है। अतएव वे सब हमारे धन्यवादके पात्र हैं। उन सम्मतियों आदि परसे जो संशोधन या सूचनाएं प्रथम खंडके विषयमें हमें आवश्यक प्रतीत हुईं, उनका भी समावेश इस त्रिमागके शुद्धिपत्रमें किया जाता है। पाठक उससे प्रथम खंडमें उचित संघार कर छे।

हमारे अनेक प्रेमी पाठकोंने कुछ सूचनाएं ऐसी भी मेर्जा थीं जिनका, खेद है, हम पालन करनेमें असमर्थ रहे । इनमें एक सूचना तो प्राइत अंशोंका या उनके कठिन स्थर्छोंका संस्कृत रूपान्तर देते जानेके सम्बंधमें थी । इसको स्वीकार न कर सकने का कारण हम प्रथम जिल्दके प्राक्कथनमें ही दे चुके है और हमारां वह मत अब भी कायम है । दूसरी सूचना हमारे वयोवृद्ध पाठकोंकी ओर से यह थी कि भाषान्तरका टाइप छोटा पड़ता है, उसे और भी बड़ा कर दिया जाय तो उन्हें पढनेमें सुविधा होगी । हम बहुत चाहते थे कि अपने वृद्ध पाठकोंकी इस मूर्तिमान् कठिनाई को दूर करें । किन्तु पाठक देखेंगे कि मुलके टाइपसे अनुवादका टाइप बहुत कुछ छोटा होते हुए भी उसमें मूल्टेसे कहीं अधिक स्थान लगता है । अब हम यदि उसे और भी बड़े टाइएमें लें तो हमारी निश्चित की हुई खंड-ज्यवस्था और व्हाल्यूममें बड़ी गड़वड़ी उपन होती है । अतएव विवश होकर हमें अपनी पूर्व पद्धति ही कायम रखना पड़ी । आशा है हमारे वृद्ध पाठक प्रकाशन संबंधी इस कठिनाईको समझकर हमें कमा करेंगे ।

For Private & Personal Use Only

i

Jain Education International

इस विभागके संशोधनमें भी हमें अमरावती जैनमन्दिरकी प्रतिके अतिरिक्त आराके सिद्धान्त भवन तथा कारंजाके महावीरब्रह्मचर्याश्रमकी प्रतियोंका लाम मिलता रहा तथा सहारन-पुरकी प्रतिके जो कुछ पाठमेद पहलेसे नोट थे उनसे लाम उठाया गया है। अतएब इन सब प्रतियोंके अधिकारियोंके हम अनुगृहीत हैं।

श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी और जैन साहित्योद्धारक फंडकी ट्रस्ट कमेटीके अन्य सब सदस्योंका इस कार्यको प्रगतिशील बनाये रखनेमें पूरा उत्साह है, और इस कारण हमें व्यवस्थामें किसी विशेष कठिनाईका अनुमव नहीं हुआ, बल्कि आगे सफलताकी पूरी आशा है ।

यूरोपीय महासमरके कारण इस खंडके छिये यथेष्ट कागज आदिका प्रबंध करनेमें बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई, जिसको हल करनेमें हमारे निरन्तर सहायक पंडित नाथूरामजी प्रेमीका हमपर वहुत उपकार है ।

सत्साहित्यकी कदर करनेवाले मर्मज्ञ पाठकोंने प्रथम जिल्दका जो खागत किया है और उसके लिये हमारी ओर जो प्रशंसांक माव व्यक्त किये हैं, उसके लिये हम उनकी गुणप्राहकताके कृतज्ञ हैं। पर हम यह फिर भी व्यक्त कर देते हैं कि इस महान् कठिन कार्यमें यदि हमें सचमुच कुछ सफलता मिल रही है तो उसका श्रेय हमें नहीं, किन्तु समाजकी उसी सद्भावना और समयकी प्रेरणाको है जो उचित काल्यें उचित कार्य किसी न किसीसे करा लेती है। इस सम्बंधेमें हमारी तो, महाकवि काल्दियसके शब्दोंमें, यही धारणा है कि —

> सिध्यन्ति कर्मसु महत्स्त्रपि यक्तियोज्धाः सम्भावनागुणमवेहि तमीश्वराणाम् । किं वाऽभविष्यदृष्णस्तमसां विभेत्ता तं चेत्सहस्रकिरणो धुरि नाकरिष्यत् ॥

किंग एडवर्ड कालेज, अमरावती १५१७४०

हीरालाल जैन



# INTRODUCTION

#### 1. Age of the palm-leaf manuscript of Dhavala at Mudbidri.

In the introduction to Vol. 1 we had conjectured that the palm-leaf manuscript of Dhavalā deposited at Mudbidri was at least five or six hundred years old. We are now in a position to throw some more light on the subject of the manuscript tradition. At the end of Satprarupana after the colophon we find some text which, when reconstructed, yields three verses in Kenarese in praise of Padmanandi, Kulabhushana and Kulacandra respectively. The relation between these three notabilities has not been mentioned here, but there is no doubt that they are identical with the teachers of the same names mentioned in the Sravaya Belgola inscription No. 40 (64) as succes. sively related to each other in a spiritual geneological order. There is similarity in the adjectives used for them at both the places. The inscription also tells us that the teachers belonged to the brilliant line of Desigaus, a branch of the Nandigaua of Mulasamgha which had owned, amongst others, Kundakunda, Umāsvāti, Samantabhadra, Pujyapāda and Akalamka. One of the pupils of Padmanandi was Prabhācandra who is said to have been the author of a celebrated work on Logic. He, thus, appears to be identical with the author of Prameyakamala-martanda and Nyaya-kumuda-can-This inscription is not dated, but the line extends up to the third generation drodaya. beyond Kulacandra, and there we find Devakirti Muni who, according to inscription No. 39 (63), attained heaven in 1163 A. D. The immediate successor of Kulacandra Muni was Mäghanandi whose lay disciple Nimbadeva Sāmanta has also found mention in the Sukrabara Basti inscription of Kolhapur as a feudatory of the Silāhāra king Gandarädityadeva for whom there are mentions from 1108 to 1136 A. D. Taking all these factors into consideration we may safely conclude that the persons mentioned in the Satprarupana Prasasti flourished probably during the eleventh century A. D. The Kanarese verses being obviously the interpolations of the scribe who may have been the pupil of the last teacher, we might infer that a copy of the Dhavala was made about this period.

The Prašasti found at the end of the Dhavala Ms throws still more light on the subject. The text of this long Prasasti is partly in Kanarese and partly in Sanskrit, and the Kanarese portion is very corrupt. But the fact that emerges from it prominently is that the Ms. of Dhavala was presented to the famous teacher Subhacandra Siddhäntadeva of the Banniyakere temple on the occasion of the completion of her Srutapancami vow by Demiyakka who was the aunt of Bhujabalaganga Permadideva of Mandali Nadu. Subhacandradeva is said to have belonged to the Desigana. His line begins from Kundakunda, and the other names of teachers mentioned are Griddhapiccha, Balākapiccha, Gunanandi, Devendra, Vasunandi, Ravicandra, Dāmanandi, Viranandi, Sridharadeva, Maladhārideva, Candrakirti, Divākaranandi and, lastly, Subhacandradeva. On scrutinizing these facts in the light of epigraphic references that are available to us, we find that the Subhacandradeva to whom the Ms. of Dhavala was given is identical with that Subhacandradeva whose death is commemorated in Sravana Belgola inscription No. 45 (117) of 1123 A. D., because the spiritual geneology of Subhacandra as given at the two places agrees entirely. We even find three verses that are common between our Prašasti and the inscription, the numbers of these verses in the inscription being 12, 13 and 21. The Banniyakere temple with which Subhacandradeva, the recepient of the Ms, has been associated, was built, according to Shimoga inscription No. 97 (Ep. Carna. Vol. VII) in 1113 A. D. In this inscription Bhujabalaganga Permadideva, also mentioned in our Prašasti, makes a grant to the temple, and at the close of the record Subhacandradeva of Desigana is praised. Thus, the temple of Banniyakere with which Subhacandradeva was associated was built in 1113 A. D., while he died in 1123 A. D. The Ms. of Dhavala was, therefore, presented to Subhacandradeva by Demiyakka between 1113 and 1123 A. D.

We also get some light about the donor of the Ms. from epigraphic records. Sravana Belgola Inscription No. 49(129) is in commemoration of a lady variously named as Demati, Demavati Devamati and Demiyakka, who is said to have been a pupil of Subhacandradeva of Desigana and to have died by the Jaina form of renunciation on the 11th day of the dark fortnight in Saka 1042 (A. D. 1120). In the inscription the lady is highly eulogised for her four forms of charity which included gifts of shastras or holy books. These mentions leave no doubt in our mind that this lady is the same as the donor of the Dhavala Ms. The date of the gift is, therefore, brought within closer limits i. e. between 1113 and 1120 A D.

The upshot of the above discussion is that we are confronted with three facts about Dhavalā Ms. namely---

1. A copy of the Dhavalā was made probably about three generations prior to the death of Devakirti Muni in 1163 A. D., i e. about 1100 A D.

2. A Ms. of Dhavalā was presented to Subhacandradeva by lady Demiyakka sometime between 1113 and 1120 A. D.

3. A palm-leaf Ms. of Dhavalā making mention of the above fact and indicating fact No. 1 exists at Mudbidri.

The probability in my mind is that it was the present palm leaf Ms. at Mudbidri which was copied by a pupil of Kulacandra and presented by Demiyakka to Subhacandradeva. But the possibility of the object of Demiyakka's gift being a later copy of the first Ms. and the present Ms. being a still more subsequent copy of the second, mechanically reproducing the eulogistic verses and the Prasastis of the former ones, cannot be entirely precluded until the present palm-leaf Ms. at Mudbidri is thoroughly examined from all points of view internally as well as externally.

#### 2. Is Vargana Khanda included in the available Mss. of Dhavala ?

The six main divisions of the present work, on account of which it acquired the title of Satkhandāgama, were Jivatthana, Khuddabandha, Bandhasamitta-vicaya,

Vedana, Vaggana and Mahabandha. We had already stated in the previous volume that of these six Khandas, the last i. e. the Mahabandha exists in a separate manuscript and is not included in the Mss. of Dhavala which contain all the remaining five Khandas. To this an objection was raised from one quarter that the available Mss. of Dhavala contain not even five, but only the first four Khandas, Vaggana Khanda being also missing from them. This view was based upon a misinterpretation of one text and a wrong reading of another text found at the beginning of the Vedana Khanda and then support was sought for the view by a series of wrong co-relations and a number of allegations against the old reporters like Indranandi and the recent copyist from Mudhidri Ms. These have been critically examined by me from every possible point of view on the basis of all available material, with the result that my previous statements have been fully confirmed. The last word on this subject, as well as on others of a similar nature, however, could only be said when the Mudbidri Mss. have also been thoroughly examined and the whole work has been critically edited.

#### 3. Authorship of the Namokara Mantra

Panca-namokara Mantra is the most sacred formula of Jaina religion. It forms part of the daily prayers of all the Jainas whether Digambara or Svetambara. It has been regarded almost as an eternal revelation and the question of its author-ship was never raised. It is this very formula that forms the benedictory text at the beginning of Jivatthun and the author of Dhavala throws important light upon its authorship. He divides sacred writings into two kinds according as their benedictory text forms their integral part or not. Now, different benedictory texts are found at the beginning of the Jivatthana Khanda and that of the Vedana Khanda. But the author of the Dhavalā places the first Khanda in one category and the other in the second category on the clearly stated ground that at the second place the benedictory text was not an integrel part of the writings because it was not the original composition of the author who had merely borrowed it from elsewhere. But he regards the Namokara formula as integrally connected with the Jivatihana. This shows that in the opinion of the author of Dhavala the Namokara formula was the original composition of Puspadanta the author of the Satprarūpanā which was the first part of Jivatthana.

I tried to pursue the inquiry further and found that in the Svetāmbara Ágama, Ajja Vaira is credited with having interpolated the formula in one of the Mūlasūtras. A survey of the Svetāmbara Paţţāvalis and equivalent mentions in the Digambara texts revealed a number of points of contact and of difference between them in the names and dates of various notabilities like Ajja Vaira. Ajja Mankhu or Mangu and Nāgahatthi, associated with this sacred formula and with the study and preservation of portions of the lost canon. But a clarification of these and ultimate conclusions on the points raised must await further investigation and study.

# 4. A comparative review of the contents of Ditthivada

The twelfth Jaina Srutänga Ditthivada, according to the traditions of both the Digambaras and the Systambaras, was irretrievably lost. But a brief resume of its

contents is found in the literature of both the sects. The Digambara work Satkhandāgama of Puspadanta and Bhūtabali as well as Kaṣāya-pāhuda of Guṇadharācārya are claimed to be directly based upon it. It would, therefore, be interesting to take a bird's eye view of the contents of this most important Jaina Srutānga, leading up to the portions that have been preserved.

The Ditthivada was divided into five parts, Parikamma, Sutta, Padhamanioga, Puvvagaya and Cūliā. The Svetāmbaras place Puvvagaya first and Anuoga, with its subdivisions Mulapadhamānuoga, and Gandiānuoga, instead of Padhamānioga, next in the above order. The two schools differ entirely in the matter of the subsections The Digambaras name five Pannattis under it, namely, of the first part, Parikamma. Canda, Sura, Jambudiva, Divasāyara and Viyāha; while the Svetāmbaras count under it seven Seniās, namely, Siddha, Manussa, Puttha, Ogādha, Uvasampajjana, Vippajahana and Cuācus, each of which is again divided into fourteen or eleven sections like Atthapayaim, Pādhoāmāsapayaim, Māugāpayāim, Egatthiapayāim Keubhuam, Rāsibaddham, Egagunam, Dugunam, Tigunam, Keubhuam, Padiggaho, Samsārapadiggaho, Nandāvattam and Siddhāvattam. The nature of the subject-matter of these The Digambara subdivisions, on the other hand, are quite is shrouded in mystery. intelligible and their contents are also clearly stated. There is, however, one thing remarkable about the Svetambara subdivision that the first six divisions of Parikamma are said to be in accordance with the Jaina view which recognised four Nayas, while the seventh was an addition of the Ajivikas who recognised three Rasis or Nayas. It appears from this that the Ajivika view-point was also accomodated in the Jaina Agama and that at one time the Jainus recognised only four instead of seven Nayas.

The second division of Ditthivāda was Sutta which, according to the Digambaras, dealt, firstly, with the philosophy of the soul according to their own ideas; and, secondly, with the philosophical theories of others, such as Terāsiya, Niyativāda Saddavāda and the like. They also speak of eightyeight divisions of Sutta of which, they say, the names have been forgotten. The Svetāmbaras mention twentytwo subdivisions of Sutta and point out that they may be studied according to four Nayas, namely, Chinnacheda, Achinnacheda, Trika and Catuska, of which the first and the fourth Nayas are followed by the Jainas, while the second and the third are adopted by the Ájīvikas. In this way, Sutta is shown to possess eightyeight subdivisions. Here again, the mention of the Ajīvika view-point and its accomodation are remarkable.

Padhamānioga division of Ditthivāda, according to the Digambaras, deals with Paurānie accounts. As mentioned before, the Svetāmbaras give the name of this division as Anuoga and subdivide it as Mula-padhamānuoga dealing with the lives of the Tirthamkaras, and Gandiānuoga dealing with the lives of Kulakaras and other distinguished persons in separate sections (Gandikās). Amongst these the account of the Citrāntara Gandikā is very astonishing and staggering.

Puvvagaya was the most imporant division of Ditthiväda because its fourteen subdivisions, known as Puvvas, contained, in fact, all the essential wisdom of the Tirthamkaras. There is no substantial difference in the name or in the nature of the contents of the fourteen Puvvas in the Digambara and the Svetāmbara accounts of them, except that the eleventh Puvva is called Kalläun by one and Avanjham by the other, while there is also some difference in the extent (number of padas) of the twelfth Puvva, Pānāvāya. Both schools agree that some studied the entire Sruta while others stopped at the tenth Puvva. This view, in a way, shows the significance of placing Anuoga or Padhamānuoga before Puvvagaya, for, otherwise, those that stopped at the tenth Puvva could have no knowledge of Anuoga.

The fifth and the last division of Ditthivāda is Culiā, which, according to the Digambara school, dealt with the sciences pertaining to Jala, Sthala, Maya, Rupa and Akaşa The other school has no account of the Culikas to give except that they were appendexes of the first four Puvvas and that their number was, in all, thirtyfour. But if they were appended to the Puvvas, it remains unexplained why a separate division for them was thought necessary.

The Puvvas are said to have been divided into Vatthus and each Vatthu was subdivided into twenty Pahudas, their total number, according to the Digambara school, being 195 and 3900 respectively. The Kammapayadi-Pahuda, of which the subject-matter has been preserved with all its twentyfour Adhikaras, in the Satkhandagama, was one of the 280 Pahudas included in the second Puvva Aggeniyam Similarly, the Kaşäya-Pāhuda of Gunadharacarya is based upon one of the Pahudas included in the fifth Puvva Nānapavāda. Nothing corresponding to these portions in age and subject-matter is yet found in the Svetambara literature.

#### 5. Subject-matter, language and style.

This volume is entirely devoted to the specification of the various soul qualities under different stages of spiritual advancement and under various conditions of life and existence, which have already been dealt with, in a general way, in the first volume. It is entirely the work of the commentator Virasena who takes his stand upon the foregone Sutras; but the idea of the twenty categories that form the basis of his treatment here is borrowed from elsewhere. He starts by quoting an old verse which names the twenty categories. The earliest work where we find the treatment of the subject under the same twenty categories is the Tiloya--paṇṇatti. It is, however, still a matter for investigation as to who started the idea of the twenty categories first.

We have tabulated the numerical specifications on each page in order to show the subject at a glance and facilitate reference, and the number of tables is in all 546. The various divisions and subdivisions leading to this high number would become clear by a glance at the table of contents.

The language is throughout Prakrit except for a few Sanskrit passages in the beginning, and by the very nature of the subject-matter which consists mostly of enumeration, the style is very indifferent to grammatical forms. In the enumerations

#### (vi)

of the soul-qualities words have frequently been used without inflections. In fact, abbreviated forms with dots are also met with all over in the Mss. But since the Mss. used by us were not uniform on the point, we preferred to give the fuller forms, and have also taken the liberty to complete the enumerations where omissions in the Mss. were obvious But we have not attempted to make the words inflected for fear of changing the entire character of the author's style which is so natural in its own way under the circumstances.

The number of older verses found quoted in this volume is thirteen, all in Prakrit. One of them (No. 228, on page 788) is said to have been taken from 'Pindia' a work which is otherwise unknown.

As before, I have, in this brief survey, avoided details which the interested reader would find in the Hindi translation.

# १ ताड्पत्रीय प्रतिके लेखनकालका निर्णय

### सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रदास्ति

धवल सिद्धान्तकी प्राप्त हस्तलिखित प्रतियोंमें सयप्ररूपणा विवरणके अन्तमें निम्न कनाड़ी पाठ पाया जाता है<sup>3</sup>—

संततशांतभावनदः पावनभोगनियोग वाकांतेय चित्तवृत्तियलविं नललंदनं गरूपं तदिदं गर्ज 'प्परिपोगेज सोखतपन्नगंदिसिद्धांतमुनींद्रचन्द्रनुद्यं बुधकैरवर्षडमंडनं मंतरणमेणोसुद्गुणगणक भेदवृद्धि अनन्तनोन्त<sup>9</sup> वाक्कांतेय चित्तवल्लीय पदर्थिण <sup>3</sup>दर्पञ्चधालि <sup>6</sup>ह्यसरोजांतररागरंजितदिनं कुलभूषण "दिष्यसैद्धान्स-मुनींद्रनुज्वलयशोजंगमतीर्थमछरु<sup>6</sup> संततकालकायमतिसच्चरितं दिनदिं दिनक्के वीर्थं तउतिईदुझ्य वियम-दूंभैमेयो लांतवविट्टमोहदाहं तवे कंतु मुन्तुगिदे सघरित ईल्जिचन्द्रदेवसैद्धान्तमुनीन्द्ररूजिंत्तयशोज्वलजंगमक्षीर्थ-मुल्तेंद्र संवत्त्र सिद्धार्थ केतु सुन्तुगिदे सघरित ईल्जिचन्द्रदेवसैद्धान्तमुनीन्द्ररूजिंत्तयशोज्वलजंगमक्षीर्थ-

मैंने यह कनाड़ी पाठ अपने सहयोगी मित्र डाक्टर ए. एन्. उपाध्याय प्रोफेसर राजाराम काल्रेज कोल्हापुर, जिनकी मातृभाषा भी कनाड़ी है, के पास संशोधनार्थ मेजा था। उन्होंने यह कार्य अपने काल्रेजके कनाड़ी माषाके प्रोफेसर श्री. के. जो. कुंदनमार महोदयके द्वारा करा कर मेरे पास मेजनेकी कृपा की। इसप्रकार जो संशोधित कनाड़ी पाठ और उसका अनुवाद मुझे प्राप्त हुआ, वह निम्न प्रकार है। पाठक देखेंगे कि उक्त पाठ परसे निम्न कनाड़ी पद्य सुसंशोधित-कर निकाल्जेनेमें संशोधकोंने कितना अधिक परिश्रम किया है।

Ł

संततशांतभावनेय पावनभोगनियोग ( वाणि ) वा-क्वांतेय चित्तवृत्तियोलवि नल ( विं गड मोहनां ) गरू-पं तळेदं गडं प्रचुरपंकजशोभितपद्मणंदि्सि-द्धान्तमुनीन्द्रचंद्रजुद्यं बुधकैरवषंडमंडनम् ॥ १ ॥

S,

मंत्रणमोक्षसद्गुणगणाब्धिय वृद्धिगे चंद्रनंते वा-क्वांतेय चित्तवछिपदपंकजदप्तखुधालिहत्सरो-जांतररागरंजितमनं कुल्स्यूघणदिव्यसेब्यसै-द्धांतसुनीन्द्ररूजिंतयशोज्वरूजंगमतर्थिकस्परु ॥ २ ॥

१ प्राप्त प्रतियोंमें इस प्रशस्तिमें अनेक पाठमेद पाये जाते हैं। यहां पर सहारनपुरकी प्रतिके अनुसार पाठ रखा गया है जिसका मिलान हमें वीरसेवा मंदिरके अधिष्ठाता प. जुगलकिशोरजी मुस्तारके द्वारा प्राप्त हो सका। केवल हमारी अ. प्रतिमें जो अधिक पाठ पाये जाते हैं वे टिप्पणमें दिये गये हैं। २ अनन्तज्वनोन्त ! ३ पदप्पिणनदर्प्य । ४ प्रदृत् । ५ दिव्यसेव्य । ६ तीर्थदमछयस्त्यें । ७ मछरूद्दरू । ₹

संततकालकायमतिस्वारितं दिनदिं दिनके वी-ये तळेदंदु मिक्र नियमंगळनांसुविवेकवोधदेा-इं तवे केंदु मन्युगिदे सवरितं कुलचन्द्रदेवसै-दांतमुनीन्द्ररूजिंतयशोज्वल्जंगमतीर्थरुद्रवम् ॥ ३ ॥

इसका हिन्दीमें सारानुवाद हम इसप्रकार करते हैं---

#### Ł

श्रीपद्मनन्दि सिद्धान्तमुनीन्द्ररूपी चन्द्रमाका उदय विद्धद्मणरूपी कुमुदिनी समूहका मंडन था। वे प्रकुल्ट कमलके समान सुशोभित थे, तथा उनके मनमें निरंतर शान्त भावना और पाबन सुख-भोगमें निमग्न सरस्वती देवीका निवास होनेसे वे सहज ही सुंदर शरीरके अधिकारी हो गये थे।

R

वे दिव्य और सेव्य कुलभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र अपने ऊर्जित यशसे उज्वल होनेके कारण जंगम तीर्थके समान थे। मंत्रण, मोक्ष और सद्गुणोंके समुद्रको बढ़ानेमें वे चन्द्रके समान थे, तथा सरस्वती देवीके चित्तरूपी बल्लीके पदपंकज (के निवास) से गर्वयुक्त विद्वत्समुदायके द्वयुक्तमल्डके अंतर रागसे उनका मन रंजायमान था।

Ę

ऊर्जित यशसे उज्चल कुलचन्द्र सैद्धान्तमुनीन्द्रका उदभव जंगमतीर्थके समान था। निरन्तर कालमें काय और मनसे सच्चारित्रवान्, दिनोंदिन शाक्तिमान् और नियमवान् होते हुए उन्होंने विवेकबुद्धिदारा ज्ञान—दोहन करके कामदेवको दूर रखा। यह सच्चारित्र ही कामदेवके क्रोधसे बचनेका एकमात्र मार्ग है।

इसप्रकार इन तीन कनाड़े। पद्योंकी प्रशस्तिमें ऋमशः पद्मनन्दि सिद्धान्तमुनीन्द्र, कुलुभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र और कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनीन्द्रकी विद्वत्ता, बुद्धि और चारित्रकी प्रशंसा की गई है। पर उनसे उनके परस्पर सम्बन्ध, समय व धवल्य्यंथ या उसकी प्रतिसे किसी प्रका-रके संम्बन्धका कोई ज्ञान नहीं होता। अतएव इन बातोंकी जानकारोंके लिए अन्यत्र खोज करना आवश्यक प्रतीत हुआ।

अवणवेल्गुलके अनेक शिलालेखोंमें पद्मनन्दि मुनिके उल्लेख आये हैं। पर सब जगह एक ही पद्मनन्दिसे तात्पर्य नहीं है। उन लेखोंसे ज्ञात होता है कि मिन्न मिन्न कालमें पद्मनन्दि नाम व उपाधिधारी अनेक मुनि आचार्य हुए हैं। किन्तु लेख नं. ४० (६४) में हमारे प्रस्तुत पद्मनन्दिसे अभिप्राय रखनेवाला उल्लेख ज्ञात होता है, क्योंकि, उसमें पद्मनन्दि सैद्धान्तिकके शिष्य कुलभूषण और उनके शिष्य कुलचन्दका भी उल्लेख पाया जाता है। वह उल्लेख रसप्रकार है-

अविद्धकर्णादिक**एवानन्दी सेंद्धान्तिकाख्यो**ऽजनि यस्य खोके । कौमारदेवव्रतिताप्रसिद्धिर्जीयात्तु सो झाननिधिः सधीरः ॥ तच्छिष्यः कुल्लभूषणाख्ययतिपश्चारित्रवारांनिधि-सिसद्धान्ताम्बुधिपारगो नतविनेयस्तरसधर्मो महान् । दाब्दाम्भोरुहमास्करः प्रधितत्तकैप्रंथकारः प्रभा-चन्दाख्यो मुनिराजपंडितवरः श्रीकुण्डकुन्दान्वयः ॥ तस्य श्रीकुलभूषणाख्यसुमुनेदिशध्यो विनेयस्तुत-रसद्वृत्तः कुल्जचन्द्रदेवमुनिपस्सिद्धान्तविद्यानिधिः ।

यहां पद्मनन्दि, कुल्स्भूषण और कुल्चन्द्रके बीच गुरु शिष्य-परम्पराका स्पष्ट उद्घेख है। पद्मनन्दिको सैद्धान्तिक ज्ञाननिधि और सधीर कहा है। कुल्स्भूषणको चारित्नवारांनिधिः और सिद्धान्ताम्बुधिपारग, तथा कुल्चन्द्रको विनेय, सद्वत और सिद्धान्तविद्यानिधि कहा है। इस परम्परा और इन विशेषणोंसे उनके धवला-प्रतिके अन्तर्गत प्रशस्तिमें उल्लिखित मुनियोंसे अभिन होनेमें कोई सन्देह नहीं रहता। शिलालेखदारा पद्मनन्दिके गुणोंमें इतना और विशेष जाना जाता है कि वे अविद्धकर्ण थे अर्थात् कर्णच्छेदन संस्कार होनेसे पूर्व ही बहुत वाल्पनमें वे दीक्षित होगये थे और इसलिए कौमारदेवत्रती भी कहलाते थे। तथा यह भी जाना जाता है कि उनके एक और शिष्य प्रभाचन्द्र थे, जो शब्दाम्भोरुहभास्कर और प्रथित तर्कप्रन्यकार थे।

इसी शिलालेखसे इन मुनियोंके संघ व गण तथा आगे पीछेकी कुछ और गुरु-परम्पराका भी ज्ञान हो जाता है । लेखमें गौतमादि, भद्रवाहु और उनके शिष्य चन्द्रगुप्तके पश्चात् उसी अन्वयमें हुए पद्मनन्दि, कुन्दकुन्द, उमास्वाति गृद्धपिच्छ, उनके शिष्य बलाकपिच्छ, उसी आचार्य परम्परामें समन्तभद, फिर देवनन्दि जिनेन्द्रवुद्धि पूज्यपाद और फिर अकलंकके उल्लेखके पश्चात् कहा गया है कि उक्त मुनीन्द्र सन्तातिके उत्पन्न करनेवाले मूलसंघमें फिर नन्दिगण और उसमें देशीगण नामका प्रभेद हो गया । इस गणमें गोल्लाचार्य नामके प्रसिद्ध युनि हुए । ये गोल्ल्देशके अधिपति थे । किन्तु, किसी कारण वश संसारसे भयभीत होकर उन्होंने दीक्षा धारण करली थी । उनके शिष्य श्रीमत् त्रैकाल्ययोगी हुए और उनके शिष्य हुए उपर्युक्त अबिद्धकर्ण पद्मनन्दि सैद्धा-न्तिक कौमारदेव, जो इसप्रकार मूल्संघ नन्दिगणान्तर्गत देशीगणके सिद्ध होते हैं ।

लेखमें पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रसे आगेकी परम्पराका वर्णन इसप्रकार दिया गया है:----

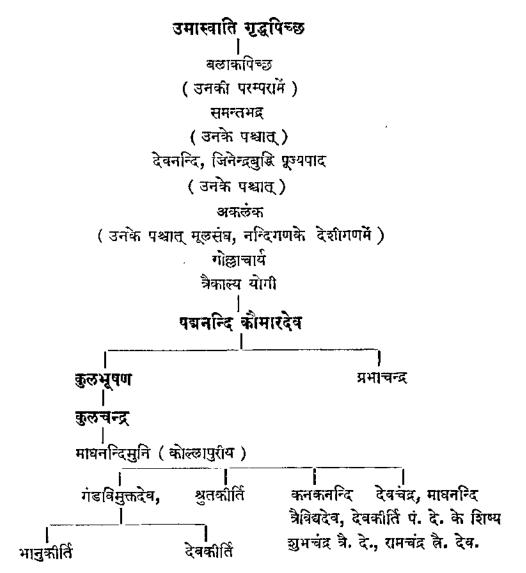
कुलचम्द्रदेवके शिष्य माधनन्दि मुनि हुए, जिन्होंने कोल्लापुर (कोल्हापुर) में तीर्थ स्थापित किया। वे भी राद्धान्तार्णवपारगामी और चारिलचक्रेस्वर थे, तथा उनके आवक शिष्य थे

सामन्त केदार नाकरस, सामन्त निम्बदेव और सामन्त कामदेव। माघनान्दिके शिष्य हुए-गंडविमक्तदेव, जिनके एक छात्र सेनापति भरत थे, व दूसरे शिष्य भानुकीर्ति और देवकीर्ति । गंडविमुक्तदेवके सधर्म भूतकीर्ति त्रैविद्यमुनि थे, जिन्होंने विद्वानोंको भी चमत्कृत करनेवाले अनुलोम—प्रतिलोम काव्य राधव—पांडवीयकी रचना करके निर्मल कीर्ति प्राप्त की थी और देवेन्द्र जैसे विपक्ष वादियोंको परास्त किया था। अतकीर्तिकी प्रशंसाके ये दोनों पद्य कनाडी काव्य पम्परामायणमें भी पाये जाते हैं। विपक्ष सैद्धान्तिकसे संभव है उन्हीं देवेन्द्रसे तात्पर्य हो, जिनके विषयमें इवेताम्बर अन्थ प्रभावकचरितमें कहा गया है कि उन्होंने वि० सं० ११८१ में दि० आचार्य कुमुदचन्द्रको वाद में परास्त किया था। इन्होंके अग्रज ( सधर्म ) **ये कनकनन्दि और देवचन्द्र । कनकनन्दिने बौद्ध, चार्वाक और मीमांसकों को परास्त** किया था, और देवचन्द्र भट्टारकोंके अप्रणी तथा वेताल होट्टिंग आदि भूत पिशाचोंको वशीभूत करनेवाले बड़े मंत्रवादी थे। उनके अन्य सधर्म थे माधनन्दि त्रैविद्यदेव, देवकीर्त्ति पंडितदेवके शिष्य अभचन्द्र त्रैवियदेव, गंडविमुक्त वादिचतुर्मुख रामचन्द्र त्रैवियदेव और वादिवजांकुरा अकलंक त्रैविद्यदेव । गंडविमुक्तदेवके अन्य आवक शिष्य थे माणिक्य मंडारी मरियाने दंडनायक. महाप्रधान सर्वाधिकारी ज्येष्ठ दंडनायक भरतिमय्य हेगडे बूचिमय्यंगलु और जगदेकदानी हेगडे कोरय्य |

इन उद्घेखोंसे हमें पद्मनन्दि कुलभूषणके संघ व गणके अतिरिक्त उनकी पूर्वापर सु-विख्यात, विचक्षण और प्रभावशाली गुरुपरम्पराका अच्छा ज्ञान हो जाता है। तथा, जो और भी विशेष बात ज्ञात होती है, वह यह कि, हमारे पद्मनन्दिके एक और शिष्य तथा कुलभूषण सिद्धान्तमुनिके सधर्म जो प्रभाचन्द्र ' शब्दाम्भोरुहमास्कर ' और प्रथित-तर्कप्रन्थकार ' पदोंसे विभूषित किये गए हैं; वे संभवतः अन्य नहीं, हमारे सुप्रसिद्ध तर्कप्रन्थ प्रभेयकमल्मार्तण्ड और न्यायकुमुदचन्द्रके कर्त्ता प्रभाचन्द्राचार्य ही हो ।

यह गुरु परम्परा इस प्रकार पाई जाती है: --

गौतमादि ( उनकी सन्तानमें ) भद्रबाहु | चन्द्रगुप्त ( उनके अन्वयमें ) पद्मनन्दि कुन्दकुन्द ( उनके अन्वयमें )



अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि उक्त पद्मनान्दि आदि आचार्य किस काल्में उत्पन्न हुए ? जिस उपर्युक्त शिलालेखमें उनका उल्लेख आया है, उसमें मी समयका उल्लेख कुछ नहीं पाया जाता । किंन्तु वहां उस लेखका यह प्रयोजन अवश्य बतलाया गया है कि महामंडलाचार्य देवकीर्ति पंडितदेवने कोल्लापुरकी रूपनारायण वसदिके अधीन केल्लंगेरेय प्रतापपुरका पुनरुद्वार कराया था, तथा, जिननाथपुरमें एक दानशाला स्थापित की थी । उन्हीं अपने गुरुकी परोक्ष विनयके लिए महाप्रधान सर्वाधिकारी हिरिय मंडारी अभिनव-गंग-दंडनायक श्री हुल्लराजने उनकी निषद्या निर्माण कराई । तथा गुरुके अन्य शिष्य लक्खनंदि, माधव और त्रिभुवनदेवने महादान व पूजामिषेक करके प्रतिष्ठा की । इल्ल्राज अपरनाम इल्ल्प वाजिवंशके पक्षराज और

٤ę

लेकाम्बिकाके पुत्र तथा यदुवंशी राजा नारसिंहके मंत्री कहे गए हैं। इन यादव व होव्सल्वंशीय राजा नारसिंह तथा उनके मंत्री हुल्लराज या हुल्लपका उल्लेख अन्य अनेक शिलालेखोंमें भी पाया जाता है, जिनसे उनकी जैनधर्म में श्रद्धाका अच्छा परिचय मिलता है। (देखो जैन शिलालेख संप्रह, भू. पू. ९४ आदि)। पर उक्त विषय पर प्रकाश डालनेवाला शिलालेख नं० ३९ है जिसमें देवकीर्त्तिकी प्रशस्तिके अतिरिक्त उनके स्वर्गवासका समय शक १०८५ छुमानु संवल्सर आषाढ़ शुक्र ९ बुधवार सूर्योदयकाल बतलाया गया है, और कहा गया है कि उनके शिष्य लक्खनंदि, माधवचन्द्र और त्रिमुबनमछने गुरुमक्तिसे उनकी निषयाकी प्रतिष्ठा कराई।

देवकीर्ति पद्मनन्दिसे पांच पीढी, कुल्भूषणसे चार और कुल्चम्द्रसे तीन पीढी पश्चात् हुए हैं। अतः इन आचायोंको उक्त समयसे १००-१२५ वर्ष अर्थात् राक ९५० के लगभग हुए मानना अनुचित न होगा। न्यायकुमुदचन्द्रकी प्रस्तावनाके विद्वान् लेखकने अल्पन्त परिश्रमपूर्वक उस प्रन्थके कर्ता प्रभाचन्द्रके समयकी सीमा ईस्वी सन ९५० और १०२३ अर्थात् राक ८७२ और ९४५ के बीच निर्धारित की है। और, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, ये प्रभाचन्द्र वे ही प्रतीत होते हैं जो लेख नं० ४० में पद्मनन्दिके शिष्य और कुल्म्प्रूपके सधर्म कहे गए हैं। इससे भी उपर्युक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है। उक्त आचार्योंके कालनिर्णयमें सहायक एक और प्रमाण मिलता है। कुल्चन्द्रमुनि के उत्तराधिकारी माधनन्दि कोल्लापुरीय कहे गये हैं। उनके एक सामन्त थे । शिलाहार गंडरादित्यदेवके उल्लेख राक सं. १०३० से १०५८ तक के लेखोंमें पाये जाते हैं। इससे भी पूर्वोक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है।

पद्मनन्दि आदि आचायोंकी प्रशस्तिके सम्बन्धमें अब केवछ एक ही प्रश्न रह जाता है, और वह यह कि उसका घवछाकी प्रतिमें दिये जानेका अभिप्राय क्या है ? इसमें तो संदेह नहीं कि वे पद्य मुडविद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिमें हैं और उन्हींपरसे प्रचछित प्रतिछिपियोंमें आये हैं। पर वे घवछाके मूछ अंश या घवछाकारके छिखे हुए तो हो ही नहीं सकते । अतः यही अनुमान होता है कि वे उस ताडपत्रवाछी प्रतिके छिखे जानेके समय या उससे भी पूर्वकी जिस प्रति परसे वह छिखी गई होगी उसके छिखनेके समय प्रक्षिप्त किये गये होंगे । संभवतः कुछभूषण या कुछचन्द्र सिद्धान्तमुनिकी देख-रेखमें ही वह प्रतिछिपि की गई होगी । यदि विद्यमान ताडपत्र की प्रति छिखनेके समय ही वे पद्य डाछे गये हों, तो कहना पड़ेगा कि वह प्रति शककी दशकी दशकी

\*. Sukrabara Basti Inscription of Kolhapur, in Graham's Statistical Report on Kolhapur.

न्यायकुमुदचन्द्र, भूमिका पृ. ११४ आदि.

· •

१. जेन शिठालेखसंग्रह, लेख म. ४०

राताम्दिके मध्य भागके लगभग लिखी गई है। इन्हीं प्रतियोंमेंसे कहीं एक और कहीं दोके प्रशस्यात्मक पद्य धवलाकी प्रतिमें और भी बीच बीचमें पाये जाते हैं जिनका परिचय व संप्रह आगे यथावसर देनेका प्रयत्न किया जायगा।

## धवलाके अन्तकी प्रशस्ति

मुड़बिद्रीकी ताड़पत्रीय प्रतिके प्रसंगमें हमारो दृष्टि स्वमावतः धवलाकी प्राप्त प्रतियोंके अन्तमें पायी जानेवाली प्रशस्ति पर जाती है। धवलाके अन्तमें धवलाकार वीरसेनाचार्यसे सम्बंध रखनेवाली वे नौ गाथाएं पाईं जातीं हैं जिनको हम प्रथम मागमें प्रकाशित कर चुके हैं। उन गाथाओंके पश्चात् निम्न लम्बी प्रशस्ति पाई जाती है, जिसके कनाड़ी अंश पूर्वोक्त प्रो. कुंदनगार व प्रो. उपाध्याय द्वारा बड़े परिश्रमसे संशोधित किये गये हैं।

٢

शब्दब्बह्मेति शाब्दैर्गणघरमुनिरित्सेव राखान्तविझिः, साक्षाःसर्वज्ञ एवेःयभिहित्तमतिभिः सुक्ष्मवस्तुप्रणीतः । यो दष्टो विद्वविद्यानिधिरिति जगति प्राप्तभद्दारकाख्यः, स श्रीमान् वीरसेनो जयति परमतध्वान्तभित्तन्त्रकारः ॥ १ ॥

R

श्रीचारित्रसमृद्धिमिझविजयश्रीकर्मविच्छित्तिपूर्वकं ज्ञानावरणीयमुलनिर्नाशनं भूचक्रेशं बेसकेय्ये संदर्भमुनिवृन्दाधीश्वरकुन्दकुन्दाचार्थर्धतधेर्थ [गर्थतेथिने (?)] नाचार्थरोळ्वर्यरु जितमदविनिर्गतमल्डर्चतुरं-गुरुचारणद्विनिरतर्गणधर [ रेरेकेर्तिने (?) ] गुगगणधरर् यतिपतिगणधररेनिसिद कुंदकुन्दाचार्यर्। अवरन्त्रय-दोळ सिद्धान्तविदर्ध्या करणवेदिगळ् पटतर्कप्रवणदि सिद्धिसंजुत्तपरिस्तृतरप्प गृष्टविच्छाचार्यधेर्थ परनेंगर्दगांभीर्थ-गुणोद्धिगळुचित्तशमदमयमत्तात्पर्यरेने गृढ्षिंच्छाचार्यर शिष्यर्थलाकपिंच्छाचार्यगुणनन्दिपंडित्तनिजगुणनन्दि-पंडित जनगळं मेचिसि मैगुणद् पेसरेसेथे विद्वद्रणतिरु इस्केल्स्मनीन्द्रशिष्यर्पदार्थदोळर्थशास्त्रदोळ् जिनागम-दोळु तंत्रदोळु महाचरितपुराणसंततिगळोळ् परमागमदोळ् पेरर्समं दोरे सरि पाटिपासटि समानमेनल् क्रुत-गुणनन्दिपण्डितशिष्यावीहितविद्रगे स्नुर्वराशिष्यरोळ ब्रधकोटिसंदर्भवीतलदोल । विद्यरारेनुत्तिरे त्तपश्चरणसिद्धान्तपारायणरेणिकेगोळकर्पदिर्वर्त्तपोविच्छिन्नानंगरेंबी महिमेथिनेसदे्वांधियेंतंतुद्रारस्वंच्छदिंनकर-किरणमे बेळगे देवेन्द्रसिद्धान्तरु ॥ अन्तुनेगतेंवेत्तवर शिष्यकदम्बकदोळ् समस्तसिद्धान्तनहापयोनिधियेनिसि तडंबरेगं तपोबलाकान्तमनोजरागि मदवर्जितरागि पोगर्तेवेत्तराशांतं नेगई कीर्त्ति वसुनन्दिमुनीन्द्ररुदात्तवुत्ति-थिनुद्धिगे कलाधरं पुष्टिदनेन्तवर्गे शिष्यरादर् गुणदोळेदडे रविचंद्रसिद्धांतदेवरेंबर् जगद्विशेषकचरितर् । भंतु द्यावनीधरक्वतोद्यनादशशांकनिंदे शार्वरि<sup>!</sup> गित्तु धरातलमं मत्ते दुर्णयध्वान्तविद्यातमागिरे सदुझवरि सछे पूर्णचन्द्रसिद्धान्तमनीन्द्र निगदितान्तप्रतिशासनम् जैनशासनम् ॥

९ अ. प्रतिमें ' शार्वरिकपराधिगित्तु ' ऐसा पाठ है ।

.....

#### षट्खंडागमकी प्रस्तावना

इन्दु शरदद बेळ् दिंगळ् पुदिदुदु देसेदेसेथोळेनिप जसदोळ्पं ताळिद दामनन्दिसिद्धान्तदेवर-वरप्रशिष्यरधिगततस्वर् ।

्श्रुतघर [वलित्तिने ?] मेच्यनोमेंयुं तुरिसुबुदिल्ल निद्देवरेमर्गुलनिकुबुदिल्ल वागिलं किरतेरे युबुदिछ गुर्बदिल्ल (महेन्द्रनु) नेरे [ओण ?] बण्जिसल् गुणगणावलियं मलघारिदेवरं ॥

आमलधारिदेवमुनिमुख्यर शिष्यरोळप्रगण्यरुविंमहित [ र्क्वपायगुर्व ? ] जितकषायकोध<sup>र</sup> लें:भमान-मायामदवर्जितर्नेगर्दरिन्दुमरीचिगळंद्र ( दिं ? ) यशः श्री नेमिचन्द्रकीर्तिमुनिनाथरुदात्तचरित्रवृत्तियिं ॥ मलधारिदेवरिंदं | बेळगिदुदु जिनेन्द्रशासनं मुत्तं निर्मलमागि मत्तमीगळ् | बेळगिदपुदु चन्द्रकीर्तिभष्टारकरिं ॥

> बेळगुव कीर्तिचंद्रिके मृदू।किसुधारसपूर्णमूर्तयो कूबेळेदमरूं पोदर्द सितछांछनमागिरे चन्द्रनंदमं ॥ तळेदु जनं मनंगोळे दिगंतर ......विकसितो— ज्वलज्जुभचन्द्रकीर्त्तिमुनिनाथरिदें विखुधाभिवंद्यरो ॥

( पथितुं ? ) प्रसरकिरणारातीयचन्द्रकीर्त्तिमुनेंद्रराशांतवर्त्तितकीर्त्तिगळ् मुनिष्टन्द्वंदितरादरा. शांतचित्तर शिष्यरादर्दिवाकरणंदिसिद्धान्तदेवरिदें जिनागमवार्धिपारगरादरो । इदावुदरिदेंदिळिकेब्दु सिद्धान्तवारिधिय तळदेवंदरेंदोडानेन्तुलिसुवेनेनळ् दिवाकरणंदिसिद्धांतदेवराखिछागममक्तरमार्गमंतिम-सुधांबुप्रचुरपूरनिकरं व्याख्यानधोषं मरुचलित्तोत्तुंगतरंगवेषमेने मिक्तौदार्यदिं दोषनिर्मलघर्माम्रतदिन-लंकरिसि गंभीरस्वमं ताळि मूवल्यके पवित्ररागि नेगळ्दरा सिद्धान्तरस्नाकरर्ग् ॥ अवरमशिष्यर्

> मरेदुमदोम्भे लौकिकदवातेंयनाडद केत्तवागिलं । तेरेयद भानुवस्तमितभागिरेपोगद मेथ्यनोम्मेयुं ॥ तुरिसदकुक्कुटासनके सोलद गंडविमुक्तवृत्तियं । मरेयदघोरदुश्वरत्तपश्चरित्तं मळधारिदेवर ॥ अवरप्रशिष्यर्

> > १

श्रीदः श्रीगणवाधिवर्धनकरश्चन्द्रावदातोल्वणः स्थेयान् श्रीमलधारिदेवयमिनः पुत्रः पवित्रो भुवि |

र अ. प्रातिमें यहां ' तत्तदेवप्रकर ' ऐसा पाठ हें ।

२ स. प्रतिमें ' गुर्वजितकषायकोध ' इतना पाठ नहीं है ।

۲

#### धवळाके अन्तकी प्रशस्ति

सद्धमैंकशिखामणिजिंतपतेभैग्यैकचिन्तामणिः स श्रीमान् ग्रुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तविद्यानिथिः ॥१॥

२

शब्दाधिष्ठितभूतले परिलसत्साकोंक्लसस्तंभके (?) साहित्यस्यधिकाश्मभित्तिरुचिते (?) ज्योतिर्मथे मंडले । सद्रत्नत्रयमूल्रत्स्तकल्लशे स्याद्वादष्टम्यं मुदा, यो (?) देवेन्द्रसुराचिंतैर्दिविषदैस्सक्रिविरेज्रस्तु (?) सम् ॥ २ ॥

#### 3

देवेन्द्रसिद्धान्तसुनीन्द्रपादपंकेजम्रंगः छुभचन्द्रदेवः । यदीयनामापि विनेयचेसोजातं तमो हर्तुमर्छं समर्थः ॥ ३ ॥

#### 8

परमजिनेश्वरविरचितवरसिद्धान्ताम्बुराशिपारगरेंदी । धरे बण्णिसुगुं गुणगणधररं शुभचन्द्रदेवसिद्धान्तिकरं ॥ ४ ॥

#### ٩

श्रीमजिनेन्द्रपद्पभ्रपरागतुङ्गः श्रीजैनशासनसमुद्रतवार्थिचन्द्रः । सिद्ध।न्तशास्त्रविहिताङ्कितदिव्यवाणी धर्मप्रबोधम्रुकुरः शुभचन्द्रसूरिः ॥ ५ ॥

#### S

चित्तोद्भूत्तमदेमकन्दद्खनप्रोत्कण्ठकण्ठीरवे। भव्याम्भोजकुऌप्रबोधनकृते विद्वज्जनानन्दकृत् । स्थेयास्कुन्द्दिमेन्दुनिर्मऌयशोवछीसमाछम्बनः स्तम्भः श्रीशुभचन्द्रदेवम्रुनिपः सिद्धान्तरःनाकरः ॥ ६ ॥

#### 9

कुवरूथकुल्बन्धुभ्वस्तमीहातामिस्रे विकसितमुनितत्त्वे सज्जनानन्ददृरो । विदि्तविमलनानासःक्लान्विद्धमूर्तिः शुभमतिशुभचन्द्रो राजवद्राजतेऽयम् ॥ • ॥

#### ٢

दिग्दांतिदन्तान्तरवर्त्तिकीर्शिः रत्नत्रयाळंकृतचारुमूर्तिः । जीयाचिरं श्रीधुभचन्द्रदेवे भव्याब्जिनीराजितराजहंसः ॥ ८ ॥

#### ٩

श्रीमान् भूपालमौलिस्फुरितमणिगणझ्योतिरुद्योतितांझिः, भब्याम्भोजातजातप्रमदकरनिधिस्यक्तमायामयादिः । इत्र्यस्कन्दर्षदर्पप्रवलितगल्जिपस्तिर्णितश्चार्यक्षस्यः, जीयाज्जैनाब्जभास्वानजुपमविनयो नोत्तसिद्धान्तदेवः (१) ॥ ९ ॥

#### १०

जीयादसावसुपमं ग्रुभचन्द्रदेवो भावोद्ववोद्ववविनाशनमूळमंत्रः । निस्तन्द्रसान्द्रविश्वधस्तुतिभूरिपात्रं त्रैछोक्यगेहमणिदीपसमानकीर्तिः ॥१०॥

#### ११

मूर्चिश्तमस्य नियमस्य विनूतपात्रं क्षेत्रं श्रुतस्य यशसोऽनघजन्मभूमिः । भूवि शुत्तश्रितवतासुरभोजकस्पानस्पायुधान्निवसत्ताष्छुमचन्द्रदेघः ॥११॥ Q

स्वस्ति श्रीसमस्तगुणगणारुंकृतसःयशौचाचारचारुचरित्रनयविनयशीरुसंपन्नेयुं विद्वधप्रसन्नेयुं भाहाराभयभेषज्यशास्त्रदानविनोदेयुं गुणगणारूहादेयुं जिनस्तवनसमयसमुच्छलितदिव्यगन्धवन्धुरांभो-इकपवित्रगात्रेयुं गोत्रपवित्रेयुं सम्यक्त्वचूडामणियुं मण्डलिनादश्रीभुजवलगंगपेमोडिदेवरत्तेयरमप्य रविदेवि (?) यकं श्रुतपंचमियं नोंतुज्जवणेयानाडवन्नियकेरेयुत्तुंगचैत्यालवदाचार्यरुं भुवनविख्यातरुमेनिसिदतम्म गुरुगळु श्रीधुभचन्द्रसिद्धान्तदेवर्गे श्रुतपूजेयं माडि बरेथिसि कोट्ट धवलेयं पुस्तकं मंगलमहा ॥ श्रीकुपणं (कोपणं) प्रसिद्धपुरमापुरदोलगे वंशचाधि शोभाकरमूर्जितं निखिलसाक्षरिकास्यविलासदर्पणं । नाकजनायवंद्यजिनपादपयोरुहम्ब्रकेन्दु मूळोकमेदं वर्णिपुद्ध जिन्नमनं मनुनीतिमार्गनं ।

जिनपदपन्नाराधकमनुपमविनयांश्वराशिदानविनोदं मनुनीतिमार्गनसतीजनदूरं लौकिकार्थदानिगजिन्नम् । बारिनिधियोळगेमुत्तम् नेरिदुवं कोंडु होरेदु वरुणं मुददिं भारतियकोरळोळिक्विदहारमननुकरिसलेसेवरेवों जिन्नम्॥

यह प्रशस्ति बहुत अशुद्ध और संभवतः स्खलन प्रचुर है। इसमें गद्य और पद्य तथा संस्कृत और कनाड़ी दोनों पाये जाते हैं। विना मूडविदीकी प्रतिके मिळान किये सर्वथा शुद्ध पाठ तैयार करना असंभवसा प्रतीत होता है। लिपिकारोंने कहीं कहीं कनाड़ीको विना समझे संस्कृतरूप देनेका भी प्रयत्न किया जान पड़ता है जिससे बड़ी गडबड़ी उत्पन्न होगई है। उदाहरणार्थ----कत्ती एक वचनका रूप कुन्दकुन्दाचार्यर् तृतीयामें परिवर्तित कुन्दकुन्दाचार्यर् पाया जाता है। ऐसे स्थलोंको विद्वान् संशोधकोंने खूब संभाला है। पर कई स्खलनोंकी पूर्ति फिर भी नहीं की जा सकी, कनाडी पद्य भी बहुत श्रष्ट और गद्यके रूपमें परिवर्तित हो गये हैं जिनका अर्थ भी समझना कठिन हो गया है। तथापि उससे निम्न बाते स्पष्टतः समझमें आती हैं:---

 धवलाकी प्रति बन्नियकेरे चैत्यालयके सुप्रसिद्ध आचार्य शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवको समर्पित की गई थी ।

२. ज्ञुमचन्द्रदेव देशीगणके थे और उनकी गुरुपरंपरामें उनसे पूर्व कुन्दकुन्द, गृद्धपिच्छ। बठाकपिच्छ, गुणनन्दि, देवेन्द्र, वसुनान्दि, रविचन्द्र, दामनन्दि, धीरनन्दि, आधरदेव, मलधारिदेव, (नेमि ) चन्द्रकीर्ति और दिवाकरनन्दि आचार्य हुए ।

३. पुस्तक-समर्पण कार्य मंडलिनाडुके मुजबलगंगपेमाडिदेवकी काकी देमियकने श्रुत-पंचमी व्रतके उद्यापनके समय किया था ।

शुभचन्द्रदेवकी उक्त गुरुपरंपरा परसे उनका पता लगाना सुलभ हो गया। उक्त परम्परा, एक दो नामोंके कुछ भेदके साथ प्रायः वही है, जो श्रत्रणबल्गुलके शिलालेख नं. ४३ (११७) में पाई जाती है। यही नहीं, किन्तु धवलाकी प्रशस्तिके तीन पद्म ज्योंके त्यों उक्त शिलालेखमें भी पाये जाते हैं (पद्म नं. १२, १३ और २१)। लेखमें शुभचन्द्रदेवके स्वर्गवासका समय निम्न प्रकार दिया गया है----

· •;

For Private & Personal Use Only

वाणाम्भोधिनभइशशांकतुलिते जाते शकाब्दे ततो वर्षे शोभकृताह्नये व्युपनते मासे पुनः आवणे । पक्षे कृष्णविपक्षवत्तिनि सिते वारे दशम्यां तिथौ स्वर्यातः शुभचन्द्रदेवगणभृत् सिद्धांतवारांनिषिः ॥

अर्थात् ग्रुभचन्द्रदेवका स्वर्गवास शक संवत् १०४५ श्रावण शुक्र १० दिन सितवार (शुक्रवार) को हुआ | उनकी निषद्या पोय्सल्ट-नरेश विष्णुवर्धनके मंत्री गंगराजने निर्माण कराई थी |

शिमोगसे मिळे हुए एक दूसरे शिलालेखमें बन्नियकेरे चैत्यालयके निर्माणका समय शक सं० १०३५ दिया हुआ है और उसमें मन्दिरके लिये मुजबलगंगपेर्माडिदेवद्वारा दिये गये दानका भी उल्लेख है। अन्तमें देशीगणके शुभचंद्रदेवकी प्रशंसा भी की गई है। (एपी-प्राफिआ कर्नाटिका, जिल्द ८, लेख नं० ९७)

खोज करनेसे धवला प्रतिका दान करनेवाली आविका देमियकका पता मी अवणवेल्गुलके शिलालेखोंसे चल जाता है। लेख नं० ४६ में शुभचन्द्र मुनिकी जयकारके पश्चात् नागले माताकी सन्तति दंडनायकित्ति लक्कले, देमति और बूचिराजका उल्लेख है और बूचिराजकी प्रशंसाके पश्चात् कहा गया है कि वे शक १०३७ वैशाख सुदि १० आदित्यवारको सर्व परिष्रद्द लाग पूर्वक स्वर्गवासी हुए और उन्हींकी स्मृतिमें सेनापति गंगने पाषाण स्तम्म आरोपित कराया। लेखके अन्तमें 'मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचंद्र सिद्धान्तदेवके शिष्य बूचणकी निषधा' ऐसा कहा गया है। इस लेखमें जो बूचणकी ज्येष्ठ भगिनी देमतिका उल्लेख आया है, उसका सविस्तर वर्णन लेख नं० ४९ (१२९) में पाया जाता है जो उनके संन्यासमरणकी प्रशस्ति है। यहां उनके नाम-देमति, देमवती, देवमती तथा दोबार देमियक्क दिये गये हैं और उन्हें मूल्संघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवकी शिष्या तथा श्रेष्ठिराज चामुण्डकी पत्नी कहा **दे।** उनकी धर्मबुद्धिकी प्रशंसा तो लेखमें खुब ही की गई है। उन्हें शासन देवताका आकार कहा **दै**, तथा उनके आहार, अभय, औषध और शाखदानकी स्तुति की गई है। उस लेखके कुछ पथ इस प्रकार हैं:---

Ł

आहारं त्रिजगजनाय विभयं भीताय दिव्योषधं, व्याधिव्यापदुपेतदीनमुखिने श्रोत्रे च शास्त्रागतम् । एवं देवमतिस्सदेव ददती प्रप्रक्षये स्वायुषा-मईदेवमतिं विधाय विधिना दिव्यो वधूः प्रोदभूत् ॥ ४ ॥

Ş

आसीखरक्षोभकरप्रतायाशेषावनीषाळकृतादरस्य । चामुण्डनान्नो वणिजः प्रिया स्त्री मुख्या सती या भुवि देमतीति ॥ ५ ॥ 22

ર

भूलोकचैत्यालयचैत्यपूजाव्यापारकृत्यादरतोऽवत्तीर्णा । स्वर्गात्सुरस्त्रीति विलोक्यमाना पुण्येन लावण्यगुणेन यात्र ॥ ६ ॥

ध आहारशास्त्राभयभेषजानां दायिन्यऌं वर्णचतुष्टयाय । पश्चात्समाधिकियया सृदन्ते स्वस्थानवत्स्वः प्रविवेश योच्चैः ॥ ७ ॥

٩

सद्धर्मशत्रुं कलिकालराजं जित्वा व्यवस्थापितधर्मचृत्या । तस्या जयस्तम्भनिभं शिलाया स्तम्भं व्यवस्थापयति सा लक्ष्मीः ॥ ८ ॥

लेखके अन्तमें उनके संन्यासविधिसे देहत्यागका उल्लेख इसप्रकार है—

श्री मूलसंघद देशिगगणद पुस्तकगच्छद शुभचन्द्रसिद्धान्तदेवर् गुडि सक वर्ष १०४२ नेय विकारि संवरसरद फाल्गुण ब. ११ बृहवार दन्दु संन्यासन विधियि देमियक मुडिपिदछ।

अर्थात् मूलसंघ, देशीगण, पुर्स्तकगच्छके शुभचन्द्रदेवकी शिष्या देमियकने शक १०४२ विकारिसंवत्सर फाल्गुन ब. ११ वृहस्पतिबारको संन्यासविधिसे शरीरत्याग किया।

उक्त परिचय परसे संभव तो यही जान पड़ता है कि धवलाकी प्रतिका दान करने-बाल्ठी धर्मिष्ठा साध्वी देमियक ये ही होंगीं, जिन्होंने राक १०८२ में समाधिमरण किया। तथा उनके मतीजे मुजबल्लि× गंगपेमीडिदेव जिनका धवलाकी प्ररास्तिमें उल्लेख है उनके स्राता बूचिराजके ही सुपुत्र हों तो आश्चर्य नहीं। उस त्रतोद्यापनके समय बूचिराजका स्वर्भवास हो चुका होगा, इससे उनके पुत्रका उल्लेख किया गया है। यदि यह अनुमान ठीक हो तो धवलाकी प्रति जो संभवतः मूडबिद्रीकी वर्तमान ताड़पत्रीय प्रति ही हो और जो राक ९५० के लगभग लिखाई गई थी, बूचिराजके स्वर्भवासके पश्चात् और देमियकके स्वर्भवासके पूर्व अर्थात् राक १०३७ और १०४२ के बीच छुमचन्द्रदेवके सुपुर्द की गई, ऐसा निष्कर्ष निकल्ता है। पर यह भी संभव है कि श्रीमती देमियकने पुरानी प्रतिकी नवीन लिपि कराकर राभचंद्रको प्रदान की और उसमें पूर्व प्रतिके बीच–बीचके पद्य भी लेखकने कापी कर लिये हों।

प्रशस्तिके अन्तिम भागमें तीन कनाडीके पद्य हैं जिनमेंसे प्रथम पद्य 'श्री कुपणं' आदिमें कोपण नामके प्रसिद्ध पुरकी कीर्ति और रोष दो पद्यों में जिन्न नामके किसी श्रायकके यशका वर्णन किया गया है। कोपण प्राचीन काल्लमें जैनियोंका एक बडा तीर्थस्थान रहा है।

× भुजबलवोर होय्सल नरेशोंकी उपाधि पाई जाती है। देखो शिलालेख नं० १३८, १४३, ४९१, ४९४, ४९७. चामुंडराय पुराणके ' असिधारा व्रतदिदे ' आदि एक पद्यसे अवगत होता है कि तस्कालीन जैनी कोपणमें सल्लेखना पूर्वक देहत्याग करना विशेष पुण्यप्रद मानते थे । श्रवणबेलगोलके अनेक लेखोंमें इस पुण्य भूमिका उल्लेख पाया जाता है । लेख नं० ४७ ( १२७) शक संवत् १०३७ का है । इसके एक पद्यमें कहा गया है कि सेनापति गंगने असंख्य जीर्ण जैनमंदिरोंका उद्घार कराकर तथा उत्तम पात्रोंको उदार दान देकर गंगवाडिदेश को 'कोपण ' तीर्थ बना दिया। यथा----

> मसिन मातवन्तिरलि जीर्ण जिनाश्रयकोख्यि कमं बेत्तिरे मुश्चिनन्तिरनित्तूग्र्गलोलं नेरे माडिसुत्तम– त्युत्तमपात्रदानदोद्वं मेरेवुरिरि गङ्गवाडितो– म्बरारु सासिरं **कोपण**मादुदु गङ्गणदण्डनाथनि ॥ ३९ ॥

इससे कोएण तीर्यकी भारी महिमाका परिचय मिलता है |

लगभग राक सं० १०८७ के लेख नं. १३७ (३४५) में हुछ सेनापतिद्वारा कोपण मद्वातीर्थमें जैन मुनिसंघके निश्चिन्त अक्षय दानके लिये बहुत सुवर्ण व्ययसे खरीदकर एक क्षेत्रकी वृत्ति लगाई जानेका उल्लेख है। यथा----

> प्रियदिन्दं हुस्तिसेनापति कोएणमहात्तीर्थदोळधात्रियुंवा-द्विंयुमुल्लग्नं चतुविंशति-जिन-मुनि संघक्के निश्चिन्तमाग क्षय दानं सल्व पाक्नि बहु-कनक-मना-क्षेत्र-जिर्गाषु सद्दू-त्तियनिन्तीस्नोक मेलुम्पोगळे विडिसिदं पुण्यपुंजैकधार्म ॥ २७ ॥

इससे ज्ञात होता है कि यहां मुनि आचार्योंका अच्छा जुटाव रहा करता था और संभ-वतः कोई जैन शिक्षाल्य भी रहा होगा।

लगभग १०५७ के लेख नं. १४४ (३८४) के एक पद्यम सेनापति एच द्वारा कोपण व अन्य तीर्थस्थानोंमें जिनमंदिर बनवाये जाने का उछेख है । यथा —

> माडिसिदं जिनेम्द्रभवनङ्गलना कोपणादि तीर्थदछ रूढिथितेस्दो-वेसेसेव बेल्गोलदलु बहुचित्राभिसियं । नोडिदरं मनङ्गोळि पुवेग्धिनमेच-चमूपनस्थि कै---गूडे भारित्रिकोण्डु कोनेदाडे जसम्नलिदाडे लीलेयि ॥ १३ ॥

निजाम हैद्राबाद स्टेटके रायचूर जिलेमें एक कोप्पल नामका आम है, यही प्राचीन कोपण सिद्ध होता है। वर्तमानमें वहां एक दुर्ग तथा चहार दीवाली है जो चालुक्य कालीन कलाके बोतक समझे जाते हैं। इनके निर्माणमें प्राचीन जैन मंदिरोंके चित्रित पाषाण आदिका उपयोग दिर्खाई दे रहा है। एक जगह दीवाल्में कोई बीस शिलालेखोंके टुकड़े चुने हुए पाये 4. .

जाते हैं। इस स्थानपर व उसके आसपास कोई दस बीस कोसकी इर्दगिर्दमें अशोकके काल्से लगाकर इस तरफके अनेक लेख व अन्य प्राचीन स्मारक पाये जाते हैं।

कोपणके समाप ही पाल्कीगुण्डु नामक पहाड़ी पर, अशोकके शिलालेखके पास वरांग-चरितके कर्ता जटासिंहनन्दि के चरणचिन्ह भी, पुरानी कन्नडमें लेखसहित, अंकित हैं। ( वरांग-चरित, भूमिका पृ. १७ आदि )

इसप्रकार यह स्थान वड़ा प्राचीन, इतिहास प्रसिद्ध और जैनधर्म के लिये बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है \* ।

# २. सत्प्ररूपणा विभाग

षट्खंडागमकी पूर्व प्रकाशित प्रथम पुस्तक तथा अब प्रकाशित होनेवाली द्वितीय पुस्तकको हमने 'सत्प्ररूपणा ' के नामसे प्रकट किया है। प्रथम जिल्दके प्रकाशित होनेपर रांका उठाई गई है कि उस ग्रंथको सत्प्ररूपणा न कहकर 'जीवस्थान-प्रथम अंश ' ऐसा लिखना चाहिये था। इसके उन्होंने दो कारण बतलाये हैं। एक तो यह कि इस विभागके भीतर जो मंगलाचरण है वह केवल सत्प्ररूपणाका नहीं है बल्कि समस्त जीवस्थान खंडका है और दूसरे यह कि इसके आदिमें जो विषय-विवरण पाया जाता है वह सत्प्ररूपणाके बाहरका है, सत्प्ररूपणाका अंग नहीं × । इन दोनों आपत्तियोंपर विचार करके भी हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि हमने जो इस विभागको 'जीवस्थानका प्रथम अंश ' न कहकर 'सत्प्ररूपणा ' कहा है वही ठीक है। इसके कारण निम्न प्रकार हैं—

१. यह बात ठीक है कि आदिका मंगलाचरण केवल सत्प्ररूपणाका ही नहीं, किन्तु समस्त जीवस्थानका है। पर, अवान्तर विभागोंकी दृष्टिसे सत्प्ररूपणाके भीतर उसे लेनेसे भी बह समस्त जीवस्थानका बना रहता है। सब प्रंथोंमें मंगलाचरणकी यही व्यवस्था पायी जाती है कि बह प्रंथके आदिमें किया जाता है और जो भी खंड, स्कंध, सर्ग, अध्याय व दिषयविभाग आदिमें हो उसीके अन्तर्गत किये जाने पर भी वह समस्त प्रंथका समझा जाता है। समस्त प्रंथपर उसका अधिकार प्रकट करनेके लिये जाने पर भी वह समस्त प्रंथका समझा जाता है। समस्त प्रंथपर उसका अधिकार प्रकट करनेके लिये उसका एक स्वतंत्र विभाग नहीं बनाया जाता। अतएव जीवस्थान ही क्यों, जहांतक प्रन्थमें सूत्रकारकृत दूसरा मंगलाचरण न पाया जावे वहांतक उसी मंगलाचरणका अधिकार समझना चाहिये, चाहे विषयकी दृष्टिसे प्रंथमें कितने ही विभाग क्यों न पड़ गये हों। स्वयं धवलाकारने आगे वेदनाखंड व कृति अनुयोगदारके आदिमें आये हुए मंगलाचरणको देष दोनों खंडों व तेवीस अधिकारोंका। भी मंगलाचरण कहा है। यथा-

× अलेकान्त, बर्थ २, किरण ३, पृ. २०१

1.19

<sup>\*</sup> देखो जैनसि. सा. ५, २ पृ. ११०

उवरि उष्णमाणेसु तिसु खंडेसु कस्सेदं मंगछं ? तिण्णं खंडाणं । × × × कधं वेयणाए आदीए उत्तं मंगछं सेस-दो-खंडाणं होदि ? ण, कदीए आदिम्हि उत्तरस एदस्स मंगळस्स सेस-तेवीस-अणि योगद्दरिसु पउत्ति-दंसणादो ।

ऐसी अवस्थामें णमोकार मंत्ररूप मंगलाचरणके सखरूपणाके आदिमें होते हुए भी उसके समस्त जीवस्थानके मंगलाचरण समझे जानेमें कोई आपत्ति तो नहीं होना चाहिये।

२. यथार्थतः तो वह मंगळाचरण सत्प्ररूपणाका ही है । आचार्य पुष्पदन्तने उस मंगळा-चरणको आदि लेकर सत्प्ररूपणा मात्रके ही सूत्रोंकी तो रचना की है । यदि हम इसे भूतबलि आचार्यकी आगेकी रचनासे प्रथक् कर लें तो पुष्पदन्तकी रचना उस मंगल्सूत्र सहित सत्प्ररूपणा ही तो कहलायगी । जीवस्थानका प्रथम अंश यही सम्प्ररूपणा ही तो है ।

३. यदि इस अंशको सत्प्ररूपणा न कह कर जीवस्थानका प्रथम अंश कहते तो पाठक उससे क्या समझते ? इस नामसे उसके विषय पर क्या प्रकाश पड़ता ? वह एक अज्ञात कुल्शील और निरुपयोगी शीर्षक सिद्ध होता ।

8. हमने जो ग्रंथका विषय- विभाग किया है वह मूल्ग्रन्थ पुप्पदन्त और भूतबल्कित षट्खंडागमकी अपेक्षांसे है, और उसमें सद्यरूपणासे पूर्व किसी और विषयविभागके लिये स्थान नहीं है। मंगलाचरणके पश्चात् छह सात सूत्रोंमें सद्यरूपणाका यथोचित स्थान और कार्य वतलानेके लिये चौदह जीवसमासों और आठ अनुयोगद्वारोंका उल्लेखमात्र करके सद्यरूपणाका विवेचन प्रारम्भ कर दिया गया है। धवलाटीकाके कर्ताने उन सूत्रोंकी व्याख्याके प्रसंगसे जीव-स्थानकी उत्थानिकाका कुछ विस्तारसे वर्णन कर डाला तो इससे क्या उस विभागको सद्यरूपणासे अलग निर्दिष्ट करनेके लिये एक नये शीर्षककी आवश्यकता उत्पन्न होगई ? ऐसा हमें जान नहीं पड़ता। षट्खंडागमके मीतर जो सूत्रकारद्वारा निर्दिष्ट विषय विभाग हैं उन्हींके अनुसार विभाग रखना हमने उचित समझा है। धवलाकारने भी आदिसे लगाकर १७७ सूत्रोंकी क्रमसंख्या लगातार रखी है और उनकी एक ही सिल्सिलेसे टीका की है जिसे उन्होंने ' संतसुत्तविवरण ' कहा है जैसा कि प्रस्तुत भागके प्रारंभिक वाक्यसे स्पष्ट है। यथा —

' संपहि संत-सुत्त-विवरण-समत्तार्णतरं तेसिं परूवणं भणिस्सामो '।

# ३. वर्गणाखंड-विचार

पट्खंडागमके छह खंडोंका परिचय प्रथम जिल्दकी भूमिकामें कराया जा चुका है। वहां यह बतलाया गया है कि उन छह खंडोंमें से प्रथम पांच अर्थात् जीवडाण, खुदाबेंध, बंधसा-मित्तविचय, वेदणा और वग्गणा उपलब्ध धवलाकी प्रतियोंमें निबद्ध हैं तथा रोष छठवां अर्थात् महाबंध स्वतंत्र पुस्तकारूढ़ है, जिसकी प्रतिलिपि अभीतक मूडविदी मठके बाहर उपलब्ध नहीं है। इनमेंसे चार खंडोंके सम्बधमें तो कोई मतमेद नहीं है, किन्तु वेदना और वर्गणा खंडकी सीमाओंके सम्बंधमें एक रांका उत्पन्न की गई है जो यह है कि '' घवलप्रंध वेदना खंडके साथ ही समाप्त हो। जाता है–वर्गणाखंड उसके साथमें लगा हुआ नहीं है ''। इस मतकी पुष्टिमें जो युक्तियां दी गई हैं वे संक्षेपतः निम्न प्रकार हैं—

१. जिस कम्मपयडिपाहुडके चौवीस अधिकारोंका पुष्पदन्त-भूतबल्नि उद्धार किया है उसका दूसरा नाम ' वेयणकासिणपाहुड ' भी है जिससे उन २४ अधिकारोंका ' वेदनाखंड ' के ही अर्न्तगत होना सिद्ध होता है।

२. चैावीस अनुयोगद्वारोंमें वर्गणा नामका कोई अनुयोगद्वार भी नहीं है | एक अवान्तर अनुयोगद्वारके भी अवान्तर भेदान्तर्गत संक्षिप्त वर्गणा प्ररूपणाको ' वर्गणाखंड ' कैसे कहा जा सकता है !

३. वेदनाखंडके आदिके मंगल्सूत्रोंकी टीकामें वीरसेनाचार्यने उन सूत्रोंको ऊपर कहे हुए वेदना, बंधसामित्तविचय और खुदाबंधका मंगलाचरण बतलाया है और यह स्पष्ट सूचना की है कि वर्गणाखंडके आदिमें तथा महाबंधखंडके आदिमें पृथक् मंगलाचरण किया गया है उपलब्ध धवलाके रोष भागमें सूत्रकारकृत कोई दूसरा मंगलाचरण नहीं देखा जाता, इससे वह वर्गणाखंडकी करूपना गलत है।

४. धवलामें जो 'वेयणाखंड समत्ता ' पद पाया जाता है वह अशुद्ध है । उसमें पड़ा हुआ ' खंड ' शब्द असंगत है जिसके प्रक्षित होनेमें कोई सन्देष्ट माल्रम नहीं होता ।

५. इन्द्रनन्दि व विबुधश्रीधर जैसे प्रंथकारोंने जो कुछ लिखा है वह प्रायः किंवदन्तियें अथवा सुने सुनाये आधारपर लिखा जान पड़ता है। उनके सामने मूल प्रंथ नहीं थे, अतएव उनकी साक्षीको कोई महत्व नहीं दिया जा सकता।

६. यदि वर्गणाखंड धवळाके अन्तर्गत था तो यह भी हो सकता है कि लिपिकारने शोवता वंश उसकी कापी न की हो और अधूरी प्रतिपर पुरस्कार न मिल सकने की आशंकासे उसने प्रंथकी अन्तिम प्रशस्तिको जोड़कर प्रंथको पूरा प्रकट कर दिया हो । ×

अब इम इन युक्तियोंपर जमशः विचार कर ठीक निष्कर्ष पर पहुंचनेका प्रयरन करेंगे ।

### १. वेयणकासिणपाहुड और वेदनाखंड एक नहीं हैं।

यह बात सत्य है कि कम्मपयडिपाहुडका दूसरों नाम वेयणकसिणपाहुड भी है और यह गुण नाम भी है, क्योंकि वेदना कमोंके उदयको कहते हैं और उसका निरवशेषरूपसे जो वर्णन

× जैनसिद्धान्त भास्कर ६, १ पृ. ४२; अनेकान्त ३, १ पृ. ३.

÷ • j

करता है उसका नाम वेयणकासिणपाहुड (वेदनकृत्स्नप्रामृत) है। किन्तु इससे यह आवश्यक नहीं हो जाता कि समस्त वेयणकसिणपाहुड वेदनाखंडके ही अन्तर्गत होना चाहिये, क्योंकि यदि ऐसा माना जावे तब तो छह खंडोंकी अवश्यकता ही नहीं रहेगी और समस्त षट्खंड वेदनाखंड के ही अन्तर्गत मानना पडेंगे चूंकि जीवद्दाण आदि सभी खंडोंमें इसी वेयणकसिणपाहुडके अंशों का ही तो संप्रह किया गया है जैसा कि प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिये गये मानचित्रों तथा संतपरूवणा पृ. ७४ आदिके उछेखोंसे स्पष्ट है। यह खंड--कल्पना कम्मपयडिपाहुड या वेयण-कसिणपाहुडके अवान्तर भेदोंकी अपेक्षासे की गई है किसी एक खंडको समूचे पाहुडका अधि-कारी नहीं बनाया गया। स्वयं धवलाकारने वेदनाखंडको महाकम्मपयडिपाहुड समझ लेनेके विरुद्ध पाठकोंको सतर्क कर दिया है। वेदनाखंडके आदिमें मंगलके निबद्ध अनिबद्धका विवेक करते समय वे कहते हैं---

' ण च वेयगाखंडं महाकम्मपयडिपाहुडं, अवयवस्स अवयवितविरोहादे। '

अर्यात् येदनाखंड महाकर्मप्रकृतिप्रामृत नहीं है, क्योंकि अवयवको अवयवी मान छेनेमें विरोध उत्पन्न होता है। यदि महाकर्मप्रकृतिप्रामृतके चौवीसों अनुयोगद्वार बेदनाखंडके अन्तर्गत होते तो धवल्लाकार उन सबके संप्रहको उसका एक अवयव क्यों मानते ? इससे बिल्कुल स्पष्ट है कि वेदनाखंडके अन्तर्गत उक्त चौवीसों अनुयोगद्वार नहीं हैं।

## २. क्या वर्मणा नामका कोई पृथक् अनुयोगद्वार न होनेसे उसके नामपर खंड संज्ञा नहीं हो सकती ?

कम्मपयंडिपाइडके चौबीस अनुयोगद्वारोंमें वर्भणा नामका कोई अनुयोगद्वार नहीं है, यह बिलकुल सत्य है, किन्तु किसी उपमेदके नामसे वर्भणाखंड नाम पड़ना कोई अताधारण घटना तो नहीं कही जा सकती । ययार्थतः अन्य खडोंमें एक वेदनाखंडको छोड़कर अन्य रोष सब खडोंके नाम या तो विषयानुसार कल्पित हैं, जैसे जॉवडाण, खुदाबंध, व मद्दाबंध । या किसी अनुयोगद्वारके, उपभेदके नामानुसार हैं, जैसे बंधसामित्ताविचय । उसीप्रकार यदि वर्भणा नामक उपविभाग पदसे उसके महत्त्वके कारण एक विभागका नाम वर्भणाखंड रखा गया हो तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है । चौधीस अधिकारोंमेंसे जिस अधिकार या उपमेदका प्रधानत्व पाया गया उसीके नामसे तो खंड संज्ञा की गई है, जैसा कि धवलाकारने स्वयं प्रश्न उठाकर कहा है कि कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृतिका भी यहां प्ररूपण होनेपर भी उनकी खंडप्रंथ संज्ञा न करके केवल तीन ही खंड कहे जाते हैं वर्योकि रोषमें कोई प्रधानता नहीं है और यह उनके संक्षेप प्ररूपणसे जाना जाता है × । इसी संक्षेप प्ररूपणका प्रमाण देकर वर्गणाको भी खंड संज्ञासे

× दखो संतपल्पणा, जिस्द !, भूमिका पृ. ६५ टिप्पणी.

भुत करनेका प्रयत्न किया जाता है। पर संक्षेप और विस्तार आपेक्षिक राज्द हैं, अतएव वर्गणाका प्रख्याण घवकामें संवेषपक्षे किया गया है या विस्तारसे यह उसके विस्तारका अन्य अधिकारोंके विस्तारसे मिछान द्वारा ही जानां जा सकता है। अतएव उक्त अधिकारोंके प्ररूपण-विस्तार को देखिये। बंधसामित्तविचयखंड अमरावती प्रतिके पत्र ६६७ पर समाप्त हुआ है। उसके पक्षात् मंगछात्ररण व श्रुतावतार आदि विवरण ७१३ पत्र तक चलकर कृतिका प्रारंभ होता है जिसका ७५६ तक ४३ पत्रोंमें, वेदनाका ७५६ से ११०६ तक ३५० पत्रोंमें, स्पर्शका ११०६ से १११४ तक ८ पत्रोंमें, वेदनाका ७५६ से ११०६ तक ३५० पत्रोंमें, स्पर्शका ११०६ से १११४ तक ८ पत्रोंमें, कर्मका १११४ से ११५९ तक ४५ पत्रोंमें, प्रश्तिका ११५९ से १२२०९ तक ५० पत्रोंमें और बंधन के बंध और बंधनीयका १२०९ से १३३२ तक १२३ पत्रोंमें प्ररूपण पाया जाता है। इन १२३ पत्रोंमें बंधका प्ररूपण प्रथम १० पत्रोंमें ही समाप्त करदिया गया है, यह कहकर ।की-----

' एत्थ उद्देले खुद्दाबंधस्स एक्कारस-अणियोगद्दाराणं परूत्रणा कायब्दा ' |

इसको आगे कहा गया है कि----

' सेण वंधणिज्ज-परूवणे कीरमाणे वग्गण-परूवणा णिष्छएण कायब्वा, अण्णहा तेवीस-वभाणासु इमा चेव वग्गणा बंधपाओग्गा अण्णाओ वंधपाओग्गाओ ण होंति सि अवगमाणुववसीदो । वग्गणाणमणु-मग्गणट्टदाए तत्थ इमाणि अट्ठ अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवति ' इत्यादि ।

अर्थात् बंधनीयके प्ररूपण करनेमें वर्गणा की प्ररूपणा निश्चयतः करना चाहिये, अन्यथा तेईस वर्गणाओंमें ये ही वर्गणाएं बंधके योग्य हैं अन्य वर्गणाएं बंधके योग्य नही हैं, ऐसा ज्ञान नहीं हो सकता । उन वर्गणाओंकी मार्गणाके लिये ये आठ अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं । इत्यादि ।

हत प्रकार पत्र १२१९ से वर्गणाका प्ररूपण प्रारंभ होकर पत्र १३३२ पर समाप्त होता है, जहां कहा गया है कि---

' एवं विस्ससोवचयपरूवणाए समचाए बाहिरियवग्गणा समत्ता होदि '।

इसप्रकार वर्गणाका विस्तार ११३ पत्रोंमें पाया जाता है, जो उपर्युक्त पांच अभिकारोंमेंसे बेदमाको छोड़कर रोष सबसे कोई दुगुना व उससे भी अधिक पाया जाता है। पूरा खुदाबंधसंड इन्ह से पन्द तक १०१ पत्रोंमें तथा बंधसामित्तविचयखंड ५०६ से ६६७ तक ९१ पत्रोंमें पाया जाता है। किन्तु एक अनुयोगदारके अवान्तरके मा अवान्तर भेद वर्गणाका विस्तार इन दीनों संडौंसे अधिक है। ऐसी अवस्यामें उसका प्ररूपण संक्षिप्त कहना चाहिये वा किस्तूत और उससे उसे संड संज्ञा प्राप्त करने योग्य प्रधानत्व प्राप्त होसका वा नहीं, यह पाठक विचार करें।

1.4

#### यर्गणाखंड-विचार

## २. वेदनाखंडके आदिका मंगलाचरण और कौन कौन खंडोंका है ?

वेदनाखंडके आदिमें मंगल्सूत्र पाये जाते हैं । उनकी टीकामें धवलाकारने खंडविभाग व उनमें मंगलाचरणकी व्यवस्था संबंधी जो सूचना दी है उसको निम्न प्रकार उद्घृत किया जाता है----

' उवरि उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु कस्सेदं मंगरूं ? तिण्णं खंडाणं । कुदो ? वग्गणा-महार्वधाणमाद्दीय मंगछकरणादो । ण च मंगरेण विणा सूदवर्किभडारओं गंथस्स पारभदि, तस्स अणाइरिवत्तपसंगादो×× कदि-पास-कम्म-पयडि-अणियोगदाराणि वि पूत्थ परूविदाणि, तेसि खंडगंथसण्णमकाऊण तिणि चेव खंडाणि त्ति किमट्ठं उच्चदे ? ण, तेसि पहाणत्ताभावादो । तं पि कुदो णव्यदे ? संखेवेण परूषणादो ? ।

वर्गणाखंडको धवछान्तर्गत स्वीकार न करनेवाळे विद्वान् इस अवतरणको देकर उसका यह अभिप्राय निकालते हैं कि-'' वीरसेनाचार्यने उक्त मंगलस्त्रोंको ऊपर कहे हुए तीनों खंडों वेदना, बंधसामित्तविचओ और खुदाबंधो-का मंगलाचरण बतलाते हुए यह स्पष्ट सूचना की है कि वर्गणा-खंडके आदिमें तथा महावंधखंडके आदिमें प्रथक् मंगलाचरण किया गया है, मंगलाचरणके विना भूतबलि आचार्य प्रथका प्रारंभ ही नहीं करते हैं। साथ ही यह भी बतलाया है कि जिन कदि, फास, कम्म, पयडि ( बंधण ) अणुयोगदारोंका भी यहां ( एथ )-इस वेदनाखंडमें प्ररूपण किया गया है उन्हें खंडप्रंथ संज्ञा न देनेका कारण उनके प्रधानताका अभाव है, जो कि उनके संक्षेप कथनसे जाना जाता है । उक्त फास आदि अनुयोगदारोंको में पहां ( किसीके भी छुरूमें मंगलाचरण नहीं है और इन अनुयोगदारोंकी प्ररूपणा वेदनाखंडमें की गई है, तथा इनमेंसे किसीको खंडप्रंयकी संज्ञा नहीं दी गई यह बात ऊपरके शंका समाधानसे स्पष्ट हे । "

अब इस कयनपर बिचार कीजिये । ' उवारे उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु ' का अर्थ किया गया है ' ऊपर कहे हुए तीन खंड, अर्थात् वेदना, बंधसामित्त और खुदाबंध ' । हमें यहांपर यह याद रखना चाहिये कि खुदाबंध और बंधसामित्त खंड दूसरे और तीसरे हैं जिमका प्ररूपण हो चुका है, और अभी वेदनाखंडके केवल मंगलाचरणका ही विषय चल रहा है, खंडका विषय आगे कहा जायगा । ' उबरि उच्चमाण ' की संस्कृत छाया, जहांतक मैं समझता हूं ' उपरि उच्यमान ' ही हो सकती है, जिसका अर्थ ' ऊपर कहे हुए ' कदापि नहीं हो सकता । ' उच्यमान ' हा हो सकती है, जिसका अर्थ ' ऊपर कहे हुए ' कदापि नहीं हो सकता । ' उच्यमान ' का ताल्पर्य केवल प्रस्तुत या आगे कहे जानेवालेसे ही हो सकता है । किर भी यदि 'ऊपर कहे हुए ' ही मानर्के तो उससे ऊपरके दो और आगेके एक का समुच्चय कैसे हो सकता है ! ऊपर कहे हुए तीन खंड तो जीवहाण आदि तीन हैं, बाकी तीन आगे कहे जानेवाले हैं । इसप्रकार उपर्युक्त वाक्यका जो अर्थ लगाया गया है वह बिल्कुल ही असंगत है ।

अब आरोका राका-समाधान देखिये। प्रश्न है यह कैसे जाना कि यह बंगरू 'उबीर

उच्चमाण ' तीनों खंडोंका है ! इसका उत्तर दिया जाता है ' क्योंकि वर्गणा और महाबंध के आदिमें मंगळ किया गया है '। यदि यहां जिन खंडोंमें मंगळ किया गया है उनको अलग निर्दिष्ट कर देना आचार्यका अभिप्राय था तो उनमें जीवट्टाणका भी नाम क्यों नहीं लिया, क्योंकि तभी तो तीन खंड रोष रहते, केवल वर्गणा और महाबंधवंधे अलग कर देनेसे तो चार खंड रोष रह गये। फिर आगे कहा गया है कि मंगल किये बिना भूतबलि भद्दारक प्रंथ प्रारंभ ही नहीं करते, क्योंकि उससे अनाचार्यखका प्रसंग आ जाता है। पर उक्त व्यवस्थाके अनुसार तो यहां एक नहीं, दो दो खंड मंगलके बिना, केवल प्रारंभ ही नहीं, समाप्त भी किये जा चुके; जिनके मंगलाचरणका प्रबंध अब किया जा रहा है, जहां स्वयं टीकाकार कह रहे हैं कि मंगलाचरण आदिम ही किया जाता है, नहीं तो अनाचार्यखका दोष आ जाता है। इससे तो धवलाकारका मत स्पष्ट है कि प्रस्तुत प्रंथरचनामें आदि मंगलका अनिवार्य रूपसे पालन किया गया है। हमने आदिमंगल्डके अतिरिक्त मध्यमंगल और अन्तमंगलका भी विधान पढ़ा है। किया नाया है। हमने प्रकार द्वारा वेदनाखंडके आदिका मंगल खाद मंगल खुदावंधका भी मंगल सिद्ध नहीं किया जा सकता। इसप्रकार यह रांका समाधान विधयको समझानेकी अपेक्षा अधिक उलझनमें ही जिया जा है। इल्लने वाला है।

आगेके रांका समाधानकी और भी दुर्दशा की गई है। प्रश्न हे कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृति अनुयोगद्वार भी यहां प्ररूपित हैं, उनकी खंडसंज्ञा न करके केवल तीन ही खंड क्यों कहे जाते हैं ? यहां स्वभावत: यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यहां कौनसे तीन खंडोंका अभिप्राय है ? यदि यहां भी उन्हीं खुदाबंध, बंधसामित्त और वेदनाका अभिप्राय है तो यह बतलानेकी आवस्यकता है कि प्रस्तुतमें उनकी क्या अपेक्षा है। यदि चौवींस अनुयोगद्वारोंमेंसे उत्पत्तिर्भा यहां अपेक्षा है तो जीवस्थान, बर्गणा और महाबंध भी तो वहींसे उत्पत्न हुए हैं, फिर उन्हें किस विचारसे अल्ग किया गया ? और यदि वेदना, बर्गणा और महाबंधसे ही यहां अभिग्राय है तो एक तो उक्त क्रममें भंग पड़ता है और दूसरे वर्गणाखंडके भी इन्हीं अनुयोगद्वारोंमें अन्तर्भावका प्रसंग आता है। जिन अनुयोगद्वारोंकी ओरसे खंड संज्ञा प्राप्त न होनेकी शिकायत उठायी गई है उनमें वेदनाका नाम नहीं है। इससे जाना जाता है कि इसी वेदना अनुयोगद्वार परसे वेदनाखंड संज्ञा प्राप्त हुई है। पर यदि 'एत्था' का तात्पर्य " इस वेदनाखंडमें " ऐसा लिया जाता है तब तो यह भी मानना पड़ेगा कि वे तीनों खंड जिनका उन्नेख किया गया है, वेदनाखंडके अन्तर्गत हैं। पर यदि 'एत्था' का तात्पर्य "इस वेदनाखंडमें " ऐसा लिया जाता है तब तो यह भी मानना पड़ेगा कि वे तीनों खंड जिनका उन्नेख किया गया है, वेदनाखंडके अन्तर्गत हैं। पर यदि 'ग्रन्था क्यों अपनी तरफसे जोड़ा गया जवकि वह मूल्गें नहीं है, यह भी कुछ समझमें नहीं आता। इसप्रकार यह प्रश्न भी बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न करनेवाळा सिद्य होता है।

अतः वेदनाखंडके आदिमें आये हुए मंगळाचरणको खदाबंध और बंधसामित्रका भी सिद्ध

 $(\cdot, \cdot)_{i \in I}$ 

वर्गणाखंड-विचार

२१

करना तथा इति आदि चौवीसों अनुयोगद्वारोंको वेदनाखंडान्तर्गत बतलाना बड़ा वेतुका, वे आधार और सारे प्रसंगको गड़बर्डामें डालनेवाला है। यह सब कल्पना किन भूलोंका परिणाम है और उक्त अवतरणोंका सच्चा रहस्य क्या है यह आगे चलकर बतलाया जायगा। उससे पूर्व शेष तीन युक्तियोंपर और विचार करलेना ठीक होगा।

## ४. वेदनाखंड समाप्तिकी पुष्पिका

धवलामें जहां वेदनाका प्ररूपण समाप्त हुआ है वहां यह वाक्य पाया जाता है---

एवं वेयण-अप्पाबहुगाणिओगहारे समते वेयणाखंड समत्ता।

इसके आगे कुछ नमस्कार वाक्योंके पश्चात् पुनः लिखा मिलता है 'वेदनाखंड समाप्तम् '। ये नमस्कार वाक्य और उनकी पुष्पिका तो स्पष्टतः मूलग्रंथके अंग नही हैं, वे लिपिकार द्वारा जोडे गये जान पडते हैं। प्रश्न है प्रथम पुष्पिकाका जो मूल प्रंथका आवस्यक अंग है। पर उसमें भी ' वेथणाखंड समत्ता ' वाक्य व्याकरण की दृष्टिसे अशुद्ध है । वहां या तो ' वेयणाखंडो समत्तो ' या ' वेयणाखंडं समत्तं ' वाक्य होना चाहिये था । समाछोचकका यह भी अनुमान गलत नहीं कहा जा सकता कि इस वाक्यमें खंड शब्द संभवतः प्रक्षिप्त है, उस शब्दको निकाल देनेसे ' वेयणा समत्ता' वाक्य भी ठीक बैठ जाता है। हो सकता है वह लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त इआ हो। पर विचारणीय बात यह है कि वह कब और किस लिये प्रक्षिप्त किया गया होगा। इस प्रक्षेपको आधुनिक लिपिकारकृत तो समालोचक भी नहीं कहते । यदि वह प्रक्षिप्त है तो उसी लिपिकारकत हो सकता है जिसने मूडविदीकी ताडुपत्रीय प्रति लिखी। हम अन्यत्र बतला चुके हैं कि वह प्रति संभवतः शककी ९ वीं १० वीं शताब्दिकी, अर्थात् आजसे कोई हजार आठसौ वर्ष पुरानी है । उस प्रक्षिप्त बाक्यसे उस समयके कमसे कम एक व्यक्तिका यह मत तो मिळता ही है कि वह वहां वेदनाखंडकों समाप्ति समझता था। उससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि उस लेखककी जानकारीमें वहींसे दूसराखंड अर्थात् वर्गणाखंड प्रारंभ हो जाता था, नहीं तो वह बहां वेदनाखंडके समाप्त होनेकी विश्वासर्प्र्वक दो दे वार सूचना देने की धृष्टता न करता। खंडसमाप्ति होनेका इसके पास कोई आधार न होता तो उसे जबर्दस्ती यदि वहां खंड शब्द डालनेकी प्रवृत्ति ही क्यों होती ? समालोचक लिपिकारकी प्रक्षेपक-वहा प्रवृत्ति को दिखेलाते हुए कहते हैं कि अनेक अन्य स्यलोंपर भी नानाप्रकारके वाक्य प्रक्षिप्त पाये जाते हैं । यह बात सच है, पर जो उदाहरण उन्होंने बतलाया है वहां, और जहांतक मैं अन्य स्थल ऐसे देख पाया हूं वहां सर्वत्र यही पाया जाता है कि लेखकने अधिकारोंकी संधि आदि पाकर अपने गुरु या देवता का नमस्कार या उनकी प्रशस्ति संबंधी बाक्य या पण इधर उधर डाळे हैं। यह पुराने ठेखकोंकी रीली सी रही है। पर ऐसा स्थळ

एक भी देखनेमें नही आता जहां पर छेखकने अधिकार संबंधी सूचमा गछत सछत अपनी ओरसे जोड़ या घटा दी हो । अतएव चाहे वह खंड राब्द मौलिक हो और चाहे किसी लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त, उससे वेदना खंडके वहां समाप्त होने की एक पुरानी मान्यता तो प्रमाणित होती ही है ।

## ५ इन्द्रनन्दिकी प्रामाणिकता

इन्द्रसन्दि और विवुध श्रीधरने अपने अपने श्रुतावतार कथानकोंमें पट्खंडागमकी रचना व धवलादि टीकाओंके निर्माणका विवरण दिया है। विबुध श्रीधरका कथानक तो बहुत कुछ काल्पनिक है, पर उसमें भी धवलान्तर्गत पांच या छह खंडोंबाली बातीमें कुछ अविश्वसनीयता नहीं दिखती। इन्द्रनन्दिने प्रकृत विषयसे संबंध रखनेवाली जो वार्ता दी है उसको हम प्रयम जिल्दकी भूमिकामें पू. ३० पर लिख चुके हैं। उसका संक्षेप यह है कि बीरसेनने उपरितन निबन्धनादि अठारह अधिकार लिखे और उन्हें ही सल्तर्मनाम छठवां खंड संक्षेपरूप वनाकर छह खंडोंकी बहत्तर हजार प्रंयप्रमाण, प्राकृत संस्कृत भाषा मिश्रित धवलाटीका बनाई । उनके शब्दोंका धवलाकारके उन शब्दोंसे मिलान कीजिये जो इसी संबंधके उनके द्वारा कहे गये हैं । निबन्धनादि विभागको यहां भी ' उबरिम ग्रंथ ' कहा है और अठारह अनुयोगद्वारोंको संक्षेपमें प्ररूपण करनेकी प्रतिज्ञा की गई है। धरसेन गुरुद्वारा श्रुतोद्धारका जो विवरण इंद्रनन्दिने दिया है वह प्रायः आगें का त्यों धवला-कार के बत्तान्त से मिलता है । यह बात सच है कि इन्द्रनन्दि द्वारा कही गयी कुछ बोते धवला-न्तर्गत वातींसे किंचित् भेद रखती हैं । किन्तु उनपरसे इन्द्रनन्दिको सर्वथा अप्रामाणिक नहीं ठहराया जा सकता, विशेषतः खंडविभाग जैसे स्थूळ विषयपर । यद्यपि इन्द्रनन्दिका समय निर्णीत नहीं है, पर उनके संबंधमें पं. नाथूरामजी प्रेमीका मत है कि ये वे ही इन्द्रनन्दि हैं जिनका उल्लेख आचार्य नेमिचन्द्रने गोम्मटसार कर्मकाण्डकी ३९६ वीं गाथामें गुरुरूपसे किया है जिससे वे विक्रमकी ११ हवीं शताब्दिके आचार्य ठहरते हैं \*। इसमें कोई आश्वर्य भी नहीं है। वौरसेन व धवलाकी रचनाका इतिहास उन्होंने ऐसा दिया है जैसे मानो वे उससे अच्छी तरह निकटतासे सपरिचित हों । उनके गुरु एलाचार्य कहां रहते थे, बीरसेनने उनके पास सिद्धान्त पढ़कर कहां कहां जाकर, किस मंदिरमें बैठकर, कौनसा प्रंथ साम्हने रखकर अपनी टीका लिखी यह सब इन्द्रनुन्दिने अच्छी। तरह बतछाया है जिसमें कोई बनावट व क्वत्रिमता दृष्टिगोचर नहीं होती, बल्कि बहुत ही प्रामाणिक इतिहास जंचता ह । उन्होंने कदाचित् धवछा जयधवलाका सूक्ष्मावलोकन भले ही न किया हो और शायद नोट्स ले रखनेका भी उस समय रिवाज़ न हो, पर उनकी सूचनाओंपरसे यह बात सिद्ध नहीं होती कि धवल

\* मा, दि, जै, ग्रंथमाठा नं. १२, भूमिका पृ. २

जयधवळ प्रंथ उनके साम्हने मौजूद ही नहीं थे। उन्होंने ऐसी कोई बात नहीं छिखी जिसकी इन प्रंथोंकी बार्तासे इतनी विषमता हो जो पढ़कर पांछे स्पृतिके सहारे लिखनेवाळे द्वारा न की जा सकती हों। इसके अतिरिक्त उनका प्रंथ अमीतक प्राचीन प्रतियोंपरसे सुसंपादित भी नहीं हुआ है। किसी एकाध प्रतिपरसे कभी छाप दिया गया था, उसीकी कापी हमारे साम्हने प्रस्तुत है। उन्होंने जो बार्ता किवदन्तियों व सुने सुनाये आधारपरसे छिखी हो वह भी उन्होंने बहुत सुव्य-वस्थित करके, भरसक जांच पड़तालके पश्चात्, लिखी है और इसीतरह वे बहुतसी ऐसी बार्तो-पर प्रकाश डाल सके जो धवलादिमें भी व्यवस्थित नहीं पायी जाती, जैसे धवलासे पूर्वकी टीकायें व टीकाकार आदि। वे कैसे प्रामाणिक और निर्भाक तथा अपनी कमजोरियों को स्वीकार करलेने-वाखे विष्पक्ष ऐतिहासिक थे यह उनके उस वाक्य परसे सहज ही जोना जा सकता है जहां उन्होंने साफ साफ कह दिया है कि गुणधर और धरसेन गुरुओंकी पूर्वापर आचार्य परम्परा हम नहीं जानते क्योंकि न तो हमें वह बात वतलानेवाला कोई आगम मिला और न कोई मुनिजन ×। कितनी स्पष्टवादिता, साहिलिक सचाई और नैतिकवल इस अज्ञानकी स्वीकारतामें भरी हुई है ? क्या इन वाक्योंको लिखनेवालेकी प्रामाणिकतामें सहज ही अविश्वास किया जा सकता है ?

## ६. मुडविद्रीसे प्रतिलिपि करनेवाले लेखककी प्रामाणिकता

जिस परिस्थितिमें और जिस प्रकारसे धवला और जयधवलाकी प्रतियां मूर्डविद्रीसे बाहर निकली हैं उसका हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें विवरण दे आये हैं। उस परसे उपलब्ध प्रतियोकी प्रामाणिकतामें नाना प्रकारके सन्देह करना स्वाभाविक है। अतएव जो धवलाके भौतर वर्गणाखंडका होना नहीं मानते उन्हें यह भी कहनेको मिल जाता है कि यदि मूल धवलामें वर्गणाखंड रहा भी हो तो उक्त लिपिकारने उसे अपना परिश्रम बचानेके लिये जानबूझकर छोड़ दिया होगा और अन्तिम प्रशस्ति आदि जोड़कर अपने प्रथको पूरा प्रकट कर दिया होगा ताकि उसके पुरस्कारादिमें फरक न पड़े। इस कल्पनाकी सचाई झुठाई का पूरा निर्णय तो तभी हो सकता है जब यह प्रंथ ताड़पत्रीय प्रतिसे मिलाया जा सके। पर उसके अभावमें भी हम इसकी संभावनाकी जांच दो प्रकारसे कर सकते हैं। एक तो उस लेखकके कार्यकी परीक्षा द्वारा और दूसरे विद्यमान धवलाकी रचना की परीक्षा द्वारा। धवलाके संशोधन संपादन संबंधी कार्यमें हमें इस बातका बहुत कुछ परिचय मिला है कि उक्त लेखकने अपना कार्य कहांतक ईमानदारीसे किया है। हमें जो प्रतियां उपलब्ध हुई हैं वे मूडविदासे आई हुई कनाड़ी प्रतिलिपिकी नागरी प्रतिकी कापी की भी कापियां हैं। वे बहुत कुछ स्खलन–प्रचुर और अनेक प्रकारसे दोष पूर्ण है।

🗙 संतपरूबणा, जिल्द १, जूमिका पु. १५

1

1

Jain Education International

## षट्खंडागमकी प्रस्तावना

पर तो भी तीन प्रतियोंके मिन्नासे ही पूरा और ठीक पाठ बैठा लेना संभव हो जाता है। इससे ज्ञात होता है कि जो स्खलन इन आगेकी प्रतियोंमें पाये जाते हैं वे उस कनाड़ी प्रतिलिपिमें नहीं हैं। यधपि कुछ स्थल इन सब प्रतियोंके मिलानसे भी पूर्ण या निस्सन्देह निर्णात नहीं हो पाते और इसलिये संभव है वे स्खलन उसी प्रथम प्रतिलिपिकार द्वारा हुए हों, पर इस प्रंथकी लिपि, भाषा और बिषय संबंधी कठिनाइयोंको देखते हुए हमें आश्चर्य इस बातका नहीं है कि वे स्खलन हैं, किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि वे बहुत ही थोड़े और मामूली हैं, जो किसी भी लेखकके द्वारा अपनी शक्तिभर सावधानी रखनेपर भी, हो सकते हैं। जो लेखक एक खंडके खंडको छोड़कर प्रशस्ति आदि मिलाकर प्रंथको पूरा प्रकट करनेका दुःसाहस कर सकता है, उसके द्वारा रोष लिखाई भी ईमानदारीके साथ किये जानेकी आशा नहीं की जा सकती । पर उक्त लेखकका अभी तक हम जो परिचय धवलापर परिश्रम करके प्राप्त कर सके हैं, उसपरसे हम दढ़ताके साथ कह सकते हैं कि उसने अपना कार्य भरसक ईमानदारी और परिश्रमसे किया है । उसपरसे उसके द्वारा एक खंडको छोड़कर प्रंथको पूरा प्रकट कर देने जैसे छल्ल-कपट किये जानेकी शका करनेको हमारा जी बिल्कुल नहीं चाहता ।

पर यदि ऐसा छल कपट हुआ है तो धवलाकी जांच द्वारा उसका पता लगाना भी कठिन नहीं होना चाहिये । धवलाकी कुल टीकाका प्रमाण इन्द्रनन्दिने बहत्तर हजार और ब्रहाहेमने सत्तर हजार बतलाया है । हमारे सन्मुख धवलाकी तीन प्रतियां मौजूद हैं, जिनकी स्ठोक संख्याकी हमने पूरी कठोरतासे जांच की । अमरावतीकी प्रतिमें १४६५ पत्र अर्थात् २९३० पुष्ठ हैं और प्रस्वेक पृष्ठपर १२ पंक्तियां लिखी गई हैं । प्रस्वेक पंक्तिमें ६२ से ६८ तक अक्षर पाये जाते हैं जिससे औसत ६५ अक्षरोंकी ली जा सकती है । तदनुसार कुल प्रंथमें २९३० × १२ × ६५ × = २२८५४०० अक्षर पाये जाते हैं जिनकी स्ठोकसंख्या ३२ का भाग देकर ७१,४१५ आई । इसे सामान्य लेखेमें चाहे आप सत्तर हजार कहिये, चाहे बहत्तर हजार । कारंजा व आराकी प्रतियोंकी भी उक्त प्रकारसे जांच द्वारा प्रायः यही निष्कर्ष निकलता है । इससे तो अनुमान होता है कि प्रतियोंमें देखते हुए कमसे कम पांच सात हजार तो अवश्य रहा होगा । यह कर्मा प्रस्तुत प्रतियोंमें दिखाई दिये बिना नहीं रह सकती थी ।

विषयके तारतम्यकी दृष्टिसे भी धवला अपने प्रस्तुत रूपमें अपूर्ण कहीं नज़र नहीं आती। प्रथम तीन खंड तो पूरे हैं हो | चौथे वेदना खंडके आदिसे कृति आदि अनुयोगद्वार प्रारम्भ हो जाते हैं | इनमें प्रथम छद्द कृति, वेदना, फास, कम्म, पयडि और बंधन स्वयं भगवान् भूतबलि-द्वारा प्ररूपित हैं | इनके अन्तमें धवलाकारने कहा है—

' मूदबछिमडारएण जेणेदं सुत्तं देसामासियभावेण छिहिदं तेणेदेण सूचिद-सेस-अट्टारस-अणि-बोनहाराजं विनित्र संबोवेण पद्ध्वणं कस्साओ ( धवछा अ. पत्र १९१२). इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि आचार्य भूतबलिकी रचना यहीं तक है l किन्तु उक्त प्रतिज्ञा वाक्यके अनुसार रोप निबन्धनादि अठारह आधिकारोंका वर्णन धवलाकारने स्वयं किया है और अपनी इस रचनाको उन्होंने चूलिका कहा है—

एत्तो उवरिमगंथो चूछिया णाम ।

इन्हीं अठारह अनुयोगद्वारोंकी बीरसेनद्वारा रचनाका विशद इतिहास इन्द्रनन्दिने अपने श्रुतावतारमें दिया है \* । इसी चूलिका विभागको उन्होंने छठवां खंड भी कहा है । इसप्रकार चौवीसों अनुयोगद्वारोंके कथनके साथ प्रंथ अपने स्वाभाविक रूपसे समाप्त होता है । अब यदि इन्हीं अनुयोगद्वारोंके भीतर वर्गणाखंड नहीं माना जाता तो उसके लिये कौनसा विषय व अधिकार शेष रहा और वह कहांसे छूट गया होगा ? लेखकद्वारा उसके छोड़ दिये जानेकी आशंकाको तो इस रचनामें बिलकुल ही गुंजाइश नहीं रही ।

## वेदनाखंडके आदि अवतरणोंका ठीक अर्थ

वेदनाखंडके आदि मंगलाचरणकी व्यवस्था संबंधी सूचनाका जो अर्थ लगाया जाता है और उससे जो गड़वड़ी उत्पन्न होती है उसका हम ऊपर परिचय करा चुके हैं। अब हमें यह देखना आवश्यक है कि उक्त भूलोंका क्या कारण है और उन अवतरणोंका ठीक अर्थ क्या है। ' उवरि उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु ' का अर्थ ' ऊपर कहे हुए तीन खंड ' तो हो ही नहीं सकता। पर ऐसा अर्थ किये जानेके दो कारण मालूम होते हैं। प्रथम तो ' उवरि ' से सामान्य ऊपर अर्थात् पूर्वोक्त का अर्थ ले लिया गया है और दूसरे उसकी आवश्यकता मी यों प्रतीत हुई क्योंकि आगे वर्गणा और महाबंधमें अलग मंगल करनेका उल्लेख पाया जाता है। पर खोज और विचारसे देखा जाता है कि ' उवरि ' शब्दका धवळाकारने पूर्वोक्तके अर्थमें कहीं उपयोग नहीं किया। उन्होंने उस शब्दका प्रयोग सर्वत्र ' आगे ' के अर्थमें किया है और पूर्वोक्तके लिये ' पुब्ब ' या पुत्वुत्त का। उदाहरणार्थ, संतपरूवणा, पृष्ठ **१३० पर उन्होंने कहा है**----

संपहि षुट्वं उत्त-पथाईसमुक्तित्तणा.....एदण्हं पंचण्हमुवारे संपहि पुट्वुत्त-जहण्णटिदि .....च पविखत्ते चूलियाए णव अहियारा भवंति ।

अर्थात् पूर्वोक्त प्रकृति समुक्तीर्तनादि पांचोंके ऊपर अमी कहे गये जवन्यस्थिति आदि जोड़ देनेपर चूलिकाके नौ अधिकार हो जाते हैं। यहां ऊपर कहे जा चुकेके लिये 'पुव्वं उत्त ' व 'पुब्बुत्त ' शब्द प्रयुक्त हुए हैं और ' उबरि ' से आगेका ताल्पर्य है।

पृ. ७३ पर ' उवरि' से बने हुए उवरीदो ( उपरितः ) अव्ययका प्रयोग देखिये । आचार्य कहते हैं----

\* सं. प. भू. पू. ३८, ६७.

\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*

पुरुवाणुपुटवी पच्छाणुपुरुवी जस्थतस्थाणुपुरुवी चेदि तिविहा आणुपुरुवी । जं मूछादो परिवाडीए उच्चदे सा पुट्वाणुपुरुवी । तिस्से उदाहरणं ' उसहमजियं च वंदे ' । इच्चेवमादि । जं उचरीदो हेट्टा परिवाडीए उच्चदि सा पच्छाणुपुरुवी । तिस्से उदाहरणं–एस करेमि य पणमं जिणवरवसहस्स वङ्कुमाणस्स । सेसाणं च जिणाणं सिवसुहक्षंखा विलोमेण ॥

यहां यह बतलाया है कि जहां पूर्वसे पश्चातकी ओर कमसे गणना की जाती है उसे पूर्वानु-पूर्वी कहते हैं, जैसे ' ऋषभ और अजितनाथको नमस्कार '। पर जहां नीचे या पश्चात्से ऊपर या पूर्वकी ओर अर्थात् विलोमकमसे गणना की जाती है वह पश्चादानुपूर्वी कहलाती है जैसे मैं वर्द्धमान जिनेशको प्रणाम करता हूं और शेष (पार्श्वनाथ, नेमिनाथ आदि) तीर्थंकरोंको भी। यहां 'उबरीदो' से ताल्पर्य 'आगे' से है और पीछे की ओरके लिथे हेडा [ अधः ] शब्दका प्रयोग किया गया है।

धवलामें आगे बंधन अनुयोगदारकी समाप्तिके पश्चात् कहा गया है 'एत्तो उवरिमगंथो चूलिया णाम ' । अर्थात् यहांसे ऊपरके प्रंयका नाम चूलिका है । यहां भी ' उवरिम ' से तात्पर्य आगे आनेवाले ग्रंथविभागसे है न कि पूर्वोक्त विभागसे ।

और भी धवलामें सैकड़ें। जगह ' उबरि ' शब्दका प्रयोग हमारी दृष्टिमें इसप्रकार आया है '' उबरि भण्णमाणचुण्णिसुत्तादो, '' ' उबरिमसुत्तं भणदि ' आदि । इनमें प्रत्येक स्थलपर निर्दिष्ट सूत्र आगे दिया गया पाया जाता है । उबरिका पूर्वोक्तके अर्थमें प्रयोग हमारी दृष्टिमें नहीं आया

इन उदाहरणोंसे स्पष्ट है कि उवरिका अर्थ आगे आनेवाले खंडोंसे ही हो सकता है, पूर्वोक्तसे नहीं । और फिर प्रकृतमें तो 'उच्च्माण ' पद इस अर्थको अच्छी तरह स्पष्ट कर देता है क्योंकि उसका अभिप्राय केवल प्रस्तुत और आगे आनेवाले खंडोंसे ही हो सकता है । पर यदि आगे कहे जानेवाले तीन खंडोंका यह मंगल है तो इस बातका वर्गणा और महाबंधके आदिमें मंगलाचरणकी सूचनासे कैसे सामझस्य बैठ सकता है ! यही एक विकट स्थल है जिसने उपर्युक्त सारी गड़बड़ी विशेषरूपसे उत्पन्न की है । समस्त प्रकरणपर सब दृष्टियोंसे विचार करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि धवलाकी उपलब्ध प्रतियोंमें वहां पाठ की अद्युद्धि है । मेरे विचारसे 'वग्गणामहाबंधाणमादीर मंगल-करणादो ' की जगह 'वग्गणामहाबंधाणमादीए मंगलाकरणादो ' पाठ होना चाहिये । दीर्घ 'आ ' के स्थानपर व्हस्व 'अ ' की मात्रा की अशुद्धियां तथा अन्य स्वरोमें भी ष्हस्व दीर्घके व्यलय इन प्रतियोंमें मरे पड़े हैं । हमें अपने संशोधनमें इसप्रकारके सुधार सैकड़ों जगह करना पड़े हैं । यथार्थतः प्राचीन कन्नड लिपिमें व्हरव और दीर्घ स्वरोमें बहुधा विवेक नहीं किया जाता था × । हमारे अनुमान किये हुए सुधारके साथ पढ़नेसे पूर्वोक्त

× डा. उपाध्ये, परमात्मप्रकाश, भूमिका, पृ. ८३.

٠.•,

समस्त प्रकरण व शंका-समाधानकम ठीक बैठ जाता है। उससे उक्त दो अवतरणोंके बीचमें आये हुए उन शंका समाधानोंका अर्थ भी सुल्झ जाता है जिनका पूर्वकथित अर्थसे बिल्कुल ही सामज्जस्य नहीं बैठता बल्कि थिरोध उत्पन्न होता है। वह पूरा प्रकरण इस प्रकार है—

उबरि उद्यमाणेसु तिसु खंडेसु कस्सेदं मंगलं ? तिण्णं खंडाणं । कुदो ? वग्गणा-महावंधाणमादीए मंगलाकरणादो । ण च मंगलेण विणा भूतवलिभडारओ गंथस्त पारभदि, तस्स अणाइरियत्त पसंगादो । कधं वेयणाए आदीए उत्तं मंगलं सेस दो-खंडाणं होदि ? ण, कदीए आदिम्हि उत्तस्त एदस्तेव मंगलस्त सेसतेवीस अणियोगइरिसु पउत्तिदंसणादो । महाकम्मपथडिपाहुडत्तपेण चडवसिण्हभणियोगदाराणं भेदाभाषादो एगत्तं, तदो एगस्स एवं मंगलं तत्थ ण धिरुष्हादे । ण च एदेसिं तिण्हं खंडाणमेयत्तमेगखंडत्तपसंगादो लि, ण एस दोसो, महाकम्मपयडिपाहुडत्तपेण पदेसिं वि प्रात्तदंसणादो । कदि-पास- हम्म-पयडि-अणियोगदाराणि वि एत्थ परूविदाणि, तेसिं खंडग्गंथसण्णमकाळण तिण्णे चेव खंडाणि ति किमटं उच्चदे ? ण, तेसिं पहाणताभावादो । तं वि कुदो गण्डदे ? संखेवेण परूवणादो ।

इसका अनुवाद इस प्रकार होगा----

शंका-अगे कहे जाने वाले तीन खंडों (वेदना वर्गणा और महावंध) में से किस खंड का यह मंगलाचरण है?

समाधान - तीनों खंडोंका !

शंका - कैसे जाना ?

समाधान — वर्गणाखंड और महाबंध खंडके आदिमें मंगल न किये जानेसे । मंगल-किये विना तो भूतबलि मट्टारक प्रंथका प्रारंभ ही नहीं करते क्योंकि इससे अनाचार्यस्वका प्रसंग आ जाता है ।

र्शका - वेदनाके आदिमें कहा गया मंगल रोष दो खंडेंका भी कैसे हो जाता है ?

समाधान-- क्योंकि कृतिके आदिमें किये गये इस मंगलकी रोष तेवीस अनुयोगद्वारोंमें भी प्रचति देखी जाती है।

शुंका – महाकर्भप्रकृतिपाहुडत्वकी अपेक्षासे चौधीसों अनुयोगद्वारोंमें भेद न होनेसे उनमें एकत्व है, इसाळिये एकका यह मंगळ रोष तेवीसोंमें विरोधको प्राप्त नहीं होता । परंतु इन तीनों खंडोंमें तो एकत्व है नहीं, क्योंकि तीनोंमें एकत्व मान छेनेपर तीनोंके एक खंडत्वका प्रसंग आजाता है?

समाधान — यह कोई दोष नहीं, क्योंकि-महाकर्मप्रकृतिपाहुडल्वकी अपेक्षासे इनमें भी एकल देखा जाता है।

रांका — कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृति अनुयोगद्वार भी यहां ( प्रंथके इस भागमें ) प्ररूपित किये गये हैं, उनकी भी खंड प्रंथ संज्ञा न करके तीन ही खंड क्यों कहे जाते हैं ? समाधान—क्योंकि इनमें प्रधानताका अभाव है। शंका—यह कैसे जाना ? समाधान—उनका संक्षेंपमें प्ररूपण किया गया है इससे जाना।

इस परसे यह बात स्पष्ट समझमें आजाती है कि उक्त मंगलाचरणका सम्बन्ध बंध-सामित्त और ख़ुद्दाबंध खंडोंसे बैठाना बिलकुल निर्मूल, अस्वाभाविक, अनावश्यक और धवलाकार के मतसे सर्वथा विरुद्ध है। हम यह भी जान जाते हैं कि वर्मणाखंड और महाबंधके आदिमें कोई मंगलाचरण नहीं है, इसी मंगलाचरणका अधिकार उनपर चाछ रहेगा । और हमें यह भी सूचना मिल जाती है कि उक्त मंगलके अधिकारान्तर्गत तीनें। खंड अर्थात् वेदना, वर्गणा और महाबंध प्रस्तुत अनुयोगद्वारोंसे बाहर नहीं हैं। वे किन अनुयागदारोंके भीतर गर्भित हैं यह भी संकेत धवछाकार यहां स्पष्ट दे रहे हैं। खंड संज्ञा प्राप्त न होने की शिकायत किन अनुयोग-दारोंकी ओरसे उठाई गई ? कदि, पास, कम्म और पयडि अनुयोगद्वारोंकी ओरसे । वेदणा-अनुयोगद्वारका यहां उल्लेख नहीं है क्योंकि उसे खंड संज्ञा प्राप्त है। धवलाकारने बंधन अनुयोगद्वारका उल्लेख यहां जान बूझकर छोड़ा है क्योंकि बंधनके ही एक अवान्तर भेद वर्गणासे वर्गणाखंड संज्ञा प्राप्त हुई है और उसके एक दूसरे उपमेद बंधविधानपर महाबंधकी एक भव्य इमारत खड़ी है। जीवडाण, खुदाबंध और बंधसामित्ताविचय भी इसीके ही मेद प्रमेदोंके सुफल हैं। इसलिये उन सबसे भाग्यवान पांच पांच यशर्या संतानके जनयिता बंधनको खंड संज्ञा प्राप्त न होने को कोई शिकायत नहीं थी। रेष अठारह अनुयोगदारोंका उल्लेख न करनेका कारण यह है कि भूतबलि भट्टारकने उनका प्ररूपण ही नहीं किया। भतबछिकी रचना तो बंधन अनुयोगद्वारके साथ ही, महाबंध पूर्ण होने पर, समाप्त हो जाती है जैसा हम ऊपर बतला चुके हैं।

इसी अबतरणसे ऊपर धवळाकारने जो कुछ कहा है उससे प्रकृत विषयपर और भी बहुत विशद प्रकाश पड़ता है । वह प्रकरण इसप्रकार है—

तत्थेदं किं णिबद्धमाहो अणिबद्धमिदि ? ण ताव णिबद्धमंगलमिदं महाकम्मपयडीपांहुडस्स कदि-यादि-चउवीसअणियोगावयवस्य आदीष् गोदमसामिणा परुविदस्स भूतवलिभढारएण वेयणाखंडस्स आदीए मंगलटं तत्तो आणेवूण ठविदस्स णिवद्धत्तविरोहादो । ण च वेयणाखंडं महाकम्मपयडीपाहुडं अवयवस्स भवयवित्तविरोहादो । ण च सूदवली गोदमो विगलसुदधारयस्स धरसेणाइरियसीसस्स भूदवलिस्स सयल-सुद्धारयवड्डुमाणंतेवासिगोदमत्तविरोहादो । ण चाण्णो पयारो णिबद्धमंगलत्तस्स हेदुभूदो अत्थि । तम्हा अणिबद्धमंगलमिदं । अधवा होदु णिबद्धमंगलं । कथं वेयणाखंडादिखंडगयस्स महाकम्मपयडिपाहुडरं ? ण, कदिया (दि) चउवीस-अणियोगदारहितो एयंतेण पुधसूदमहाकम्मपयडिपाहुडाभावादो । एदेसिमाणियोगदाराणं कम्मपयडिपाहुडत्ते संते पाहुड-बहुत्तं पसज्बदे ? ण एस दोसो, कथंचि इच्छिज्जमाणत्तादो । कर्घ वेयणाए

 $\cdot \cdot \cdot_2$ 

For Private & Personal Use Only

#### वर्गणाखंड-विचार

महापरिमाणाए उवसंहारस्स इसस्स वेयणासंडस्स वेयणा-भावो ? ण, अवयवेहिंतो एयंतेण पुधभूदस्स अवयविस्स अणुवलंभादो। ण च वेयणाए बहुत्तमणिट्टमिन्छिजमाणत्तादो । कधं भूदवलिस्स गोटमत्तं ? किं तस्स गोटमत्तेण ? कधमण्णहा मंगलस्स णिवद्वत्तं ? ण, भूदवलिस्स खंड-गंथं पडि कतारत्ताभावादो । ण च अण्णेण कय-गंथा-हियाराणं एगटेसस्स पुव्विहा (पुव्विल्ल) सदस्थ-संदब्भस्स परूवओ कत्तारो होदि, अइप्पसंगादी । अधवा भृदवली गोदमो चेव एगाहिष्यायत्तादो। तदो सिद्धं णिदद्धमंगलत्तं पि। उवरि उच्चमाणेसु विसु खंडेसु... इत्यादि ।

१ शंका - इनमें से, अर्थात् निबद्ध और अनिबद्ध मंगलोंमेंसे, यह मंगल निबद्ध है या अनिबद्ध ?

२ इंग्रेका — वेदनाखंड आदि खंडोंमें समात्रिष्ट (प्रंथ) को महाकर्मप्रकृतिपाहुडपना कैसे प्राप्त हो सकता है ?

समाधान-- क्योंकि कृति आदि चौवीस अनुयोगदारों से सर्वथा पृथक्भूत महाकर्मप्रकृति-पाहुडकी कोई सत्ता नहीं है।

**३ शंका**—इन अनुयोगदारोंमें कर्मप्रकृतिपाहुडल मान लेनेसे तो बहुतसे पाहुड माननेका प्रसंग आ जाता है !

समाधान-यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यह बात कथंचित् अर्थात् एक दृष्टिसे अभीष्ट है।

४ शुंका----महापरिमाणवाळी वेदनाके उपसंहाररूप इस वेदनाखंडको वेदना अनुयोगदार कैसे माना जाय !

समाधान - ऐसा नहीं है, क्योंकि अवयवोंसे एकान्ततः प्रथक्भूत अवयवी तो पाया नहीं जाता । और इससे यदि एकसे अधिक वेदना माननेका प्रसंग आता है तो वेदनाके बहुत्वसे कोई अनिष्ट भी नहीं, क्योंकि वह बात इष्ट ही है ।

५ शंका---भूतबलिको गौतम कैसे मान लिया जाय ?

#### षट्खंडागमको प्रस्तावना

समाधान---भूतबछिको गौतम माननेका प्रयोजन ही क्या है ?

् **६ शंका** - यदि भूतबल्लिको गौतम न माना जाय तो मंगलको निबद्धपना कैसे प्राप्त हो सकता है ?

समाधान – क्योंकि भूतबलिके खंडग्रंथके प्रति कर्तापनेका अभाव है। कुछ दूसरे के द्वारा रचे गये ग्रंथाधिकारोंमेंसे एक देशका पूर्व प्रकारसे ही शब्दार्थ और संदर्भका प्ररूपण करनेवाला ग्रंथकर्ता नहीं हो सकता क्योंकि इससे तो आतिप्रसंग दोष अर्थात् एक ग्रंथके अनेक कर्ता होनेका प्रसंग आ जायगा। अथवा, दोनोंका एक ही अभिप्राय होनेसे भूतवलि गौतम ही है। इसप्रकार यहां निबद्ध मंगलल्व भी सिद्ध हो जाता है।

यहांपर प्रथम रांका समाधानमें यह स्पष्ट कर दिया गया है कि वेदनाखंडके अन्तर्गत प्रा वेदना और वर्गणा-महाकम्मपयडिपाहुडका विषय नहीं है--वह उस पाहुडका एक अवयव मात्र है, अर्थात् उसमें उक्त पाहुडके चौवीसों अनुयोगदारोंका अन्तर्भाव नहीं किया जा सकता। महाकर्मप्रकृतिपाहुड अवयवी है और वेदनाखंड सीमाओंका निर्णय उसका एक अवयव।

दूसरे रांका समाधानसे यह सूचना मिलती है कि कृति आदि चौवांस अनुयोगदारोंमें अकेला वेदनाखंड नहीं फैला है, वेदना आदि खंड हैं अर्थात् वर्गणा और महावंधका भी अन्तर्भाव वहीं है। तीसरे रांका समाधानमें कर्मप्रकृतिपाहुड के कृति आदि अवयवोंमें भी एक दृष्टिसे पाहुडपना स्थापित करके चौथेमें स्पष्ट निर्देश किया गया है कि वेदनाखंडमें गौतमस्वामीकृत बड़े विस्तारवाले वेदना अधिकारका ही उपसंहार अर्थात् संक्षेप है। यह वेदना धवलाकी अ. प्रतिमें पृ. ७५६ पर प्रारम्भ होती है जहां कहा गया है —

> कम्महजणियवेयण-उवहि-समुत्तिण्णए जिणे णमिउं । वेयणमहाहियारं विविद्दारियारं परूवेमो ॥

और वह उक्त प्रतिके ११०६ वें पत्रपर समाप्त होती है जहां लिखा मिलता है---

' एवं वेयण-अप्पाबहुगाणिओगद्दारे समत्ते वेयणाखंड समत्ता ।

इसप्रकार इस पुष्पिकावाक्यमें अञ्चद्धि होते हुए भी वहां वेदनाखंडकी समाप्तिमें कोई रांका नहीं रह जाती ।

पांचवें और छठवें रांका समाधानमें भूतबलि और गौतममें प्रंथकर्ता व अभिप्रायको अपेक्षा एकत्व स्थापित किया गया है जो सहज ही समझमें आजाता है। इसप्रकार उक्त मंगल निवद भी सिद्ध करके बता दिया गया है।

· 4,

इसप्रकार उक्त शंका समाधानसे वेदनाखंडकी दोनों सीमायें निश्चित हो जाती हैं। कृति तो वेदनाखंडके अन्तर्गत है ही क्योंकि उक्त शंका समाधानकी सूचनाके अतिरिक्त मंगला-चरणके साथ ही वेदनाखंडका प्रारंभ माना ही गया है।

वेदनाखंडके विस्तारका एक और प्रमाण उपलब्ध है। टीकाकारने उसका परिमाण सोल्डह हजार पद बतल्या है। यया, 'खंडगंयं पडुच वेयणाए सोल्सपदसहस्साणि'। यह पद-संख्या भूतबल्कित सूत्र-प्रंथकी अपेक्षासे ही होना चाहिये। अतएव जवतक यह न कात हो जावे कि पदसे यहां धवलाकारका क्या ताप्पर्य है तथा वेदनादि खंडोंके सूत्र अलग करके उन पर वह माप न लगाया जावे तवतक इस सूचनाका हम अपनी जांचमें विशेष उपयोग नहीं कर सकते। तो भी चूंकि टीकाकारने एक अन्य खंडकी भी इसप्रकार पद संख्या दी है और उस खंडकी सीमादिके विषयमें कोई विवाद नहीं है इसल्थि हमें उनकी तुल्लासे कुछ आपेक्षिक ज्ञान अवश्य हो जायगा। धवलाकारने जीवदाण खंडकी पद संख्या अठारह हजार बतलाई है-'पदं पडुच अटारहपदसहस्सं' (संत प. प्र. ६०). इससे यह ज्ञात तुल्जासे कुछ आपेक्षिक ज्ञान अवश्य हो जायगा। धवलाकारने जीवदाण खंडकी पद संख्या अठारह हजार बतलाई है-'पदं पडुच अटारहपदसहस्सं' (संत प. प्र. ६०). इससे यह ज्ञात तुल्जासे केदनाखंडका परिमाण जीवटाणसे नवमांश कम है। जीवदाण के 8७५ पत्रोंका नवमांश लगभग ५३ होता है, अतः साधारणतया वेदनाखंडकी पत्र संख्या प्रलखर्म ६६७ से ११०६ तक अर्थात् ४३८ है जो आपेक्षिक अनुसार वेदनाकी पत्र संख्या प्रलखर्म ६६७ से ११०६ तक अर्थात् ४३८ है जो आपेक्षिक अनुमानके बहुत नजदीक पड़ती है। समस्त चौवीस अनुयोगदारोंको वेदनाके भीतर मान लेनेसे तो जीवटाणकी अपेक्षा वेदनाखंड धवला के तिगुनेसे मी अधिक बडा हो जाता है।

जब वेदनाखंडका उपसंहार वेदनानुयोगद्वारके साथ हो गया तब प्रश्न उठता है कि वर्गणा निर्णय उसके आगेके फास आदि अनुयोगद्वार किस खंडके अंग रहे ? ऊपर वेदनादि तीन खंडोंके उछेखोंके विवेचन से यह स्पष्ट ही है कि वेदनाके पश्चात् वर्गणा और उसके पश्चात् महाबंधकी रचना है । महाबंधकी सीमा निश्चितरूपसे निर्दिष्ट है क्योंकि धवलामें स्पष्ट कर दिया गया है कि बन्धन अनुयोगद्वारके चौथे प्रभेद बन्धविधानके चार प्रकार प्रकृति, स्थिति, अनुमाग और प्रदेशबंधका विधान सूतबलि महाकने महाबंधमें विस्तारसे लिखा है, इसलिये वह धवलके मीतर नहीं लिखा गया । अतः यहींतक वर्गणाखंडकी सीमा समझना चाहिये । वहांसे आगेके निबन्धनादि अठारह अधिकार टीकाकी सूचनानुसार चूलिका रूप हैं । वे टीकाकार कृत हैं भूतबल्कि रचना नहीं हैं ।

उक्त खंड विभागको सर्वथा प्रामाणिक सिद्ध करनेके छिये अब केवळ उस प्रकारके किसी प्राचीन विश्वसनीय स्पष्ट उछेखमात्रकी अपेक्षा और रह जाती है। सौभाग्यसे ऐसा एक उद्येख भी हमें प्राप्त हो गया है। मूडविद्रांके पं. लोकनाथजी शास्त्रीने वीरवाणीविलास जैन सिद्धांतमवनकी प्रथम वार्षिक रिपोर्ट (१९३५) में मूडविद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिपरसे महाधवल (महाबंध) का कुछ परिचय अवतरणों सहित दिया है। इससे प्रथम बात तो यह जानी जाती है कि पंडितजीको उस प्रतिमें कोई मंगलाचरण देखनेको नहीं मिला। वे रिपोर्ट में लिखते हैं " इसमें मंगलाचरण स्लोक, प्रथकी प्रशस्ति वगैरह कुछ भी नहीं है।" पं. लोकनाथजी की यह रिपोर्ट महत्वपूर्ण है क्योंकि पंडितजीने प्रथको केवल ऊपर नीचे ही नहीं देखा-उन्होंने कोई चार वर्षतक परिश्रम करके पूरे महाधवल प्रथकी नागरी प्रतिलिपि तैयार की है जैसा कि हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें बतला आये हैं। अतएव उस प्रथका एक एक शब्द उनकी दृष्टि और कल्मसे गुजर चुका है। उनके मतसे पूर्वोक्त 'मंगलकरणादो ' पदमें हमोर 'मंगलाकरणादो' रूप सुध्वर की पुष्टि होती है-

दूसरी बात जो महाधवलके अवतरणोंमें हमें मिलती है वह खंडविभागसे संबंध रखती है। महाबंधपर कोई पंचिका भी उस प्रतिमें प्रथित है जैसा कि अवतरणकी प्रथम पंक्तिसे ज्ञात होता है—

' वोच्छामि संतकम्मे पंचियरूवेण विवरणं सुमहत्थं '

इसी पंचिकाकारने आगे चलकर कहा है---

' महाकम्मपयाडिपाहुडस्स कदि-वेदणाओ(दि) चौब्वीसमणियोगद्दारेसु तथ्थ कदि-वेदणा त्ति जाणि अणियोगदाराणि वेदलाखंडम्हि, पुणो पास (-कम्म पयडि-बंधणाणि) चत्तारि अणियोगदारेसु तथ्थ बंध बंधणिज्जणामणियोगेहि सह वग्गणाखडम्हि, पुणो बंधविधाणमाणियोगो खुदाबंधम्मि सप्पर्वचेण परूविदाणि । पुणो तेहिंतो सेसट्ठारसणियोगदाराणि सत्तकम्मे सब्वाणि परूविदाणि । तो वि तस्सइ्गंभीरत्तादो अत्थविसम-पदाणमत्थे थोरुद्धयेण पंचियसरूवेण भणिस्सामो ' × ।

इस अवतरणमें शब्दोंमें अशुद्धियां हैं। कोष्टकके भीतरके सुधार या जोड़े हुए पाठ मेरे हैं। पर उसपरसे तथा इससे आगे जो कुछ कहा गया है उससे यह स्पष्ट जान पड़ा कि यहां निबंधनादि अठारह अधिकारोंकी पंजिका दी गई है। उन अठारह अधिकारोंका नाम 'सत्तकम्म ' या, जिससे इन्द्रनन्दिके सत्कर्मसंबंधी उल्लेखकी पूरी पुष्टि होती है। प्राप्त अवतरण परसे महाधवल्डकी प्रति व उसके विषय आदिके संबंधमें अनेक प्रश्न उपस्थित होते हैं, और प्रतिकी परीक्षाकी बड़ी अभिछाषा उत्पन्न होती है, किन्तु उस सबका नियंत्रण करके प्रकृत विषय-पर आनेसे उक्त अवतरणमें प्रस्तुतोपयोगी यह बात स्पष्ट रूपसे माल्ट्रम हो जाती है, कि कृति

× यह अवतरण सं. प. जिल्द १ की भूमिका पृ. ६८ पर दिया जा चुका है। ' पर वहां भूछसे ' पुणे ते-हिंको ' आदि वाक्य छूट गया है। जतः प्रछत्तोपयोगी उस अवतरणको यहां फिर पूरा दे दिया है। और वेदना अनुयोगद्वार वेदनाखंडके तथा फास, कम्म, पयडि और बंधनके बंध और बंधनीय भेद वर्गणाखंडके भीतर हैं । इससे इमारे विषयका निर्विवादरूपसे निर्णय हो जाता है । प्रथम जिल्दकी भूमिकामें ठीक इसीप्रकार खंडविमागका परिचय कराया जा चुका है उस परिचयकी ओर पाठकोंका ध्यान पुनः आकर्षित किया जाता है ।

# ४· णमोकार मंत्रके आदिकर्ता.

जो ख्याति और प्रचार हिन्दुओंमें गायत्री मन्त्रका है तथा बौद्धोंमें त्रिसरण मन्त्रका था, वही जैनियोंमें णमोकार मन्त्रका है। धार्भिक तथा सामाजिक सभी कृत्यों व विधानोंके आरम्भमें जैनी इस मन्त्रका उच्चारण करते हैं। यही उनका दैनिक जपमन्त्र है। इसकी प्रख्यातिका एक पद्य निम्न प्रकार है, जो नित्य पूजनविधान में उच्चारण किया जाता है—

पुसो पंच-णमोयारो सब्वपापप्पणासणो । मंगलाणं च सब्वेसिं पढमं होइ मंगळं ॥

अर्थात् यह पंच नमस्कार मन्त्र सब पापों का नाश करने वाला है और सब मंगलोंमें प्रथम [श्रेष्ठ] मंगल है।

इस मन्त्रका प्रचार जैनियेंकि तीनों सम्प्रदायों-दिगम्बर, श्वेताम्बर और स्थानकवासियोंमें समानरूपसे पाया जाता है। तीनों सम्प्रदायोंके प्राचीनतम साहित्यमें भी इसका उल्लेख मिलता है। किंतु अभी तक यह निश्चय नहीं हुआ कि इस मन्त्रके आदिकर्ता कौन हैं। ययार्थतः यह प्रश्न ही अभी तक किसी ने नहीं उठाया और इस कारण इस मन्त्रको अनादि-निधन जैसा पद प्राप्त हो गया है।

किन्तु पट्खंडागम और उसकी टीका घवलाके अवलोकनसे इस णमोकार मन्त्रके कर्तृत्वके सम्बन्धमें कुछ प्रकाश पड़ता है, और इसीका यहां परिचय कराया जाता है।

षट्खंडागमका प्रथम खण्ड जीवट्ठाण है और इस खंडके प्रारम्भमें यही सुप्रसिद्ध मन्त्र पाया जाता है। टीकाकार वीरसेनाचार्यके अनुसार यही उक्त प्रन्थका सुत्रकारकृत मंगलाचरण है। वे लिखते हैं कि----

मंगल-णिमित्त-हेऊ-परिमाणं णाम तह य कत्तारं । वागरिय छप्पि पच्छा वक्खाणउ सत्थमाइरियो ॥ इदि णायमाइरिय-परंपरागयं मणेणावहारिय पुब्वाइरियायाराणुसरणं तिरयणहेउ ति पुष्फदंताइ-रियो मंगलादीणं छण्णं सकारणाणं परूवणट्टं सुत्तमाह—

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवऽझायाणं, णमो छोए सब्बसाहूणं ॥ ( सं० प० १, ए० ७)

अर्थात् ' मंगल, निमित्त, हेतु परिमाण, नाम और कर्ता. इन छहों का प्ररूपण करके

पश्चात् आचार्यको शास्त्रका व्याख्यान करना चाहिये । ' इस आचार्य परम्परागत ग्याय को मनमें धारण करके पुष्पदन्ताचार्थ मंगलादि छहोंके सकारण प्ररूपणेक लिये सूत्र कहते हैं, ' णमेो अरिहंताणं ' आदि ।

इसके आगे धवलाकारने इसी मंगलसूत्रको 'तालपलंब' सूत्रके समान देशामर्थक बतलाकर पूर्वोक्त मंगल, निमित्त आदि लहों का प्ररूपक सिद्ध किया है। तत्पश्चात् मंगल शब्दकी ब्युत्पत्ति व अनेक दृष्टियोंसे मेद प्रमेद बतलाते हुए मंगलके दो मेद इसप्रकार किये हैं—

तच मंगलं दुविहं णिवद्धमणिवद्धमिदि । तथ्य णिवद्धं णाम जो सुत्तरसादीए सुत्तइत्तारेण णिवद्ध-देवदा-णमोक्कारो तं णिवद्ध-मंगलं । जो सुत्तरसादीए सुत्तकत्तारेण कयदेवदाणमोक्कारो तमणिवद्ध-मंगलं । इदं पुण जीवट्टाणं णिवद्ध-मंगलं, यत्तो ' इमेसि चोद्दसण्हं जीवसमाणं ' इदि एदस्स सुत्तस्सादीए णिवद्ध-' णमो अरिहंताणं ' इच्चादिदेवदा-णमोक्कारदंसणादो ।

(सं॰ प॰ १, पू॰ ४१)

अर्थात् मंगल दो प्रकारका है, निबद्ध और अनिबद्ध। सूत्रके आदिमें सूत्रकत्ती द्वारा जो देवता-नमस्कार निबद्ध किया जाय वह निबद्ध मंगल है और जो सूत्रके आदिमें सूत्रकत्ती द्वारा देवताको नमस्कार किया जाता है (किन्तु वह नमस्कार लिपिबद्ध नहीं किया जाता) वह अनिबद्ध-मंगल है। यह जीवट्ठाणं निबद्ध मंगल है, क्योंकि इसके 'इमेसिं चोदसण्हं ' आदिसूत्रके पूर्व ' णमो अरिहंताणं ' इत्यादि देवतानमस्कार पाया जाता है।

इससे यह सिद्ध हुआ कि जीवट्ठाणके आदिमें जो यह णमोकार मंत्र पाया जाता है वह सूत्रकार पुष्पदन्त आचार्य दारा ही वहां रखा गया है और इससे उस शास्त्रको निवद्ध-मंगल संज्ञा प्राप्त हो जाती है। किन्तु इससे यह स्पष्ट ज्ञात नहीं होता कि यह मंगल्स्त्र स्वयं पुष्प-दन्ताचार्यने रचकर यहां निवद्ध किया है, या कहीं अन्यत्र से लेकर यहां रख दिया है। पर अन्यत्र धवलाकार ने इसका भी निर्णय किया है।

वेदनाखंडके आदिमें 'णमो जिणाणं' आदि मंगलसूत्र पाये जाते हैं, जिनकी टीका करते हुए भवलाकारने उनके निबद्ध अनिबद्ध स्वरूप का विवेचन किया है। वे लिखते है—–

तस्थेदं किं णिबद्धमाहे। अणिबद्धमिदि ? ण ताव णिबद्ध-मंगलमिदं, महाकम्मपयडिपाहुडस्स कदियादि-चउवीस-अणियोगावयवस्स आदीए गोदमसामिणा परूविदस्स भूदबलिभडारएण वेयणाखंडस्स आदीए मंगलट्टं तत्तो आणेदूण ठविदस्स णिबद्धत्त-विरोहादो। ण च बेयणाखंडं महाकम्मपयडिपाहुडं अवयवस्स अवयवित्तविरोहादो । ण च भूदबल्शी गोदमो, विगलसुदधारयस्स धरसेणाइरियसीसस्स भूदबलिस्स सयलसुदधारयबड्ढूमाणंतेवासि-गोदमत्तविरोहादो। ण चाण्गो पयारे। णिबद्धमंगलत्तरस इंदुभूदो अस्थि ।

अर्थात् यह मंगल ( णमें) जिणाणं, आदि ) निवद्व है या अनिवद्ध ! यह निवद्ध-मंगल तो नहीं है क्योंकि महाकर्मप्रकृतिपाहुडके कृति आदि चौवीस अनुयोगद्वारोंके आदिमें गौतमस्वामीने इस मंगलका प्ररूपण किया है और भूतबलि महारकने उसे वहांसे उठाकर मंगलार्थ यहां वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, इससे इसके निबद्ध-मंगल होनेमें विरोध आता है। न तो वेदनाखंड महाकर्मप्रकृतिपाहुड है, क्योंकि अवयवको अवयवी माननेमें विरोध आता है। और न भूतबली ही गौतम हैं क्योंकि विकल्रश्रुतके धारक और धरसेनाचार्यके शिष्य भूतबलिको सकल्रश्रुतके धारक और बर्धमानस्वामीके शिष्य गौतम माननेमें विरोध उत्पन्न होता है। और कोई प्रकार निबद्ध मंगलत्वका हेतु हो नहीं सकता।

ર

णमोकार मंत्रके संबन्धमें खेताम्बर सम्प्रदायकी क्या मान्यता है और उसका पूर्वोक्त मतसे कहां तक सामञ्जस्य या वैषम्य है, इस पर भी यहां कुछ विचार किया जाता है। खेताम्बर आगमके अन्तर्गत छह छेदस्त्रोंमेंसे द्वितीय सूत्र ' महानिशीथ ' नामका है। इस सूत्रेमें णमोकार मन्त्रके विषयमें निम्न वार्ता पायी जाती है—

एवं तु जं पंचमंगलमहासुयक्खंधस्स वक्खार्णं तं महया पर्वधेणं अणंतगमपजवेहिं सुत्तस्स य पियभूपाहिं णिज्जुत्ति-भास-जुग्नीहिं जहेव अणंत-नाण-दंसणधरेहिं तिथ्ययरेहिं वक्खाणियं तहेव समासओ वक्खाणिज्जं तं आंसि । अहऽग्नया कालपरिहाणिदोसेणं ताओ णिज्जुत्ति-भास-जुन्नीओ वुच्छिन्नाओ । इओ य वश्वंतेणं कालेणं समएणं महिड्डिपत्ते पयाणुसारी वइरसामी नाम दुवाछसंगसुअहरे ससुपन्ने । तेण य पंच-मंगल-महासुयक्खंधस्स उद्धारो मूलसुत्तस्स मग्रहे लिहिओ । मूलसुत्तं पुण सुत्तताए गणहरेहिं अत्यत्ताए

मरिहंतेहिं भगवंतेहिं धम्मतिरथयरेहिं तिल्गेगमहिएहिं वीरजिणिंदेहिं पश्चवियं त्ति एस बुहुसंपयाओं । ( मझानिशीथ स्त्र, अध्याय ५ )

इसका अर्थ यह है कि इस पंचमंगल महाश्रुतस्कंधका व्याख्यान महान प्रबंधसे, अनन्त गम और पर्यायों सहित, सूत्रकी प्रियभूत निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णियों द्वारा जैसा अनन्त ज्ञान-दर्शनके

રષ

धारक तीर्थंकरोंने किया था उसीप्रकार संक्षेपमें व्याख्यान करने योग्य था। किन्तु आगे काल-परिहानिके दोषसे वे निर्युक्ति, माध्य और चूर्णियां विच्छिन्न हो गईं। फिर कुछ काल जानेपर यथासमय महाऋदिको प्राप्त पदानुसारी वइरसामी (वैरस्वामी या वजस्वामी) नामके द्वादशांग श्रुतके धारक उत्पन्न हुए। उन्होंने पंचमंगल महाश्रुतस्कंधका उद्वार मूलसूत्रके मध्य लिखा। यह मूलसूत्र सूत्रत्वकी अपेक्षा गणधरों द्वारा तथा अर्थकी अपेक्षासे अरहंत मगवान, धर्मतीर्थकर त्रिलोकमहित वीरजिनेंद्रके द्वारा प्रज्ञापित है, ऐसा वृद्धसम्प्रदाय है।

यद्यपि महानिशीथसूत्रकी रचना श्वेताम्बर सम्प्रदायमें बहुत कुछ पीछेकी अनुमान की जाती है,× तथापि उसके रचयिताने एक प्राचीन मान्यताका उछेख किया है जिसका अभिप्राय यह है कि इस पंचमंगळरूप श्रुतस्कंधके अर्थकर्ता मगवान् महावीर हैं और सूत्ररूप प्रंथकर्ता गौतमादि गणधर हैं । इसका तीर्थंकर कथित जो व्याख्यान था वह काळदोषसे विच्छिन्न हो गया । तब द्वादशांग श्रुतधारी वहरस्वामीने इस श्रुतस्कंधका उद्धार करके उसे मूळ सूत्रके मध्यमें लिख दिया । श्वेताम्बर आगममें चार मूळ सूत्र माने गये हैं-आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन और पिंडनिर्युक्ति । इनमें से कोई भी सूत्र वज्रसूरिके नामसे सम्बद्ध नहीं है । उनकी चूर्णियां भद्रबाहुकृत कही जाती हैं । उन मूल सूत्रोंमें प्रथम सूत्र आवश्यकके मध्यमें जिसमें याया जाता है । अतएव उक्त मान्यताके अनुसार संभवतः यही वह मूलसूत्र है जिसमें वज्रसूरिने उक्त मंत्रको प्रक्षिप्त किया ।

कल्पसूत्र स्थविरावलीमें 'वइर 'नामके दो आचायोंका उल्लेख मिलता है जो एक दूसरेके गुरु-शिष्य थे। यथा-

थेरस्स णं अज्ज-सीहगिरिस्स जाइस्सरस्स कोसियगुत्तस्स अंतेत्रासी थेरे अज्जवइरे गोयमसगुरे । थेरस्स णं अजजवहरस्स गोथमसगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवहरसेणे उक्कोसियगुत्ते<del>श्र</del> ।

अर्थात् कौशिक गोत्रीय स्थविर आर्य सिंहगिरिके शिष्य स्थविर आर्य वहर गोतम गोत्रीय हुए, तथा स्थविर आर्य वहर गोतम गोत्रीयके शिष्य स्थविर आर्य वहरसेन उक्कोसिय गोत्रीय हुए।

विक्रमसंवत् १६४६ में संगृहीत तपागच्छ पटावलीमें वर्राखामीका कुछ विशेष परिचय पाया जाता है। यथा---

#### तेरसमें। वयरसामि गुरू ।

घ्याख्या--तेरसमो सि असिंहगिरिपट्टे त्रयोदशः अविज्रस्वामी यो बाख्यादपि आतिस्मृतिभाग्, नभोगमनविषया संघरक्षाकृत्, दक्षिणस्यां बौद्धराज्ये जिनेन्द्रपूजानिमित्तं पुष्पाधानयनेन प्रवचनप्रभावनाकृत्,

× Winternity : Hist. Ind. Lit. II, P. 465.

\* पट्टावली समुच्चय, ( पृ. २ )

· •/

देवाभिवंदितो दशपूर्वविदामपश्चिमो वज्रशाखोत्पत्तिमूलम् । तथा स भगवान् षण्णवत्यधिकचतुःशत ४९६ वर्षान्ते जातः सन् अष्टो ८ वर्षाणि गृहे, चतुश्रग्वारिंशत् ४४ वर्षाणि वते, पट्त्रिंशत् ३६ वर्षाणि युगप्र० सर्वायुरष्टाशीति ८८ वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरात् चतुरशीत्यधिकपंचशत ५८४ वर्षान्ते स्वर्गभाक् । श्रीवज्र-त्यामिनो दशपूर्व-चतुर्थ-संहननसंस्थानानां व्युच्छेदः ।

> चतुष्कुलसमुवात्तिपितामहमहं विभुम् । दशपूर्वविधिं वन्दे चज्रस्व(मिमुनीश्वरम् ॥ \*

इस उल्लेखपरसे वइरखामीके संबंधमें हमें जो बातें ज्ञात होती हैं वे ये हैं कि उनका जन्म वीरनिर्वाण से ४९६ वर्ष पश्चात् हुआ था और खर्मवास ५८४ वर्ष पश्चात् । उन्होंने दक्षिण दिशामें मी विहार किया था तथा वे दशपूर्वियोंमें अपश्चिम थे । बीरवंशावलीमें भी उनके उत्तरदिशासे दक्षिणापथको विहार करनेका उल्लेख किया गया है,× और यह भी कहा गया है कि वहांके ' तुंगिया ' नामक नगरमें उन्होंने चातुर्मास व्यतीत किया था । वहांसे उन्होंने अपने एक शिष्यको सोपारक पत्तन (गुजरात) में विहार करनेकी भी आज्ञा दी थी । इन उल्लेखोंपरसे उनके पुष्पदन्ताचार्यकी विहारभूमिसे संबन्ध होनेकी सूचना मिलती है ।

तपागच्छ पट्टावलीमें वइरस्वामीसे पूर्व आर्थमंगुका उल्लेख आया है जिनका समय नि. सं. ४६७ बतलाया गया है। यथा—-

सन्तषष्ट्यधिकचतुःशतवर्षे ४६७ आर्यमंगुः ।

आर्यमंगुका कुछ विशेष परिचय नन्दीसूत्र पद्यावलीमें इसप्रकार आया है 🕇 ----

भणसं करगं सरगं प्रभावगं णाण-दंसण-सुणाणं । वंद।मि अ**ज्ञमंगुं** सुयसागरपारगं धीरं ॥ २८ ॥

अर्थात् ज्ञान और दर्शन रूपी गुणोंके वाचक, कारक, धारक और प्रभावक, तथा श्रुतसागरके पारगामी धीर आर्यमंगुकी मैं वन्दना करता हूं। इसके अनन्तर अज्जधम्म और मदगुत्तेक उद्धेखके पश्चात् अज्जवयरका उद्धेख है। इन उद्धेखोंपरसे जान पड़ता है कि ये आर्यमंगु अन्य कोई नहीं, धवला जयधवलामें उद्धिखित आर्यमंखु ही हैं; जिनके विषयमें कहा गया है कि उन्होंने और उनके सहपाठी नागहत्थीने गुणधराचार्य द्वारा पंचमपूर्व ज्ञानप्रवादसे उद्धार किये हुए कसायपाहुडका अध्ययन किया था और उसे जड्वसह (यतिवृषभाचार्य) को सिखाया था। उक्त नन्दीसूत्र पट्टावलीमें अज्जवयरके अनन्तर अज्जरनिखअ और अज्ञ नन्दिलखमणके पश्चात् अज्ञ नागहत्थी का भी उल्लेख इसप्रकार आया है —

- × जैन साहित्य संशोधक १, २, परिशिष्ट, पृ. १४.
- ‡ पद्दावली समुचय, पृ. १३.

<sup>\*</sup> पट्टावली समुच्चय, पृ. ४७.

बङ्कुउ वायगवंसी जसवंसी अजा-नागहरथीणं । वागरण-करणभंगिय-**क्रम्मपयडी-पहा**णाणं ॥ ३० ॥

अर्थात् व्याकरण, करणमंगी व कर्भप्रकृतिमें प्रधान आर्य नागहस्तीका यशस्वी वाचक वंश वृद्धिशील होवे ।

इसमें सन्देहको स्थान नहीं कि ये ही वे नागहत्थी हैं जो धवलादि प्रंथोंमें आर्यमंखु के सहपाठी कहे गये हैं । उनके व्याकरणादिके अतिरिक्त ' कम्मपयडी ' में प्रधानताका उल्लेख तो बड़ा ही मार्मिक है । खेताम्बर साहित्यमें कम्मपयडी नामका एक प्रंथ शिवशर्मसूरि कृत पाया जाता है जिसका रचनाकाल अनिश्चित है । एक अनुमान उसके वि. सं. ५०० के लगभगका लगाया जाता है । अतएव यह प्रंथ तो नागहस्ती के अध्ययनका विषय हो नहीं सकता । फिर या तो यहां कम्मपयडीसे विषयसामान्य का तात्पर्य समझना चाहिये, अथवा, यदि किसी ग्रंथ-विशेष से ही उसका अभिप्राय हो तो वह उसी कम्मपयडी या महाकम्मपयडिपाहुड से हो सकता है जिसका उद्धार पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्योंने षट्खंडागम रूपसे किया है ।

तपागच्छ पट्टावलीसे कोई सबा तीनसौ बर्ष पूर्व वि. सं. १३२७ के लगमग श्री धर्मघोप सूरि द्वारा संगृहीत ' सिरि-दुसमाकाल-समणसंघ-धयं ' नामक पट्टावलीमें तो ' वहर ' के पश्चात् ही नागहत्थिका उल्लेख किया गया है । यथा—

> त्रीए तिवीस **बहरं च नागह**स्थिं च रेघईमित्तं। सीहं नागऽग्रुगं भुइदिक्रियं काल्यं वंदे×॥ १३॥

ये वहर, वहर द्वितीय या कल्पसूत्र पट्टावळीके उक्कोसिय गोत्रीय वईरसेन हैं जिनका समय इसी पट्टावलीकी अवचूरीमें राजगणनासे तुलना करते हुए नि. सं. ६१७ के पश्चात् बतलाया गया है। यथा--

पुष्पमित्र (दुर्बछिका पुष्पमित्र) २० || तथा राजा नाहडः ॥१०|| (एवं) ६०५ शाकसंवस्सरः ॥ अत्रा-न्तरे वोटिका निर्गता । इति ६१७ || प्रथमोदयः । वयरसेण ३ नागहास्ति ६९ रेवतिमित्र ५९ बंभदीवगसिंह ७८ नागार्जुन ७८

> पणसयरी सयाई तिश्वि सय-समक्षिआई अइकमर्ऊ । विक्रमकालाओ तभो बहुली (वलभी) भंगो समुप्पत्री ॥१॥

इसके अनुसार वीरंसंवत्के ६१७ वर्ष पश्चात् वयरसेनका काल तीन वर्ष और उनके अनन्तर नागहस्तिका काल ६९ वर्ष पाया जाता है।

पूर्वोक्त उल्लेखोंका मथितार्थ इस प्रकार निकलता है-श्वेताम्बर पद्यावलियोंमें 'वइर' नामके दो आचायोंका उल्लेख पाया जाता है जिनके नाममें कहीं कहीं 'अज्ज वइर' और 'अज्ज वइरसेन '

× पट्टाबळी समुच्चय, पृ. १६.

-----

1.47

इसप्रकार मेद किया गया है। कल्पसूत्र स्थविरावर्छीमें एकको गौतम गोत्रीय और दूसरेको उक्को-सिय गोत्रीय कहा है और उन्हें गुरु-शिष्य बतलाया है। किन्तु अन्य पीछेकी पट्टावलियोंमें उनके बीच कहीं कहीं एक दो नाम और जुड़े हुए पाये जाते हैं। प्रथम अजवइरके समयका उल्लेख उनके वीरनिर्वाणके ५८४ वर्षतक जीवित रहनेका मिल्ला है व अज्ज वहरसेनका उल्लेख वीर-निर्वाणसे ६१७ वर्ष पश्चात्का पाया जाता है। इन दोनों आचार्योंसे पूर्व अज्जमंगुका उल्लेख है, तथा उनके अनन्तर नागहत्थिका। अतः इन चारों आचार्योंका समय निम्न प्रकार पड़ता है—

#### वीर निर्वाण संवत्

अज्ज मंगु	୫୍ଟର
अज्ञ वह्र	<b>୫९</b> ६- <b>५</b> ८४
अज्ज वइरसेन	<b>६१७</b> -६२०
अज नागहत्थी	६२०-६८९

अञ्ज वइर दक्षिणापथको गये, वे दराष्ट्रवोंके पाठी हुए और पदानुसारी थे तथा उन्होंने पंच णमोकार मंत्र का उद्घार किया । नागहत्थी कम्मपयडिमें प्रधान हुए ।

दिगम्बर साहिलोल्लेखोंके अनुसार आचार्य पुष्पदन्तने पहले पहले ' कम्मपयडी ' का उद्धार कर सूत्ररचना प्रारंभ की और उसीके प्रारंभमें णमोकार मंत्र रूपी मंगल निबद्ध किया, जो धवलाटीकाके कर्ता मोरसेनाचार्यके मतानुसार उनकों मौलिक रचना प्रतीत होती है । अड्जमंखु और नागहत्यि-दोनोंने गुणधराचार्य रचित कसायपाहुडको आचार्य परंपरासे प्राप्तकर यति-वृषमाचार्यको पटाया, और यतिवृषमाचार्यने उसपर चूर्णिसूत्र रचे, ऐसा उल्लेख धवलादि प्रंथोंमें मिलता है । यतिवृषमक्रत ' तिलेयपण्णत्ति ' में ' वइरजस ' नामके आचार्यका उल्लेख मिलता है जो प्रज्ञाश्रमणोंमें अन्तिम कहे गये हैं । यथा---

पण्हसमणेसु चरिमो वद्दरजसो णाम । ×

आश्वर्य नहीं जो ये अन्तिम प्रज्ञाश्रमण वइरजस ( वज्रयश ) श्वेताम्बर पटावलियोंके पदा-नुसारी बइर ( वज्रस्वामी ) ही हों। पदानुसारित्व और प्रज्ञाश्रमणत्व दोनों ऋद्धियोंके नाम हैं और ये दोनों ऋद्धियां एक ही बुद्धि ऋद्विके उपमेद हैं \*। धवलान्तर्गत वेदनाखंडमें निबद्ध गौतम-सामीकृत मंगलाचरणमें इन दोनों ऋद्वियोंके धारक आचार्योंको नमस्कार किया गया है, यथा —

णमो पदानुसारीणं ॥ ८ ॥ णमो पण्हसमणाणं ॥ १८ ॥

× संतपरूवणा १, भूमिका पृ. ३०, फुटनोट \* राजवातिंक पु. १४३ इसप्रकार इन आचायोंकी दिगम्बर मान्यताका क्रम निम्न प्रकार सूचित होता है— धरसेन गुणधर \_\_\_\_\_\_ अन्तिमप्रक्वाश्रमण \_\_\_\_\_ \_\_\_\_ बद्दरजस \_\_\_\_\_ पुष्पदन्त भूतवलि आर्थमंखु नागद्दरथी

#### । यतिच्चषभ

वइरजसका नाम यतितृषभसे पूर्व ठीक कहां आता है इसका निश्चय नहीं । आर्यमंखु और नागद्ययोके समकालीन होनेकी स्पष्ट सूचना पाई जाती है क्योंकि उन दोनोंने क्रमसे यतितृषभको कसायपाहुड पढ़ाया था । क्रमसे पढ़ानेसे तथा आर्यमंखुका नाम सदैव पहले लिये जानेसे हैतना ही अनुमान होता है कि दोनोमें आर्यमंखु संभवतः जेठे थे । ये दोनों नाम श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें कोई १३० वर्षके अन्तरसे दूर पड़ जाते हैं जिससे उनका समकालीनल नहीं बनता । किन्तु यह बात विचारणीय है कि श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें ये दोनों नाम कहीं पाये जाते हैं और कहीं छोड़ दिये जाते हैं, तथा कहीं उनमेंसे एकका नाम मिलता है दूसरेका नहीं । उदाहरणार्थ, सबसे प्राचीन 'कल्पसूत्र स्थविरावर्छा' तथा 'पट्टावली सारोद्धार ' में ये दोनों नाम नही हैं, और 'गुरु पट्टावली ' में आर्यभंगुका नाम है पर नागहत्यीका नहीं है× । किर आर्यमंखु और नागहत्थीने जिनका रचा हुआ कसायपाहुड आचार्य-परंपरासे प्राप्त किया था वे गुणधराचार्य दिगम्बर उल्लेखोंके अनुसार महावीर स्वामीसे आचार्य-परंपराकी अट्टाईस पीढ़ी पश्चात् निर्वाण संवत्की सातर्थी राताब्दिमें हुए सूचित होते हैं जब कि श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें उन दोनोंमें से एक पांचवीं और दूसरे सातर्वी राताब्दिमें पड़ते हैं । इसप्रकार इन सब उल्लेखों परसे निम्न प्रश्न उपस्थित होते हैं:—

 क्या ' तिलोय-पण्णत्ति ' में डाल्लित ' वइरंजस ' और महानिशीथसूत्रके पदानुसारी ' वइरसामी ' तथा खेतांबर पट्टावलियोंके ' अञ्ज वहर ' एक ही हैं ?

२. 'वइरस्वामीने मूलसूत्रके मध्य पंचमंगलश्रुतस्कंधका उद्धार लिख दिया ' इस महानि-शीथसूत्रकी सूचनाका ताल्पर्य क्या है ! क्या उनकी दक्षिण यात्राका और उनके पंचमंगलसूत्रकी प्राप्तिका कोई सम्बन्ध है ! क्या धवलाकारद्वारा सूचित णमोकार मंत्रके कर्तृत्वका इससे सामज्जस्य बैठ सकता है !

३. क्या घवलादिश्रतमें उल्लिखित आर्यमंखु और नागहत्थी तथा श्वेताम्बर पद्यावलियोंके अज्जमंगु और नागहत्थी एक ही हैं ? यदि एक ही हैं, तो एक जगह दोनोंकी समसामयिकता

× देखो पट्टावळी समुच्चय ।

प्रकट होने और दूसरी जगह उनके बीच एकसौ तीस वर्षका अन्तर पड़नेका क्या कारण हो सकता है ? पट्टावलियोंमें भी कहीं उनके नाम देने और कहीं छोड़ दिये जानेका भी कारण क्या है ?

४. जिस कम्मपयडीमें नागहत्थीने प्रधानता प्राप्त की थी क्या वह पुष्पदन्त भूतबलि द्वारा उद्घारित कम्मपयडिपाहुड हो सकता है !

५. दिगम्बर और श्वेताम्बर पहाबलियों आदिमें उक्त आचार्योंके काल्लनिर्देशमें वैषम्य पडनेका कारण क्या है ?

इन प्रश्नोंमेंसे अनेकके उत्तर पूर्वोक्त विवेचनमें सूचित या ध्वनित पाये जावेंगे, फिर भी उन सबका प्रामाणिकतासे उत्तर देना विना और भी विरोष खोज और विचारके संभव नहीं है / इस कार्यके छिये जितने समयकी आवश्यकता है उसकी भी अभी गुंजाइरा नहीं है । अतः यहां इतना ही कहकर यह प्रसंग छोड़ा जाता है कि उक्त आचार्यों संबंधी दोनों परम्पराओंके उल्लेखोंका भारी रहस्य अवश्य है, जिसके उद्घाटनसे दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन इतिहास और उनके बीच साहित्यिक आदान प्रदानके विषय पर विशेष प्रकाश पड़नेकी आशा की जा सकती है ।

इस प्रकरणको समाप्त करनेसे पूर्व यहां यह भी प्रकट कर देना उचित प्रतीत होता है कि श्वेताम्बर आगमके अन्तर्गत भगवतीसूलमें जो पंच-नमे।कार-मंगळ पाया जाता है उसमें पंचम पद अर्थात् ' णमो छोए सब्बसाहूणं ' के स्थानपर ' णमो बंभीए छिवीए ' ( ब्राक्षी छिपिको नमस्कार ) ऐसा पद दिया गया है । उड़ीसाकी हाथीगुफामें जो कछिंग नरेश खारवेछका शिछाछेख पाया जाता है और जिसका समय ईस्वी पूर्व अनुमान किया जाता है, उसमें आदि मंगल इसप्रकार पाया जाता है ---

णमो अरहंताणं । णमो सव सिधाणं ।

ये पाठमेद प्रासंगिक हैं या किसी परिपाटीको लिये हुए हैं, यह विषय विचारणीय है। श्वेताम्बर सम्प्रदायमें किसी किसीके मतसे णमोकार सूत्र अनार्ष है × ।

## ५ बारहवें श्रुताङ्ग दृष्टिवादका परिचय

हम सल्प्ररूपणा प्रथम जिल्दकी भूमिकामें कह आये हैं कि बारहवां श्रुतांग दृष्टिवाद ब्रेताम्बर मान्यताके अनुसार मी विच्छिन्न होगया, तथा दिगम्बर मान्यतानुसार उसके कुछ अंशोंका

× ' ये तु वदन्ति नमस्कारपाठ एव नार्थ ··· ··· · ' इत्यादि । देखो अभिधानराजेन्द-णमोक्तार, पृ. १८३५.

#### षट्खंडागमकी प्रस्तावना

उद्धार षट्खंडागम और कषायप्राम्हतमें पाया जाता है। किन्तु रोप भागोंके प्रकरणों व विषय आदिका संक्षिप्त परिचय दोनें। सम्प्रदायोंके साहित्समें विखरा हुआ पाया जाता है। अतः छुप्त हुए श्रुतांगके इस परिचयको हम दोनें। सम्प्रदायोंके प्राचीन प्रमाणभूत प्रंथोंके आधारपर यहां तुल्जनात्मकरूपमें प्रस्तुत करते हैं, जिससे पाठक इस महत्त्वपूर्ण विषयमें रुचि दिखला सकें और दोनों सम्प्रदायोंकी मान्यताओंमें समानता और विषमता तथा दोनोंकी परस्पर परिपूरकताकी ओर ध्यान दे सकें। इस परिचयका मूलाधार श्वेताम्बर सम्प्रदायके नन्दीसूत्र और समवायांगसूत्र हैं तथा दिगम्बर सम्प्रदायके धवल और जयधवल प्रंथ।

धवलोंमें दृष्टिवादका स्वरूप इसप्रकार बतलाया है —

तस्य दृष्टिवादस्य स्वरूपं निरूप्यते । कौंश्वळ-काणेविदि-कौशिक-हरिइमश्रु-मांखपिक-रोमश-हारीत-मुण्ड-अश्वलायनादीनां क्रियावाददष्टीनामशीतिशतम्, मरीचि-हविलोल् रू-गाग्ध-ठयाझभूति-वादलिं-माठर-मौद्रलायनादीनामक्रियावाददष्टीनां चतुरशीतिः, दााक्दय-वर्डकल-कुशुमि-सात्यमुमि-नारायण-कण्व-माध्यंदिन-मोद-पैप्पलाद-बादरायण-स्वेष्टकृदैतिकायन-वसु-जैमिन्यादीनामज्ञानिकदष्टीनां समर्पष्टिः, वशिष्ठ-पाराशर-जतु-कर्ण-वाद्यमीकि-रोमहर्षणी-सत्यदत्त-व्यासैलापुत्रोपमन्यवेन्द्रदत्तायस्थूणादीनां वैनथिकदष्टीनां द्वात्रिंशत् । एषां दृष्टिशतानां त्रयाणां त्रिषट्यत्तराणां प्ररूपणं निग्रहश्च दृष्टिवादे क्रियते । (सं. प., पृ० १०७)

इसका अभिप्राय यह है कि दृष्टिवाद अंगमें १८० कियावाद, ८४ अकियावाद, ६७ अज्ञानिकवाद और ३२ वेनयिकवाद, इसप्रकार कुछ ३६३ दृष्टियोंका प्ररूपण और उनका निष्रह अर्यात् खंडन किया गया है । इन वादों और दृष्टियोंके कर्ताओंके जो नाम दिये गये हैं, उनमेंसे अनेक नाम वैदिक धर्मके भिन्न भिन्न साहित्यांगोंसे सम्बद्ध पाये जाते हैं । उदाहरणार्थ, हारांत, वशिष्ट, पाराशर सुग्रसिड़ स्मृतिकारोंके नाम हैं । व्यासकृत स्मृति भी प्रसिद्ध है और वे महाभारत के कर्ता कहे जाते हैं । वाल्मीकि कृत रामायण सुविख्यात है, पर धर्मशास्नसंबंधी उनका बनाया प्रंथ नहीं पाया जाता । आश्वछायन श्रीतसूत्र भी प्रसिद्ध है । गर्गका नाम एक उयोतिषसंहितासे सम्बद्ध है । कण्व ऋषिका नाम भी वैदिकसाहित्यसे सम्बंध रखता है । माध्यदिन एक वैदिक शाखाका नाम है । बादरायण वेदान्तशास्त्रके और जैमिनि पूर्वमीमांसाके सुप्रसिद्ध संस्थापक हैं । किन्तु शेष अधिकांश नाम बहुत कुछ अपरिचितसे हैं । इन नामोंके साथ उन उन दृष्टियोंका संबंध किन्ही प्रंयोंपरसे चला है या उनकी चलई कोई अछिखित विचारपरम्पराओंपरसे कहा गया है यह जानना कठिन है । पर ताल्पर्य यह स्पष्ट है कि दृष्टिवादमें अनेक दार्शनिक मत-मतान्तरोंका पश्चिक भीतर ही इन वादोंके परिशील्नकी गुंजाइश दिखाई देती है ।

۰×,

श्वे	ताम्बर मान्यता	दिगम्बर मान्यता					
হি	ट् <mark>रि</mark> वाद' के ५ भेद	दिट्टिवाद <sup>?</sup> के ५ भेद					
१	परिकम्म	<b>१</b> परिकम्म <sup>र</sup>					
२	सुत्त	<b>२</b> सुत्त					
Ę	पुब्वगय	३ पढमाणिओग					
8	अણુઓग	8 पुन्वगय					
ч	चू्छिया	५ चूलिया					

दोनों संप्रदायोंमें दृष्टिवादके इन पांच मेदोंके नामोंमें कोई भेद नहीं है, केवछ अणियोगकी जगह दिसम्बर नाम पढमाणियोग पत्या जाता है। इसका रहस्य आगे बताये हुए प्रभेदोंसे जाना जायगा। दूसरा कुछ अन्तर पुब्वगय और अणियोगके क्रममें है। श्वेताम्बर पुव्वगयको पहछे और अणियोगको उसके पश्चात् गिनाते हैं; जब कि दिगम्बर पढमाणियोगको पहछे और पुंच्वगयको उसके अनन्तर रखते हैं। यह भेद या तो आकस्मिक हो, या दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन पठनक्रमके भेदका द्योतक हो। दिगम्बरीय क्रमकी सार्थकता आगे पूर्वोंके विवेचनमें दिखायी जावेगी।

- परिकर्मके ७ भेद
- १ सिद्धसेणिआ
- २ मणुरससेणिआ
- ३ पुइसेणिआ
- ४ ओगाढसेणिआ
- ५ उवसंपज्जणसेणिआ
- ६ विप्पजहणसेणिआ
- ७ चुआचुअसेणिआ
- र अथ कोऽयं दृष्टिवादः १ दृष्टयो दर्शनानि, वदनं बादः । दृष्टीनां बाद्दो दृष्टिवादः । अथवा पतनं पातः, दृष्टीनां पातो यत्र स दृष्टिपातः । (नंदीसूत्र टीका)
- २ तत्र परिकर्म नाम योग्यतापादनम् । तद्धेतुः शास्त-मपि परिकर्म । ××× तथा चोक्तं नूणॉं-परिकम्मे चि योग्यताकरणं । जह गणियस्स सोलस परिकम्मा तम्माहिय-छत्तत्थो सेस गणियस्स जोग्गो भवइ, एवं गहियपरिकम्मसुत्तत्थो सेस-सुत्ताइ-दिट्ठिवायस्स जोग्गो मबद्द त्ति । (नंदीसूत्र टीका)

परिकर्मके ५ मेद

- १ चंदपण्णत्ती
- २ सूरपञ्णत्ती
- ३ जंबूदीवपथ्णत्ती
- ४ दीवसायरपण्णत्ती
- ५ वियःहपण्णत्ती
- १ इष्टीनां त्रिषण्युरारत्रिशतसंख्यानां मिथ्यादर्शनानां वाद्योऽतुवादः, तत्तिराकरणं च यस्मिन्कियते तद दृष्टिवादं नाम ।

(गोम्मटसार टीका)

 परितः सर्वतः कर्माणि गणितकरणस्त्राणि यारेमन् तत् परिकर्मे ।

(गोम्मटसार टीका)

11

ये परिकर्मके मेद दोनों सम्प्रदायोंमें संख्या और नाम दोनों बातोंमें एक दूसरेसे सर्वथा भिन्न हैं । सिद्धश्रोणिकादि भेदोंका क्या रहस्य था, यह ज्ञात नहीं रहा । समवायांगके टीकाकार कहते हैं---

' एतच सर्वं समूलोत्तरमेदं सूत्रार्थतो व्यवच्छिन्नं '

अर्थात् यह सब परिकर्मशास्त अपने मूल और (आगे बतलाये जानेवाले) उत्तर भेदोंसहित सूत्र और अर्थ दोनों प्रकारसे नष्ट होगया। किन्तु सूत्रकार य टीकाकारने इन सात भेदोंके सम्बन्धमें कुछ बातें ऐसी बतलायीं हैं जो बड़ी महत्त्वपूर्ण हैं। परिकर्मके सात भेदोंके सम्बन्धमें वे लिखते हैं----

इचेयाई छ परिकम्माइं ससमहयाईं, सत्त आजीवियाईं; छ चउक-णइयाईं, सत्त तेरासियोईं । (समवायांगसूत्र)

एतेषां च परिकर्मणां षट् आदिमानि परिकर्माणि स्नसामयिकाम्येव । गोशालक-प्रवर्तिताजीविक-पासाण्डक-सिद्धान्तमतेन पुनः च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्मसहितानि सन्न प्रज्ञाप्यन्ते । इट्रानीं परिकर्मसु नय-चिन्ता । तत्र नैगमो द्विविधः सांग्राहिकोऽसांग्राहिकश्च। तत्र सांग्राहिकः संग्रहं प्रविष्टोऽसांग्राहिवश्च व्यवहारम् । तस्मास्संग्रहो व्यवहार ऋजुसूत्रः शब्दादयश्चेक पुवेस्येवं चरवारो नयाः । एतैश्वतुभिर्नयैः पट् स्वतामयिकानि परिकर्माणि चिन्त्यन्से, अतो भणितं ' छ चउक्क-नयाहं ' ति भवन्ति । त पुव चाजीविकास्त्रेराशिका भणिताः । कस्माद् ? उच्यते, यस्मात्ते सर्वं व्यास्मकमिष्छन्ति, यथा जीवोऽजीवो जीवाजीवः, लोकोऽलोको लोकालोकः, सत् असन् सदसत् इत्येवमादि । नयचिन्तायामपि ते त्रिविधं नयमिच्छन्ति । तद्यथा द्रव्याधिकः पर्याधिकः पर्याधिकः उभयाधिकः । अतो भणितं 'सत्त तेरासिय' ति । सप्त परिकर्माणि त्रैराशिकपास्त्रण्डिकास्त्रिविधया नयचिन्तया चिन्तयन्तीस्वर्थः । (समवायांग टीका)

इसका अभिप्राय यह है कि परिकर्मके जो सात भेद ऊपर गिनाये गये हैं उनमेंसे प्रथम छ भेद तो स्वसमय अर्थात् अपने सिद्धान्तके अनुसार हैं, और सातवां भेद आजीविक सम्प्रदायकी मान्यताके अनुसार है। जैनियेंकि सात नयोंमेंसे प्रथम अर्थात् नैगम नयका तो संग्रह और व्यवहारमें अन्तर्भाव हो जाता है, तथा अन्तिम दो अर्थात् समभिरूढ़ और एवंभूत दाब्दनयमें प्रविष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार मुख्यतासे उनके चार ही नय रहते हैं, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र और शब्द । इस अपेक्षासे जैनी चउक्कणइक अर्थात् चतुष्कनयिक कहलाते हैं। आजीविक सम्प्रदायवाले सब वस्तुओंको त्रि-आत्मक मानते हैं, जैसे जीव, अजीव और जीवाजीव; लोक, अल्लोक और लोकालोक; सत्, असत् और सदसत्, इस्यादि । नयका चिन्तन भी वे तीन प्रकारसे करते हैं--द्रव्यार्थिक, पर्यायार्थिक और उभयार्थिक । अतः आजीविक तेरासिय अर्थात् त्रैराशिक भी कहलाते हैं । उन्हींकी मान्यतानुसार परिकर्मका सातवां भेद ' चुआचुअसेणिआ ' जोडा गया है ।

इस सूचनासे जैन और आजीवक सम्प्रदायोंके परस्पर सम्पर्कपर बहुत प्रकाश पड़ता है। मंखलिगोशाल महाबीरस्वामी व बुद्धदेवके समसामयिक धर्मोपदेशक थे। उनके द्वारा स्थापित आजीविक सम्प्रदायके बहुत उल्लेख प्राचीन बौद्ध और जैन प्रंथोंमें पाये जाते हैं। प्रस्तुत सूचना पर से जाना जाता है कि उनका शास्त्र और सिद्धान्त जैनियोंके शास्त्र और सिद्धान्तके बहुत ही निकटवर्ती था, केवल कुछ कुछ भेद-प्रमेदों और दृष्टिकोणोंमें अन्तर था। भूमिका जैनियों और आजीविकोंकी प्रायः एक ही थी। आगे चलकर, जान पड़ता है, जैनियोंने आजीविकोंकी मान्यताओं को अपने शास्त्रमें भी संग्रह कर लिया और इसप्रकार धीरे धीरे समस्त आजीविक पंथका अपने ही समाजमें अन्तर्भाव कर लिया। ऊपरकी सूचनामें यद्यपि टीकाकारने आजीवि-कोंको पाखंडी कहा है, पर उनकी मान्यताको वे अपने शास्त्रमें स्वीकार कर रहे हैं।

परिकर्मके पूर्वोक्त सात भेद दिगम्बर मान्यतामें नहीं पाये जाते। पर इस मान्यताके जो पांच भेद चंदपण्णत्ति आदि हैं, उनमें से प्रथम तीन तो श्वेताम्बर आगमके उपांगोंमें गिनाये हुए मिछते हैं, तथा चौथा दीवसायरपण्णत्ती व जंवूदीवपण्णत्ती और चंदपण्णत्तीके नाम नंदीसूत्रमें अंगबाह्य श्रुतके बावस्यकव्यतिरिक्त भेदके अन्तर्गत पाये जाते हैं। किन्तु पांचवां भेद वियाहपण्णत्तिका नाम पांचवें श्रुतांगके अतिरिक्त और नहीं पाया जाता।

### सिद्धसेणिआ परिकम्मके १४ उपभेद

- १. माउगापयाई
- २. एगडिअपयाइं
- अट्ठ या पादोर्ट्ड पयाइं
- पाढेाआमास या आगास<sup>र</sup> पयाई
- ५. केउभूअं
- ६. रासिवद्धं
- ७. एमगुणं
- ८. दुगुणं
- ९. तिगुण
- १०. केउभूअं
- ११. पडिग्महो
- १२. संसारपडिग्गहो
- १३. नंदावत्तं
- १४. सिद्धावत्तं

मणुस्ससोणिआ परिकम्मके मा १४ भेद हैं जिनमें प्रथम १३ भेद उपर्युक्त ही हैं। १४

- चंदपण्णत्ती छत्तीसलक्खपंचपदसहस्सेहि (३६०५०००) चंदायु-परिवासिद्धि-गइ-बिंबुस्सेह-वण्णणं कुणइ ।
- सूरपण्णत्ती-पंचल्लक्खतिण्णिसहस्सेहि पदेहि (५०३०००) सूरस्सायु-भोगोव-मोग-परिवारिद्धि-गइ-बिंबुरसेह-दिणकिर-णुज्जोव-वण्णणं कुणइ ।
- ३. जंबूदीवपण्णत्ती–तिण्णिळक्खपंचवीस--पदसहरसेहि ( ३२५००० ) जंबृदीवे णाणाविहमणुयाणं भोग-कम्मभूमियाणं अण्णेसि च पच्वद-दह--णइ-वेइयाणं बस्सावासाकटिमजिणहरादीणं वण्णणं कुणइ ।
- ४. दीवसायरपण्णत्ती- वावण्णलक्खछत्तीस-पदसहस्सेहि (५२३६०००) उद्धार-

र. ये पाडमेद नंदीसूत्र और समनायगिके हैं।

वां भेद ' मणुस्सावत्तं ' नामका है ।

पुट्ट सेणिआदि शेष पांच परिकमेंगें प्रत्थेक के ११ उपभेद हैं जो प्रथम तीनको छोड़ कर शेष पूर्वोक्तही हैं। अन्तिम भेदके स्थानमें स्वनामसूचक भेद है, जैसे पुट्टावत्तं, ओगाढा-वत्तं, उवसंपज्जणावत्तं, विप्पजहणावत्तं और चुआचुआवत्तं। इसप्रकार ये सब मिलकर ८३ प्रभेद होते हैं <sup>3</sup>। पछपमाणेण दीवसायरपमाणं अण्णं पि दीवसायरंतब्भूदत्थं बहुभेयं वण्णेदि ।

५. वियाहपण्णत्ती - चउरासीदिरुक्खछत्तीस-पदसहरसेहि ( ८४३६००० ) रूबि-अजीवदब्वं अरूबि-अजीवदब्वं भवसिद्रिय-अभवसिद्धियरासि च वण्णेदि ।

परिकर्मके इन माउगापयांई आदि उपभेदोंका कोई विवरण हमें उपलभ्य नहीं है । किन्तु मातृकापदसे जान पड़ता है उसमें लिपि विज्ञानका विवरण था । इसांप्रकार अन्य भेदोंमें शिक्षाके मूलविषय गणित, न्याय आदिका विवरण रहा जान पड़ता है ।

## सुत्तके ८८ भेद

१. उज्जुसुयं या उजुगं

- २. परिणयापरिणयं
- ३. बहुभांगिअं
- 8. बिजयचरियं, विष्पचइयं या विनयचरियं
- **બ.** अणंतरं
- ६. परंपरं

- +/

७. मासाणं ( समाणं-स. अ. )

- ८. संज्हें ( मासाणं- " )
- ९. संभिष्णं
- १०. आहब्बायं (अहाच्चायं-स. अं.)
- ११. सोवत्थिअवत्तं
- १२. नंदावत्तं
- १२. बहुलं
- १४. पुट्ठापुट्ठं
- १५. विआवत्तं

## सुत्तके अन्तर्गत विषय

सुत्तं अहासीदिलक्खपदेहि (८८०००००) अत्रंधओ, अवलेवओ, अकत्ता, अमोत्ता, णिग्गुणो, सञ्वगओ, अणुमेत्तो, णाश्वि जीवो, जीवो चेव अश्वि, पुढवियादीणं समुदएण जीवो उप्पज्जइ, णिच्चेयणो, णाणेण विणा, सचेयणो, णिच्चो, अणिच्चो अप्पेत्ति वण्णेदि । तेरासियं, णियदिवादं, विण्णाणवादं, सद्दवादं, पहाणवादं, दञ्व-वादं, पुरिसवादं च वण्णेदि । उत्तं च-

अहासी अहियोरेसु चउण्हमहियाराणमल्थि णिदेसो । पढमेा अबंधयाणं, विदियो तेरासियाण बोद्धव्वो ॥ तदियो य णियइपनखे हवइ चउत्थो ससमयम्मि । ( धवला सं. प., पृ. ११० )

१. सिद्धसेणिकादिपरिकर्म मूलमेदतः सप्तविधं, उत्तरभेदतस्तु व्यक्षीतिविधं मातृकापदार्थि । ( समवायांग टीका )- १६ एवभूअं

१७. दुयावत्तं

१८. वत्तमाणप्पयं

१९. समभिरूढं

२०. सञ्वओभइं

- २१. पस्सासं ( पणामं-स. अं.)
- २२. दुष्पडिग्महं
  - ये ही २२ सूत्र चार प्रकारसे प्ररूपित हैं---
  - १ ।छिण्णछेअ-णइयाणि
  - २ अछिण्णछेअ-णइयाणि
  - ३ तिक-णइयाणि
  - ४ चउक-णइयाशि

इसप्रकार सूत्रोंकी संख्या २२ × 8 = ८८

हो जाती है।

श्वेताम्बर सम्प्रदायमें सूत्रके मुख्य मेद बावीस हैं। उनके अठासी मेदोंकी सूचना समयायांगमें इस प्रकार दी गई है—

इच्चेयाई वावीसं सुत्ताइं छिण्णहेअणइआइं ससमय-सुत्तपरिवाडीए, इच्चेआइं वार्वासं सुसाई अछिन्नछेयनइयाइं आजीवियसुत्तपरिवाडीए | इच्चेआइं वावीसं सुत्ताइं तिक-णहयाई तेरासियसुत्तपरिवाडीए, इच्चेआहं वावीसं सुत्ताहं चउक्कणइयाहं ससमयसुत्तपरिवाडीए | एवमेव सपुन्वावरेणं अट्ठासीदि सुत्ताइं भवंतीति मन्त्वयाहं |

यहां जिन चार नयोंकी अपेक्षासे वावीस सूत्रोंके अठासी मेद हो जाते हैं, उनका स्पष्टी-करण टीकामें इसप्रकार पाया जाता है----

एतानि किल ऋजुकादीनि द्वाविंशतिः स्त्राणि, तान्येव विभागतोऽष्टाशीतिभवन्ति । कथम् ? उच्यते-'इच्चेहयाहं वावीसं सुत्ताहं लिल्नछेयनइयाहं ससमयसुत्तपरिवार्डीए ' ति । इह यो नयः सूत्रं छिन्नं छेदेनेच्छति स छिन्नच्छेदनयो, यथा 'धम्मो मंगलमुक्किट्ठं ' इत्यादि स्ठोकः सूत्रार्थतः प्रत्येकछेदेन स्थितो न द्वितीयादिश्लोकमपेक्षते, प्रत्येककश्पितपर्यन्त इत्यर्थः । एतान्येव द्वाविंशतिः स्वसमयस्त्रपरिपाठ्या सूत्राणि स्थितानि । तथा इत्येतानि द्वाविंशतिः सुत्राणि अच्छिन्नच्छेदनयिकान्याजीविकस्त्रपरिपाठ्यति, अयमर्थः -- इह यो नयः सूत्रमच्छिन्नं छेदेनेच्छति सोऽछिन्नछेदनयो यथा, 'धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, ' इत्यादि स्लोक एवार्थतो द्वितीयादिश्लोकमपेक्षमाणो द्वितीयादयश्च प्रथममिति अन्योऽन्यसापेक्षा इत्यर्थः । एतानि द्वाविंशतिराजीविकगोशालकप्रवर्तितपाचंडसूत्रपरिपाठ्या अक्षररचनाविभागस्थितान्यप्यर्थतोऽन्योन्यमपेक्ष-माणानि भवन्ति । ' इच्चेयाई ' इत्यादिसूत्रम् । तत्र तिकणइयाई ति नयत्रिकाभिप्रायतश्चिर्न्थन्त इत्यर्थ-नेराशिकाश्चाजीविका एवोच्यन्ते इति । तथा ' इच्चेयाई' इत्यादिसूत्रं । तत्र ' चउक्कणइयाई ' ति

सुत्ते अद्वासीदि अत्थाहियारा, ण तेसिं णामाणि जाणिज्जति, संपद्दि त्रिसिट्टुवएसा-भावादो ( जयधवळा ) नयचतुष्काभिप्रायताश्चिन्त्यन्त इति भावना, एवभेवेत्यादिसूत्रम् । एवं चतस्रो द्वाविंशतयोऽष्टाशीतिः सूत्राणि भवन्ति ।

इस विवरणसे ज्ञात होता है कि उपर्युक्त वावीस सूतोंका चार प्रकारसे अध्ययन या व्याख्यान किया जाता या । प्रथम परिपाटी छिन्नछेदनय कहछाती या जिसमें सूत्रगत एक एक वाक्य, पद या श्लोकका स्वतंत्रतासे पूर्वापर अपेक्षारहित अर्थ छगाया जाता या । यह परिपाटी स्वसमय अर्थात् जैनियोंमें प्रचछित था । दूसरी परिपाटी अछिन्नछेदनय था जिसके अनुसार प्रत्येक वाक्य, पद या श्लोकका अर्थ आगे पीछेके वाक्योंसे संबंध छगाकर बैठाया जाता था । यह परिपाटी आजीविक सम्प्रदायमें चलती थी । तीसरा प्रकार त्रिकनय कहळाता था जिसमें द्रव्यार्थिक, पर्यायाधिक और उमयार्थिक व जीव, अजीब और जीवाजीव आदि उपर्युक्त त्रि-आत्मक व त्रिनय रूपसे वस्तुस्वरूपका चिन्तन किया जाता था । पूर्वोक्तानुसार यह परिपाटी आजीवकोंकी थी । तथा जो वस्तुचिन्तन पूर्वकथित चार नयोंकी अपेक्षासे चलता था वह चतुर्नय परिपाटी कहलाती थी और वह जैनियों की चीज़ थी । इस प्रकार निरपेक्ष शब्दार्थ और चतुर्नय चिन्तन, ये दो परिपाटियां जैनियोंकी और सापेक्ष शब्दार्थ तथा त्रिकनय चिन्तन, ये दो परिपाटियां आजीविकोंकी मिलकर वावीस सूत्रोंके अठासी मेद कर देती थीं । आजीविक ज्ञानशैलीको जैनियोंने किसप्रकार अपने ज्ञानमंडारमें अन्तर्भूत कर लिया यह यहां भी प्रकट हो रहा है ।

दिगम्बर सम्प्रदायमें सूत्रोंके मीतर प्रथम जीवका नाना दृष्टियोंसे अध्ययन और फिर दूसरे अनेक वादोंका अध्ययन किया जाता था, ऐसा कहा गया है। इन वादों में तेरासिय मतका उछेख सर्व प्रथम है जिससे तात्पर्य त्रैराशिक-आजीविक सिद्धान्तसे ही है, जो जैन सिद्धान्तके सबसे अधिक निकट होनेके कारण अपने सिद्धान्तके पश्चात् ही पढ़ा जाता था। घवछामें सूत्रके ८८ अधिकारोंका उछेख है जिनमेंसे केवछ चारके नाम दिये हैं। जयधवछामें स्पष्ट कह दिया है कि उन ८८ अधिकारोंके अब नामोंका मी उपदेश नहीं पाया जाता। किन्तु जो कुछ वर्णन दिगम्बर सम्प्रदायमें शेष रहा है उसमें विशेषता यह है कि वह उन छप्त प्रंथोंके विषयपर बहुत कुछ प्रकाश डाछता है; खेताम्बर श्रुतमें केवछ अधिकारोंके नाममात्र शेष हैं जिनसे प्रायः अब उनके विषयका अंदाज छगाना भी कठिन है।

## पुन्वगयके १४ मेद तथा उनके अन्तर्गत वत्थू और चूलिका

- १. उप्पायं ( १० वक्ष्यू + ४ चूळिआ )
- २. अग्गाणीयं (१४ वत्थू + १२ चूळिआ)
- ३. वीरिअं (८, + ८, )
- ४. अत्थिणाखिष्पवायं (१८ + १०)

### पुटवगयके १४ भेद तथा उनके अन्तर्गत चत्थू

- १. उप्पाद (१० नःथू)
- २. अग्गेणियं (१४ नत्थू)
- ३. वीरियाणुपवादं (८ ")
- ४. अत्थिणत्थिपचादं (१८,, )

- - - ;

4.	नाणप्पवायं	(१२ व	गत्थ् )	ч.	णाणपवादं	(१२ वत्थू)
٤.	सञ्चण्पवार्यं	( २	,, )	६.	सञ्चपवादं	(१२,, )
৩.	आयप्पवायं	(१६	")	છ.	आदपवादं	(१६,, )
८.	कम्मप्पदाय	(३०	")	८.	कम्मपवाद	(२०,,)
९.	पच्चक्खाणप्पवायं	(२०	,, )	९.	पञ्चक्खाणं	(३०,,)
१०.	विङ्जागुष्पवायं	( १५	")	१०.	विज्ञाणुवादं	( १५ ,, )
११.	अवंझ	(१२	")	११.	कल्लाणवादं	(१०,,)
१२-	पाणाऊ	(१३	,, )	१२.	पाणावायं	(१०,,)
१३.	किरिआविसालं	(३०	")	१३.	किरियाविसालं	(१०,,)
१४.	ल्रोकविंदुसारं	( २५	")	१४.	<b>ल्रोकविंदु</b> सारं	(१०,,)

दृष्टिवादके इस विभागका नाम पूर्व क्यों पड़ा, इसका समाधान समवायांग व नन्दीसूत्रक टीकाओंमें इसप्रकार किया गया है----

अथ किं तम् पूर्वगतं ? उच्यते । यस्मार्चार्थकरः तीर्थप्रवर्त्तनाकाळे गणधराणां सर्वसू दाधारत्वेन पूर्वं पूर्वगतं सूत्वार्थं भाषते तस्मात् पूर्वाणीति भणितानि । गणधराः पुनः अतरचनां विदधाना आचारादि-क्रमेण रचयान्ति स्थापयन्ति च । मतान्तरेण तु पूर्वगतसू सार्थः पूर्वमईता भाषितो गणधरेरपि पूर्वगत अत्रममेव पूर्वं राचितं, पश्चादाचारादि । नन्वेवं यदाचारनिर्युक्तयामभिद्दित्तं ' सब्वोसिं आयारो पढमो ' इत्यादि, तत्कथम् ? उच्यते । तत्र स्थापनामाश्चित्य तथोक्तमिह त्वक्षररचनां प्रतीत्य भणितं पूर्वं पूर्वाणि क्रतानीति ।

उच्यत । तत्र स्थापनामान्नित्य तथाक्तामह व्वक्षराचना भरात्व नागरा इन प्राण्य इत्यात्यात्व । (समत्रायांग टीका)

इसका तात्पर्य यह है कि तीर्थप्रवर्तनके समय तीर्थंकर अपने गणधरोंको सबसे प्रयम पूर्वगत सूत्रार्थका ही व्याख्यान करते हैं, इससे इन्हें पूर्वगत कहा जाता है। किन्तु गणधर जब श्रुतकी प्रंथरचना करते हैं तब वे आचारादिक्रमसे ही उनकी रचना व व्यवस्था करते हैं, और इसी स्थापनाकी दृष्टिसे आचारांगकी निर्युक्तिमें यह बात कही गई है कि सब श्रुतांगोंमें आचारांग प्रथम है। यथार्थतः अक्षररचनाकी दृष्टिसे पूर्व ही पहले बनाये गये।

एक आधुनिक मत× यह भोहै कि पूर्वोंमें महाबीरखामीसे पूर्व और उनके समयमें प्रचछित मत-मतान्तरोंका वर्णन किया गया था, इस कारण वे पूर्व कहटाये ।

चौदह पूर्वोंके नामोंमें दोनों सम्प्रदायोंमें कोई विशेष भेद नहीं है, केवल ग्यारहवें पूर्वको श्वेताम्बर • अवंझं ' कहते हैं और दिगम्बर ' कछाणवाद '। अवंझंका जो अर्थ टॉकाकारने अवंथ्य अर्थात् ' सफल ' बतलाया है वह 'कल्याण' के शब्दार्थके निकट पहुंच जाता है, इससे संभवतः वह उनके विषयभेदका बोतक नहीं है। छठवें, आठवें, नवमें और ग्यारहसे चौदहवें तक इस

🗙 डॉ. जैकोबी; कल्पसूत्रभूमिका.

प्रकार सात पूर्वोंके अन्तर्गत वस्तुओंकी संख्यामें दोनों सम्प्रदायोंमें मतमेद है। रोष सात पूर्वोक्री वस्तु-संख्यामें कोई भेद नहीं है। खेताम्वर मान्यतामें प्रथम चार पूर्वोके अन्तर्गत वस्तुओंके अतिरिक्त चूलिकाओंकी संख्या भी दी गई है, और दृष्टिवादके पंचममेद चूलिकाके वर्णनमें कहा है कि वहां उन्हीं चार पूर्वोंकी चूलिकाओंसे अभिप्राय है। यदि ये चूलिकाएं पूर्वोंके अन्तर्गत थीं, तो यह समझमें नहीं आता कि उनका फिर एक खतंत्र विभाग क्यों रखा गया। दिगम्बरीय मान्यतामें पूर्वोंके मीतर कोई चूलिकाएं नहीं गिनायी गई और चूलिका विभागके मीतर जो पांच चूलिकाएं बतलायी हैं उनका प्रथम चार पूर्वोंसे कोई संबंध भी ज्ञात नहीं होता।

समवायांग और नन्दीसूत्रमें पूर्वीके अन्तर्गत वस्तुओं और चूलिकाओंकी संख्या-सूचक निम्न तीन गाथाएं पाई जाती हैं---

> दस चोद्दस अट्टट्टारसेव बारस दुवे य वत्थूणि | सोलस तीसा वीसा पण्णरस अणुप्पवायंमि ॥ १ ॥ बारस एक्झारसमे बारसमे तेरसेव वत्थूणि । तीसा पुण तेरसमे चउदसमे पन्नवीसाओ ॥ २ ॥ घत्तारि दुवालस अट्ट चेव दस चेव चूलवत्थूणि | आइ्ह्याण चउण्हं सेसाणं चूलिया णत्थि ॥ ३ ॥

धवल्लामें ( वेदनाखंडके आदिमें ) पूर्वोंके अन्तर्गत वस्तुओं और वस्तुओंके अन्तर्गत पाइडोंकी संख्याकी द्योतक निम्न तीन गाथाएं पाई जाती हैं—

> दस चेाइस अट्टारस (अट्टट्टारस) वारस य दोसु एव्वेसु । सोलस वीसं तीसं दसमंभि य पण्णरस वःथू ॥ १ ॥ एदेसिं पुब्वाणं एवदिओ वःधुसंगहो भणिदो । सेसाणं पुब्वाणं दस दस वत्थू पणिवयामि ॥ २ ॥ एक्केक्वसिंह य वत्थू वीसं वीसं च पाहुडा भणिदा । विसम-समा हि य वन्ध्रू सब्वे पुण पाहुडेहि समा ॥ ३ ॥

इनके अंक भी धवलामें दिये हुए हैं जिन्हें हम निम्न तालिकाद्वारा अच्छीतरह प्रकट कर सकते हैं।

पूर्व	2	ર	Ę	8	4	Ę	ى	۷	۶	80	११	१२	9₹	۲¥	कुल
चरथू	20	१४	ح	٩८	१२	१२	१६	२०	30	94	<b>1</b> 0	१०	<b>9</b> 0	१०	१९५
पाहुड	२००	२८०	1হ ০	३६०	२४०	२४०	३२०	800	<b>ફ</b> ૦૦	300	२००	२००	200	२००	<b>३९००</b>

सब्ब-वःथु-समासो पंचाणउदिसदमेत्तो १९५ ! सब्ब-पाइड-समासो ति-सहस्स-णव-सद-मेत्तो ३९०० |

40

÷ •,

जयधवलामें यह भी बतलाया गया है कि एक एक पाहुडके अन्तर्गत पुनः चौबीस चौबीस अनुयोगद्वार थे। यथा---

एदेसु अत्थाहियारेसु एक्केक्स्स अत्थाहियारस्स वा पाहुडसण्णिदा वीस वीस अत्थाहियारा । तेसिं पि अत्थाहियाराणं एकेकस्स अत्थाहियारस्स चउवीसं चउवीसं अणिओगद्दाराणि सण्णिदा अत्थाहियारा ।

इससे स्पष्ट है कि पूर्वोंके अन्तर्गत वस्तु अधिकार थे, जिनकी संख्या किसी विशेष नियमसे नहीं निश्चित थी। किन्तु प्रत्येक वस्तुके अवान्तर अधिकार पाहुड कहलोते थे और उनकी संख्या प्रत्येक वस्तुके भीतर नियमतः वीस वीस रहती थी और फिर एक एक पाहुडके भीतर चौवीस चौवीस अनुयोगद्वार थे। यह विमाग अब हमारे लिये केवल पूर्वोंकी विशालता मात्रका बोतक है क्योंकि उन वत्थुओं और उनके अन्तर्गत पाहुडोंके अब नाम तक भी उपलब्ध नहीं हैं। पर इन्हीं ३९०० पाहुडोंमेंसे केवल दो पाहुडोंका उद्धार घट्खंडागम और कसायपाहुड (धवला और जयधवला) में पाया जाता है जैसा कि आगे चलकर बतलाया जायगा। उनसे और उनकी उपलब्ध टीकाओंसे इस साहित्सकी रचनाशैली व कथनोपकयन पद्धतिका बहुत कुल परिचय मिलता है।

## चौदह पूर्वोंका विषय व परिमाण

१ उप्पादपुठ्वं-तत्र च सर्वद्रव्याणां पर्यवाणां चोत्पादभावमंगीक्तस्य प्रज्ञापना कृता ।

(१०००००००)

- २ अग्गेणीयं-तत्रापि सर्वेषां द्रब्याणां पर्य-वाणां जीवविशेषाणां चाम्रं परिमाणं वर्ण्यते। (९६०००००)
- ३ वीरियं-तत्राध्यजीवानां जीवानां च सकमें-तराणां वीर्थं प्रोच्यते । (७००००००)
- 8 अत्थिणात्थिपवादं-यद्य छोके यथास्ति यथा वा नास्ति, अथवा स्याद्वादामिप्रायतः तदे-वास्ति तदेव नास्ती खेवं प्रवदति ।

(2000000)

५ णाणपवादं- तस्मिन् मतिज्ञानादिपंचकस्य मेदप्ररूपणा यस्मात्कृता तस्मात् ज्ञानप्रयादं। (९९९९९९)

## चौदह पूर्वींका विषय व पदसंख्या

- १ उप्पादपुरुवं जीव-काल-पोग्गलाणमुप्पाद-वय-धुवत्तं वण्णेइ । (१०००००००)
- २ अग्मेणियं अंगाणमग्गं वण्णेइ । अंगाणमग्गं-पदं वण्णेदि त्ति अग्मेणियं गुणणामं । (९६०००००)
- ३ वीरियाणुपवादं अप्पविरियं परविरियं उभ-यविरियं खेत्तविरियं भवविरियं तवविरियं वण्णेइ । (७००००००)
- ४ अरिथणरिथपवादं जीवाजीवाणं अत्थि-णत्थित्तं वण्णेदि। (६००००००)

५ णाणपवादं पंच णाणाणि तिण्णि अण्णा-णाणि वण्णेदि । (९९९९९९)

५१

६ सच्चपवादं-वाग्गुप्तिः वाक्संस्कारकारण-प्रयोगो द्वादराधा मापावक्तारश्च अनेक-प्रकारं मृषाभिधानं दशप्रकारश्च सत्य-सद्भावो यत्र निरूपितस्तत्सत्यप्रवादम् । (१००००००६)

७ आद्यवादं आदं वण्णेदि वेदेत्ति वा विण्हु ति वा मोत्तेत्ति वा बुद्धेत्ति वा इच्चादिसरू-वेण। (२६०००००००)

८ कम्मपवादं अटविहं कम्मं वण्णेदि । (१८००००००)

९ पच्चक्खाणं दव्य-भाव-परिमियापरिमिय-पच्चक्खाणं उवत्रासविहिं पंच समिदीओ तिण्णि गुत्तीओ च परूवेदि । (८४०६०००)

१० विज्जाणुवादं अंगुष्ठप्रसेनादीनां अल्पविद्यानां सप्तरातानि रोहिण्यादीनां महाविद्यानां पञ्च-रातानि अन्तरिक्ष--मौमाङ्गस्वर-स्वप्त-लक्षण-व्यंजनछिन्नान्यष्टौ महानिमित्तानि च कथयति। (११००००००)

११ करुयाणं रवि--शशि-नक्षत्र-तारागणानां चारोपपाद-गति-विपर्ययफलानि शकुन-व्याहतमईद्वलदेव--वासुदेव--चक्रधरादीनां गर्भावतरणादिमहाकल्याणानि च कथयति । (२६०००००००)

**१२ पाणावायं** कायचिकित्साद्यष्टांगमायुर्वेदं भूतिकर्म जांगुल्प्रिक्रमं प्राणापानविभागं च विस्तरेण कथयति । (१३०००००००)

- ६ सच्चपवादं-सलं संयमं सल्यवचनं बा तद्यत्र समेदं सप्रतिपक्षं च वर्ण्यते तत्सल्य-प्रवादम्। (१००००००६)
- ७ आद्पवादं-आत्मा अनेकधा यत्र नयदर्शनै-र्वर्ण्यते तदात्मप्रवादं । (२६०००००००)
- ८ कम्मपवादं-ज्ञानावरणादिकमष्टविधं कर्भ प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशादिभिर्मिदैरन्यैश्वोत्तरो-त्तरभेदैर्यत्र वर्ण्यते तत्कर्मप्रवादम् ।

(१८००००००)

- ९ पच्चक्खाणं-तत्र सर्वे प्रत्याख्यानखरूपं वर्ण्यते । (८४०००००)
- १० विजाणुवादं-तत्रानेके विद्यातिशया वर्णिताः। (११००००००)
- ११ अवंज्झं-वन्ध्यं नाम निष्फल्स्, न वन्ध्यम-बन्ध्यं सफल्लमिस्पर्थः । तत्र हि सर्वे ज्ञानतपः-संयमयोगाः शुभफल्लेन सफल्ग वर्ण्यन्ते, अप्रशस्ताश्च प्रमादादिकाः सर्वे अशुभफला वर्ण्यन्ते, अतोऽत्रन्ध्यम् ।

(26000000)

**१२ पाणावायं-**तंत्राप्यायुःप्राणविधानं सर्वे समेदमन्ये च प्राणा वर्णिताः ।

(१५६००००)

٠,

**१३ किरियाविसा**रुं-तत्न कायिक्यादयःक्रिया विशाल ति समेदाः संयमक्रिया छन्दक्रिया-विधानानि च वर्ण्यन्ते ।

(९००००००)

१४ लोकबिंदुसारं-तच्चास्मिन् लोके श्रुतलोके वा बिन्दुरिवाक्षरस्य सर्वोत्तममिति, सर्वाक्षर-सनिपातप्रतिष्ठितत्वेन च लोकबिन्दुसारं मणितम्। (१२५००००००)

पूत्रोंके अन्तर्भत विषयोंको सूचना समवायांग व नन्दीसूत्रोंमें नहीं पायी जाती, वहां केवल नाम ही दिये गये हैं । विषयकी सूचना उनकी टीकाओंमें पायी जाती है । उपर्युक्त खेताम्बर मान्यताका विषय समवायांग टीकासे दिया गया है । उस परसे ऐसा ज्ञात होता है कि वहां विषयका अंदाज बहुत कुछ नामकी व्युत्पत्ति द्वारा लगाया गया है । धवलान्तर्गत विषय-सूचना कुछ विरोप है । पर विषयनिर्देशमें शब्दमेदको छोड़ कोई उछेखनीय अन्तर नहीं है । अवन्ध्य और कल्याणवादमें जो नाममेद है, उसीप्रकार विषयसूचनामें भी कुछ विरोप है । धवलामें उसके अन्तर्गत कलित ज्योतिष और राकुनशास्त्रका स्पष्ट उछेख है जो अवन्ध्यके विषयमें नहीं पाया जाता । उसी प्रकार वारहवें प्राणावाय पूर्वके मीतर धवलामें कायचिकित्सादि अष्टांगायुर्वेदकी सूचना स्पष्ट दी गई है, वैसी समवायांग टीकामें नहीं पायी जाती । वहां केवल ' आयुपाणविधान ' कहकर छोड़ दिया गया है । तेरहवें क्रिपाविशालमें भी घवलामें स्पष्ट कहा है कि उसके अन्तर्गत लेखादि वहत्तर कलाओं, चौसठ छी कलाओं और शिल्पोंका भी वर्णन है । यह समवायांग टीकामें नहीं पाया जाता ।

पद्रभमाण दोनों मान्यताओंमें तेरह पूर्वोंका तो ठीक एकसा ही पाया जाता है, केवल बारहवें पूर्व पाणावायकी पदसंख्या दोनोंमें मिन्न पाई जाती है। धवलाके अनुसार उसका पदप्रमाण तेरह कोटि है जब कि समवायांग और नन्दीसूत्रकी टीकाओंमें एक कोटि छप्पन लाख (एका कोटी पट्पछाशच पदल्क्षाणि) पाया जाता है।

प्रथम नौ पूर्वोंका विषय तो अध्यात्मविद्या और नीति-सदाचारसे संबंध रखता है किन्तु आगेके विद्यानुवादादि पांच पूर्वोंमें मंत्र तंत्र व कला कौशल शिल्प आदि लौकिक विद्याओंका वर्णन था, ऐसा प्रतीत होता है। इसी विशेष भेदको लेकर द्द्रापूर्वी और चौदहपूर्वी का अलग अलग उल्लेख पाया जाता है। धवलाके वेदनार्खडके आदिमें जो मंगलाचरण है वह स्वयं इन्द्रभूति गौतम गणधरकृत और महाकम्मपयडिपाइडके आदिमें उनके द्वारा निबद्ध कहा गया है। वहाँसे

दोपक्रियां छन्दोविचितिक्रियां च कथयति । (९०००००००) १४ लोकबिंदुसारं अष्टै। ब्यवहारान् चत्वारि वीजानि मोक्षगमनक्रियाः मोक्षसुखं च

(124000000)

स्नेणांश्वतुःषष्टिगुणान् शिल्पानि काव्यगुण-

१३ किरियाविसालं लेखादिकाः दासप्ततिकलाः

कथयति ।

उठाकर उसे भूतबलि आचार्यने जैसाका तैसा वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, ऐसी धवला-कारकी सूचना है। इस मंगलाचरणमें ४४ नमस्कारात्मक सूत्र या पद हैं। इनमें बारहवें और तेरहवें सूत्रोंमें क्रमसे दशपूर्वियों और चौदह पूर्वियोंको अलग अलग नमस्कार किया गया है, जिसके रहस्यका उद्धाटन धवलाकारने इसप्रकार किया है—-

#### णमो दसपुब्चियाणं ॥ १२ ॥

एत्थ दसपुढिवणो भिण्णाभिण्णभेएण दुविहा होंति । तत्थ एक कारसंगाणि पाढिऊण पुणो परियम्म-सुसपडमाणियोगपुब्बरायचूरित्या ति पंचहियारणिबद्धदिट्टिवादे पढिजमाणे उप्पायपुब्बमादिं कादूण पढंताणं दसपुब्बीविजापवादे समसे रोहिणी-आदिपंचसयमहाविजाई अंगुट्टपसेणादिसत्तसयदहरविजाहि अणुगयाओ किं भयवं भाणवेवत्ति दुक्कंति । एवं दुक्काणं सब्बविजाणं जो लोभो गच्छदि सो भिण्णदसपुब्बी । जो पुण ण तासु लोभं करेदि कम्मक्खयथ्यी होंतो सो अभिण्णदसपुब्वी णाम । तत्थ अभिण्णदसपुब्बी ा जो पुण करासु लोभं करेदि कम्मक्खयथ्यी होंतो सो अभिण्णदसपुब्वी णाम । तत्थ अभिण्णदसपुब्बी ा जो पुण भग्यसहब्बएसु जिणत्तापुव्वत्तीदो ।

#### णमो चोद्सपुव्चियाणं ॥ १३ ॥

जिणाणमिदि एत्थाणुवट्टदे । सयलसुद्णाणधारिणो चोइसपुब्विणो, तेसि चोदसपुब्वीणं जिणाणं णमें इदि उत्तं होदि । सेसहेट्टिमपुब्वर्सव णामणिद्देसं कादृण किमट्टं णमोक्कारो कीरदे ? विज्ञाणुपवादरस समत्तीए इव णुववत्तीदो । चोद्सपुब्वरसेव णामणिद्देसं कादृण किमट्टं णमोक्कारो कीरदे ? विज्ञाणुपवादरस समत्तीए इव चोद्रसपुब्वसमत्तीए वि जिणवयणपच्चयद्ंसणादो । चोद्सपुब्वसमत्तीए को पञ्चओ ? चोद्दसपुब्वाणि समा-णिय रतिं काउस्सग्गेण ट्विदरस पहादसमए भवणवासियवाणवेंतरजोदिसियरूपवासियदेवेहि कयमहापूजा संस्तकाहलात्रस्वसंकुला । होदु एदेसु दोसु ट्वाणेसु जिणवयणपच्चओवरंभो, जिणवयणत्तं पडि सब्वंगपुब्वाणि समाणाणि त्ति तेसि सच्दोसिं णामणिदेसं काऊण णमोक्कारो किण्ण कदो ? ण, जिणवयणत्तं पडि सब्वंगपुब्वाणि समराणाणि त्ति तेसि सच्दोसिं णामणिदेसं काऊण णमोक्कारो किण्ण कदो ? ण, जिणवयणत्तं पडि सब्वंगपुब्वाणि समरिसत्ते संते वि विज्ञाणुष्पवादलोगबिदुसाराणं महलत्त्मस्थि, एरथेव देवपूजोवलंभादो । चोद्दसपुब्वहरो मिच्छत्तं ण गच्छदि तम्हि भवे असंजमं च ण पडिवज्जदि, एसो एदस्स विसेसो ।

यहां धवलाकारने दशपूर्वियों और चौदहपूर्वियोंको अलग अलग नामनिर्देशपूर्वक नमस्कार किये जानेका कारण यह बतलाया है, कि जब श्रुतपाठी आचारांगादि ग्यारह श्रुतोंको पढ चुकता है और दृष्टिवादके पांच अधिकारोंका पाठ करते समय क्रमसे उत्पादादि पूर्व पढ़ता हुआ दशम पूर्व विद्यानुवादको समाप्त कर चुकता है, तब उससे रोहिणी आदि पांच सौ महाविद्याएं और अंगुष्टप्रसेणादि सात सौ अल्प विद्याएं आकर पूछती हैं 'हे भगवन्, क्या आज्ञा है ' इसप्रकार सब विद्याओंके प्राप्त हो जानेपर जो लोभनें पड़ जाता है वह तो भिन्नदशपूर्वी कहलाता है, और जो उनके लोभमें न पड़कर कर्मक्षयार्थी बना रहता है वह अभिन्नदशपूर्वी होता है । ये अभिन्नदशपूर्वी ही 'जिन' संज्ञाको प्राप्त करते हैं और उन्होंको यहां नमस्कार किया गया है । किन्तु जो महावर्तोंका भंग कर देनेसे जिनसंज्ञाको प्राप्त नहीं कर पाते उन्हें यहां नयस्कार नहीं किया गया । आगे यह प्रश्न उठाया गया है कि जब दश और चौदह पूर्वियोंको अलग अलग नम-स्कार किया तब बीचके ग्यारहपूर्वी, बारहपूर्वी और तेरहपूर्वियों को भी क्यों नहीं पृथक् नमस्कार किया । इसका उत्तर दिया गया है कि उनको नमस्कार तो चौदहपूर्वियोंके नमस्कारमें आ ही जाता है, पर जैसा जिनवचनप्रस्थय विद्यानुवादकी समाप्तिके समय देखा जाता है वैसा ही चौदह-पूर्वोंकी समाप्तिपर पाया जाता है। जब चौदहपूर्वोंको समाप्त करके रात्रिमें श्रुत-केवली कायोत्सर्गसे विराजमान रहते हैं तब प्रभात समय भवनवासी, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, और कल्पवासी देव आकर उनकी शंखतूर्यके साथ महापूजा करते हैं। इसप्रकार यद्यपि जिनवचनत्वकी अपेक्षासे सभी पूर्व समान हैं, तथापि विद्यानुप्रवाद और लोकबिन्दुसारका महत्त्व विरोष है, क्योंकि यही देवोंद्वारा पूजा प्राप्त होती है। दोनों अवस्थाओंमें विरोषता केवल इतनी है कि चतुर्दशपूर्वधारी फिर मिथ्यात्वमें नहीं जा सकता और उस भवमें असंयमको भी प्राप्त नहीं होता।

इससे जाना जाता है कि अतपाठियेंकी विद्या एक प्रकारसे दशम पूर्वपर ही समाप्त हो जाती थी, वहीं वह देवपूजाको भी प्राप्त कर लेता या और यदि लोभमें आकर पथम्रष्ट न हुआ तो 'जिन' संज्ञाका भी अधिकारी रहता था। इससे दिगम्बर सम्प्रदायमें दृष्टिवादके प्रथमानुयोग नामक विभागको पूर्वगतसे पहले रखने की सार्थकता भी सिद्ध हो जाती है। यदि पूर्वगतके पश्चात् प्रथमानुयोग रहा तो उसका तात्पर्य यह होगा कि दशपूर्वियोंको उसका ज्ञान ही नहीं हो पायगा। अतएव इस दशपूर्वीकी मान्यताके अनुसार प्रथमानुयोगको पूर्वोसे पहले रखना बहुत सार्थक है। आगेके रेष पूर्व और चूलिकाएं लौकिक और चमत्कारिक विद्याओंसे ही संबंध रखती हैं, वे आत्मशुद्धि बढ़ानेमें उतनी कार्यकारी नहीं हैं, जितनी उसकी दढ़ताकी परीक्षा करानेमें हैं।

भिन्न और अभिन्न दशपूर्वीकी मान्यताका निर्देश नंदीसूत्रमें भी है, यथा-

' इच्चेअं दुवालसंगं गणिपिडगं चेाइसपुब्विस्स सम्मसुअं अभिण्णदसपुब्विस्स सम्मसुअं, तेण परं भिण्णेसु भयणा से तं सम्मसुअं ' ( सू. ४१ )

टीकाकारने भिन्न और अभिन्न दशपूर्वीका स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है---

' इत्येतद् द्वादशांग गणिपिटकं यश्चतुर्देशपूर्वा तत्व सकलमपि सामायिकादि बिन्दुसार-पर्यवसानं नियमात् सम्यक् श्रुतं | ततो अधोमुखपरिहान्या नियमतः सर्वं सम्यक् श्रुतं तावद् वक्तव्यं यावदभिन्नदश-पूर्विणः-सम्पूर्णदशपूर्वधरस्य । सम्पूर्णदशपूर्वधरत्वादिकं हि नियमतः सम्यम्दष्टेरेव, न मिथ्यादष्टेः, तथा स्वाभा-व्यात् | तथाहि, यथा अभव्यो प्रथिदेशमुपागतोऽपि तथा स्वभावत्त्वात् न प्रथिभेदमाधातुमलम्, एवं मिथ्या-दध्दिरपि शुतमवगाहमानः प्रकर्षतोऽपि तावदवगाहते यावत्ति अन्म्यूनानि दशपूर्वाणि भवन्ति, परिपूर्णानि दु तानि नावगाढुं शक्नोति तथा स्वभावत्वादिति । ' इत्यादि इसका तात्पर्य यह है कि जो सम्मग्दष्टि होता है वह तो दश पूर्वोका अध्ययन कर छेता है और आगे भी बढता जाता है, किन्तु जो मिथ्याद्यष्टि होता है वह कुछ कम दश पूर्वोतक तो पढता जाता है, किन्तु वह दशमेको भी पूरा नहीं कर पाता । इसका उदाहरण उन्होंने एक अभव्यका दिया है जो किसी ग्रंथि-देशपर आजानेसे उस ग्रंथिका मेदन नहीं कर पाता । पर टीकाकारने यह नहीं बतलाया कि कुछ कम दशतें पूर्वमें श्रुतपाठी कौनसी ग्रंथि पाकर रुक जाता है और उसका मेदन क्यों नहीं कर पाता ।

## अनुयोगके दो भेद

- १. मूलपढमाणुओग
- २. गंणिआणुओग

### मूळप्रथमानुयोगका विषय

अरहंताणं मगवंताणं पुञ्चभवा देवगमणाइं आउं-चवणाइं जम्मणाइं अभिसेआ रायवरसिरीओ पच्य-जाओ तवा य उग्गा केवल्नाणुप्पयाओ तित्थ-पवत्तणाणि सीसा गणा गणहरा अज्जपवत्तिणीओ संघरस चडव्विहरस जं च पारिमाणं जिण मण पञ्जव आहिनाणी सम्मत्त सुअनाणिणो वाई अणुत्तरगई उत्तरवेडाव्विण्णो मुणिणो जत्तिआ सिद्धा सिद्धीवहो जहदेसिओ जच्चिरं च कालं पाओवगया जे जेहिं जात्तियाइं भत्ताइं छेइत्ता अंतगढे मुणिवरुत्तमे तमरओधविष्पमुक्के मुक्ख-सुहमणुत्तरं च पत्ते एवमन्ने अ एवमाइभावा मूलपढमाणुओगे कहिआ ।

### गंडिआणुओग

गंडिआणुओगे कुलगर-तित्थयर-चक्कवट्टि-दसार-वलदेव-वासुदेव-गणधर-भद्दवाहु-तवोक्कम-हरिवंस-उस्सप्पिणी-चित्तंतर-अमर-नर-तिरिय--निरय-गइग-मण-विविहपरियट्टणेसु एवमाइआओ गंडिआओ आधविज्जंति पण्णविज्जंति ।

श्वेताम्बर सम्प्रदायमें दृष्टिवादके चौथे भेदका नाम अणुयोग है जिसके पुनः दो प्रभेद होते हैं, मूलप्रथमानुयोग और गंडिकानुयोग । दिगम्बर सम्प्रदायमें प्रथमानुयोग ही दृष्टिवादका तीसरा भेद है । अनुयोगका अर्थ समवायांग टीकामें इसप्रकार दिया है—

### प्रथमानुयोगका विषय

पटमाणिओए चडवीस अत्याहियारा तित्थयर-पुराणेसु सव्यपुराणाणमंतव्मावादो (जयधवला) पटमाणियोगो पंच-सहस्सपदेहि (५०००) पुराणं वण्णेदि । उत्तं च-यारसविहं पुराणं जं दिट्ठं जिणवरेहि सब्वेहिं । तं सब्वं वण्णेदि हु जिणवंसे रायवंसे य ॥ १ ॥ पटमो अरहंताणं विदियो पुण चक्कवद्वियंसो दु । विङ्जाहराण तदियो चउत्थओ वासु-देवाणं ॥२॥ चारणवंसो तह पंचमो दु छट्ठो य पण्णसमणाणं । सत्तमओ कुरुवंसो अट्ठमओ तह य हरिवंसो ॥३॥ णवमो य इक्खयाणं दसमो बि य कासियाणं बोद्धव्वो । वाईणेक्कारसमो वारसमो णाहवंसो दु ॥ ४ ॥ अनुरूपेऽनुकूले वा योगोऽनुयोगः सूत्रस्य निजेनाभिधेयेन सार्खमनुरूपः सम्बन्ध इस्पर्थः । अर्थात् — सूत्रद्वारा प्रतिपादित अर्थके अनुकूल संबंधका नाम ही अनुयोग है । ताल्पर्य यह कि जिसमें सूत्र कथित सिद्धांत या नियमेंकि अनुकूल दृष्टान्त और उदाहरण पाये जावें वह अनु-योग है । उसके दो भेद करनेका अभिप्राय नंदीसूत्रकी टीकामें यह बतलाया गया है कि —

इह मूलं धर्मप्रणयनात् तीर्थकरास्तेषां प्रथमः सम्यक्त्वासिरुक्षणपूर्वभवादिगोचरोऽनुयोगो मूक-प्रथमानुयोगः । इक्ष्त्रादीनां पूर्वापरपर्वपरिच्छिन्नो मध्यभागो गाण्डिका, गण्डिकेव गण्डिका, एकार्थाभिकारा प्रथपद्धतिरित्यर्थः । तस्या अनुयोगो गण्डिकानुयोगः ।

इसका अभिग्राय यह है कि धर्मके प्रवर्तक होनेसे तीर्थंकर ही मूल पुरुष हैं, अतएव उनका प्रथम अर्थात् सम्यक्त्वप्राप्तिलक्षण पूर्वभव आदिका वर्णन करनेवाला अनुयोग मूलप्रथमानुयोग है। और जैसे गन्ने आदिकी गंडेरी आजू बाजूकी गांठोंसे सीमित रहती है ऐसे ही जिसमें एक एक अधिकार अलग अलग हो उसे गंडिकानुयोग कहते हैं, जैसे कुल्करगंडिका आदि । किन्तु यह विभाग कोई विरेाष महत्व नहीं रखता क्योंकि दोनोंमें विषयकी पुनरावृत्ति पायी जाती है । जैसे तीर्थंकर और उनके गणधरोंका वर्णन दोनों विभागोंमें आता है । दिगम्बरोंमें ऐसा कोई धिभाग नहीं किया गया और साफ सीधे तौरसे बतलाया गया है कि दृष्टिवादके प्रथमानुयोगमें चौवीस अधिकारोंदारा बारह जिनवंशों और राजवंशोंका वर्णन किया गया है

दिगम्बर सम्प्रदायमें प्रथमानुयोगका अर्थ इसप्रकार किया गया है—

प्रथमं सिथ्याद्दष्टिमव्रतिकमञ्युत्पञ्चं वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽश्विकारः प्रथमानुयोगः ( गोम्मटसार टीका )

इसका अभिप्राय यह है कि ' प्रथमं ' का तात्पर्य अत्रती और अव्युत्पन्न मिथ्यादृष्टि शिष्यसे है और उसके लिये जिस अनुयेग की प्रवृत्ति होती है वह प्रथमानुयोग कहलाता है। इसीके भीतर सब पुराणोंका अर्न्तभाव हो जाता है। किन्तु इसका पद-प्रमाण केवल पांच हजार बतलाया गया है। इससे जान पड़ता है कि दृष्टिवादके अन्तर्गत प्रथमानुयोगमें सर्व कथावर्णन बहुत संक्षेपमें किया गया था। पुराणवादका विस्तार पीछे पीछे किया गया होगा।

नन्दिसूत्रकी टीकामें गंडिकानुयोगके अन्तर्गत चित्रान्तरगण्डिकाका बड़ा ही विचित्र और विस्तृत परिचय दिया है । पहले उन्होंने बतलाया है कि—

' कुलकराणां गण्डिकाः कुलकरगण्डिकाः, तत्र कुलकराणां विमलवाहनादीनां पूर्वभवजन्मादीनि सप्रपद्यप्रुपवर्ण्यन्ते । एवं तीर्थकरगण्डिकादिष्वाभिधानवदातो भावनीयं ' जाव चित्तरगंडिभाउ ' ति ।

अर्थात् कुळकरगण्डिकामें विमल्ल्वाहनादि कुल्करोंके पूर्वभव जन्मादिका संविस्तर वर्णन किया गया है । इसीप्रकार तीर्थंकरादि गंडिकाओंमें उनके नामानुसार त्रिषय वर्णन समझ लेना चाहिये जहांतक कि चित्रान्तरगंडिका नहीं आती । फिर चित्रान्तरगण्डिकाका परिचय इस प्रकार प्रारम्भ किया गया है—

> '' आइच्चजसाईणं डसभरत पर्रपरानरवर्हणं । सयरसुयाण सुबुद्धी इणमो संखं परिकहेइ ॥ १ ॥

भादिस्यवज्ञाः प्रभूतयो भगवज्ञाभेयवंशजास्त्रिसण्डभरतार्द्धमजुपाख्य पर्यन्ते पारमेश्वरीं दीक्षामाभिगृहा तत्प्रभावतः सरुस्कर्मक्षयं कृत्वा चतुर्द्श लक्षा निरन्तरं सिद्धिमगमन् । तत एकः सर्वार्थसिद्धां, तता भूयोऽपि चतुर्दश लक्षा निरन्तरं निर्वाणे, तताऽप्येकः सर्वार्थसिद्धे महाविमाने । एवं चतुर्दशलक्षान्तरितः सर्वार्थसिद्धावेकैकस्तावद्ध-कृष्यो यावत्तेऽप्येकका असंख्येया भवन्ति । तता भूपश्चतुर्दश लक्षा नरपतीनां निरन्तरं निर्वाणे, तता द्वां सर्वार्थसिद्धे । तताः पुनरपि चतुर्दश लक्षा निरन्तरं निर्वाणे । ततो भूयोऽपि द्वाे सर्वार्थसिद्धावेकैकस्तावद्ध-कृष्यो यावत्तेऽप्येकका असंख्येया भवन्ति । तता भूपश्चतुर्दश लक्षा नरपतीनां निरन्तरं निर्वाणे, तता द्वां सर्वार्थसिद्धे । तताः पुनरपि चतुर्दश लक्षा निरन्तरं निर्वाणे । ततो भूयोऽपि द्वे। सर्वार्थसिद्धे । एवं चतुर्दश लक्षा २ लक्षान्तरितौ द्वौ २ सर्वार्थसिद्धे तावद्वकव्या यावत्तेऽपि द्विक २ संख्यया असंख्येया भवन्ति । एवं त्रिक २ संख्यादयोऽपि प्रस्वेकमसंख्येयास्तावद्वकव्याः यावन्निरन्तरं चतुर्दश लक्षा निर्वाणे । ततां भूयोऽपि चतुर्हश लक्षा निर्यार्थनिर्ध सिद्धे । तता भूयोऽपि चतुर्हश लक्षा निर्वाणे । ततः पुनरपि पद्धाशत्सवार्थसिद्धे । एवं पद्धाशस्तर्वार्थ-चतुर्द्वेश २ लक्षान्तरितास्तावद्वकव्या यावत्तेऽप्यसंख्येया भवन्ति । उक्तंच---

> '' चोइस लक्सा सिद्धा णिवईणेको य होइ सब्बट्टे | एवेक्के ठाणे पुरिसजुगा होतिऽसंखेडजा ॥ १ ॥ पुणराप चोइस लक्सा सिद्धा निब्बईण दो वि सब्बट्टे | दुगठाणेऽवि असंसा पुरिसजुगा होति नायब्वा || २ ॥ जाव य लक्सा चोइस सिद्धा पण्णास होति सब्बट्टे | पन्नासट्टाणे वि उ पुरिसजुगा होतिऽसंखेडजा || ३ ॥ गुगुत्तरा उ ठाणा सब्बट्टे चेव जाव पन्नासा | एक्केकंतरठाणे पुरिसजुगा होति असंखेडजा || ४ ॥ इस्यादि ।

इसका तारपर्य यह है कि ऋषभ और अजित तीर्थंकरोंके अन्तराल कालमें ऋषभ वंशके जो राजा हुए उनकी और गतियोंको छोड़कर केवल शिवगति और अनुत्तरोपपातकी प्राप्तिका प्रतिपादन करनेबाली गंडिका चित्रान्तरगंडिका कहलाती है। इसका पूर्वाचार्योने ऐसा प्ररूपण किया है कि सगरचक्रवर्तीके सुबुद्धिनामक महामास्यने अष्टापद पर्वतपर सगरचक्रीके पुत्रोंको मगबान् ऋषमके वंशज आदित्ययश आदि राजाओंकी संख्या इस प्रकार बताई–उक्त आदित्ययश आदि नाभयवंशके राजा त्रिखंड भरतार्धका पालन करके अन्त समय पारमेश्वरी दीक्षा धारण कर उसके प्रमावसे सब कर्मोंका क्षय करके चौदह लाख निरन्तर कमसे सिद्धिको प्राप्त हुए और अनन्तर एक सर्वार्थसिद्धिको गया। फिर चौदह लाख निरन्तर मोक्षको गये और पश्चात् एक फिर सर्वार्थसिद्धिको गया। इसीप्रकार क्रमसे वे मोक्ष और सर्वार्थसिद्धिको तबतक जाते रहे जबतक कि सर्वार्थसिद्धिमें एक एक करके असंख्य होगये। इसके पश्चात् पुनः निरंतर चौदह चौदह लाख मोक्षको और दो दो सर्वार्थसिद्धिको तबतक गये जबतक कि ये दो दो मी सर्वार्थसिद्धिमें असंख्य होगये। इसीप्रकार क्रमसे फिर चौदह लाख मोक्षगामियोंके अनन्तर तीन तीन, फिर चार चार करके पचास पचास तक सर्वार्थसिद्धिको गये और समी असंख्य होते गये। इसके पश्चात् क्रम बदल गया और चौदह लाख सर्वार्थसिद्धिको गये और समी असंख्य होते गये। इसके पश्चात् क्रम बदल गया और चौदह लाख सर्वार्थसिद्धिको गये और समी असंख्य होते गये। इसके पश्चात् क्रम बदल गया और चौदह लाख सर्वार्थसिद्धिको गये और समी असंख्य होते गये। इसके पश्चात् क्रम बदल गया और चौदह लाख सर्वार्थसिद्धिको जाने के पश्चात् एक एक मोक्षको जाने लगा और पूर्वोक्त प्रकारसे दो दो फिर तीन तीन करके पचास तक गये और सब असंख्य होते गये। फिर दो लाख निर्वाणको, फिर दो लाख सर्वार्थसिद्धिको, किर तीन तीन लाख। इस प्रकारसे दोनों और यह संख्या भी असंख्य तक पहुंच गई। यह सब चित्रान्तरगंडिकामें दिखाया गया था। उसके आगे चार प्रकारकी और चित्रान्तरगंडिकायें थी–एकादिका एकोत्तरा, एकादिका दर्श्विता द्रश्चतरा, एकादिका त्र्युत्तरा और त्र्यादिका ढयादिविषयोत्तरा, जिनमें भी और और प्रकारसे मोक्ष और सर्वार्थ-सिद्धिको जानेवालोंकी संख्याएं बतायीं गईं थी।

जान पड़ता है, इन सब संख्याओंका उपयोग अनुयोगके विषयको अपेक्षा गणितको भिन-भिन्न धाराओंके समझानेमें ही अधिक होता होगा ।

### चूलिका

प्रथम चार पूर्वोकी चूलिकाएं ही इसके अन्त-गत हैं। उन चूलिकाओंकी संख्या ४+१२+ ८+१०=३४ है

# पांच चूलिकाओंके अन्तर्गत विषय

- १ जलगया-जलगमण--जल्स्थंभण--कारण-मंत-तंत-तपच्छरणाणि वण्णेदि ।
- २ थलगया- भूमिगमणकारण-मंत-तंत-तब-च्छरणाणि वत्थुविज्जं भूमिसंबंधमण्णं पि सुद्दा-सुद्दकारणं वण्णेदि ।
- **२ मायागया-**इंदजालं बण्णेदि
- ४ रूवगया-सीह-हय-हरिणादि--रूबायारेण परिणमणहेदु-मंत-तंत-तवच्छरणाणि चित्त-कइ-टेण्प-टेणकम्मादि-छक्खणं च वण्णेदि ।
- ५ आयासगया- आगासगमणणिमित्त--मंत--तंत--तवण्छरणाणि बण्णेदि ।

श्वेताम्बर प्रंधोंमें यद्यपि चूलिका नामका दृष्टिवादका पांचवां भेद गिना गया है, किन्तु उसके भीतर न तो कोई प्रंथ बताये गये और न कोई बिषय, केवळ इतना कह दिया गया है कि-

### षट्खंडागमकी प्रस्तावना

से किं तं चूलिआओ ? चूलिआओ आइलाणं चउण्हं पुन्त्राणं चूलिआ, सेसाई पुन्ताई अचूलिआई, से तं चूलिआओ !

अर्थात् प्रथम चार पूर्वोकी जो चूलिकाएं बता आये हैं वे ही चूलिकाएं यहां गिन लेना चाहिये। किन्तु, यदि ऐसा है तो चूलिकाको पूर्वोंका ही भेद रखना था, दृष्टिवादका एक अलग मेद बताकर उसका एक दूसरे मेदके अन्तर्गत निर्देश करनेसे क्या विशेषता आई ? फिर मी ठीकाकार यह तो स्पष्ट बतलाते हैं कि दृष्टिवादका जो विषय परिकर्म, सूत्र, पूर्व और अनुयोगमें अनुक्त रहा वह चूलिकाओंमें संप्रह किया गया----

' इह चूरु। शिखरमुच्यते, यथा मेरौ चूला। तत्र चूला इव चूला। रष्टिवादे परिकर्म-सूत्र-पूर्वानुयोगेऽ नुकार्यसंग्रहपरा मंथपद्धतयः । × × × एताश्च सर्वस्यापि दृष्टिवादस्योपरि किल स्थापिताम्लथैव च पव्यन्ते । ' (तन्दीसूत्र ठीका)

इससे तो जान पडता है कि उन्हें पूर्वोंके भीतर बतलानेमें कुछ गड़बड़ी हुई है। दिगम्बर मान्यतामें पूर्वोंके भीतर कोई चूलिकाएं नहीं दिखाई गईं। उसके जो पांच प्रमेद बतलाये गये हैं उनका प्रथम चार पूर्वोंसे विषयका भी कोई सम्बंध नहीं है। वे जल, थल, माया, रूप और आकाश सम्बंधी इन्द्रजाल और मंत्र-तंतात्मक चमत्कारका प्ररूपण करती है, तथा अन्तिम पांच पूर्वोंके मंत्रतंत्रात्मक विषयकी धाराको। लिये हुए हैं। प्रलेक चूलिकाकी पदसंख्या २०९८९२०० बतलाई है, जिससे उनके भारी विस्तारका पता चलता है।

अब यहां पूत्रोंके उन अंशोंका विशेष परिचय कराया जाता है जो धवला जयधवलाके मीतर प्रथित हैं और जिनकी तुल्नाकी कोई सामग्री श्वेताम्बरीय उपर्युक्त आगमोंमें नहीं पाया जाती। इनकी रचना आदिका इतिहास सत्प्ररूपणा प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिया जा चुका है जिसका सारांश यह है कि मगवान महावारके पश्चात कमशः अर्हाईस आचार्य हुए जिनका श्रुतज्ञान धीरे धीरे कम होता गया । ऐसे समयमें दो मिन्न मिन्न आचार्योने दो मिन्न मिन्न पूर्वोंके अन्तर्गत एक एक पाहुडका उद्धार किया । धरसेनाचार्यने पुष्पदंत और भूतबलिको जो श्रुत पटाया उसपरसे उन्होंने द्वितीय पूर्व आग्रायणीके एक पाहुडका उद्धार सूत्ररूपसे किया। आग्रायणीपूर्वके अन्तर्गत निम्न चौदद ' वस्तु ' नामक अधिकार थे–पुब्वंत, अवरंत, धुव, अधुव, चयणलुद्धी, अद्धुवम, पणिधिकप, अह, भौम्म, वयादिय, सब्बह, कप्पणिजाण, अतीद-सिद्ध-बद्ध और अणागय-सिद्ध-बद्ध ।

हम ऊपर बतला ही आये हैं कि पूर्वोंकी प्रलेक वस्तुमें नियमसे वीस वीस पाहुड रहते ये । अप्रायणी पूर्वकी पंचम वस्तु चयनलब्धिके बीस पाहुडोंमें चौथे पाहुडका नाम कम्मपयडी या महाकम्मपयडी अथवा वेयणकसिणपाहुड × था । इसीका उद्धार पुष्पदंत और भूतबलिने

× कम्भाणं पयडिंसरूवं वण्णेदि, तेण कम्मपयडिंपाहुडे ति गुणणामं । वेयणकसिणपाहुडे ति वि तस्स विदियं णाममरिध । वेयणा कम्माणमुदयो तं कसिणं णिखसेसं वण्णेदि अदो वेयणकसिणपाहुडमिदि एदमवि ग्रुणणाममेव ( सं. प. १, पृ. १२४, १२५ )

10

٠,

सूत्ररूपसे पट्खंडागमके भीतर किया । इस पाहुडके जो चौभीस अवान्तर अधिकार थे, उनके विपयका संक्षेप परिचय घवळाकारने वेदनाखंडके आदिमें कराया है जो इस प्रकार है —

- १ कदि-कदीए ओराल्चिय-बेउब्विय-तेजाहार-कम्मइयसरीराणं संघादण-परिसादणकदी-ओ भव-पढमापढम-चरिमम्मि डिदजीवाणं कदि-णोकदि-अवत्तन्वसंखाओ च परूवि-उजंति ।
- २ **चेदणा-**वेदणाए कम्म-पोम्गलाणं वेदणा-सण्णिदाणं वेदण-णिक्खेवादि--सोल्सेहि अणिओगदारेहि परूक्णा कीरदे ।
- ३ फास-फासणिओगदारामि कम्म-पोग्गलाणं णाणावरणादिमेएण अहमेदमुवगयाणं फास-गुणसंबंधेण पत्त-फासणीमाण-फासणिकले-वादिसोलसेहि अणियोगदारेहि परूवणा कीरदे।
- ४ कम्म-कम्मेत्ति अणिओगद्दारे पोग्गलाणं णाणावरणादिकञ्मकरणक्खमत्तणेण पत्त-काम्मसण्णाणं कम्मणिक्खेवादिसोलसेहि अणियोगद्दारेहि परूवणा कीरदे ।
- ५ प्याडि-पयडि ति अणियोगदारम्हि पोगग टाणं कदिम्हि परूविद-संघादाणं वेदणाए पण्णत्रिदावत्थाविसेस-पञ्चयादीणं फासम्मि णिरूविद-वावाराणं पयडिणिक्खेवादि-सोटस-अणियोगदारेहि सद्दाव-परूवणा कीरदे ।

- १ क्रुति-कृति अर्थाधिकारमें औदारिक, वैकियिक, तैजस, आहारक और कार्मण, इन पाचें शरीरोंकी संघातन और परि-शातनरूप कृतिका तथा भवके प्रथम, अप्रथम और चरम समयमें स्थित जीवोंके कृति, नोकृति और अवक्तव्यरूप संख्या-ओंका वर्णन है।
- २ वेदना-वेदना अर्थाधिकारमें वेदनासंज्ञिक कर्मपुद्रलोंका वेदनानिक्षेप आदि सोल्ह अधिकारोंके द्वारा वर्णन किया गया है।
- ३ स्पर्श्त—स्पर्श अर्थाधिकारमें स्पर्श गुणके संबन्धसे प्राप्त हुए स्पर्शनिर्माण, स्पर्श-निक्षेप आदि सोल्ह अधिकारोंके द्वारा ज्ञानावरणादिके भेदसे आठ भेदको प्राप्त हुए कर्मपुद्रलोंका वर्णन किया गया है।
- ४ कर्म--कर्म अर्थाधिकारमें कर्मनिक्षेप आदि सोल्ह अधिकारोंके द्वारा ज्ञानावरणादि कर्मकरणमें समर्थ होनेसे जिन्हें कर्मसंज्ञा प्राप्त हो। गई है, ऐसे पुद्रलोंका वर्णन किया गया है।
- ५ प्रकृति-प्रकृति अर्थाधिकारमें कृति अधि-कारमें कहे गये संघातनरूप, वेदना अधि-कारमें कहे गये अवस्थाविरोष प्रस्थयादि-रूप, स्पर्शमें कहे गये जीवसे संबद्ध और जीवके साथ संबद्ध होनेसे उत्पन्न द्रुए गुणके द्वारा कर्म अधिकारमें कथित रूपसे व्यापार करनेवाले पुद्रलोंके स्वभाव

६ वंधण-जं तं बंधणं तं चडव्यिहं-बंधो बंधगा बंधणिज्जं बंधविधाणमिदि । तत्थ बंधो जीवकम्मपदेसाणं सादियमणादियं च बंधं वग्णेदि । बंधगाहियारो अडविष्टकम्म-बंधगे पर्द्वेदि, सो च खुदाबंधे पर्द्वविदो । बंधणिज्जं बंधपाओग्ग-तदपाओग्ग-पोग्गल-द्व्वं पर्द्ववेदि । बंधविद्दाणं पयडिबंधं ठिदिबंधं अणुमागबंधं पदेसबंधं च पर्द्वविदे ।

७ णिबंधण-णिबंधणं मूलुत्तरपयडीणं निबं-धणं वण्णेदि । जद्दा चक्खिदियं रूवम्मि णिबद्ध, सोदिदियं सद्दम्मि णिवद्धं, धाणिदियं गंधम्मि णिबद्धं, जिन्मिदियं रसम्मि णिबद्धं, पासिदियं कक्खदादिफासेसु णिबद्धं, तहा इमाओ पयडोओ एदेसु अत्थेसु णिबद्धाओ ति णिबंधणं पद्धवेदि, एसो भावत्थो।

८ पद्मम्-पक्षमेति अणियोगदारं अकम्मसरू-वेण डिदाणं कम्मइयवग्गणाखंधाणं मूळुत्तर-पयडिसरूवेण परिणममाणाणं पयडि-डिदि-अणुमागविसेसेण विसिडाणं पदेसपरूवणं का निरूपण प्रकृतिनिक्षेप आदि सोल्रह अधिकारोंके द्वारा किया गया है।

- ६ बन्धन-बन्ध, बन्धक, बन्धनीय और बन्धविधान, इसप्रकार बन्धन अर्थाधिकारके चार भेद हैं । उनेमेंसे बन्ध अधिकार जीव और कर्मप्रदेशोंका सादि और अनादिरूप बन्धका वर्णन करता है । बन्धक अधिकार आठ प्रकारके कर्मेंकि बन्धक अधिकार आठ प्रकारके कर्मेंकि बन्धक अधिकार आठ प्रकारके कर्मेंकि बन्धके योग्य पुद्गलद्रव्यका कथन बन्ध-नीय अधिकार करता है । बन्धविधान अधिकार प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुमाग-बन्ध और प्रदेशबन्ध, इन चार बन्धके मेर्दोका कथन करता है ।
- ७ निवन्धन-निबन्धन अधिकार मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतियोंके निबन्धनका कथन करता है । जैसे, चक्षुरिन्द्रिय रूपमें निबद्ध है । श्रोत्रेन्द्रिय राज्दमें निबद्ध है । प्राणेन्द्रिय गन्धमें निबद्ध है । जिह्ला इन्द्रिय रसमें निबद्ध है और स्पर्शनेन्द्रिय कर्कश आदि स्पर्शमें निबद्ध है । उसी-प्रकार ये मूल्प्रकृतियां और उत्तरप्रकृतियां इन विषयोंमें निबद्ध हैं, इसप्रकार निब-न्धन अर्थाधिकार प्ररूपण करता है यह भायार्थ जानना चाहिये ।
- ८ प्रक्रम-प्रक्रम अर्थाधिकार जो वर्गणास्कन्ध अमी कर्मरूपसे स्थित नहीं हैं, किंतु जो मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतिरूपसे परिणमन करनेवाले हैं और जो प्रकृति, स्थिति और

अनुभागकी विरोषतासे वैशिष्टयको प्राप्त हैं ऐसे कर्मबर्गणास्कन्धोंके प्रदेशोंका प्ररूपण करता है।

- अर्थाधिकारके ९ उ**पऋम**-उपकम चार अधिकार हैं बम्धनोपजम, उदीरणोपजम, उपशामनोपऋम और विपरिणामोपऋम । उनमेंसे बम्धनोपजम अधिकार बन्ध होनेके दुसरे समयसे लेकर प्रकृति, स्थिति, अनु-भाग और प्रदेशरूप ज्ञानावरणादि आठें कमोंके बन्धका वर्णन करता है । उदीर-णोपकम अधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंकी उदीरणाका कथन करता है। उपशामनोपक्रम अधिकार, प्रकृति, स्थिति, अनुमाग और प्रदेशके भेदसे भेदको प्राप्त हए प्रशस्तोपशमना और अप्रशस्तो-पजमनाका कथन करता है। विपरिणा-मोपज्रम अधिकार प्रकृति, स्थिति, अनु-भाग और प्रदेशोंकी देशनिर्जरा और सकलनिर्जराका कथन करता है।
- १० उद्य-उदय अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके उदयका कथन करता है।
- ११ मोक्ष-मोक्ष अर्थाधिकार देशनिर्जरा और सकलनिर्जराकेद्वारा परप्रकृतिसंक्रमण, उल्क-र्षण अपकर्षण और स्थितिगल्लनसे प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुमागबन्ध और प्रदेशबन्धका आत्मासे भिन्न होना मोक्ष है, इसका वर्णन करता है ।
- १२ संक्रम-संकम अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके संक्रमणका प्ररूपण करता है।

कुणदि ।

९ उवकम - उयक्कमेत्ति अणियोगदारस्स चत्तारि अहियारा--बंधणोवक्कमो उदीरणोवक्कमो उवसामणोवक्कमो विपरिणामोवक्कमो चेदि। तत्य बंधोवक्कमो बंधविदियसमयप्पहुडि अ-इण्णं कम्माणं पयडि-डिदि -अणुभाग-पदेसाणं बंधवण्णणं कुणदि । उदीरणोवक्कमो पयडि-डिदि -अणुभागपदेसाणमुदीरणं परूवेदि । उवसामणोवक्कमो पसत्थोवसामणमप्पस-त्योवसामणाणं च पयडि-डिदि अणुभाग-पदेसभेदभिण्णं परूवेदि । विपरिणाममुव-क्रमो पयडि-डिदि -अणुभाग-पदेसाणं देस-णिज्जरं सयछणिज्जरं च परूवेदि ।

- १० उद्दय--उदयाणियोगद्दारं पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदेसुदयं परूवेदि ।
- ११ मोक्स -मोक्खो पुण देस-सयलणिज्जर।हि परपयडिसंकमोकइणुक्कइण--अद्ध हिदिगल-णेहि पयडि-हिंदि -अणुभाग-पदेसीमेण्णं मोक्खं वण्णेदि ति अत्थभेदो ।
- १२ **संकम**-संकमेत्ति अणियोगदारं पयडि-डिंदि*-*अणुभाग-पदेससंकमे परूवेदि ।

- १३ लेरसा-लेस्सेत्ति अणिओगदारं छदन्वले-रसाओ परूवेदि ।
- १४ लेस्सायम्म–लेस्सापरिणामेति अणियोग-दारमंतरंग-छल्लेस्सा-परिणयजीवाणं वज्झ-कज्जपरूपणं कुणदि ।
- १५ लेस्सापरिणाम--लेस्सापरिणामेत्ति अणि-योगदारं जीव-पोग्गलाणं दच्व-भावलेस्साहि परिणमणविहाणं वण्णेदि ।
- १६ सादमसाद-सादमसादेत्ति अणियोगदारमे-यंतसाद-अणेयंततोदाण (?) मदियादि-मग्गणाओ अस्सिदूण परूवणं कुणह ।
- १७ दहिरहस्स-दीहेरहस्सेति अणिओगदार पयाडि-हिदि -अणुभाग-पदेसे अस्सिदूण दीहरहस्सत्तं परूवेदि ।
- १८ मवधारणीय- भवधारणीए ति अणियोग-दारं केण कम्मेण णेरइय-तिरिक्ख-मणुस-देवभवा धरिज्जंति ति परूवेदि ।
- १९ पोगगलत्त-पोग्गलअत्थेत्ति अणिओगदारं गह-णादो अत्ता पोग्गला परिणामदो अत्ता पोग्गला उवभोगदो अत्ता पोग्गला आहारदो अत्ता पोग्गला ममत्तींदो अत्ता पोग्गला परिगहादो अत्ता पोग्गला त्ति अप्पणिज्जाणप्पणिज्ज-पोग्गलाणं पोग्गलाणं संबंधेण पोग्गलत्तं पत्तजीवाणं च परूवणं कुणदि ।

- १३ लेक्या-लेख्या आनुयोगदार छह दब्य लेख्याओंका प्रतिपादन करता है।
- १४ लेक्याकर्म-लेखाकर्म अर्थाधिकार अन्तरंग छह लेखाओंसे परिणत जीवोंके बाह्य कार्योंका प्रतिपादन करता है ।
- १५ लेडयापरिणाम-लेक्यापरिणाम अर्थाधिकार जीव और पुद्रलोंके द्रव्य और भावरूपसे परिणमन करनेके विधानका कथन करता है।
- **१६ सातासात**-सातासात अर्थाधिकार एकान्त सात, अनेकान्त सात, एकान्त असात, अनेकान्त असातका गति आदि मार्गणा-ओंके आश्रयसे वर्णन करता है।
- १७ दीर्घन्हरूव-दीर्घन्दस्व अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुमाग और प्रदेशोंका आश्रय लेकर दीर्घता और हस्वताका कथन करता है।
- १८ भवधारणीय-भवधारणीय अर्थाधिकार, किस कर्मसे नरकमत्र प्राप्त होता है, किससे तिर्यंचमव, किससे मनुष्यमत और किससे देवभव प्राप्त होता है, इसका कथन करता है।
- १९ पुद्रलाच पुद्रलार्थ अनुयोगद्वार दण्डादिके प्रहण करनेसे आत्त पुद्रलोंका, मिथ्या-त्यादि परिणामोंसे आत्त पुद्रलोंका, उपमोगसे आत्त पुद्रलोंका, आहारसे आत्त पुद्रलोंका, ममतासे आत्त पुद्रलोंका और परिप्रहसे आत्त पुद्रलोंका, इसप्रकार आत्मसात् किये हुए और नहीं किये हुए

Jain Education International

•••

- २० णिधत्तमणिधत्त णिधत्तमणिधत्तमिदि अणियोगदारं पयडि--हिदि-अणुमागाणं णिधत्तमणिधत्तं च परूबेदि । णिधत्तमिदि किं ? जं पदेसग्गं ण सक्कमुदए दादुं अण्णपयडिं वा संकामेदुं तं णिधत्तं णाम । तब्विवरीयमणिधत्तं ।
- २१ णिकाचिदमणिकाचिद--णिकाचिदमणि-काचिदमिदि अणियोगदारं पयडि-धिदि-अणुभागाणं णिकाचणं परूवेदि। णिकाच-णमिदि किं ? जं पदेसग्गं ण सक्कमोक-डिदुमण्णपयर्डि संकामेंदुमुदए दाढुं वा तण्णिकाचिद णाम । तच्त्रिवरीदमाणिका-चिदं ।
- २२ कम्मडिदि-कम्मडिदि त्ति अणियोगदारं सव्वकम्माणं सत्तिकम्मडिदिमुक्दडणोकडण-जणिदडिदिंच परूवेदि ।
- २३ पचिछमक्खंध-पच्छिमक्खंधेति अणिओग-दारं दंड-कपाट-पदर-लोगपूरणाणि तत्थ हिदि-अणुभागखंडयघादणाविहाणं जोग-किन्दीओ काऊण जोगणिरोष्टसरूवं कम्म-क्खबणविहाणं च परूवेदि ।

🔎 पुद्रस्रोंका तथा पुद्रस्टके संबन्धसे पुद्रस्त्वको प्राप्त हुए जीवोंका वर्णन करता है ।

- २० निधत्तानिधत्त-निधत्तानिधत्त अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति और अनुभागके निधत्त और अनिधत्तका प्रतिपादन करता है। जिसमें प्रदेशाग्र उदय अर्थात् उदीरणामें नहीं दिया जा सकता है और अन्य प्रकृतिरूप संक्रमणको मी प्राप्त नहीं कराया जा सकता है, उसे निधत्त कहते हैं। अनिधत्त इससे विपरीत होता है।
- २१ निकाचितानिकाचित--निकाचितानिका-चित अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति और अनु-मागके निकाचित और अनिकाचितका वर्णन करता है। जिसमें प्रदेशाप्रका उल्क-पैण, अपकर्षण, परप्रकृतिसंक्रमण नहीं हो सकता और न वह उदय अथवा उदीरणा में ही दिया जा सकता है उसे निकाचित कहते हैं। अनिकाचित इससे विपरीत होता है।
- २२ कर्मस्थिति-कर्मस्थिति अनुयोगद्वार संपूर्ण कर्मोंकी शक्तिरूप कर्मस्थितिका और उत्कर्षण तथा अपकर्षणसे उत्पन्न हुई कर्मस्थितिका वर्णन करता है।
- २३ परिचमस्कन्ध-पश्चिमस्कन्ध अर्थाधिकार दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकप्रूरणरूप समुद्धातका, इस समुद्धातमें होनेवाले स्थितिकांडकघात और अनुभागकाण्डक-घातके विधानका, योगोंकी कृष्टि करके होनेवाले योगनिरोधके खरूपका और कर्मक्षपणके विधानका वर्णन करता है।

२४ अप्पाबहुग अप्पाबहुगाणिओगदार २४ अल्पबहुत्व अनुयोगदार अदीदसब्वाणिओगदारेसु अप्पाबहुगं अतीत संपूर्ण अनुयोगदारोंमें अल्पबहुत्वका परूवेदि । प्रतिपादन करता है ।

इन चौवीस अधिकारोंके विषयका प्रतिपादन पुष्पदन्त और भूतबलिने कुछ अपने खतंत्र विभाग से किया है जिसके कारण उनकी कृति षट्खंडागम कहलाती है । उक्त चौवीस अधिका-रोंमें पांचवां बंधन विषयकी दृष्टिसे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है । इसीके कुछ अवान्तर अधिकारोंको लेकर प्रथम तीन खंडों अर्थात् जीवट्ठाण, खुदाबंध और बंधसामित्तविचयकी रचना हुई है । इन तीन खंडोंमें समानता यह है कि उनमें जीवका बंधककी प्रधानतासे प्रतिपादन किया गया है । उनका मंगलाचरण भी एक है । इन्हीं तीन खंडोंपर कुन्दकुन्दद्वारा परिकर्म नामक टीका लिखी कही गयी है । इन्हीं तीन खंडोंके पारंगत होनेसे अनुमानतः त्रैविद्यदेवकी उपाधि प्राप्त होती थी । इन्हीं तीन खंडोंका संक्षेप सिद्धान्तचक्रवर्ती नेमिचन्द्रकृत गोम्मटसारके प्रथम विभाग जीवकांडमें पाया जाता है ।

इन तीन खंडोंके पश्चात् उक्त चौवीस अधिकारोंका प्ररूपण कृति वेदनादि क्रमसे किया गया है और प्रथम छह अर्थात् बंधन तकके प्ररूपणको अधिकार व अवान्तर अधिकारकी प्रधानता-नुसार अगछे तीन खंडों वेदणा, वग्गणा और महाबंधमें विभाजित कर दिया गया है। इन तीन खंडोंके विषय-विवेचनकी समानता यह है कि यहां वंधनीय कर्मकी प्रधानतासे विवेचन किया गया है। इनमें अन्तिम महाबंध सबसे बड़ा है और स्वतंत्र पुस्तकारूढ है। जो उपर्युक्त तीन खंडोंके अतिरिक्त इन तीनोंमें भी पारंगत हो जाते थे, वे सिद्धान्तचक्रवर्ती पदके अधिकारी होते थे। सि. च. नेमिचन्द्रने इनका संक्षेप गोम्मटसार कर्मकांडमें किया है।

भूतबळि रचित सूत्रग्रंथ छठवें बंधन अधिकारके साथही समाप्त हो जाता है। रोप निबन्धनादि अठारह अधिकारोंका प्ररूपण घवला टीकाके रचयिता वीरसेनाचार्यकृत है, जिसे उन्होंने चूलिका कहकर प्रथक् निर्देश कर दिया है।

उपर्युक्त खंडविभागादिका परिचय प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिये हुए मानचित्रोंसे स्पष्ट-तया समझमें आजाता है । उन चित्रोंमें बतलायी हुई जीवडाणकी नवमीं चूलिका गति-आगतिकी उत्पत्तिके विषयमें एक सूचना कर देना आवस्यक प्रतीत होता है । वह चूलिका ववलामें वियाह-पण्णत्ति से उत्पन्न हुई कही गया है । मानचित्रमें व्याख्याप्रइप्तिके आगे (पांचवां अंग) ऐसा लिख दिया गया है, क्योंकि यह नाम पांचवें अंगका पाया जाता है । किन्तु दृष्टिवादके प्रथम विमाग परिकर्मके पांच भेदोंमें भी पांचवां भेद वियाहपण्णत्ति नामका पाया जाता है । अतएव संभव है कि गति-आगति चूलिकाकी उत्पादक वियाहपण्णत्ति संस्ताका अभिप्राय हो !

यांचर्वे पूर्व णाणपवाद ( ज्ञानप्रवाद ) के एक पाहुडका उद्धार गुणधराचार्यद्वारा गायारूपमें किया गया । णाणपवादकी बारह वस्तुओंमेंसे दशम वस्तुके तीसरे पाहुडका नाम 'पेज ' या ' पेजदोस ' या ' कसाय ' पाइड था । इसीका गुणधराचार्यने १८० गाथाओं ( और ५३ विवरण-गाथाओंमें ) उद्धार किया, जिसका नाम कसायपाहुड है । इसका परिचय स्वयं सूत्रकार व टीका-कारको शब्दोंमें संक्षेपतः इसप्रकार है----

> पुन्वगिम पंचमामिम हु दसमे वत्थुगिम पाहुडे तदिये ! पेजं ति पाहुडस्मि दु हवदि कसायाण पाहुडंणाम ॥ १ ॥ \*

गाहासदे असीदे अश्वे पण्णरसधा विहत्तनिम | बोच्छामि सुत्तगाहा जद्द गाहा जम्मि अत्थम्मि ॥

ж

टीका--- सोलसपदसहरसेहि वे कोडाकोडिएकसट्रिज्यख--सत्तावण्णसहरस-वेसद्वाणउदिकोटि -वासट्रिलकख-अट्रसहस्सक खरूपण्गेहि जं भणिदं गणहरदेवेण इंदभूदिणा कसायपाहुई तमसीदि -सदगाहाहि चेव जाणावेमि त्ति गाहासदे असीदे त्ति पढमपइजा कदा । तत्थ अणेगेहि अध्याहियारेहि परूविदं कसाय-पाहुडमेत्थ पण्णारसेहि चेव अत्थाहियारेहि परूवेभि ति जाणावणट्ठं अत्थे पण्णारसधा विहत्तगिम ति विदियपद्वःजा कदा | × × × ।

\*

\* संपहि कसायपाहडस्स पण्णारस-अव्धाहियार-परूवणहं गुणहरभडारभो दो सुत्तगाहाओ पठदि---वेज्जदोस-विहत्तीट्रिदि-अणुभागे च बंधगे चेय । वेदगएवजोगे वि य चडट्ठाण-वियंजणे चे य ॥ सम्मत्त-देसविरयी संजम-उवसामणा च खवणा च । दंसण चरित्तमोहे अद्धापरिमाणणिहेसो ॥

×

इसका ताल्पर्य यह है ।कि यह कसायपाहुड पंचम पूर्वकी दसम वस्तुके पेञ्जनामक तृतीय पाहुडसे उत्पन हुआ है । इन्द्रभूति गौतमकृत उस मूल्प्रंथका परिमाण बहुत भारी था और अधिकार भी अनेक थे। प्रस्तुत कसायपाहुडमें १८० गाथाएं १५ अधिकारोंमें विभक्त हैं। गाथाओंमें सचित पन्द्रह अधिकार जयधवलाकारने तीन प्रकारसे बतलाये हैं। इनमेंसे जो विभाग उन्होंने चूर्णिकार यतिवृषमके आधारसे दिये हैं, वे निम्नप्रकार हैं ---

१	पेजवेास		لام	उदय ( कर्मोंदय ) } उदीरणा ( अकर्मोदय ) } वेदग
२	विद्दत्ती-डिदि-अणुभाग		६	उदीरणा ( अक्तमींदय ) ∫ वद्ग
Ę	बंधग (अकर्मबंध))	•	৩	उवजोग
8	बंधग (अकर्मबंध)) संकम ( कर्मबंध ) )	बधग	۲	चउट्ठाण

९ वंजण	१३ चरित्तमोहणीयस्स उवसामणा ) १४ ,, ,, खवणा ) संजम
१० दंसणमोहणीयस्स उवसामणा } ११ ,, ,, खबणा } समत्त	१४,, ,, ग्ववणा ( तजन
११,,,,, खबणा ( समय	१५ अद्वापरिमाणाणिदेस ।
१२ देसविरदी	

इस प्राप्ततके आगे पछिका इतिहास संक्षेपमें धवलाकारने इसप्रकार दिया है ---

' एसो अथो विउलगिरिमस्थयस्त्रेण पचवक्खीकय-तिकालगोयरछद्व्वेण वहुमाणभडारएण गोदम-थेरस्स कहिदो । पुणो सो अश्वो आइस्यिपरंपराए आगंत्र गुणहरभडारयं संपत्तो । पुणे तत्तो आइस्यि-परंपराए आगंत्र अज्जमंग्यु-नागहत्थीगं भडारयाणं मूलं पत्तो । पुणे तेहि देहि वि कमेण जदिवसहभडा-रयस्स वक्क्षाणिदो | तेण वि × × सिस्साणुग्गढटं चुण्गिसुत्ते लिहिदो ' ।

अर्थात् इस कसायपाहुडका मूल विषय वर्धमान स्वामीने विपुला चलपर गौतम गणधरको कहा। वही आचार्य-परंपरासे गुणवर भद्टारकको प्राप्त हुआ । उनसे आचार्य-परंपराद्वारा वही आर्यमंखु और नागहस्ती आचार्योंके पास आया, जिन्होंने क्रमसे यतिवृपम भट्टारकको उसका व्याख्यान किया । यतिवृषभने फिर उसपर चूर्णिसूत्र रचे ।

गुणघराचार्यकृत गाथारूप कसायपाहुड और यतिवृषभकृत चूणिंसूत्र वीरकेन और जिनसेना-चार्यकृत जयभवलामें प्रथित हैं जिसका परिमाण ६० हजार स्ठोक है। इस टीकामें आर्यमंखु और नागहायिके अलग अलग व्याख्यानके तथा उच्चारणाचार्यकृत वृत्तिसूत्रके मी अनेक उल्लेख पाये जाते हैं। यतिवृषभके चूर्णिसूत्रोंकी संख्या लह हजार और वृत्तिसूत्रोंकी बारह हजार वर्ताई जाती है।

नंदीसूत्रमें पूर्वोंके प्रभेदोंमें पाहुडें। और पाहुडिकाओंका मी निम्नप्रकार उल्लेख है, किंग्तु उनका विशेष परिचय कुछ नहीं पाया जाता---

' से णं अंगट्टयाए बारसमे अंगे एगे सुअक्संधे चोद्दस पुब्धाईं, संखेब्जा वर्थ्यू, संखेजा चूलवर्थ्यू, संखेजा पाहुडा, संखेब्जा पाहुडपाहुडा, संखेब्जाओ पाहुडिआओ, संखेक्जाओ पाहुडपाहुडिआओ संखेक्जाई पणसहस्साइं पयग्गेणं संखेब्जा अक्सरा, अणंता गमा अणंता पब्जवा ' आदि

# ६. ग्रंथका विषय

सल्ररूपणाके प्रथम भागमें आचार्य गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंका विवरण कर चुके हैं। अब इस भागमें पूर्वोक्त विवरणके आश्रयसे धवळाकार वीरसेन स्वामी उन्होंका विशेष प्ररूपण करते हैं---

संपहि संतसुत्तविवरणसमत्ताणंतरं तेसि परूवणं भणिस्सामो । ( प्र. ४११)

૬૮

किन्तु इस विशेष प्ररूपणमें उन्होंने गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति आदि बीस प्ररूपणाओं द्वारा जीवोंकी परीक्षा की है। यह वीस प्ररूपणाओंका विभाग पूर्वोक्त सत्प्ररूपणाके सूत्रोंमें नहीं पाया जाता, और इसीलिये टीकाकारने एक रांका उठाकर यह बतला दिया है कि सूत्रोंमें स्पष्टतः उछिखित न होने पर भी इन बीस प्ररूपणाओंका सूत्रकारछत गुणस्थान और मार्गणास्थानोंके मेदोमें अन्तर्भाव हो जाता है, अतः ये ५रूपणाएं सूत्रोक्त नहीं हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता ( पृ. ४१४ )।

' सूत्रेण सूचितार्थानां स्वष्टीकरणार्थं विंशतिविधानेन प्ररूपणोच्यतें ' । ' न पौनहत्तयमधि कर्धचित्तेभ्यो भेदात् ' । ( ए. ४४५ )

इससे यह तो स्पष्ट है कि यह वीस प्ररूपणारूप विमाग पुष्पदन्ताचार्थकृत नहीं है। यह स्वयं धवटाकारकृत मी नहीं है, क्योंकि उन्होंने उन प्ररूपणाओंका नामनिर्देश करनेवाली एक प्राचीन गाथाको ' उक्तं च ' रूपसे उद्घृत किया है। इस विभागका प्राचीनतम निरूपण हमें यतिवृषमाचार्य कृत तिले।यपण्णत्तिमें मिलता है। यथा—

> गुण-जीवा परंजत्ती पाणा सण्णा य मग्गंगा कमसो । उवजोगा कहिदुब्बा णारंड्याणं झहाजोग्गं ॥२७३॥ \*\* \* \* \* गुग-जीवा परंजती पाणा सण्गा य मग्गंगा कमसो । उवजोगा कहिदुब्बा एदाण कुमारद्वेवाणं ॥१८३॥

।केन्तु यह अभी निश्वयतः नहीं कहा जा सकता कि इस बीस प्ररूपणारूप विभागका आदिकर्ता कौन है ! यह विषय अन्वेषणीय है ।

गुणस्थानों व मार्गणास्थानके अनेक भेद प्रभेदोंका विशिष्ट जीवोंकी अपेक्षासे सामान्य, पर्याप्त व अपर्याप्त रूप प्ररूपण करनेसे आछापोंकी संख्या कई सौ पर पहुंच जाती है। इस आछाप विभागका परिचय विषय-सूचीके। देखनेसे मिछ सकता है। अतः उस सम्वंधमें यहां विशेष कथनकी आवश्यकता नहीं है। प्रथम मागकी भूमिकामें गुणस्थानों और मार्गणाओंका सामान्य परिचय देकर यह सूचित किया गया था कि अगछे खंडमें विषयका विशेष विवेचन किया जायगा। किन्तु इस भागका कछेवर अपेक्षासे अधिक बट गया है और प्रस्तावना भी अन्य उपयोगी विषयोंकी चर्चांसे यथेष्ट विस्तृत हो चुकी है। अतः हम उक्त विषयके विशेष विवेचन करनेकी आकांक्षाका अभी किर भी नियंत्रण करते हैं।

आदि.

# ७. रचना और माषारौळी

प्रस्तुत प्रंथविभागमें सूत्र नहीं हैं। सत्प्ररूपणाका जो विषय औष और आदेश अर्थात् गुणस्थान और मार्गणास्थानोंद्वारा प्रथम १७७ सूत्रोंमें प्रतिपादित हो चुका है उसीका यहां वीस प्ररूपणाओं द्वारा निर्देश किया गया है।

इस वीस प्रकारकी प्ररूपणाके आदिमें टीकाकारने 'ओघेण अत्थि मिच्छाइद्वी० सिद्धा चेदि' इस प्रकारसे सूत्र दिया है और उसे ओघसूत्र कहा है। हमारी अ. प्रतिमें इसपर ७४, आ. में १७४, तथा स. में १७९ की संख्पा पायी जाती है जो उन प्रतियों की पूर्व सूत्रगणनाके कमेसे है। पर स्पष्टतः वह सूत्र प्रथक् नहीं है, धवलाकारने पूर्वोक्त ९ से २३ तकके ओघ सूत्रोंका प्रकृत विषयकी वहांसे उत्पत्ति बतलाने के लिये समधिरूपसे उल्लेख मात्र किया है।

इस मागमें गाथाएं मी बहुत थोड़ी पायी जाती है, जिसका कारण यहां प्रतिपादित विपयकी विशेषता है । अवतरण गाथाओंकी संख्या यहां केवळ १३ है जिनमेंसे एक ( नं २२० ) कुंद-कुंदके बोधपाहुडमें और दो ( २२३, २२४ ) प्राकृत पंचसंप्रहमें\* भी पायी जाती हैं । गाथा नं.( २२८) ' उत्तं च पिंडियाए ' ऐसा कहकर उद्घृत की गई है। हमने इस गाथाकी खोज कराई, पर वीरसेवामंदिरके पं. परमानन्दर्जी शास्त्रीने हमें सूचित किया कि यह गाथा न तो प्राकृत पंचसंप्रह में है न तिछोयपण्णत्तिमें और न खेताम्बरीय कर्मप्रकृति, पंचसंप्रह, जीवसमास विशेषावश्यक आदि प्रन्थोंमें है । जान पड़ता है ' पिंडिका ' नामका कोई प्राचीन ग्रंथ रहा है जो अवतक अज्ञात है । इन तीन गाथाओंको छोड़कर रोप सब कहीं जैसी की तैसी और कहीं किंचित् पाठमेद को छिये हुए गोम्मटसार जीवकांडमें भी संगृहीत हैं ।

इस बिमागमें संस्कृत केवल प्रारंममें थोड़ी सी पायी जाती है। रोष समस्त रचना प्राकृतमें ही है। पर यहां विषयकी विशेषता ऐसी है कि उसमें प्रतिपादन और विवेचनकी गुंजा-इश कम है। अतएव जैसी साहित्यिक वाक्यशैली प्रथम विमागमें पायी जाती है वैसी यहां वहुत कम है। जहां कहीं शंका-समाधानका प्रसंग आ गया है, वहीं साहित्यिक शैली पायी जाती है। ऐसे शंका समाधान इस विमागमें २२ पाये जाते हैं। शेष भागमें तो गुणस्थान और मार्गणास्थानकी अपेक्षा जीवविशेषों गुणस्थान आदि वीस प्ररूपणाओंकी संख्या मात्र गिनायी गयी है, जिसमें वाक्य रचनाकी व्याकरणात्मक शुद्धिपर ध्यान नहीं दिया गया। पद कहीं सवि-मक्तिक हैं और कहीं विभक्ति-रहित अपनेप्राति पदिक रूपमें। समास-बंधन भी शिथिल्सा पाया जाता है, उदाहरणार्ध ' आहारभयमेहुणसण्णा चेदि ' (पृ. ४१३)। चेदि से पूर्वके पद समास-

\* यह मंत्र अभी अभी ' वीरसेवा मन्दिर सरसावा ' द्वारा प्रकाशमें ठाया जा रहा है । उसमें उक्त गाथा-ओंके होनेकी सूचना हमें वहांके पं. परमानन्दजी शास्त्री द्वारा मिळी ।

۰٠,

युक्त समझे जांय, या अछग अछग ? यदि अछग अछम छें तो वे सब विभक्तिईान रह जाते हैं, यदि समासरूप छें तो 'च'की कोई सार्थकता नहीं रह जाती । संशोधनमें यह प्रयत्न किया गया है कि यथाशक्ति प्रतियोंके पाठको सुरक्षित रखते हुए जितने कम सुधारसे काम चछ सके उतना कम सुधार करना । किंतु अविभक्तिक पदोंको जानबूझकर विना यथेष्ट कारणके संविभक्तिक बनानेका प्रयत्न नहीं किया गया । इस कारण प्ररूपणाओंमें बहुतायतसे विभक्तिहीन पद पाये जांयगे ।

इन प्ररूपणाओंमें आलापोंके नामनिर्देश खभावतः पुनः पुनः आये हैं। प्रतियोंमें इन्हें प्रायः संक्षेपतः आदिके अक्षर देकर बिन्दु रखकर ही सूचित किया है, जैसे 'गुणट्टाण ' के स्थानपर गुण०, 'पज्जत्तीओ ' के स्थानपर प० आदि । यदि सब प्रतियोंमें ये संक्षिप्त रूप एकसे होते, तो समझा जाता कि वे मूलादर्श प्रतिके अनुसार हैं, अतः मुद्रितरूपमें भी उन्हें वैसे ही रखना कदाचित् उपयुक्त होता । किन्तु किसी प्रतिमें एक अक्षर लिखकर, किसीमें दो अक्षर लिखकर आदि भिन्नरूपसे संक्षेप बनाये गये हैं और किसी प्रतिमें वे पूरे रूपमें भी लिखे हैं । इसप्रकार बिन्दुसहित संक्षिप्ररूप कारंजाकी प्रतिमें सबसे अधिक और आराकी प्रतिमें सबसे कम हैं । इस अव्यवस्थाको देखते हुए आदर्श प्रतिमें बिन्दु हैं या नहीं, इस विपयमें रांका हो जानेके कारण हमने इन संक्षिप्त रूपोंका उपयोग न करके पूरे शब्द लिखना ही उचित समझा ।

प्रत्येक आलापमें बीस वीस प्ररूपणाएं हैं। पर कहीं कहीं प्रतियोंमें एक शब्दसे लगा-कर पूरे आलाप तक भी छूटे हुए पाये जाते हैं। इनकी पूर्ति एक दूसरी प्रतियोंसे हो गई है, किन्तु कहीं कहीं उपलब्ध सभी प्रतियोंमें पाठ छूटे हुए हैं जैसा कि पाठ-टिप्पण व प्रति-मिलान और छूटे हुए पाठोंकी तालिकासे ज्ञात हो सकेगा। इन पाठोंकी पूर्ति विषयको देख समझकर कर्ताकी रैालीमें ही उन्हींके अन्यत्र आये हुए शब्दोंद्वारा करदी गई है। जहां ऐसे जोड़े हुए पाठ एक दो शब्दोंसे अधिक बड़े है वहां वे कोष्ठकके भीतर रख दिये गये हैं।

मूलेमें जहां कोई विवाद नहीं है वहां प्ररूपणाओंकी प्रसेक स्थानमें संख्या मात्र दी गई है। अनुवादमें सर्वत्र उन प्ररूपणाओंकी स्पष्ट सूचना कर देनेका प्रयत्न किया गया है और मूलका सावधानीसे अनुसरण करते हुए में। वाक्यरचना यथाशक्ति मुहावरेके अनुसार और सरल रखी गई है।

मूलमें जो आलाप आये है उनको और भी स्पष्ट करने तथा दृष्टिपातमात्रसे ज्ञेय बनानेके लिये प्रत्येक आलापका नकशा भी बनाकर उसी पृष्टपर नीचे दे दिया गया है। इनमें संख्याएं अंकित करनेमें सावधानी तो पूरी रखी गई है, फिर भी संभव है दृष्टिदोषसे दो चार जगह एकाध अंक अशुद्ध छप गया हो। पर मूल और अनुवाद साम्हने होनेसे उनके कारण पाठकोंको कोई भ्रम न हो सकेगा। नकशोंका मिलान गोम्मटसारके प्रस्तुत प्रकरणसे भी कर लिया गया है।

# सत्प्ररूपणा-आलापसूची

 $\sim$ 

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	चिषय	नकद्या नं	पृष्ठ नं.
ओघ आलाप		839-886	आदेश आलाप		
सामान्य	•	88%	१ गतिमार्गणा		
पर्याप्त्	१	४२०	१ नरकगति		
અપર્યાપ્ત	ંર	કરર	सामान्य	સ્ટ	886
१ मिथ्याद्दाष्टि			पर्याप्त	રર	૪૪૬
सामान्य	ર	કરર	अपर्याप्त	30	840
ं पर्याप्तू	8	<u> </u>	मिथ्याद्दप्रि	•	
• अपयर्धि	4	<b>ક</b> રવ	सामान्य	३१	ક્ષપર
२ स(साद्नसम्य			पर्याप्त	રર	842
सामूान्य	द	કરદ	अपर्याप्त	રર	કપર
पर्याप्तू	છ	કરદ	सासादनसम्यग्हा	છે રૂઇ	<b>ક</b> ષર
अपर्याप्त	2	<u> </u>	सम्यग्मिथ्याद्दष्टि	ર્વ્	ક્ષર
३ सम्यग्मिथ्याहा		કરઽ	असंयतसम्यग्दा	E	
४ असंयतसम्यग्र			सामान्य	રદ	848
सामान्य	१०	કરઽ	पर्याप्त	ইও	848
पर्याप्त	११	કરર	अपर्याप्त	३८	844
अपर्याप्त	१२	४३०	प्रथमपृथिवी		
५ संयतासंयत	१३	કર્	सामान्य	ર્	ક્ષક
६ प्रमत्तसंयत्त	શ્વ	કરર	पर्याप्त	୪୦	890
७ अप्रमत्तसंयत	<b>ટ્</b> પ્	કરર	अपर्याप्त	કર	४५८
८ अपूर्वकरण	१६	કરક	मिथ्यादृष्टि		
९ अनिवृत्तिकरण	ſ		सामान्य	કર	४५९
प्रथम भाग	<u> </u>	કરવ	े पर्याप्त	કર	४५९
द्वितीय ,,	१८	કરદ્	अपर्याप्त	88	४६०
तृतीय ,,	१९	કરદ	सासादनसम्यग्दा	ष्टि ४५	કદર
चतुर्थ "	२०	ওইও	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	કર	કુદર
पंचम ,,	૨૧	કરઽ	असंयतसम्यग्हा	<u>i</u> —	
१० सुक्ष्मसाम्पराय	म २२	કર્ટ	सामान्य	89	કદ્દર
११ उपशान्तकषाय	ય ૨૨	ક્ષરૂৎ	पर्याप्त∙	85	કદર
१२ क्षीणकषाय	રક	880	अपर्याप्त	કર	,,
१३ सयो।गिकेवळी		880	द्वितीयपृथिवी		
१४ अयोगिकेवली		884	सामान्य	५०	ક્રક
१५ सिद्ध	- २७	889	पर्याप्त	હર	ક્ષદંવ

ų,

৩	₹
	×

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	धिषय	नकद्या नं.	વૃષ્ઠ નં.
અવર્યાવ્સ	r	,,	पर्याप्त	20	,,
मिथ्यादृष्टि			अपर्याप्त	८१	866
सामान्य	બર	ક્રદ્દ	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	: ૮૨	કટવ
पर्याप्त	48	୪६७	असंयतसम्यग्हरि	ष्टे	
भपर्याप्त	T લ્લ્	,,	सामान्य	৴ই	<b></b>
सासदिनसम्य	<b>ग्ह</b> ष्टि ५६	ક્રદ્રટ	पर्याप्त	<8	४९०
सम्यग्मिथ्याद्य		કદર	अपर्याप्त	64	४९१
असंयतसम्यग्	દષ્ટિ ५८	- કફર	संयतासंयत	୵ୡ	કર્
तृतीयादि पृथि	वियोंके	ĺ	पंचेन्द्रियतिर्यंचपर्या	प्त	કષ્ર
<b>Ç</b> .	आलाप	8,00	पंचेन्द्रियतिर्यचयोगि	नेमती	
२ तिर्यंचगति			सामान्य	29	કરર
सामान्य		৪৩१	पर्याप्त	22	<b>ક</b> રર
पर्याप्त	६०	કહર	अपर्याप्त	৻৽	<u> </u>
अपर्याप्त	त ६१	ଽ୰୪	मिथ्याद्दष्टि		
मिथ्याद्दष्टि			सामान्य	९०	ક્રક
सामान्य	६२	૪૭૪	पर्याप्त	<i>९</i> ,१	8९५
पर्याप्त	દર	સંહલ	अपर्याप्त	९२	୫୧୍ଟ
अपर्याप	ત ૬૪	77	सासादनसम्यग्द	:ছি	
सासादनसम्य	ग्हन्धि		सामान्य	<b>લ્</b> સ્	४९७
सामान्य		୪७६	पर्याप्तू	ৎণ্ড	860
पर्योप्त	हह	४७७	अपर्याप्त	حرمو	કર્ડ
अपर्याप्र	ল হও	୫७८	सम्यग्मिथ्याद्दष्टि	. <b>९</b> ६	કર્ડ
सम्यग्मिथ्याह	ष्टि ६८	896	असंयतसम्यग्द	ષ્ટે ૧૭	<b>ક</b> રેડે
असंयतसम्यग	दृष्टि		संयतासंयत	९८	400
सामान्य	र ६९	8/99	<b>पंचेन्द्रिय</b> तिर्यंच	उब्स्य-	
पर्याप्त	90	820	पर्याप्तक	९९	400
अपर्याप्र	র ওহ	840	३ मनुष्यगति		
संयतासंयत	৩২	४८१	सामान्य	१००	५०१
पंचेन्द्रियतिर्यं	व		पर्याप्तू	१०१	५०२
सामान्य	ৰ ১২	<b>ક</b> ટર	अपर्याप्त	१०२	५०४
पर्याप्त	કર	<b>ક</b> ૮૨	मिथ्याद्दष्टि		
અવર્યાવ્સ	ৰ ৩২	878	साम्रान्य	१०३	لإهلا
मिथ्याद्यष्टि			पर्याप्तू	१०४	لعصلع
सामान्य	r ওহ	४८५	अपर्याप्त	१०५	५०६
पर्याप्त	60	,,	सासाद्नसम्यग		
अपर्याप	ন ৬૮	<b>ઝ</b> ૮૬	सामान्य	१०६	4019
सासादनसम्य	<b>ग्दा</b> ष्टि		पर्याप्त्	१०७	5,2
समान्य	৫ ৬৫	85/9	अपर्याप्त	१०८	402

ï

.

 $\{ e_{ij} \}$ 

### सन्त्ररूपणा

विषय	नकद्या ने.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं	प्रुष्ठ ने.
सम्यग्मिथ्याह	શિષ્ટ ૧૦૧	406	४ देवगति		
असंयतसम्यग	_		सामान्य	१४०	પરશ
सामान्य	०९४ १	५०९	पर्याप्त	શ્કર	ૡરૂર
ঘর্যার	१११	لالإه	अपर्याप्त	શ્કર	ધરેદ
अपर्याप्त	११२	५१०	मिथ्याद्दष्टि		
संयतासंयत	११३	<b>હરર</b>	सामाम्य	શ્લર	ধইও
ममत्तंयतावि	t	<b>હ</b> શ્૨	पर्याप्त	રક્ષ	,,
मनुष्यपर्यात		५१२	अपर्याप्त	રક્ષપ	બરૂડ
मनुष्यनी			सासादनसम्यग्ह	নিছ	
सामान्य	∎ ર્શ્ક	<b>५</b> १३	सामान्य	<b>શ્</b> ષ્ઠદ્	५३८
पर्याप्त्	ર્ <b>ટ્</b> પ્	વશ્લ	पर्याप्त	१४७	ધરૂર
अपर्याप्त	। <b>१</b> १६	५१५	अपर्याप्त	१४८	480
मिथ्यादृष्टि			सम्यग्मिथ्यादधि	-	480
सामान्य	ে ११७	<b>ૡ</b> ૄદ્	असंयतसम्यग्रा	ष्टे	
पर्याप्त्	११८	५१७	सामान्य	<b>१</b> ५०	<b>લ</b> કર
अपर्याप्त		,,	पर्याप्त	<i>६५१</i>	લ્કર
सासादनसम्य			अपर्याप्त	१५२	*7
सामान्य		५१८	মধনার্রিক		
पर्यान्न्	१२१	પર્ર	समान्य	१५३	બ્લર
अपर्याप्त	•	77	पर्याष्त्र	શ્પષ્ઠ	૬૪૪
सम्यग्मिथ्याः		५२०	अपर्याप्त	શ્વલ	
असंयतसम्यग	=	५२०	मिथ्याद्दष्टि		
संयतासंयत	१२५	બરર	सामान्य	१५६	લ્કલ્
<b>प्रमत्तसंय</b> त	१२६	ધરર	দর্যাদ্র	१५७	બક્ષદ
अप्रमूत्तसंयत	• •	બરર	अपर्याप्त	<u>१</u> ५८	,1
अपूर्वे <b>करण</b> रिन्टिन	१२८	વરર	सासादनसम्यः		
अनिवृत्ति०प्रथ		<b>૧</b> ૨૪	सामान्य	१५९	489
,, द्वितीय		પરઇ	पर्याप्त	१६०	૧૪૮
, नृतीय		ध्रद्ध	अपर्याप्त	१६१	""
	,, १३२	બરદ્દ	सम्यग्मिथ्याहा		<b>લ્</b> સર
,, पंचम	,, ૧૨૨	<u> </u>	असंयतसम्यग्दा		५५०
सूक्ष्मसाम्परा	य १३४	५२७	भवनत्रिक पुरुष	वेदी	ويروه
उपद्यान्तकषा	य १३५'	५२८	भवनत्रिक स्त्रीवे		,,
क्षीणकषाय	<b>१</b> ३६	પર૮	सौधर्म-पेशान		
सयोगिकेवर्छ	<b>१</b> ३७	પરર	सामान्य	१६४	५५१
अयोगिकेवली	१३८	५३०	पर्याप्त	१६५	· 448
लञ्ध्यपर्याप्तव		430	अपर्याप्त	१६६	<b>હ</b> લર

•

विषय	नकद्या नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
मिथ्यादृष्टि			सूक्ष्म एकेन्द्रिय	T	
सामान्य	<b>হ</b> হত	<b>બ</b> બરૂ	सामान्य		903
पर्याप्त	१६८	લલક	বর্যাব্ব	१९०	4.68
अपर्याप्त	१६९	"		१९१	1,
सासादनसम्य	ग्दष्टि		सुक्ष्म एकेन्द्रिय प		دورقانو
सामान्य	হ ৬০	tatara .		ब्यपर्याप्त	
पर्याप्त	<u> </u> হওহ	५५६	२ द्वीन्द्रिय		
अपर्याप्त	<u> </u>	,,	स(म)स्य	१९२	4994
सम्यग्मिथ्याहा	ছি १७३	4419	पर्याप्त	१९३	498
असंयतसम्यग्	চি		अपर्याप्त	ક્લ્ક	999
सामान्य	१७४	<i>66</i> 9	द्वीन्द्रिय पर्याप्त	त	900
पर्याप्त	१७५	فلأتوح	,, रुब्ध्यपय	ોષ્ત	,,
अपर्याप्त	।	५५९	३ त्रीन्द्रिय		
सौधर्म पेशान पुर	ब्षवेदी	५६०	सामान्य		41919
सौधर्म पेशान स्त्र	विदा	५६०	पर्याप्त	१९६	<b>५७८</b>
सानत्कुमार म			अपर्याप्त	१९७	4139
सामान्य		५६२	त्रीन्द्रिय पर्याप्त	त	५७९
પર્યાવ્લ	१७८	<u>५</u> ६२	,, लब्ध्यपर		,,
अपर्याप्त	, ২৩৪	"	४ चतुरिन्द्रिय		
मिथ्यादृष्ट्यादि	[	4૬૨	सामान्य		469
ज्रह्य से नौ प्रैरे	वेयक	બદ્દર	पर्याप्त	१९९	400
नौ अनुद्रिश प	ांच अनुत्तर		अपर्याप्त		५८१
सामान्य	१८०	બદ્ધ	चतुरिन्द्रियपर्य		૧૮૨
पर्याप्त	१८१	ويووم	,, लब्ध्यपय	দিব	,,
अपर्याप्त	। १८२	બદ્ધ૮	५ पंचेन्द्रिय		
५ सिद्धगति		५६८	सामान्य	२०१	<u> ૧૮૨</u>
			पर्याप्तू	२०२	५८३
२ इन्द्रियमार्गणा			<b>અ</b> વર્યાવ્ત	२०३	468
१ पकेन्द्रिय			मिथ्याद्दष्टि		
सामान्य	१८३	५द्द	सामूास्य	૨૦૪	468
पर्याप्त	१८४	4190	पर्याप्त	२०५	لعلالع
अपर्याप्त		908	अपर्याप्त	२०६	७८६
बादर एकेन्द्रिय			सासादनादि		650
सामान्य		५७१	असंज्ञीपंचेन्द्रि	प	
पर्याप्त	<i></i> <b>१८७</b>	৬७२	सामान्य	২০৩	<b>५८७</b>
ુઅપર્યાવ્ત		17	पर्याप्त	२०८	""
बादर पकेन्द्रिय प		<i>ও</i> ।ওই	अपर्याप्त		466
,, ਲਾ	ध्यपर्याप्त	৫৩২	पंचेन्द्रियऌब्ध्यपय	াব্ব ২१০	५८९

ওপ

\*\*

### सत्प्ररूपणा

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं	विषय	नक्या नं.	पृष्ठ नं.
संशीपंचेन्द्रिय ,	. ૨૧૧	५८९	बादरसाधारण	वनस्पति	
असंबीपंचेन्द्रिय,		५९०	सामाग्य		६१८
६ अनिन्द्रिय	-	<b>در ک</b> ره	पर्याप्त		हर्रद
💐 कायमार्गणा			अपर्याप्त		६२०
सामान्य	રશ્ર	હર	बादरसाधारण	দর্যাদ্ব	そうの
पर्वाप्त	રશ્ક	૬૦૧ે	,, লঙ	यपर्याप्त	<b>,</b> ,
अपर्याप्त		૬૦૨	सुक्ष्मसाधारण		79
मिथ्यादृष्ट्यादि	-	૬૦૪	६ त्रसकायिक		
१ पृथियांकारि	-	ι -	सामान्य	રરૂષ્ઠ	६२१
सामान्य		६०४	पर्याप्त	રરૂપ	દરર
पर्याप्त	२१७	६०५	अपर्याप्त	રરૂદ્	દરરૂ
अपर्याप्त		६०६	मिथ्यादृष्टि		
बाद्रपृथिवीकः	ायिक		साम्रान्य	২২৩	६२४
सामान्य	२१९	७/०३	पर्याप्तू	રર્ટ	६२५
पर्याप्त	२२०	६०८	अपर्याप्त	: ૨३९	६२६
अपर्याप्त	र २२१	"	सासादनादि		६२७
बादरपृथिवीकायि	कपर्याप्त	६०९	ও अकायिक	ু ২৪০	६२७
,, लब्ध्यप		33	बसकायिक पर		হ্র ১৯
सुक्ष्मपृथिवीक	ायिक	,,	,, लब्धपय	ોપ્ત ૨૪૧	,,
२ अप्कायिक		६०९	४ योगमार्गणा		
३ अग्निकायिक	5	<b>६१०</b>	१ मनोयोगी	રકર	६२८
४ वायुकायिक	5	६११	मिथ्याद्याप्टे	રકર	६२९
😗 वनस्पतिक	ायिक	ļ	सासाद्न०	રક્રક	६३०
सामान्य	રરર	६१२	सम्यग्मिथ्य	াইছি ২৪%	દ્ર્ર૦
पर्याप्त	રરર	६१३	असंयतसम्य		द३१
अपर्याप्ट	r ૨૨૪	<b>g</b> ,	संयतालयत		६३२
<b>अत्येकवनस्प</b> तिका	त्यिक	ļ	प्रमत्तसंयत		દરર
सामान्य	રરષ	દ્દરક	अप्रमत्त्त्य		દ્રરૂર્
पर्याप्त	ररद	દ્રુષ	सत्यमनोयोः		27
अपर्याप्त		,,	असत्यमृष्		۹.
प्रत्येकवनस्पंतिक		६१६	मृषामनोयोग		૬३३
	ध्यपर्याप्त	,1	मिथ्यादृष्ट्यादि		દરક
बादरनिगोदप्रतिष्		>>	२ वचनयोगी	२५०	દરક
साधारणवनस्पति			मिथ्यादृष्टि	248	દ્રસ્પ
सामूं।स्य		६१६	सासादनादि		६३६
पर्याप्त	રરৎ	ह१७	सत्यवचनय		दइद
अपर्याप्ट	r २३०	<b>६१८</b>	<b>म्ह</b> षावचनयो	गि	••

÷ •,

विषय	नक्या नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नक्झा ने.	पृष्ठ नं.
सत्यमृषःव	चनयोगी	,,	सम्यरिमध्यादी	ષ્ટ ૨૮૨	हद३
	विचनयोगी	19	असंयतसम्यग्ट		**
३ काययोगी			वैक्रियिकमिश्रकाय	योगी २८४	દદ્ધ
सामान्य	। ২५२	६३७	मिथ्याद्धि	<b>૨૮</b> ५	द६५
पर्याप्त	રલર	६३८	सासादनसम्यग	द्दष्टि २८६	दद्भ
अपर्याप	ন ২৭৪	દરૂર	असंयतसम्यग्द	ছি ২८৩	દ્દદ્દ
मिथ्यादृष्टि			आहारककाययोगी		६६७
सामान्य	<b>য</b> ২৬৬	६४०	आहुरिकमिश्रकाय	योगी २८९	६६८
पर्याप्त	રષદ્	દ્ધર	कार्मणकाययोगी	२९०	६६८
अपर्याप	র ২৭৬	3 9	मिथ्याद्दष्टि	ર૧ ર	६७०
सासादनसम्य	।ग्दष्टि		सासाद्नसम्यग	_	<b>६७०</b>
सामान्य	મ ૨૧૮	દ્દ કર	असंयतसम्यग्द		६७१
पर्याप्त	249	દ્ધર	सयोगिकेवळी	રૂલ્ઇ	६७२
अपर्याप	র २६०	,,	ક અયોગી		६७२
सम्यग्मिथ्याइ	ছে ২६१	દ્વક્ષક	५ वेदमार्गणा		
असंयतसम्यग	दाष्टि				
सामान्य	ા ૨૬૨	દ્ઇઇ	१ स्त्रीवेदी	501	<b>C</b>
पर्याप्त	રદર	દ્દઇપ	सामान्य	<b>૨</b> ૧५	<b>হও</b> য় জন্ম
अपर्याप	র ২६४	દ્દક્રદ્	पर्याण्त 	<b>૨</b> ९६	<u> </u> হওপ্ত
संयतासंयत	२६५	૬ઝ૬	अपर्याप्त	२९७	,,
प्रमत्तसंयत	૨૬૬	६४७	मिथ्याद्दप्रि	5.5.4	Ciet.
अप्रमृत्तसंयत		દ્ધડ	सामान्य	<b>२९८</b>	<i>દ્</i> હ્યુ ૬.૪૬
अपूर्वकरणावि	È	દ્સડ	पर्याप्त	<b>૨</b> ९९	<i><b>হ</b>ওহ</i>
् सयोगिकेवली		દ્દસ્ટ			**
औदारिककाययो	गी २६९	દ્દષ્ઠৎ	सासादनसम्यग		G-AIA
মিথ্যাহুছি	230	द्५०	सामान्य	३०१	ହତ୍ <i>3</i>
सासादनसम्य		દ્ધર	पर्याप्त	302	<u> ২</u> ৩২
सम्यग्मिथ्याह	ાષ્ટિ ૨૭૨	६५१	. અપર્યાપ્ત	-	13
असंयतसम्यग		દ્ધર	सम्यग्मिथ्याहा	_	<i>হ</i> ওৎ হ ০০
् संयतासंयता		,,	अलंयतसम्बग्द		<b>६७९</b>
औदारिकमिश्रक	<b>यियोगी २७</b> ४	દલ્ફ	संयतासंयत	૨૦૬	<b>Ę</b> 20
मिथ्यादृष्टि	२७५	हिप्प	प्रमत्तसंयत	२०७	६८र्
सासःदनसम्य		દ્ધદ્	अप्रमत्तसंयत	३०८	६८२
अस्यत्सम्यग		52	अपूर्वकरण	३०९	६८२
्स्योगिकेवर्ऌ		६५८	अनिवृत्तिकरण	३१०	૬૮૨
चैक्रियिककाययो		इदर्	२ पुरुषवेदी		<b>.</b>
मिथ्याद्दष्टि	260	इदर	सामान्य	<b>३११</b>	६८४
सासाद्नसम्	बग्हाद्वे २८१	६६२	पर्याप्त	<b>સ્ટ્ર</b> સ્	૬૮૪

.

.

सत्प्ररूपणा

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	चिषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
अपर्याप्त	સરસ	६८५	सासाद्नसम्यग	दृष्टि	
मिथ्याहाष्टि			सामान्य	ঽঽ૮	308
सामान्य	ર્શ્ક	६८६	ं पर्याप्त	રૂર્ડ	1904
पर्याप्त	<b>३</b> १५	,,	अपर्याप्त	ই৪০	1004
अपर्याप्त	રરદ	६८७	सम्यग्मिथ्याद्यां	ષ્ટે ૨૪૧	७०६
सासादनादि		६८८	असंयतसम्यग्द	ছি	
३ नपुंसकवेदी			स्तामान्य	રક્ષર	6,06
सामान्य	३१७	६८८	पर्याप्त	રુષ્ટર	,,
पर्याप्त	३१८	६८९	अपर्याप्त	રક્ષક	200/
अपर्याप्त	રર્૬	हर्०	संयतासंयत	રૂકલ	७०९
मिथ्याद्दष्टि		i	प्रमत्तसंयत	રુ૪૬	300
सामान्य	३२०	हर्०	अप्रमत्तसंयत	২৪৩	७१०
पर्याप्त	<b>સ્</b> રર	हर्ष्	अपूर्वकरण	<u> 3</u> 85	ওংহ
अपर्याप्त	<b>સ્</b> રર	દ્રશ્૨	अनिवृत्तिकरण		
सासादनसम्यम	_	[	प्र० में	० ३४९	હદર
सामान्य	<b>ર</b> રર	દ્વર	<b>,,  টি</b> ০ ম্		ও१२
पर्याप्त	રૂરક	,,	मान, माया औ	र	
अपर्याप्त		દરક	लोभकवा	र्या	હશ્ર
सम्यग्मिथ्यादी		हर्द	अकषायी	ર્પર	৬१३
असंयतसम्यग्द			उपशान्तकषाय	ादि	७१४
सामान्य	३२७	हर्५	७ ज्ञानमार्गणा		ବ୍ଷ
पर्याप्त	<b>ર્</b> સ્ટ	દ્દ ૧૯		A	•
अपर्याप्त	<b>૨</b> ૨૧	६९७	मति-श्रुत-अक्का		1000
संयतासंयत	इइ०	<i>६९</i> ७	समान्य	<b>ર્</b> પ્ર ૨૯૨	७१७ ७१७
प्रमत्तसंयतादि		ह९८	पर्याप्त	343	৬१५ ১৯৫
४ अपगतवेदी	રરશ	ह९८	अपर्याप्त	<b>સ્પ્</b> પ્ર	७१६
अनिद्वत्तिकरण			मिथ्यादृष्टि	Dist.	2201
द्वितीय भागादि	[	ह०्०	सामान्य	च्रिय्य चर्य्य	ও <b>१</b> ६ ৩ <b>१</b> ৩
	-		પર્યાપ્ત अपर्याप्त	<b>૨</b> ५६ <b>२</b> ५६	ও१৩ ১१৩
६ कषायमार्गणा		1	<b>i</b>		940
<u>क्रोधकपायी</u>			सासादनसम्यग		৬হৎ
सामान्य	३३२	500	सामान्य पर्याप्त		964
पर्याप्तू	રરર	805	·	<b>ર</b> ષ્દ્ ૨૬૦	" ७२०
अपर्याप्त	. રૂર્ક	23	अपर्याप्त		
मिथ्यादृष्टि			विभंगन्नानो	३६१	৩২৩
सामान्य	इर्प	७०२	मिथ्याद		७२१
पर्याप्त	રરદ્	७०३	सासादनसम्य	দ্রান্থ হবহ	७२२
अपर्याप्त	হ হও	800	मतिश्रुतश्चानी		

৩૮

 $(\cdot, \cdot)$ 

आलापसूची

বিশ্বয	नकरा। नं.	पृष्ठ नं.	ষিষয	नकशा ने.	पृष्ठ नं.
सामान्य	. ३६४	હરર	अपर्याप्त	૨૮૬	હકર
पर्याप्त	રદ્ધ	৩২২	सासादनसम्यग्हष्	চ্মাহি	ક્રક્ષ્ણ
अपर्याप्त	રુદ્દ	ওহণ্ড	২ অবস্থ্রব্হার্না	Ì	
असंयतसम्यग			सामान्य	<b>২</b> ८७	હરર
समान्य		৬২৪	पर्याप्तु	३८८	હારક
पर्याप्त	३६८	ওহদ	अपर्याप्त	<b>૨</b> ૮९	,,
अपर्याप्ट	ન ૨૬૬	৬२६	मिथ्याद्दष्टि		
<b>संयतासंयता</b> वि	रे	७२६	सामान्य	રૂ૬૦	634
अवधिश्वानी		ও২হ	पर्याप्त	३९१	ક્રક્ષ્ણ
मनःपर्ययक्रार्ग	લ્યક 1	৩২৩	अपर्याप्त	રૂৎ૨	989
प्रमत्तसं	यतादि	७२९	सासादनसम्यग्रहष	ह्यादि	୦୫୦
केषलज्ञानी	<u> ২৩१</u>	<u> </u>	३ अवधिदर्शर्न	Ĵ	
सयोगी	आदि्	ওইত	सामान्य		<b>586</b>
८ संयमनार्गणा	રહર	ওইত	पर्याप्त		૭૪૮
	यत ३७३	७३१	अपर्याप्त	. इंदर्फ	ও৪২
	संयत ३७४	ওয়হ	असंयतसम्यग्दृष्ट	यादि	540
अपूर्वक		હરર	४ केवलदर्शनी		640
सामायिकशुद्धिसं	यत ३७५	હરર	१० लेश्यामार्गणा		940
प्रमत्तसंयतावि		હરર	१ ऋष्णलेइया		
छेदोपस्थापनासं		,,	सामान्य	રરદ	19'40
परिहारशुद्धिसंय		ຮຊັ້ຊ	पर्याप्त	ર્ર્	542
प्रमत्तसंयतालि		ওই৪	अपर्याप्त	394	७७२
सूक्ष्मसाम्परायसं	-	ওইদ	मिथ्याद्दाष्ट्रि		
यथाख्यातसंयत	হওও	৩ইণ	सामान्य	ર્લ્લ	હપર
उपशान्तकषा	यादि	৩২৭	पर्याप्त	800	,,
असंयत	-		अपर्याप्त	<b>४</b> ०१	19:18
सामान्य	য	७३६	सासादनसम्य	दष्टि	
पर्याप्तु	३७९	,,	सामान्य	४०२	644
अपर्याष्ट		৩ইও	पर्याप्त	४०३	
मिथ्यादृष्ट्या	दि	৬২৫	अपर्याप्त	१ ४०४	৩শহ
९ दर्शनमार्गणा			स∓यग्मिथ्याइ		949
१ चक्षुदर्शनी	t		असंयतसम्यग्र	-	
समान्य	प ३८१	৩ই১	सामान्य		640
પર્યાપ્ત		હરર	पर्याप्त	8013	646
अपर्याह	ન ૨૮૨	580	अपर्याप्त	1 800	७५९
मिथ्याद्दष्टि			२ नीललेक		હલ્લ્
सामान		૭૩૧	३ कापोतले	-	
पर्याप्त	રેટ <u></u> લ્		सामान्य	४०९	७५९

90

.

#### सत्प्ररूपणा

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
पर्याप्त	४१०	७६०	अपर्याप्त	880	७८१
अपर्याप्त	-	કરશ	मिथ्याद्दाष्टि		
मिथ्यादृष्टि			सामान्य	કરક	७८१
सामान्य	ક્ષ્ટર	७६२	पर्याप्त	ક્ષકર	७૮२
पर्याप्त	કરર	७६२	अपर्याप्त	કકર	৬૮३
अपर्याप्त	ા કરક	ওহর	सासादनसम्यग्ह	ষ্টি	
सासादनसम्य	दिष्टि		सामान्य	ક્રક્રક	৬૮३
सामान्य		૭૬૪	पर्याप्त	884	୲୶ଽଌ
पर्याप्त	ક્ષરદ	57	अपर्याप्त	<del>8</del> 8૬	७૮५
अपर्याप्त	। ৪১০	७६५	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	- 880	<b>৩</b> ८५
सम्यग्मिथ्यार्दा	ष्टे ४१८	७६६	असंयतसम्यग्दा	Ì	
असंयतसम्यग्ट	ছি	ĺ	सामान्य	୫୫୯	ও८६
सामान्य	કર્લ	ଓଟ୍ଟ	पर्याप्तू	886	৬८६
पर्याप्त	४२०	ওইও	अपर्याप्त	840	୰୵୰
अपर्याप्त	ા કરશ	৬হে১	संयतासंयत	કલ્	220
४ तेजोलेक	या		प्रमत्तसंयत	<u> </u>	७८८
सामान्य	કરર	৩হে১	अप्रमसंय्त	કલર	656
पर्याप्त	કરર	৬হৎ	६ शुक्कलेखा		
<b>अप</b> र्याप्त	ા કરક	०७७	सामान्य	848	ওৎ০
मिथ्याद्दष्टि			पर्याप्त	ક્ષણ	ওৎ१
सामान्य	કરવ	<i> </i>	अपूर्याप्त	४५६	,,
पर्याप्त	કરદ્	,,	मिथ्याद्दष्टि		
अपर्याप्त	। ৪২৩	ওওহ	सामूान्य	840	७९२
सासाद्वसम्य	ग्दाष्ट्रि		पर्याप्त	કલ્૮	ようい
सामान्य	ં કરટ	<i>হ</i> లల	अपर्याप्त	. કબર	"
पर्याप्त	કર९	,,	सासाद्नसम्यग्ट		
ુઅપર્યાવ્સ		୪ଅଅ	सामूल्य	४६०	ওৎ৪
सम्यग्मिथ्याहा	_	لالالال	पर्याप्त	કદર	७९५
असंयतसम्यग्द			अपर्याप्त	કદર	७९६
सामूान्य	કરર	ওওহ	सम्यग्मिथ्यादृष्टि		७९६
पर्याप्त	833	,,	असंयतसम्यग्दी		
अपर्याप्त		୧ଅଅ	सामूान्य	કદ્દક	७९७
संयतासंयत	કર્ષ	र राष्ट्र	पर्याप्त	ଥିବିକ	७९८
प्रमत्तसंयत	કરદ	200	अपर्याप्त	ક્રક્	,,
अप्रमत्तसयंत	શ્રહ	୨ଅଟ	संयतासंयत	४६७	७९९
५ पद्मलेश्य		]	प्रमत्तसंयत	કદ્રદ	७९९
साम्गन्य		৩৩ৎ	अभ्रम्त्तसंयत्	કદર	200
पर्याप्त	કર્	७८० ।	अपूर्घकरणादि		८०१

• •;

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
७ अलेइय		202	अपयार्प	ન કરક	८१९
११ भव्यमार्गणा			असंयतसम्यग		•
भन्यसिद्धिक			सामान्य	ા કર્ય	८२०
	"		पर्याप्त	કરદ	,,
सामान्य	800	८०१	अपर्याप	র ৪९७	<b>૮</b> ૨१
पर्याप्त	४७१	202	संयतासंयत	୫୧.୯	૮૨१
अपर्याप्त	૪૭૨	203	प्रमत्तसंयत	કર્	૮રર
भच्याभव्य-चिमु		603	अप्रमृत्तसंयत्	400	૮૨૨
१२ सम्यक्त्वमार्गण			अपूर्वकरणादि	1	८२५
सामान्य		4.3	मिथ्यात्वादि		૮૨५
लामाम्य पर्याप्त	৪৩২ ৪৩৪	८०३ ८०४	१३ संज्ञिमार्गणा		
पयान्त अपर्याप्त	२७२ ४७५	८०७ ८०५	१ संबी		
असंयतसम्यग्द		८०६	सामान्य	<b>५०१</b>	૮રષ
१ शायिकसम्य	-		पर्याप्त	५०२	૮રદ્
सामान्य	४७६	605	अपर्याप	त ५०३	<b>८२७</b>
पर्याप्त	800	202	मिथ्याद्दष्टि		
अपर्याप्त	895	19	सामान्य	<b>।</b> ५०४	<u>८२७</u>
असंयतसम्यग्द	_	39	पर्याप्त	<i>५०५</i>	૮૨૮
सामान्य	- ४७९	८०९	અપર્યાવ	-	૮૨૧
पर्याप्त	४८०	८२०	सासादनसम्य		
अपर्याप्त	४८१	८११	सामान्य		૮ર૧
संयतासंयत	કટર	८११	पर्याप्त	५०८	८३०
प्रमत्तसंयतादि		८१२	ચવર્ચાય		37
२ वेद्कसम्यग्ट	ছি		सम्यग्मिथ्याह •	_	૮૨૧
सामान्य	કટર	८१२	असंयतसम्यग		
पर्याप्त	୫୯୫	८१३	सामान्य 		૮રૂર
अपर्याप्त	864	,,	पर्याप्त	<u> </u>	૮३२
असंयतसम्यग्ह	। ष्टि	1	अपर्याप 		૮३३
सामान्य	ક૮૬	< <b>5</b> 8	संयतासंयताह	ৰ্	૮રૂર
पर्याप्त	୧୦୫	८१५	२ असंझी	· · · · · ·	<b></b>
. ગુપર્યાપ્ત	844	,,	सामान्य पर्याप्त		૮રૂછ
संयताखंयत	<b>૪૮</b> ९	ंट१६	_	- પ્રય	••
प्रमत्तसंयत	४९०	८१६	अपर्याप		૮રૂધ
अप्रमत्तसंयत	્રક્રક	८१७	१४ आहारमार्गण		
३ उपशमसम्य			सामान्य	-	૮३६
सामान्य	<b>ક</b> લ્સ્	८१८	पर्याप्त		ৎইও
पर्याप्त	<b>ક</b> લ્ર	८१८	अपर्याप	त ५१९	୯३୯

.

विषय	षय नकशानं प्रष्टनं.		विषय ः	नकशा नं.	પૃષ્ઠ નં.
मिथ्याद्दाष्टि			अप्रमत्तसंयत	લરૂર	૮૪૬
सामान्य	५२०	૮૨૧	अपूर्वकरण	પરૂર	<u> </u>
पर्याप्त	<u> </u>	,,	-•	-	600
अपर्याप्त	<u> </u>	280	अनिवृत्तिकरण	બરૂષ્ઠ	.,
सासादनसम्यग्ह	-		सूक्ष्मसाम्पराय	બર્સ્લ	<u> </u>
सामान्य	 પરર	680	उपशान्तकषाय	બરૂદ્	୯୫୧
पर्याप्त	<u> </u>	288	क्षीणकषाय	ৎইও	,,
अपर्याप्त	વરવ	८४२	सयोगिकेवली	५३८	240
सम्यग्मिथ्यादृष्टि			अनाहारी	પરૂર	648
असंयतसम्यग्द		"	मिथ्याद्दष्टि	480	૮५૨
सामान्य	৾ঀঽড়	૮૪૨	सांसाद्नसम्यग्हां	ષ્ટે ૧૪૧	,,
पर्याप्त	५२८	,,	असंयतसम्यग्हाष्टि	લક્ષર	૮५३
अपर्याप्त	५२९	688	सयोगिकेवसी	લકર	248
संयतासंयत	५३०	684	अयोगिकेवली	488	
प्रमत्तसंयत	५३१	,,	सिद्धभगवान्	લક્ષલ	,, ८५५५

## सत्प्ररूपणाके

# आलापान्तर्गत विशेष विषयोंकी सूची

<b>फ्र</b> म	नं. विषय प्	रुष्ठ नं.	कम	ानं. विषय	પૃષ્ઠ નં.
१	प्ररूपणाका स्वरूप और भेद∽ निरूपण	<b>४१</b> १	٢	अपर्याप्त कालमें तीनों सम्यक्त होनेका कारण	वोंके ४३०
	प्राणका स्वरूप और प्राणोंका पृथक् निर्देश कथन	કરર	٩	भावलेश्याके स्वरूपमें मतभेद उसका निराकरण	•
	संझाके भेद और उनका पृथक् निर्देश	ક્ષર	१०	अप्रमत्तसंयतके तीन संझाः होनेमें हेत्	
	उपयोगका स्वरूप और उसका पृथक् निर्देश	કરર		अपूर्वकरेण गुणस्थानमं वचन और काययोगके होनेका कारा	योग ं
	प्ररूपणाओंका सूत्रोक्तत्व-अनुक्तत्व- विचार और भेदाभेद निरूपण	४१४	१२	उपशान्तकषायादि गुणस्थान गुकुलेश्या द्वोनेका कारण	
હ્	अपर्याप्तकालमें द्रव्यलेख्या कापोत और शुक्ल ही क्यों होती है, इस		१ર	कपाट, प्रतर और लोकपूरण । द्वातगत केवलीके पर्याप्त-ः	तमु-
وي	बातका विचार अपर्याप्त कालमें छहाँ भावलेक्या-	કરર		र्याप्तत्वका विचार भावेन्द्रियका लक्षण और केवत	888
	ओंके होनेका कारण	<b>ક</b> રર		उसके अभावका समर्थन	888

(-1)

कम	नं. विषय	पृष्ठ नं	कम	नं.	विषय		पृष्ठ नं.
શ્પ	अयोगिकेवर्लाके एक आयुप्राणका समर्थन	884			जीवोंके भः अस्तित्वका ऽ	-	ह्रक्ष्
	कालाकालाभास द्रव्यलेक्याका स्वरूप तिर्थचोंके अपर्याप्तकालमें झायिक	કકર	<b>૨</b> ૧	केवलीके	मेश्रकाययोगी आयु और प्रतिरिक्त देाष	कायबल	
१८	और क्षायोपक्षमिक सम्यक्त्वका समर्थन संयतासंयत तिर्यचेंकि क्षायिक-	४८१	રૂર	अभावका औद्दारिका		सयोगि-	६५८
90	सम्यक्त्वके अभावका कारण अयोगिकेवलीके अनाद्दारकत्व∙	<b></b>		जवलाक प होनेका स	· ·	યાલજરવા	६६०
	समर्थन	৸৹ঽ	રર		ाययोगी जीवें। (, मनःपर्ययइ		
२०	असंयतसम्यक्त्वी मनुष्यके अप- र्याप्त कालमें एक पुरुषवेद तथा भावलेक्याओंके द्वोनेका कारण	بروه		कारणका			६६७
	मनुष्यनियोंके आद्वारकशरीर न होनेका कारण	બર્શ્સ		कत्वका स	पयोगी जीवेंकि मर्थन मर्त्ततवेक		हहर
	देवोंके पर्याप्तकालमें छहों द्रव्य- लेदयाओंका समर्थन देवोंके अपर्याप्तकालमें उपशम-	ષરર		संयमादिवे विवक्षित	ते अमावका प्र ज्ञान और व	तिपादन दर्शनमार्ग-	६८१
	सम्यक्त्वका सद्भाव-समर्थन अनुदिशादि देवोंके पर्याप्तकालमें	<b>પ</b> પર્			ऽाप कहनेपर को नहीं बताने ाटन		હરદ્દ
54	उपशमसम्यक्त्वके अभावका विशिष्ट समर्थन जीवसमासोंके एकसे लगाकर ५७	५६६	২৩	मनःपर्यय	ज्ञानके साथ नत्वके होने औ		
	भेदों तकका निरूपण बादर जलकायिक जीवोंके वर्णक	५९१		कारण	स्त्वके नहीं		ও২৩
	विचार मनेायोगियोंके वचन और काय-	६०९	<u>३</u> ८	काछर्मे वे	।।वाले जीवेंकि ।दकसम्यक्तवर्व		
ર૮	प्राणके अस्तित्वका समर्थन सयोगिकेवलीके जीवसमासके				र्षादन वाळे सासादन औदारिकमिश्र		
૨૧	अस्तित्वका समर्थन औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके द्रव्यसे एक कापोतऌेक्या अथवा			अभावका	भादगरकामश्र प्रतिपादन म्यक्त्वीके मन	_	હરક
	द्रव्यस पक जावाराखरवा जववा छहाँ लेख्याएं और भावसे छहाँ लेख्याओंके अस्तित्वका प्रतिपादन		ļ	सद्भव-अ	मसद्भावका वि मार्गणाओंमें	ाचार	૮૨૨
३०	ल्ड्याआक आस्तत्वका प्रातपादन औद्यारिकमिश्रकाययोगी असंयत		92		मागणाञाम रावोंके बतानेव		८२५

\_\_\_\_\_

www.jainelibrary.org

.

शुद्धि पञ्च

( पुस्तक-१ )	( पुस्तक~२ )						
পৃষ্ট থঁকি অহ্যন্ত হ্য	द्ध	ঀৃষ্ঠ	पंचि	ন সহ্যুৱ	शुद्ध		
२७ २ [डिं.] पीले सरसों दवेत सर		કરશ	ર	छब्भेवं ट्रिवा	छन्मेेददिदा		
६८ ७ [हिं.] इम दोनों हम दोन 	নী	કરઽ	۷	तिण्णिषेद्	तिण्णि वेद		
साधु १०३ ६ [हिं.] इन सबकी इन द्शों	का	ધર્	દ્	केहं	केई		
द्राका	ł	કઠક્	२० [ति	हं] और संयता-	संयतासंयत्		
११० १२ [हिं.] निर्मुण ही है निर्मुण ह				संयतींके	और संयतोंके		
सर्वगत ह १३८ १९ [हिं,] नामकर्मका	ी हैं,	<del>કકક</del>	૬ [î	[] होते हैं।	होते हैं। यह		
उदय नामकर्मकाः	सत्त्व				प्राण अल्प प्राण है या		
१७५ ३ [मूल] नाम्यन्तरेण तान्यन्तरेण					সাগ হ'ব। অ <b>দ্রঘান ট্র</b> া		
१८२ ११ [हिं,]११ वीं पंक्तिसे		840	<[ફ્રિં	] कृतत्यक्तवेदक-	<del>कृतकृ</del> त्यवेद्क-		
आगे × × इांका-क्षपकश्चेणीमें होनेवाळे परिणा		<b>ક</b> લર	۲	तिहिं	तीहिं		
कमोँका क्षपण कारण है. और उपशमश्रे		849	રર	मिथ्याद्दष्टि	मिथ्याद्दष्टि		
होनेवाले परिणामोंमें कमौंका उपशमन क		-			सामान्य		
है, इसलिए इन भिन्न भिन्न परिणामोंमें प	रकता	५०६	नं.१०४	स.	स.		
कैसे बन सकती है ?				દ	१		
समाधान-नहीं; क्योंकि, क्षपक और शमक जीवोंके होनेवाले उन परिणा		५६९	ર	संद्जासंजदा	संजदासंजदा		
अपूर्वरवके प्रति समानता पाई जाती है।		450	۲	णवुंद्सयवेद्	णवुंसयवेद		
उनमें एकता बन जाती है।	•	ૡૡ૱	ર(દિ.)	) पाठब्युत्तक्रमः	पाठब्युत्कमः		
२३० ७ [।हे.] अपेक्षा पर अपेक्षा भ पदार्थसे भी पर पदा		७५२	नं.३९	•	द.		
पदायसमा पर पदा २४० २ [मूल] -भिति -मिति		•		٤	तर		
,, १ [हि.] चाहिये। चाहिये। अ		ેર(વાં	-	(परि. भा. २)	-		
वनस्पतित			१६	१ृद	-		
जीवोंके	<b>एक</b>	६(परि	tे. २)	९	२२८ छेस्सा		
स्पर्शनोन्द्र होती है ।	्य				य द्व्यभावं		
हाता हा ३१८ ५ [हि.] पूर्ण होनेकी पूर्णनहीं हो	) नेकी			X	scc (पिंडिका ?)		
the first of second of some							

-

۰,

तपुरुवणा-आला

 $(\cdot, \cdot)_{2}$ 

Ļ

.



सिरि-भगवंत-पुप्फदंत-भूदबलि-पणीदे

छक्खंडागमे

जीवट्टाणं

तरस

## सिरि-वीरसेणाइरिय विरइया टीका

### धवला

संपद्दि संत-सुत्त-विवरण-समत्ताणंतरं तेसिं परूवणं भणिस्सामो । परूवणा णाम किं उत्तं होदि ? ओघादेसेहि गुणेसु जीवसमासेसु पजत्तीसु पाणेसु सण्णासु गर्दासु इंदिएसु काएसु जोगेसु वेदेसु कसाएसु णाणेसु संजमेसु दंसणेसु लेस्सासु भविएसु अभविएसु सम्मत्तेसु सण्णि-असण्णीसु आहारि-अणाहारीसु उवजोगेसु च पज्जत्तापज्जत्त-विसेसणेहि विसेसिऊण जा जीव-परिक्खा सा परूवणा णाम । उत्तं च—

> गुण जीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणाओ य । उवजोगो वि य कमसो वीसं तु परूवणा मणिया ॥२१७॥

सत्प्ररूपणाके सूत्रोंका विवरण समाप्त हो जानेके अनन्तर अब उनकी प्ररूपणाका वर्णन करते हैं---

राका—प्ररूपणा किसे कहते हैं ?

समाधान —सामान्य और विशेषकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें, जीवसमासोंमें, पर्याप्तियोंमें, प्राणोंमें, संक्षाओंमें, गतियोंमें, इन्द्रियोंमें, कायोंमें, योगोंमें, वेदोंमें, कषायोंमें, झानेंमें, संयमोंमें, दर्शनोंमें, लेश्याओंमें, भर्क्योंमें, अभव्योंमें; सम्यक्त्वोंमें, संझी-असंक्रियोंमें, आदारी-अनाद्वारियोंमें और उपयोगोंमें पर्याप्त और अपर्याप्त विशेषणोंसे विशेषित करके जो जीवोंकी परीक्षा की जाती है, उसे प्ररूपणा कहते हैं। कहा भी है—

गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, चौदद्ध मार्गणापं और उपयोग, इस प्रकार कमसे वीस प्ररूपणांप कही गई हैं ॥ २१७ ॥

ર મો. લી. ર.

सेसाणं परूवणाणमत्थो वुत्तो । पाण-सण्णा-उवजोग-परूवणाणमत्थो वुत्तदे । प्राणिति जीवति एभिरिति प्राणाः । के ते १ पश्चेन्द्रियाणि मनोबरुं वाग्वरुं कायबरुं उच्छ्वासनिःक्ष्वासौ आयुरिति । नैतेपामिन्द्रियाणामेकेन्द्रियादिष्वन्तर्भावः; चक्षुरादिक्षयोप-शमनिबन्धनानामिन्द्रियाणामेकेन्द्रियादिजातिभिः साम्याभावात्। नेन्द्रियपर्याप्तावन्तर्भावः; चक्षुरिन्द्रियाद्यावरणश्वयोपश्चमलक्षणेन्द्रियाणां क्षयोपश्चमापेक्षया बाह्यार्थग्रहणशत्त्वर्पताः निमित्तपुद्रलप्रचयस्य चैकत्वाविरोधात् । न च मनोबलं मनःपर्याप्तावन्तर्भवतिः मनोवर्गणा-स्कन्धनिष्पत्नपुद्रलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नात्मवरुस्य चैकत्वविरोधात् । नापि वाग्वलं भाषा-पर्याप्तावन्तर्भवतिः आहारवर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्रलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नायाः भाषावर्गणा-स्कन्धानां श्रे।त्रेद्रियग्राह्यपर्यायेण परिणमनशक्तेश्व साम्याभावात् । नापि कायबलं शरीर-पर्याप्तावन्तर्भवतिः वीर्यान्तरायजनितक्षयोपश्चमस्य खलरसभागानिमित्तर्शक्तिनिबन्धनपुद्रले पर्याप्तावन्तर्भवतिः वीर्यान्तरायजनितक्षयोपश्चमस्य खलरसभागानिमित्तर्शक्तिनिबन्धनपुद्रलोपादा-

वीस प्ररूपणाओंमेंसे तीन प्ररूपणाओंको छोड़कर रोष प्ररूपणाओंका अर्थ पहले कह आये हैं, अतः यद्दां पर प्राण, संझा, और उपयोग इन तीन प्ररूपणाओंका अर्थ कहते हैं। जिनके द्वारा जीव जीता है उन्हें प्राण कहते हैं ।

र्शका-चे प्राण कौनसे हैं ?

समाधान — पांच इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल, कायबल, उच्छ्वास-निश्वास और आयु ये दरा प्राण हैं।

इन पांचों इन्द्रियोंका पकेन्द्रियजाति आदि पांच जातियोंमें अन्तर्भाव नहीं होता है; क्योंकि, चक्षुरिन्द्रियावरण आदि कमोंके क्षयोपशमके निमित्तसे उत्पन्न हुई इन्द्रियोंकी पके-न्द्रियजाति आदि जातियोंके साथ समानता नहीं पाई जाती है। उसीप्रकार उक्त पांचों इन्द्रि योंका इन्द्रियपर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, चक्षुरिन्द्रिय आदिको आवरण करनेवाले कमोंके क्षयोपशमस्वरूप इन्द्रियोंको और क्षयोपशमकी अपेक्षा बाहा पदार्थोंको प्रहण करनेवाले कमोंके क्षयोपशमस्वरूप इन्द्रियोंको और क्षयोपशमकी अपेक्षा बाहा पदार्थोंको प्रहण करनेकी शक्तिके उत्पन्न करनेमें निमित्तभूत पुद्रलोंके प्रचयको पक मान लेनेमें विरोध आता है। उसीप्रकार मनोबल्जा मनःपर्याक्षिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, मनोवर्गणाके स्कन्घोंसे उत्पन्न हुए पुद्रलप्रचयको और उससे उत्पन्न हुए आत्मबल ( मनोबल ) को पक माणनेमें विरोध आता है। तथा वचनबल भी भाषापर्याप्तिमें अन्तर्भत नहीं होता है, क्योंकि, आहारवर्गणाके स्कन्घोंसे उत्पन्न हुप पुद्रलप्रचयका और उससे उत्पन्न हुई भाषावर्गणाके स्कन्घोंका प्रोत्नेन्द्रियके द्वारा ग्रहण करने योग्य पर्यायसे परिणमन करनेरूप शक्तिका परस्पर समानताका अभाव है। तथा कायबल्का भी शरीरपयाप्तिमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, वीर्यान्तरायके उदयाभाव और उपशमसे उत्पन्न हुप क्षयोपशमकी और खल-रसभागकी निमित्त-भूत शक्तिके कारण पुद्रलप्रचयकी पकता नहीं पाई जाती है। इसीप्रकार उच्छ्वासनिःश्वास प्राण कार्य है और आत्मोपायानकारणक है तथा उच्छ्वासनिःश्वासपर्याप्ति कारण है और पुद्रलोपा- 2. 2. ]

नयोर्भेदोऽभिधातव्य इति ।

सण्णा चउन्विहा आहार-भय-मेहुण-परिग्गह-सण्णा चेदि | मैथुनर्संज्ञा वेदस्या-न्तर्भवतीति चेन्न, वेदत्रयोद्यसामान्यनिंबन्धनमैथुनसंज्ञाया वेदोद्यविशेषलक्षणवेदस्य चैकत्वानुप9त्तेः । परिग्रहसंज्ञापि न लोभेनैकत्वमास्कन्दति; लोभोदयसामान्यस्यास्ठीढ-बाह्यार्थलोभतः परिग्रहसंज्ञामादधानतो भेदान् । यदि चतस्रोऽपि संज्ञा आलीढबाह्यार्थाः, अप्रमत्तानां संज्ञाभावः स्यादिति चेन्न, तत्रोपचार्तस्तत्सचाभ्युपगमात् । स्वपरग्रहण-परिणाम उपयोगः । न स ज्ञानदर्शनमार्गणयोरन्तर्भवति; ज्ञानदगावरणकर्मक्षयोपश्चमस्य तदुभयकारणस्योपयोगत्वविरोधात् ।

अथ स्यादियं विंशतिविधा प्ररूपणा किम्र सत्रेणोक्ता उत नोकेति ? किं चातः ? यदि नोक्ता, नेयं प्ररूपणा भवति; सत्रानुक्तप्रतिपादनात् । अथोक्ता, जीवसमासप्राणपर्या-

दाननिमित्तक है, अतएव इन दोनोंमें भेद समझ छेना चाहिये।

संज्ञा चार प्रकारकी है; आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा। गंका-- मैथुनसंश्वाका चेदमें अन्तर्भाव हो जायगा ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, तीनों वेदोंके उदय सामान्यके निमित्तसे उत्पन्न हुई मैथुनसंज्ञा और वेदोंके उदय-विशेष स्वरूप वेद, इन दोनोंमें एकत्व नहीं बन सकता है। इसीप्रकार परिग्रहसंहा भी लोभकषायके साथ एकत्वको प्राप्त नहीं होती है; क्योंकि, बाह्य पदार्थीको विषय करनेवाला होनेके कारण परिग्रहसंझाको धारण करनेवाले लोभसे लोभकषायके उदय-रूप सामान्य लोभका भेद है। अर्थात् बाह्य पदार्थोंके निमित्तले जो लोभ होता है उसे परिग्रह-संशा कहते हैं, और लोभकषायके उदयसे उत्पन्न हुए परिणामीको लोभ कहते हैं।

र्शका----- यदि ये चारों ही संझाएं बाह्य पदार्थींके संसर्गसे उत्पन्न होती हैं तो अश्रमत्त-गुणस्थानवर्ती जीवोंके संबाओंका अभाव हो जाना चाहिये ?

किया गया है।

स्व और परको ग्रहण करनेवाले परिणामविशेषको उपयोग कहते हैं । वह उपयोग शानमार्गणा और दर्शनमार्गणामें अन्तर्भूत नहीं होता है; क्योंकि, झान और दर्शन रन दोनोंके कारणरूप ज्ञानावरण और द्रानावरणके क्षयोपदामको उपयोग माननेमें विरोध आता है।

शंका — यह बीस प्रकारकी प्ररूपणा रही आओ, किन्तु यह बतलाइये कि यह प्ररूपणा सत्रानुसार कही गई है, या नहीं ?

प्रतिशंका-इस प्रश्नसे क्या प्रयोजन है ?

र्शका-यदि सुत्रानुसार नहीं कहीं गई है तो यह प्ररूपणा नहीं हो सकती है, क्योंकि, यह सूत्रमें नहीं कहे गये विषयका प्रतिपादन करती है। और यदि सूत्रानुसार कही गई है, तो जीवसमास, प्राण, पर्याप्ति, उपयोग और संझाप्ररूपणाका मार्गणाओंमें

[ १, १.

प्त्युपयोगसंज्ञानां मार्गणासु यथान्तर्भावो भवति तथा वक्तव्यमिति । न द्वितीयपक्षोक्त-दोषोऽनभ्युपगमात् । प्रथमपक्षेऽन्तर्भावो वक्तव्यइचेदुच्यते । पर्याप्तिर्जीवसमासाः काये-न्द्रियमार्गणयोर्निलीनाः; एकद्वित्रिचतुःपश्चेन्द्रियुस्ट्रभवादरपर्याप्तापर्याप्तभेदानां तत्र प्रति-

न्द्रियमार्गणयोर्निलीनाः; एकद्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रियसूश्म्बादरपर्याप्तापर्याप्तमेदानां तत्र प्रति-पादितत्वात् । उच्छ्वासभाषामनोबलप्राणाश्च तत्रैव निलीनाः; तेषां पर्याप्तिकार्यत्वात् । कायबलप्राणोऽपि योगमार्गणातो निर्गतः; बललक्षणत्वाद्योगस्य । आयुःप्राणो गतौ निलीनः; द्वयोरन्योन्याविनाभावित्वात्। इन्द्रियप्राणा ज्ञानमार्गणायां निलीनाः; भावेन्द्रियस्य ज्ञानावरणक्षयोपश्चमरूपत्वात्'। आहारे या तृष्णा कांक्षा साहारसंज्ञा । सा च रतिरूपत्वा-न्मोहपर्यायः । रतिरपि रागरूपत्वान्मायालोभयोरन्तर्भवति । ततः कषायमार्भणाया-माहारसंज्ञा द्रष्टव्या । भयसंज्ञा भयात्मिका । भयश्च कोधमानयोरन्तर्लानम्; द्वेषरूपत्वात् । ततो भयसंज्ञापि कषायमार्गणाप्रभवा । मैथुनसंज्ञा वेदमार्गणाप्रमेदः; स्त्रीपुंतमुदेदानां तीन्नोदयरूपत्वात् । परिग्रहसंज्ञापि कषायमार्भणोद्धताः बाह्यार्थालीहलोमरूपत्वात् ।

जिसप्रकार अन्तर्भाव होता है उसप्रकार कथन करना चाहिये ?

समाधान- दूसरे पक्षमें दिया गया दूषण तो यहां पर आता नहीं है; क्योंकि, वैसा माना नहीं गया है। तथा प्रथम पक्षमें जो जीवसमास आदिके चौदद मार्गणओंमें अन्तर्भाव करनेकी बात कही है, सो कहा जाता है ! पर्याप्ति और जीवसमास प्ररूपणा काय और इन्द्रिय मार्गणामें अन्तर्भुत हो जाती हैं; क्योंकि, एकेन्द्रिय, दीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, सक्षम, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्तरूप अदोंका उक्त दोनों मार्गणाओंमें अतिपादन किया गया है। उच्छ सनिः इवास, वचनबल और मनोबल, इन तीन प्राणींका भी उक्त दोनों मार्गणाओं में अन्तर्भाव होता है; क्योंकि, ये तीनों प्राण पर्याप्तियोंके कार्य हैं । कायबलप्राण भी योगमार्ग-णासे निकला है; क्योंकि, योग काय, वचन और मनोवलस्वरूप होता है। आयुप्राण गति-मार्गणामें अन्तर्भूत है; क्योंकि, आयु और गति ये दोनों परस्पर अविनाभावी हैं। अर्थान् विवाक्षित गतिके उदय होने पर तज्जातीय आयुका उद्य होता है और विवक्षित आयुके उदय होने पर तज्जातीय गतिका उदय होता है। इन्द्रियप्राण ज्ञानमार्गणामें अन्तर्लीन हो जाते हैं, क्योंकि, भावेन्द्रियां झानावरणके क्षयोपशमरूप होती हैं। आहारके विषयमें जो तृष्णा या आकांक्षा होती है उसे आहारसंझा कहते हैं। वह रतिस्वरूप होनेसे मोहकी पर्याय (भेद) है। रति भी रागरूप होनेके कारण माया और लोभमें अन्तर्भूत होती है। इसलिये कषायमार्गणामें आहार-संज्ञा समझना चाहिये। भयसंज्ञा भयरूप है, और भय द्वेषरूप होनेके कारण कोध और मानमें अन्तर्भूत है, इसलिये भयसंज्ञा भी कषायमार्गणाले उत्पन्न हुई समझना चाहिये। मैथुनसंज्ञा षेदमार्गणाका प्रभेद है; क्योंकि, वह मैथुनसंज्ञा स्त्रविद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके तीव उदयरूप है। परिग्रहसंज्ञा भी कषायमार्गणासे उत्पन्न हुई है; क्योंकि, यह संज्ञा बाह्य पदार्थोंमें व्याप्त लोभरूप है । साकार उपयोग इत्रमार्गणामें और अनाकार उपयोग दर्शनमार्गणामें

- १ इंदियकाए छीणा जीवा पञ्जति आणमासमणो । जोगे काओ णाणे अक्खा गदिमग्गणे आऊ ॥ गो. जी. ५.
- २ मायालोहे रदिपुच्वाहारं कोहमाणगन्हि सयं। वेदे मेहुणसण्णा लोहन्हि परिग्गई सण्णा ॥ गो. जी. ६.

रोषयोगो ज्ञानमार्गुणायामनाकारोपयोगो दर्श्वनमार्गुणायां ( अन्तर्भवति ) तयोर्ज्ञानदर्शन-

रूपत्वात्ं। न पौनरुत्तपमपि; कथश्चित्तेभ्यो भेदात्। प्ररूपणायां किं प्रयोजनमिति चेदुच्यते, स्रुवेण स्चितार्थानां स्पष्टीकरणार्थं विंश्वतिविधानेन प्ररूपणोच्यते।

तत्थ ' ओघेण अत्थि मिच्छाइडी सिद्धा० चेदि' ' एदस्स ओघ-सुत्तस्स ताव परूवणा वुच्चदे । तं जहा- अअत्थि चोहस गुणद्वाणाणि चोहस-गुणटाणादीद-गुणट्टाणं पि अत्थि । अत्थि चोहस जीवसमासा । के ते ? एइंदिया दुविहा बादरा सुहुमा ।

अन्तर्भूत होते हैं; क्योंकि, वे दोनों झान और दर्शनरूप ही हैं । ऐसा होते हुए भी उक्त प्ररू-पणाओंके स्वतन्त्र कथन करनेमें पुनरुक्ति दोष भी नहीं आता है; क्योंकि, मार्गणाओंसे उक्त प्ररूपणाएं कथंचित् भिन्न है ।

समाधान – सुत्रके द्वारा सुचित पदार्थोंके स्पर्धाकरण करनेके लिये बीस प्रकारसे प्ररूपणा कही जाती है।

' सामान्यसे मिथ्यादपि, सासाइनसम्यग्दपि, सम्याग्मध्यादपि, असंयतसम्यग्दपि, संयतासंयत, प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरणप्रविष्ट-गुद्धि-संयतोंमें उपरामक और क्षपक, अनिवृत्तिकरण प्रविष्ट-गुद्धि-संयतोंमें उपरामक और क्षपक, सूक्ष्मसांपराय-प्रविष्ट-गुद्धि-संयतोंमें उपरामक और अपक, उपरांतकषाय-वतिराग-छन्नस्थ, स्रीणकषाय-वीतराग-छन्नस्थ, स्योग-केवली और अयोगकेवली जीव होते हैं। तथा सिद्ध भी होते हैं।' पद्दले इस सामान्य स्त्रकी प्ररूपणा कहते हैं। वह इसप्रकार है-चौदहों गुणस्थान हैं और चौदद गुणस्थानोंसे अतीत-गुणस्थान भी है। चौदहों जीवसमास हैं।

शंका- वे चौद्हें। जीवसमास कौनसे हैं ?

१ सागारो उवजोगी णाणे मग्गस्हिदंसणे मग्गे। अणगारी उत्रजोगो रुणिो चि जिणेहि णिदिट्ठं॥गो.जी.७. २ जी. सं. सू. ९.२३.

\*

### सामान्य जीवॉंके सामान्य आछाप.

] ग_∣जी।	प.	่ Я. !	सं ा	η.¦	र का	थो.	à.	<b>क</b>	हा.	स	द.	<u></u> .	म.	स.	सं.	় জান	ਤ.
	रप्रदअ. ५प.५अ. ४प.४अ. ४प.४अ. ह	و, ہع و, ہو	भ भ	کر ا	ષ ફ	यो. २	٤	षा. ९	<		8	द्र. इ भा. इ १९	(	<b>E</b>	२ सं. अतं. फ़ि	२ आहा. अना-	२ साका. अना. तथा यु. उ.

४१६ ]

बादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपजत्ता । वीइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । तीइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । चउरिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो । सण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि' । एदे चोदस जीवसमासा अदीद-जीवसमासा वि अत्थि । अत्थि छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्तीओ अदीद-पज्जत्ती वि अत्थि । आहारपज्जत्ती सरीरपज्जत्ती इंदियपज्जत्ती आणापाणपज्जत्ती भासापज्जत्ती मणपज्जत्ती चेदि । एदाओ छ पज्जत्तीओ सण्णिपज्जत्ताणं । एदेसिं चेव अपज्जत्तक्ती से पद्धाओ चेव असमत्ताओ छ अपज्जत्तीओ सर्यति । मणपज्जत्तीए विणा एदाओ चेव पंच पज्जत्तीओ असण्णि-पंचिंदिय-पज्जत्तपद्धुडि जाव बीइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । तेसि चेव अपज्जत्ताणं एदाओ चेव अणिप्पण्णाओ पंच अपज्जत्तीओ वुच्चंति । एदाओ चेव भासा-मणपज्जत्तीहि विणा चत्तारि पज्जत्तीओ एइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । एदेसिं चेव अपज्जत्तत्ताहि विणा चत्तारि पज्जत्तीओ एइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । एदोर्स चेव

समाधान-' एकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, बादर और सुक्ष्म । बादर जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । सूक्ष्म जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । द्वीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । जीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । चतुरिन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, संक्षी और असंशी ! संक्षी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । अपर्याप्त । असंक्षी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त और अपर्याप्त और अपर्याप्त । असंक्षी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त और अपर्याप्त और आपर्याप्त । असंक्षी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त श्वर्मा दो चौद्द

अतीत-जीवसमास भी जीव होते हैं। छहाँ पर्याण्तियां, छहाँ अपर्याण्तियां; पांच पर्याण्तियां, पांच अपर्याण्तियां; चार पर्याण्तियां और चार अपर्याण्तियां हैं। तथा अतीतपर्याण्ति भी है। आहारपर्याण्ति, द्यारीरपर्याण्ति, द्वन्द्रियपर्याण्ति, आनापानपर्याण्ति, भाषापर्याण्ति और मनःपर्याण्ति ये छह पर्याण्तियां हैं। ये छहाँ पर्याण्तियां संझी-पर्याण्तके होती हैं। इन्हीं संझी जीवोंके अपर्याप्त-कालमें पूर्णताको प्राप्त नहीं हुई ये ही छह अपर्याण्तियां दोती हैं। मनःपर्याण्तिके विना उक्त पांचों ही पर्याण्तियां असंझी-पंचेन्द्रिय-पर्याण्तों लेकर होन्द्रिय-पर्याण्तक जीवोंतक होती हैं। आषापर्याण्ति अवस्थाको प्राप्त उन्हीं जीवोंके अपूर्णताको प्राप्त वे ही पांच अपर्याण्तियां होती हैं। भाषापर्याण्ति और मनःपर्याप्तिके विना ये ही चार पर्याप्तियां पकेन्द्रिय पर्याण्तियां होती हैं। साषापर्याण्ति और मनःपर्याप्तिके विना ये ही चार पर्याप्तियां पकेन्द्रिय पर्याण्तोके होती हैं। हन्हीं पकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालो प्राप्त ये ही चार अपर्याण्तियां होती हैं। तथा इन छह पर्याण्तियों के अभावको अतीतपर्याण्त

१ जी सं. सू. ३४-३५.

१, १.]

# भावो अदीद-पञ्जत्ती णाम । उत्तं च ---

आहार-सरीरिंदिय-पज्जत्ती आणपाण-भास-मणो । चत्तारि पंच छन्वि य एइंदिय-बिगल्ल-सण्णीणं' ॥२१८॥ जह पुण्णापुण्णाइं गिह-घड-बत्थाइयाइ दन्वाइं । तह पुण्णापुण्णाओ पज्जत्तियरा मुणेयन्वां ॥ २१९ ॥

आत्थि दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अह पाण छप्पाण सत्त पाण पंच पाण छप्पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दोण्णि पाण एक पाण अदीद-पाणो वि अत्थि । चक्खु-सोद-घाण-जिब्भ-फासमिदि पंचिंदियाणि, मणबल वचिबल कायबल इदि तिण्णि बला, आणापाणो आऊ चेदि एदे दस पाणा । उत्तं च—

पंच वि इंदिय-पाणा मण-वचि-काएण तिण्णि बल्लपाणा ।

आणप्पाणपाणा आउगपाणेण होंति दस पाणां ॥ २२० ॥

कहते हैं। कहा भी है—

आहार, दारीर, इन्द्रिय, आनापान, भाषा और मन ये छह पर्याफ्तियां हैं । उनमेंसे एकेन्द्रिय जीवोंके चार, विकलत्रय और असंक्षी-पंचेन्द्रियोंके पांच और संक्षी जीवोंके छह पर्याप्तियां होती हैं ॥ २१८ ॥

जिसप्रकार गृह, घट और वस्त्र आदि द्रब्य पूर्ण और अपूर्ण दोनों प्रकारके द्वोते हैं , उसीप्रकार जीव भी पूर्ण और अपूर्ण दो प्रकारके होते हैं उनमेंसे पूर्ण जीव पर्याप्तक और अपूर्ण जीव अपर्याप्तक कहळाते हैं ॥ २१९ ॥

द्दा प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छढ प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण होते हैं तथा अतीतप्राणस्थान भी है। चक्षुरिन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय, घाणोन्द्रिय, जिह्नेन्द्रिय और स्पर्द्वोनेन्द्रिय ये पांच इन्द्रियां; मनोबल, वचनबल, कायबल ये तीन बल, दवासोच्छ्वास और आयु ये द्दा प्राण होते हैं। कहा भी है---

पांचों इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल और कायबल इवासोच्छ्वास और आयु ये दश प्राण हैं ॥ २२० ॥

१ गो. जी. ११९. २ गो. जी. ११८. ३ गो. जी. ११८.

\_\_\_\_\_

एदे दस पाणा पंचिंदिय-सण्णिपज्जत्ताणं । आणापाण-भासा-मणेहि विणा सण्णि-पंचिंदिय-अपजत्ताणं सत्त पाणा भवंति । दसण्हं पाणाणं मज्झे मणेण विणा णव पाणा असण्णि-पंचिंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । एदोसिं चेव अपजत्ताणं भासा-आणापाण-पाणेहि विणा सत्त पाणा भवंति । पुन्त्विछ-णव-पाणेसु सोदिंदिय-पाणे अवणिदे चदुरिंदिय-पज्जत्तस्स अद्व पाणा भवंति । एदोसिं चेव चदुरिंदिय-अपज्जत्ताणं आणावाण-भासाहि विणा छप्पाणा भवंति । पुन्त्विछ-अट्ठण्हं पाणाणं मज्झे चार्विखदिए अवणिदे तीइंदिय-पज्जत्तयस्स सत्त पाणा भवंति । त्रेसु सत्तसु आणावाण-भासापाणे अवणिदे तीइंदिय-अपज्जत्तयस्स

पंच पाणा भवंति । तीइंदियस्स वुत्त-सत्तर्ण्हं पाणाणं मज्झे घाणिंदिए अवणिदे बीहंदिय-पज्जत्तयस्स छप्पाणा भवंति । तेसु छसु आणावाण-भासाहि विणा बीइंदिय-अपज्जत्तयस्स चत्तारि पाणा भवंति । बीइंदिय-पज्जत्तयस्स वुत्त-छण्हं पाणाणं मज्झे जिव्भिदियपाणे भासापाणे अवणिदे एइंदिय-पज्जत्तयस्स चत्तारि पाणा भवंति । तेसु आणावाणपाणे अवणिदे एइंदिय अपज्जत्तयस्स तिण्णि पाणा भवंति' । उत्तं च---

> दस सण्णीणं पाणा सेसेगूणंतिमस्स वे ऊणा । पज्जत्तेसिदरेसु य सत्त दुगे सेसगेगूणा<sup>र</sup> ॥ २२१ ॥

पूर्चोक्त दरा प्राण पंचेन्द्रिय संझी पर्याप्तकोंके होते हैं । आनापान, वचनबल और मनेाबल इन तीन प्राणोंके विना रोष सात प्राण संझी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके होते हैं । दरा प्राणोंमेंसे मनोबलके विना रोष नौ प्राण असंझी पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंके होते हैं । और अपर्याप्त अवस्थाको प्राप्त इन्हीं जीवोंके वचनबल और आनापान प्राणके विना रोष सात प्राण होते हैं । पूर्वोक्त नौ प्राणोंमेंसे श्रोत्रेन्द्रिय प्राणको कम कर देने पर रोप आठ प्राण चनुरिन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके होते हैं । इन्हीं चनुरिन्द्रिय आपर्याप्त जीवोंके आनापान और वचनबल्क विना रोष छह प्राण होते हैं । पूर्वोक्त आठ प्राणोंमेंसे चक्षु इन्द्रियके कम कर देने पर रोष सात प्राण जीन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके होते हैं । उन सात प्राणोंमेंसे आनापान और वचनबल प्राणके कम कर देने पर रोष पांच प्राण जीन्द्रिय-अपर्याप्तर्कोंके होते हैं । जीन्द्रिय जीवोंके कहे गये सात प्राणोंमेंसे झाणेन्द्रियके कम कर देने पर रोष चार प्राण कार्गोंसे झाणेन्द्रियके कम कर देने पर रोष छह प्राण द्वीन्द्रिय पर्याप्तकोंके होते हैं । उन छह प्राणोंमेंसे आनापान और वचनबल्के कम कर देने पर रोष चार प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । हान्द्रिय-पर्याप्तकोंके कहे गये छह प्राणोंमेंसे रसनेन्द्रिय-प्राण और वचनबल्ट प्राणोंमेंसे आनापान और वचनबल्के कम कर देने पर रोष चार प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । हान्द्रिय-पर्याप्तकोंके कहे गये छह प्राणोंमेंसे रसनेन्द्रिय-प्राण और वचनबल्ट प्राणोंमेंसे कानापान और वचनवल्कि कम कर देने पर रोष चार प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । हान्द्रिय-पर्याप्तकोंके कहे गये छह प्राणोंमेंसे रसनेन्द्रिय-प्राण और वचनबल्ट प्राणके कम कर देने पर रोष चार प्राण एकेन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं। उनमेंसे आनापान प्राणके

संझी जीवोंके दरा प्राण होते हैं। रोष जीवेंकि एक एक प्राण कम करना चाहिये।

१ इंदियकायाऊणि य पुण्णापुण्णेस पुण्णागे आणा। वीइंदियादिपुण्णे वन्वीमणो सण्णिपुण्णेव !! गो. जी. १३२.

२ गो जी १३३.

2, 2.]

दसण्हं पाणाणमभावो अदीदपाणो णाम । अत्थि चत्तारि सण्णा, खीणसण्णा वि अत्थि । काओ चत्तारि सण्णाओ इदि चे ? वुच्चदे-आहारसण्णा भयसण्णा मेहुणसण्णा परिग्गहसण्गा चेदि । एदासिं चउण्हं सण्णाणं अभावो खीणसण्णा णाम । अत्थि चत्तारि गर्दाओ, सिद्धगर्दी वि अत्थि । एइंदियादी पंच जादीओ, अदीद-जादी ति अत्थि । अत्थि पुढविकायादी छक्काया, अदीदकाओ वि अत्थि । अत्थि पण्णरह जोगा, अजोगो वि अत्थि । अत्थि तिण्णि वेदा, अवगदवेदो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि कसाया, अकसाओ वि अत्थि । आत्थि अट्ट णाणाणि । अत्थि सत्त संजमा, णेव संजमो णेव संजमासंजमो णेव असंजमो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि दंसणाणि । द्व्य-भावेहि छ ठेस्साओ, अलेस्सा वि अत्थि । मवासिद्धिया वि अत्थि, अभवसिद्धिया वि अत्थि, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि । छ सम्मत्ताणि अत्थि । सण्णिणो वि अत्थि, असण्णिणो वि अत्थि, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि । आहारिणो

किन्तु अन्तिम अर्थात् एकेन्द्रिय जीवोंके दो प्राण कम होते हैं। यह कम पर्याप्तकोंका है। किन्तु अपर्याप्तक जीवोंमें संज्ञी और असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके सात, सात प्राण होते हैं।तथा रोष जीवोंके उत्तरोत्तर एक एक कम प्राण होते हैं॥ २२१॥

धिद्दोषार्थ-केवळी भगवान्के पांच इन्द्रियां और मनोबलको छोड़कर दोष चार प्राण होते हैं। तथा योग निरोधके समय वचनवलका अभाव हो जाने पर कायबल आनापान और आगु ये तीन प्राण होते हैं और अन्तमें कायबल और आगु ये दो प्राण होते हैं। तथा चौद्दद्वें गुणस्थानमें केवल एक आगुप्राण होता है।

ू इन दर्शों प्राणोंके अभावको अतीत-प्राण कहते हैं । चारों संझाएं होती हैं और क्षीण-संज्ञा भी होती है ।

र्शका--वे चार संझाएं कौनसी हैं ?

समाधान—-आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परित्रहसंज्ञा ये चार संज्ञार्य हैं । इन चारों संज्ञाओंके अभावको क्षीणसंज्ञा कहते हैं ।

चार गतियां होती हैं और सिद्धगाते भी है। एकेन्द्रियादि पांच जातियां होती हैं और अतीत-जातिरूप स्थान भी है। एथिवीकाय आदि छह काय होते हैं और अतीतकाय स्थान भी है। पन्द्रह योग होते हैं और अयोग स्थान भी है। तीन वेद होते हैं और अपगतवेद स्थान भी है। चार कषायें होती हैं और अकपाय स्थान भी है। आठ ज्ञान होते हैं। सात संयम होते हैं और संयम, संयमासंयम और अकपाय स्थान भी है। आठ ज्ञान होते हैं। सात संयम होते हैं और संयम, संयमासंयम और असंयम रहित भी स्थान है। चार दर्शन होते हैं। दुव्य और भावके भेदसे छह लेइयाएं होती हैं और अल्यसिद्धिक तथा अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। छह सम्यक्स्व होते हैं। संज्ञी भी होते हैं, असंज्ञी भी होते हैं और संज्ञी तथा, असंज्ञी

[ १, १.

छक्खंडागमे जीवहाणं

820

वि अस्थि, अण्याहारिणो वि अस्थि । सागारुवजुत्ता वि अस्थि, अणागारुवजुत्ता वि अस्थि, सागार-अणागारेहि जगवदुवजुत्ता वि अस्थि ।

पञ्चन-विभिट्टे अधे भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणद्दाणाणि, अदीदगुणद्दाणं णत्थिः पज्जत्तेस तस्स संभवाभावादो । सत्त जीवसमासा, अदीदजीवसमासो णत्थिः छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, अदीदपाज्तत्ती णत्थिः दस पाण णव पाण अद्य पाण सत्त पाण छण्पाण चत्तारि थाण, अदीदपाणे। णत्थिः दस पाण णव पाण अद्य पाण सत्त पाण छण्पाण चत्तारि थाण, अदीदपाणे। णत्थिः चत्तारि सण्णा, न्वीणसण्णा वि अत्थिः चत्तारि गर्दाओ, सिद्धगदी णत्थिः एइंदियादी पंच जादीओ अत्थि, अदीदजादी णत्थिः पुढवीकायादी छक्ताया अत्थि, अकाओ णत्थिः ओरालिय-वेउन्विय-आहारसिस्स-कम्मइयकायजोगेहि विणा एकारह जोग, अजोगो वि अत्थिः तिण्णि वेद, अवगदवेदो वि अत्थिः चत्तारि कसाय, अकसाओ वि आत्थः अद्य णाण, सत्त संजम, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो णत्थिः चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि

विकल्प रहित भी स्थान होता हैं । आहारक भी होते हैं और अनाहारक भी होते हैं । साकार उपयोगसे युक्त भी होते हैं अनाकार उपयोगसे भी युक्त होते हैं और साकार उपयोग तथा अनाकार उपयोग इन दोनोंसे युगपत युक्त भी होते हैं।

पयीक्त अवस्थासे युक्त जीवोंके ओघालाप कहने पर---चौदहों गुणस्थान होते हैं। अतीत-गुणस्थानरूप स्थान नहीं होता है, क्योंकि, पर्याप्तकोंमें अतीत-गुणस्थान अर्थाद सिद्ध अवस्थाको संभावना नहीं है। पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास होते हैं, किन्तु अतीत जीव-समास (सिद्ध अवस्था) रूप स्थान नहीं है। संक्री जीवोंके छहों पर्याप्तियां, असंक्री और विकल-वयोंके पांच पर्याप्तियां और एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां होती हैं, किंतु अतीत वयोंके पांच पर्याप्तियां और एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां होती हैं, किंतु अतीत-पर्याप्तरूप स्थान नहीं होता है। संक्रीके दशों प्राण. असंक्रीके नौ प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, जीन्द्रियके सात प्राण, द्वीन्द्रियके छह प्राण, और एकेन्द्रियके चार प्राण होते हैं, किंतु अतीत-प्राणरूप स्थान नहीं हैं। चारों संक्षाएं होती हैं और क्षीणसंक्ररूप स्थान भी होता है। चारों गतियां होती हैं, किंतु सिद्धगाति नहीं होता है। एकिन्द्रियादि पांचें जातियां होती हैं, किंतु अतीत-जातिरूप स्थान नहीं होता है। पृथिवीकाय आदि छहों काय होते हैं, किंतु अकाय-रूप स्थान नहीं होता है। ओदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोगके विना ग्यारह योग होते हैं और अयोग-स्थान भी होता है। तीनों वेद होते हैं और अपगतवेद-स्थान भी होता है। चारों कपायें होती हैं और अक्रषाय-स्थान भी होता है। आठों झान होते हैं। सातों संयम होते हैं किंतु संयम, संयमासंयम और अक्तंयम इन तीनोंसे रहित स्थान नहीं होता है। चारों दर्शन होते हैं किंतु संयम, संयमासंयम और अक्तंयम इन तीनोंसे रहित स्थान नहीं होता है। चारों दर्शन होते हैं किंतु संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे छ लेस्साओ, अलेस्सा वि आस्थि; दुव्वेण छ लेस्सोत्ति भणिदे सरीरस्स छव्वण्णा घेत्तव्वा×। भावेण छ लेस्सा ।त्ति भणिदे जोग-कसाया छब्मेदं डिदा वेत्तव्वा% । अवसिद्धिया अभव-

सिद्धिया, णेव भवासिद्धिया णेव अभवसिद्धिया णात्थिः छ सम्मत्ताणि, सण्णिणो अक्षण्णिणो, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थिः आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा, सागारणगोरेहि जुगवदुवजुत्ता वि अत्थिं।

संपहि अपजति-पजाय-विसिट्ठे ओघे भण्णमाणे अत्थि मिच्छाइटी सासणसम्मा-इद्वी असंजदसम्माइद्वी पमत्तसंजदा सजोागिकेवाले ात्ति पंच गुणद्वाणाणि, सत्त जीव. समासा, छ अपजत्तीओ पंच अपक्तत्तीओ चत्तारि अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण

हैं और अलेख्यास्थान भी होता है। द्रव्यसे छहुँ। लेख्याएं है।ती हैं ऐसा कथन करने पर शरीरसंबच्धी छह वर्णोंका ग्रहण करना चाहिये। भावसे छहाँ। लेदयाएं होती हैं ऐसा कथन करने पर योग और कषायोंकी छह भेदोंको प्राप्त मिश्चित अवस्थाका ग्रहण करना चाहिये। भव्यसिद्धिक होते हैं और अभव्यसिद्धिक होते हैं, किंतु भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान नहीं होता है। छहाँ सम्यक्तव होते हैं। संज्ञी होते हैं, असंज्ञी भा होते हैं, तथा तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानकी अपेक्षा संज्ञी और असंज्ञी विकल्प रहित भी जीव होते हैं। आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं। साकार उपयोगवाले होते हैं, अनाकार उपयोगवाले होते हैं और साकार तथा अनाकार इन दोनों। उपयोगोंसे युगपन् उपयुक्त भी होते हैं।

अब अपर्याप्ति-पर्यायसे युक्त अपर्याप्तक जीवौंके, ओघालाप कहने पर---मिध्याद्राष्टि, सासादनसम्यग्दाष्टि, असंयतसम्यग्दछि, प्रमतसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान होते हैं । अपर्याप्तरूप सात जीवसमास होते हैं । अपर्याप्त संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, अपर्याप्त असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच अपर्याप्तियां और अपर्याप्त एकेन्द्रिय जीवोंके चार अपर्याप्तियां होती हैं । संज्ञी, असंज्ञी, चतुर्गिन्द्रय,

× वण्णोदयेण जणिदो सरीखण्णो दु दश्वदो लेस्सा ॥ गीः जोः ४९४.

\* जोगवडती लेस्सा कसायउदयाणरंजिया होई ॥ गोः जीः ४९००

र्न, १

## **पर्याप्त जीवोंके सामान्य**-आलाप.

]गुजी प क्रा⊦्संग इंका यो	वे. ३ झा	संय द	. हेभ.	્સ સંફ્રે	জা ড]
18.0 69.10 81814 8 28	ે શુ સંજ	5 19 X	1. E. V.	٤ ٢	र १२
	н <del>.</del> 14		्मा ≷् म		्यहाः, साकाः ।
४ म. ६१४ वें मि.	अपन अम	:	આપ	अस.	अगः अनुकाः
आ.स.		4 4 •	1	i.	ं युः च
कामी के विन	n (	:		I.	

2, 2. 1

छप्पाण पंच पाण चलारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, अददिसण्णा वि अत्थिः चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया, ओरालियमिस्स-वेडाव्वियामिस्स-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगेत्ति चत्तारि जोगा, तिण्णि वेद, अवगदवेदो वि अत्थिः चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थिः मणपज्जव-विमंगणाणेहि विणा छण्णाण, चत्तारि संजम सामाइय-छेदोवटावण-जहाक्स्वादासंजमेहि, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओः जम्हा सव्व-कम्मस्स विस्ससोवचओ सुक्तिलो भवदि तम्हा विग्गहगदीए बट्टमाण-सव्व-जीवाणं सरीरस्स सुकलेस्सा भवदि । पुणो सरीरं घेत्तृण जाव पज्जत्तीओ समाणेदि ताव छव्वण्ण-परमाणु-पुंज-णिप्पज्जमाण-सरीरत्तादो तस्स सरीरस्स लेस्सा काउलेस्सेत्ति भण्णदे<sup>8</sup>, एवं दो सरीर-लेस्साओ भवंति । मावेण छ लेस्सोत्ति वुत्ते णरेइय-तिरिकख-भवणवासिय-वाणवेतर-जोइसियदेवाणमपञ्जत्तकाले किण्द-णील-काउलेस्साओ भवंति । सोधम्मादि-उवरिम-

त्रीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंकी अपेक्षा क्रमसे सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण होते हैं। चारों सज्ञाएं होती हैं और अतीत-संझारूप स्थान भी होता है। चारों गतियां होती हैं। एकेन्द्रिय-जाति आदि पांचों जातियां होती हैं। पृथिवीकाय आदि छहों काय होते हैं। औदारिकमिश्र, वैक्रियकामिश्र, आहारकामिश्र और कार्मणकाय इसप्रकार चार योग होते हैं। तीनों वेद होते हैं और अपगतवेदरूप भी स्थान होता है। चारों कपायें होती हैं और कपायरहित भी स्थान द्वोता है। मनःपर्यय और विभंग-ज्ञानके विना छह ज्ञान होते हैं। सूक्ष्मसांपराय, परिहार<sup>-</sup> विद्यद्धि और संयमासंयमके विना सामायिक, छेदे।पस्थापना, यथाख्यात और असंयम ये चार संयम होते हैं। चारों दर्शन होते हैं। द्रव्यलेश्याकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्या होती है और भावलेस्याकी अपेक्षा छहों लेस्याएं होती हैं। अपर्याण्त अवस्थामें द्रव्यकी अपेक्षा कापोत और गुक्ल लेख्याएं ही क्यों होती हैं, आगे इसीका समाधान करते हैं कि जिस कारणसे संपूर्ण कर्मोंका विस्रसेापचय गुक्ल ही होता है, इसलिये विग्रहगतिमें विद्यमान संपूर्ण जीवोंके शरीरकी शुक्ललेक्या होती है। तदनन्तर शरीरको प्रहण करके जबतक पर्याप्तियोंको पूर्ण करता है तबतक छह वर्णवाले परमाणुओंके पुंजोंसे शरीरकी उत्पत्ति होती है, इसलिये उस दारीरकी कापोत लेदया कही जाती है। इसप्रकार अपर्याप्त अवस्थामें दारीर-संबन्धी दो ही लेख्याएं होती हैं। भावकी अपेक्षा छहें। लेख्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर नारकी, तिर्थच, भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके अपर्याप्त-कालमें कृष्ण, नील और कापोत लेज्याएं होती हैं । तथा सौधर्मादि ऊपरके देवोंके अपर्याप्त कालमें पीत, पद्म और

र .....×...सच्व विगगई सुक्का । सब्वो मिस्सो देही कबोधवण्णो हवे णियमा ॥ गो. जी. ४९८.

Jain Education International

गुह्न लेक्यापं होती हैं पेसा जानना चाहिये। भव्यसिदिक होते हैं और अभव्यसिदिक भी होते हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्तव होते हैं। संझी होते हैं, असंझी होते हैं और संझी, असंझी इन दोनों विकल्पोंसे राहित भी होते हैं। आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं। साकार उपयोगवाले होते हैं, अनाकार उपयोगवाले होते हैं और युगपत् उन दोनों उपयोगोंसे युक्त भी होते हैं।

अब भिथ्यादाष्टि जीवेंकि ओघालाप कहने पर-पक मिथ्यात्व गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संझीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंझी और विकल्प्त्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; संझीके दश प्राण, सात प्राण: असंझीके नौ प्राण, सात प्राण: चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, छह प्राण: प्रीन्द्रियके सात प्राण: असंझीके नौ प्राण, सात प्राण: चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, छह प्राण: प्रीन्द्रियके सात प्राण, पांच प्राण: द्वीन्द्रियके छह प्राण, चार प्राण: पकेन्द्रियके चार प्राण, तीन प्राण: चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजातिको आदि लेकर पाचों जातियां, पृथियीकायको आदि लेकर छहों काय, आहारकद्विक अर्थात् आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरद्द योग, तीनों वेद, चारों कपायें, तीनों अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दे दर्शन,

अपर्याप्त जीवोंके सामान्य-आलाप.

ग	]जी⊷	1_	ध.	্মা-	सं.	ग -	ξ.	का.	∣ यो	<b>ते</b> .	क.	; লা-	संय -	ίσ.	छे.	म.	स	सांज्ञे.	आ.	] उ.
4	0	Ę	अप.	છ	18	8	4	Ę	i 8	R	8	६	8	8	द्र. २	<b>२</b>	4	ર	२	२
मि.	अप-	4	,,	0	<b>.</b>	!			ओ. मि.	Ŀ	<u>ئىر</u> ا	मनः विसं	सामा.	c.	का.	म	Ħ	सं.	आहा.	साका-
सा.		8	,,	६	জ				a.,,	अपना.	茵	विमं ।	] छे.		য়ু₊	. अ.	<u>e</u>	अस	अना.	अना ।
अवि.				4	1	ŀ		ł	आ.,,	1		विना	यथा.		सा ६		न्त	अनु		यु-उ.
प्र.				X	ļ				कार्म.,,	:			असं		ļ		सम्य.			
सयो -		ł		३		i :				i			ł							
1		[		]	1					!									ł	

देवाणमपज्जत्तकाले तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ भवंति । भवासिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण जुगवदुवजुत्ता वि अत्थिं।

संत-पुरूवणाणुयोगदारे ओघाळाववण्णणं

संपहि मिच्छाइहीणं ओघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणदाणं, चोदस जीव-समासा, छ पजत्तीओ छ अपडजत्तीओ पंच पडजत्तीओ पंच अपड्जत्तीओ चत्तारि पडजत्तीओ चत्तारि अपड्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्य पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छप्पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्ताया, आहार-दुगेण विणा तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

नं. २

छक्खंडागमे जीवहाणं

असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणामारुवजुत्ता वा होंतिं।

तेसिं चेव भिच्छाइडीणं पजत्तोघे भण्गमाणे अत्थि एवं गुणद्वाणं, सत्त जीव-समासा, छ बज्जत्तीओं पंच पजत्तीओ चत्तारि पजत्तीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छप्पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी

द्रव्य और भावकी अपेक्षा छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक, भिथ्यात्व, संक्रिक और असंक्षिक; आहारक और अनाहारकः साकार (क्षान) उपयोगी और अनाकार ( दर्शन ) उपयोगी दोते हैं।

उन्हीं मिथ्यादोष्ट जीवोंके पर्याप्त-कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, संझीके छहों पर्याप्तियां, असंझी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, संझीके दश प्राण, असंझीके नौ प्राण, चतुरि-न्द्रियके आठ प्राण, त्रान्द्रियके सात प्राण, द्वोन्द्रियके छढ़ प्राण, पकेन्द्रियके चार प्राण, चरो

नं. ३

भिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य-आलाप.

गु.	जी-		1.	<b>я</b> т.	सं	ग.	<b>\$</b> .	का.	यो -	वे.	<b>ቚ</b>	ল্বা	. संय	' द.	ले.	स∙	[ स	सं।ज्ञि	आ.	उ.	I
19	188	ह	ष.	१०७	8	<u>_</u> x	4	ह	१३	₹	8	३	1	२	Ę	२	8	્ર	२	ર	I
<u>मि</u>		Ę	अप.	९)७					) আ.			अज्ञः.	अस.	चक्षु	द्र.	भ⊦	<b>Ĥ</b> .	! सं.	आहा.	साका-	
1		4	q.	८।६		] Í		•	दि ।					अचधुः	६	अम-		अस	अन्।	अन्।	1
		4	अप	৩াও					विना						मा			i i	í i		ľ
ľ		8	ष.	হাধ				Į		1			]	[			İ				
		8	अप.	&ાર									ł			}	!			-	ļ

<del>नं</del>. ४

# मिथ्याद्दाष्टि जीवोंके पर्याप्त-आळाप.

1	जी. प. प्रा. सं ग. ७ ६ प. १२० ४ ४ पर्या ५ ,, ९ ४ ,, ८ । ७	<u>د</u> ξ		 ॥ संय. म १ • इन्	e	२ .१ भ मि. अस	सीझि. <u>आ.</u> २ <b>१</b> सं. आहा असं.	
	Ę       X		वे. १					

₹, ₹.]

पंच जादीओ, 9ुढवीकायादी छक्काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजभो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छल्लेस्ताओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्त. साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होति।

तेसिं चेव अपझत्तांघे मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपझत्तीओ पंच अपझत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंग-णाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो

संबाएं, चारों गातियां, एकेन्द्रियजाति आदि पाचें जातियां, पृथिवीकाय-आदि छहों काय, आहारकाद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु थे दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्याएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सांब्रिक, असंब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्याद्दष्टि जीवेंकि अपयोप्त-कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर---एक मिथ्यास्व गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, संक्रीके छहों अपर्याप्तियां, असंक्री और विकलत्र-योंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संक्रीके सात प्राण, असंक्रीके सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, जीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण, पकेन्द्रियोंके तीन प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, जीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण, पकेन्द्रियोंके तीन प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, जीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण, पकेन्द्रियोंके तीन प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, जीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण, पकेन्द्रियोंके तीन प्राण, चारों संक्राएं, चारों गतियां, एकोन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, प्राध्वर्विकायादि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैकियकमिश्र और कार्मण ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषायें, विभंगावधि-क्रानके विना दो अक्रान, असंयम, चक्षु और अच्छा ये दो दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेख्या, भावकी अपेक्षा छहों लेड्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक, आहारक, अनाहारक, साक्षारे(पयोगी और अनाकारो) पयोगी होते हैं।

મં. ૬

# मिथ्यादृष्टि जीवांके अपर्याप्त-आलाप.

	जी।	-	प . अप,	प्रा. ७	i	ग. ४	ছ ড	का इ	<u>यो.</u> उ	वे.	क. 	্রা ২	संय.	<u>द</u> . २	ह. २	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	स.   २	साज्ञे	<u>। आ</u>	3.	1
î <b>મ</b> .	¥д.	4	,, ,,	े इ					औ। मिः वे.मि		-	कुम. कुश्रु,	अस	चक्षु.	কা	भ.		· .	आहा. अन्।	साका. आना	
			,,	4			l		कार्म.			3.34		~(1)	भा ६ 	,				A110	ĺ
		ſ		R			Ì										1		1		

[ 8२५

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंति ।

सासणसम्माइद्वीणमोधे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वि आत्थि

तेसिं चेव सासणसम्माइद्वीणं पजत्ताणमेाघालावे भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिाण्ण अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

सास।दनसम्यग्दाष्टि जीवोंके ओघाळाप कहने पर—एक दूसरा गुणस्थान, संझी पर्याप्त और संझी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दद्या प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, आहारकाद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनों अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहों छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यक्तव, सांक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त काल्रसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक दूसरा गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, आहारकाद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषार्थे, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहों लेक्ष्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी

न. ६

सासादन सम्यग्हण्टि जविंकि सामान्य-आलाप.

गु	जी-	प•	मा.	सं.	ग.	′ इ.`	) का.	[यो-	्वे.	क.	∫ ज्ञा. `	) संय.	द.	ले.	भ.	स.	(संक्रि	आ.	ਤ.
१	२	६ प.	٩٥	8	8	१	8	१३	ર	¥	3	१	ર	द्र. ६	१	२	12	२	े २
सा	सं प्र	६ अ.	ও			पंचे	त्रस•	આ.			अज्ञा-	असं.	चक्षु.	भा-६	ਂ ਸ	सासा	सं.	आहा	साका.
	सं अ				,			द्रि.					अच.	I.	l		1	अना	अना.
				1				विनाः						ł			1		
	]			I i										i	1	Į			

१, १.]

वजुत्ता वि होति अणागारुवजुत्ता विं।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अवजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिण्णि गदी णिरयगदीए विणा, पंचिंदियजादी तसकाओ, तिण्णि जाग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विहंगणाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्रलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंति<sup>6</sup>।

और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर---पक तूसरा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मनोबल, वचनबल और रवासोच्छ्वासके विना सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारकमिश्रके विना अपर्याप्त-संबन्धी तीन येाग, तीनों वेद, चारों कपायें, विभंग-ज्ञानके बिना दें। अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दें। दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्ललेक्या, भावसे छहों लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ७

## सासादन सम्यग्दष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

ſ	गुजी]प	प्रा, सं	ন.	इ.	क⊺.	यो.	à.	क.	হা.	संय.	द्.	ले,	म.	स	संझि.	आ.	उ.
1	१ १ ६	१০ ४	8	8	٤	80	₹	` V	₹	÷ ۲	২	द्र, ६	2	१	2	<u>ع</u>	२
	सा, संप			पंचे :	नस.	म. ४			अज्ञा	असं	चक्षु	सा. ६	ंभ,	सासा	. स.	आहा	साका,
	<u>प</u> .			1		व.४		י י		ĺ	ंअचक्षु.		i 1	1	i		अना.
	-					ઞા ર	1			ĺ		•	1				
ļ		ļ			:	બ ૧	:			!		!			1	t I	

#### नं ८

सासादन सम्यग्दप्रियोंके अपर्याप्त आलाप.

[ग्रु∣ जी।	<b>ч</b> . Г	त्रा.	ŧ.	ग-	হ	का.	यो -	वे	क.	, ज्ञा,	संय⊷	द.	ਰ.	भ	. सं.	संक्रि.	<u>आ</u> .	े उ.
2 2	ε¦	ا ري	8	३	ર	१	સ્	ર	لا	२	શ	२	द्र.	8	8	2	ર	ર
सा स.अ.	अप	अप.		न.	पंच.	त्रस.	ઓ મિ			ंकुम.	असं.	चक्षु.	२	भ.	सासा	सं.	आहा.	साका.
				विना		I	à,,			લુષુ.		अच.	का.				अना.	अना•
		I				:	कार्म.			i			গু.			li		
				'	],	i				, J			मा ६					

छक्खंडागमे जीवहाणं

सम्मामिच्छाइद्वीणमोवालावे भण्णमाणे आर्र्थि एयं गुणढाणं, एओ जीवसमासो, छ पजचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, अण्णाण-मिस्साणि तिण्णि णाणाणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वर्षि।

असंजदसम्माइहीणमोध-परूवणे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, ततकाओ, तेरह जोग, तिण्णिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्त्र-भावेहिं छ ठेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि

सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवॉके ओधालाप कहने पर-एक तीसरा गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषायें, अझान-मिश्रित आदिके तीनों झान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रब्य और भावरूप छहाँ लेक्ष्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिध्यात्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विशेष—मिश्रगुणस्थानवाले जीव पर्याप्तक ही होते हैं, इसलिये मिश्रगुणस्थानके उक्त सामान्यालाप ही पर्याप्तकके समझना चाहिये।

असंयतसम्यग्दष्टि जीवेंकि ओघालाप कहने पर—एक चौथा गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दरा प्राण, सात प्राण; चारों संझाए, चारों गातियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विकके विना तेरद्व योग, तीनों वेद, चारों कवायें, तीन झान, असंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहों लेरुयाप, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन

नं. ९

सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके आलाप.

<u>ग</u> ु-	जी	<b>φ.</b>	<b>प्र</b> ।	सं.	] ग.	₹.	का,	यो.	वे	. क	রা.	संय-	द.	ੱਡ.	भ.	. स	संज्ञि ।	আ-	<u> </u>
2	8	Ę	20	۲		2	1 2	१०	३	18	₹	2	२	द्र ६	१	1 2	8	ধ	<u>२</u>
सम्य	.स.		!			पंचे.	त्रस.	म. ४	·		इ:न-	અહં.	चक्षु.	भा.६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
j	q.				!		ļ	व. ४			সন্থা.		अचक्षु,	Ì		1			अना.
		}	]					ઓં, ર	1		मि अ.			]	ŀ		1		
	ļ		i		, j			वे. १	1	1			 }		<b>j</b>	۱ 			

१, १.] संत-परूवणाणुयोगदारे आधाखाववण्णणं [ ४२९ सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अमाहारिणो, सामारुवजुत्ता वा होति अणा-गारुवजुत्ता वा<sup>13</sup>।

असंजदसम्माइद्वीणं पञ्जत्ताणमेवालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्माओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

सम्यक्स्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारक। साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं। असंयतसम्यग्टप्रि जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी ओधालाप कहने पर---एक जौथा गुण-स्थान, संक्री-पर्याप्त एक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्रापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कथायें, तीन क्रान, असंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्य और भावरूप छद्दों लेड्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक क्षायिक और झायोपशमिक ये तीन सम्ययस्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मं. १०

असंयतसम्यग्द्रष्टियोंके सामान्य आलाप

<u>।</u> मृ.	ं जी.	q.	<b>я</b> і.	सं.	भ ः इ.	का.	यो.	वे.	क.	রা	स <b>य</b>	द.	ਲੇ.	<b>.</b>	_ स.	मंत्रि	আ.	<u>ः</u> ।
1	ર	६ प.	20	x	8 2	े र	१२	- इ	81	∋̃	1 8 1	२	i <b>z</b> . 6	1 <b>2</b> 1	<b>R</b> .	÷ 9	: <b>R</b>	े २
সৰি	. सं. प	६ अ.	9		प रे	र , त्रस	. आ दि			म .	असं	ये.	भा- ६	म	Э.	मं.	आहा.	.साका
ł	य अ						विना-			ઝુ		षिना	!	: '	क्षा		अना.	জনা-
		· .				:		•	.   <b>3</b>	ধ্ব -	1		ł :	: :	क्षायाः			
				:	:						i			: :			1	

# नं. ११ असंयतसम्यग्दष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

] गु.	ं जी - '	Ф.	त्रा_र	गं.ंग₊	ŧ	ं का	यो	े ने	. क	्री।	संय-	£	ं छे.	¥ <b>7</b> -	ਸ.	साज्ञ.	না:	3.
1						٤.										1 2	٦	२
সাৰি	स. प	q.			े पंचे	त्रस.	म	8.	5	म				्भ	ओ,	ेसं.	आहा.	साका.
	•			ł			व.	۲.		શ્રુ.		विना.	:		क्षा.	ļ		अना.
				1	-		લો.	٤ -		अत्र		:	:		क्षायोः			
			i l	1	\ \	<u>}</u>	a.	٤.	i L	1	i	i	; )	1		]		<u> </u>

830 ]

तेसिं चेव अपजत्ताणमोधपरूवणे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण काउ-सुक्रलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; णिरयादो आगंतूण मणुस्सेसुप्पण्ण-असंजदसम्माइईणिमपजत्तकाले किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ लब्भंति । भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, अणादिय-मिच्छाइटी वा सादिय-मिच्छाइटी वा चदुसु वि गदसि उवसमसम्मत्तं धेतृण ट्विजीवा ण कालं करोति । तं कथं णव्वदि त्ति वुत्ते आइस्यि-वयणादो वक्खाणदो य णव्वदि | चारित्तमोह उवसामगा मदा देवेसु उववज्जंति ते अस्सिद्ण अपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लव्य्यदि | वेदगसम्मत्तं पुण देव-मणुस्सेसु अपजत्तकाले लब्भदि, वेदगसम्मत्तेण सह गद-देव-मणुस्साणमण्णोण्ण-गमणागमण-विरोहाभावादो | कदकरणिऊं पद्दच वेदगसम्मत्तं तिरिकख-णेरइयाणमपज्ञत्त-काले लब्भदि । खड्यसम्मत्तं थि चदुसु वि गदीस पुच्वायु-वंधं पद्दच अपजत्तकाले

उन्हीं असंयतसम्बग्दछि जीवेंकि अपर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर--एक चौथा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, लहों अपर्याण्तियां, मनोबल, वचनबल और आनापानके विना सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचोन्द्रियजाति, जसकाय, औदा-रिकमिश्र, बैकियकमिश्र और कार्मण ये तीन योग, खीवेदके विना दो वेद, चारों कपार्थ, मति, श्रुत और अवधि ये तीन ज्ञान, असंयम, चश्रु, अचश्रु और अवधि थे तीन दर्शन, द्रय्यसे कापोत और शुक्ललेक्या, भावसे छहों लेक्याएं होती हैं। छहों लेक्यापं होनेका यह कारण है कि नरकगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले असंयत-सभ्यग्दष्टि जीवींके अपर्याप्त कालमें हष्ण, नील और कापोत ये तीन लेक्याएं पार्यी जातीं हैं। लेक्याओंके आगे भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व होते हैं, क्योंकि, अनादि मिध्यादप्टि अथवा सादि मिध्यादाप्टि जीव चारों ही गतियोंमें उपदामसम्यक्त्वको प्रहण करके पाथे जाते हैं, किन्तु मरणको प्राप्त नहीं होते हैं।

शंका----यह कैसे जाना जाता है कि, उपशाम सम्यम्हप्रि जीव मरण नहीं करते हैं ?

समाधान—आचार्योंके वचनसे और (सूत्र) व्याख्यानसे जाना जाता है कि उपशम. सम्यग्हाष्ट्र जीव मरते नहीं है। किन्तु चारित्रमोहके उपशम करने वाले जीव मरते हैं और देवोंमें उत्पन्न होते हैं, अतः उनकी अपेक्षा अपर्याप्तकालमें उपशमसम्यक्त्व पाया जाता है। वेदक-सम्यक्त्व तो देव और मनुष्योंके अपर्याप्तकालमें पाया ही जाता है, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ मरणको प्राप्त हुए देव और मनुष्योंके परस्पर गमनागमनमें कोई विरोध नहीं पाया जाता है। इतकर्त्यवेदककी अपेक्षा तो वेदकसम्यक्त्व तिर्यंच और नारकी जीवेंकि अपर्याप्त कालमें भी पाया जाता है। श्वायिक सम्यक्त्व भी सम्यग्दर्शनके पहले बांधी गई आयुके बंधकी अपेक्षासे चारों ही गतियोंके अपर्याप्तकालमें पाया जाता है, इसलिये असंयतसम्यग्दष्टि जीवके अपर्याप्तकालमं तीनों ही सम्यक्त्व होते हैं। लटभदि तेण तिण्णि सम्मत्ताणि अपजत्तकाले भवंति । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुना होति अणागारुवजुत्ता वाँ ।

संजदासंजदाणमोधालात्रे भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; केइं सरीर-णिच्वत्तणद्दमागद-परमाणु-वर्णा वेत्तृण संजदासंजदादीण भावलेस्सं परूवयंति । तण्ण घडदे, कुदो ? दच्व-भावलेस्साणं भेदासाबादो ' लिम्पतीति लेक्या ' इति वचनव्याघाताच्च । कम्म-लेव-हेद्दो जोग-कसाया चेव भाव-लेस्सा कि गेण्हिदच्वं । भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि,

सम्यभत्वके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संयतासंयत जीवोंके ओघाळाप कहने पर—एक पांचया गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याण्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंच और मनुष्य ये दें। गतियां, पंचेल्ट्रिय जाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिककाय ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कपायें, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा छहों लेश्याएं, भावकी अपेक्षा तेज, पद्म और गुकुलेश्याणं होती हैं।

कितने ही आचार्थ, शरीर-रचनाके लिये आये हुए परमाणुओंके वर्णको लेकर संयता-संयतादि गुणस्थानवर्ती जीवोंके भावलेश्वाका वर्णन करते हैं। किन्तु यह उनका कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि, वैसा माननेपर द्रव्य और भावलेश्यामें फिर कोई भेद ही नहीं रह जाता है और 'जो लिम्पन करती है उसे लेश्या कहते हैं' इस आगम वचनका व्याघात भी होता है। इसलिथे 'कर्मलेपका कारण होनेसे योग और कपायसे अनुरांजित प्रवृत्ति ही भावलेश्या है ' ऐसा अर्थ प्रहण करना चाहिये।

**छेइयाओंके आगे भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और** 

र्न १	Ŷ,
-------	----

## असंयत तम्यण्टाप्रियोंके अपयोगत आलाप.

i	मु.	জা.	<u>ं</u> प•	সা,	सं.	गः	ई. क	<b>1</b>	यो.	वे.	ंक.	র্য.	. संय	, द.	ਰੋ.	भ	्र.	सोझि.	ঞা.	<b>ड</b> .	ł
	ę	2	ં ૬	છ	8	x	<u>ب</u>	-	হ	হ	: X	₹	. ۲	3	ह. २	१	र् ऑ. क्षा.	\$	2	ર્ગ	
		.स. अ	ાવ.	.आप	i	:	प .	ોમો	ींसे. १	्र स्ती-		मति-	अस.	के ह	<sub>।</sub> का, छु,	∃ म ∣	अ।	सं∙	आहा.	साका	Ł
	<u>स</u> स	י ן					ם י ק	ैं वे	, मि. १	विना		श्रुत		विनाः	भा ६	:	क्षाः		अना.	अनाः	
				I	ł	İ	. 1	কা	ર્મ. ૧	: i	i	अव.		i	i	· !	क्षायो				1
		ļ		7		:	ı .			:		ł .				•		Ι.,		c	ļ

१, १.]

કર્રી

पमत्तसंजदाणमोघालांवे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छप्पज्जत्तीओ, छ अपऊर्जाओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एक्कारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्गि सम्मत्ताणि, सण्गिणो, आहारिणो, सागाहवजुत्ता वा होति अणा-गाहवजुत्ता वा<sup>14</sup>।

अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रमत्तसंयत जीवेंकि ओघालाप कहने पर-रक गुणस्थान, दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दश प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामायिक छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्स्यायं, भावसे तेज, पद्म और गुक्क लेक्सा, भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विशेषार्थ---यद्यपि टीकाकारने प्रथम, द्वितीय और चतुर्थ गुणस्थानके सामान्या-

4. 23

## संयतासंयतोंके आलाप

্যু	.  ສາ.	4.	\$1.]			¥.	का	) यो	त्रे.	क	हा.	संग.	द.	ले.	ं म.	स.	संझि	आ।	. उ.
	1	Ę	20	¥	२	2	2	3	ं ३	8	R	2	્ર	द्र. ६	्र	3	2	ં શ	ર
	.सं.प		.	1	1 -	पंचे.	त्रस.	म. भ	5	1	र्राते	तंयमा.			ंभ	। আ.	. સ.	आहे.	साका
13				i	ति ।			व. २	5	į .	श्रंत		विना.	शुभ.		ধ্যা.	!		अन्।
110	' <u> </u>	ļ						ओ.	۶ .		ज्ञ`∘			i I		क्षायो.			i i
	i	Í		]	ł	j		1	;	Ι.			I	İ		ļ	•		!

नं. १४

### प्रमत्तसंयत-आलाप

্য	जी.	प	मा.	.स.	រា ្ខំ	ं का	_ यो		वे. क.	\$ <b>1</b>	संय.	ं द.	ठे. भ.	. स.	संझि.	આ.	उ.
1	<b>२</b> # п	Ę	-			१ १ चे.त्रस							द्र.६ः १ मा.३.म.		१ सं.	۶	२ साका,
Æ	सं. प. सं.अ	્યત્	પ	н 	• •		व.	۲.				न- द विना		ধ্যা.	. स.	ય  हे⊺.	अना,
ł		अप.	अप.	i i 			औ <b>.</b>		:	:	<sub> </sub> परि.		• •	क्षायो.	ļ		
	I.,				j		आहा	<b>•</b>		: 	;	:	: . · · _	<u>,</u>	}		

संतन्पद्धवणाणुयागद्दोर ओघालाववण्णणं 👔 👔 ४३३

₹, ₹.]

अप्पमत्तसंजदाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, तिण्गि सण्णाओ, असादावेदणीयस्स उदीरणाभावादो आहार-सण्णा अप्पमत्तसंजदस्स णत्थि । कारणभूद-कम्मोदय-संभवादो उवयारेण भय-मेहुण-परिग्गहसण्णा अत्थि । मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद,

लापोंके आतिरिक्त उनके पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका स्वतन्त्ररूपसे कथन किया है फिर भी छंडे गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका स्वतन्त्र कथन न करके केवल ओघालाप ही कहा गया है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि धवलाकारकी राष्टि विग्रह-गतिसंबन्धी गुणस्थानोंमें ही पृथक् रूपसे आलापोंके दिखानेकी रही है अन्य अपर्याप्त संबन्धी गुणस्थानोंमें नहीं । गोम्मटसार जीवकाण्डकी टीकामें भी अन्तमें आलापोंका कथन करते हुए टीकाकारने इसी सरणीको ग्रहण किया है। अतपव मूलमें छठे गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका पृथक् रूपसे नहीं पाया जाना कोई आक्ष्वर्यकी बात नहीं है। फिर भी सर्व साधारण पाठकोंके परिज्ञानार्थ वे यहां लिखे जाते हैं।

प्रमत्तसंयतके पर्याप्तसंबन्धी ओघालापके कहनेपर-एक छठा गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दसाँ प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति-त्रसकाय, वैक्रियककाय और अपर्याप्तसंबन्धी चारों योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवल-झानके विना चार झान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिद्वारविशुद्धि ये तीन संयम, केवल दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं और भावसे पीत, पद्म और शुक्क, ये तीन लेक्याएं, भव्यासिद्धिक, औपशमिक, झायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपर्याप्त अवस्थाको प्राप्त उन्हों प्रमत्तसंयतोंके ओधालाप कहनेपर--- एक छठा गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मन, वचनबल और इवासो-च्छ्वासके विना सात प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, एक आहार-मिश्रकाययोग, एक पुरुष वेद, चारों कषाय, मनःपर्यय और केवलझानके विना तीन झान, सामायिक और छेदोपस्थापना संयम, केवल दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेड्या, भावसे पति, पद्म और शुद्ध लेइया, भव्यसिद्धिक, क्षायिक और क्षायोपत्तामिक ये दो सम्यन्द्र्शन, संझी, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अप्रमत्तसंयत जीवोंके ओघा लाप कहनेपर—एक सातवां गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार, भय और मैथुन ये तीन संझाएं, होती हैं, क्योंकि, असातावेदनीय कर्मकी उदीरणाका अभाव हो जानेसे अप्रमत्तसंयतके आहारसंझा नहीं होती है। किन्तु भय आदि संझाओंके कारणभूत कर्मोंका उदय संभव है, इसलिये उपचारसे भय, मैथुन और परिप्रहसंझाएं हैं। संझाके आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनो-योग, चार वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों चेद, चारों कथायें, केवल्झानके 838]

चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दय्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>हि</sup>।

अपुन्वकरणाणमोधालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, ज्झार्णाणमपुन्वकरणाणं भवदु णाम वचित्रलस्स अत्थित्तं भासापज्जत्ति-सण्णिद-पोग्गलखंध जणिद-सत्ति सब्भावादो । ण पुण वचिजोगो कायजोगो वा इदि ? न, अन्तर्जल्पप्रयत्नस्य कायगतसक्ष्मप्रयत्नस्य च तत्र सत्त्वात् । तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाग, परिहारसुद्धिसंजमेण विणा दो संजम, तिण्णि दसण, दव्वेण छ लेस्साओ,

बिना चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, केवल-दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छडों लेख्याएं और भावसे तेज पद्म और शुक्ठलेखा, भव्यसिद्धिक, औपरामिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तीं जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक आठवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं-मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग, एक औदारिक, काययोग ये नौ योग होते हैं।

र्शका—ध्यानमें लीन अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ती जीवेंकि वचनवलका सद्भाव भले ही रहा आवे, क्योंकि, भाषापर्याप्तिनामक पौद्धलिक स्कन्धोंसे उत्पन्न हुई शक्तिका उनके सद्भाव पाया जाता है किन्तु उनके वचनयोग या काययोगका सद्भाव नहीं मानना चाहिए?

समाधान— नहीं, क्योंकि, ध्यान-अवस्थामें भी अन्तर्जस्पके लिये प्रयत्नरूप वचन-योग और कायगत-सूक्ष्म-प्रयत्नरूप काययोगका सत्त्व अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके पाया ही जाता है इसलिये वहां वचनयोग और काययोग भी संभव हैं।

योगोंके आंगे तीनों वेद, चारों कपायें, केवल ज्ञानके विना रोष चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे

न. १५

## अप्रमत्तसंयतोंके आलाप.

गु. जी.प. त्रा. सं. ग. इं. का. यो. वे. क. झा. संय. द ले. म. स. संझि आ २ २ ६ १० ३ १ १ १ ९ ३ ४ ४ ३ ३ ३ ६ १ ३ १ १ ਤ. **३** १११९ २३४४३३६१ आहा. म. पं तस. म. ४ के. स. के. इ. म. ٦, आ. सं. . साका अत्र सं.प व.४ विना छ. विना ३ क्षा. 🗄 अना. विना. আ ং र्पारे. भा. ं क्षाया ग्र**स**ं

8, 8. ]

पढम-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ञ-त्तीओ, दस पाण, दो सण्णा, अपुव्वकरणस्त चरिम-समए भयस्त उदीरणोदयो णहो तेण भयसण्णा णत्थि । मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ ठेस्साओ, भावेण सुक्क-ठेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>?8</sup> ।

केवल शुक्ललेत्र्या, भव्यसिद्धिक, औपशामिक और झायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवतीं जीवोंके ओंघालाप कहनेपर-एक नौवां गुणस्थान, एक संर्श्व-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, मैथुन और परिष्रद्व ये दो संज्ञाएं होती हैं। दा संज्ञाएं होने का कारण यह है कि अपूर्वकरण गुणस्थानके अन्तिम समयमें भयकी उदीरणा तथा उदय नष्ट हो गया है, इसलिये यहांपर भय-संज्ञा नहीं है । उसके आगे मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चार्रो कषार्ये, कंवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे शुक्ठलेक्याः भव्यसिद्धिक, औपशामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक. साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं, १६

. .....

## अपूर्वकरण-आलाप.

∣गु.जी. <sup>प</sup> . प्रा	संग इंका यो	वे. क. ज्ञा_ संय. द. <sup>∣</sup> छे. <u>भ</u>	स.संज्ञि. आ. उ.
१७ ६ १०	ે ર ારંગ ર ે ૧	३ ४ ४ २ २ ३ द ६ १	२ १ १ १
न न	आहा. स विना कि ब.४	क. सा. हिमा.१ म.	. आहा. साका.
ਜ ਲੱ	विना के बु४	aিনা. ত. 🔍 যুক্ত	1 1 9111
	ઓ શ		"ক
		i filor i l	

#### न. १७

#### अनिवृत्तिकरण-प्रथमभाग-आलाप.

१ १ ६ १० २ १ १ १ ९ ३ ४ ४ २ ३ ६ १	<b>२ १</b>	9 २
अनि संप. म. म. पंचे, त्रस. म. ४ कि. सा. के. द. इ. भ	आ. सं. अ	आहा. साका.
प्र. परि. व.४ विनाः छ. विनाः १ मा. ओ. १ मा.	क्षा.	জানা.

विदिय-हाण-द्विद-अणियद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासे, छ पजत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, अंतरकरणं काऊण पुणे। अंतोम्रुहुत्तं गतूण वेदोदओ णट्ठो तेण मेहुणसण्णा णत्थि । मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ रेक्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजत्ता होति अणागारुवजत्ता वा<sup>8</sup>।

तादिय-द्वाण-द्विद-आणियद्वीणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अत्रगदवेदो, तिण्णि कसाय, वेदेसु सीणेसु पुणा अंतोम्रुद्धतं गंतूण कोधोदयो णस्मदि तेण कोधकसाओ णत्थि। चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि

अनिष्ठत्तिकरण गुणस्थानके दितीय भागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहने पर-एक नौवां गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, परिग्रहसंझा होती है। एक परिग्रह संझाके होनेका यह कारण है कि अन्तरकरण करनेके अनन्तर अन्तर्मुहूर्त जाकर वेदका उदय नष्ट हो जाता है, इसलिये द्वितीय भागवर्ती जविके मैथुनसंझा नहीं रहती है। संझा आलापके आगे मनुष्यगति, पंचेद्रियजाति, जसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, चारों कपायें, केवलझानके विना चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना थे दो संयम, केवल-दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएं और भायसे शुक्कलेक्या, भव्यसिद्धिक, औप-रामिक और झायिक ये दो सम्यक्त्व, संझी, आहागी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते है।

अनित्रुत्तिकरण गुणस्थानके तृतीयभागवतीं जीवोंके ओघाल ।प कहनेपर---एक नौवां गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिव्रहसंक्षा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, कोधकषायके विना तीन कषायें होती हैं । तीन कषायोंके होनेका यह कारण है कि तीनों वेदोंके क्षय हो जाने पर पुनः एक अन्तर्मुहूर्त जाकर कोधकषायका उदय नष्ट हो जाता है, इसलिये इस भागमें कोधकषाय नहीं है । आगे केवलक्षानके विना चार क्रान, सामायिक और

•	-
π.	81
	<u> </u>

अनिवृत्तिकरण-द्वितीयभाग-आलाप.

२ ओन द्वि	2	प. ६	সা. ৭০	8	2	2	१ त्रस•	े म -	अपग. ०	8	8	्र सा.	्र के. द विनाः	<u>छे.</u> इ. १ भा	१ भ	२	2	आ. १ आहा.	
भा •					1			आः	۲ ۱			İ		+    •	Ì	Ę			

१, १. ] संत-परूत्रणाणुयोगदारे औघाठाववण्णणं [ ४३७

दंसण, दुव्वेण छ लेस्साओ, मावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>%</sup>।

चउ-द्वाण-द्विद-अणियद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणदाणं, एओ जीवसमासो, छप्पजत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, दो कसाय, कोधोदए विणद्वे पुणो अंतोग्रुहुत्तं गंतूण माणोदओ वि णस्सदि तेण माणकसाओ तत्थ णत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे व्हॉ लेड्यापं, भावसे गुहलेड्या, भव्यासिद्धिक, औपशामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिवृतिकाण गुणस्थानके चतुर्थभागवर्ती जीवोंके ओघाळाप कहने पर--एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहें। पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, एक परिग्रह संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, माया और लोभ ये दो कपार्थे होती हैं। दो कपायोंके होनेका यह कारण है कि कोधकषायके उदय नष्ट होने पर पुन: एक अन्तर्मुहूर्त आगे जाकर मानकषायका उदय भी नष्ट हो जाता है इसलिये मानकषाय इस भागवर्ती जीवोंके नहीं है। आगे केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेदयाएं, भावसे शुक्कलेटया, भव्य-सिद्धिक, औएशमिक और झायिक ये दो सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

न. १९	अनि∄त्तिकरण~नृतीयभाग~आळाप.													
<u>ग.</u> जी। प १ १ १ अनि. सं. प. सू. भा.	$\mathbf{u}_{1}$ $\mathbf{u}_{1}$ $\mathbf{v}_{1}$ <													
<b>नं. २०</b> अनित्रत्तिकरण चतुर्थभाग-आछाप.   गु. जी. प पा. सं. ग. इ. का. यो. वि. क. का सिय. द. छे. म. स. सं. की आ. 3.   १ १ ६ १० १ ९ १ ९ ० २ ४ २ ३ ६ १ २ १ १ २ २														
ुः, जाः क १ १ ६ अगि.संगः चतु. भाः	$\begin{array}{c ccccccccccccccccccccccccccccccccccc$													

पंचम-द्वाण-हिद-आणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छष्पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, माणोदये विणद्ठे पुणो अंतोम्रहुत्तं गंतूण माओदओ वि णस्सदि तेण मायाकसाओ तत्थ णत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ह</sup>े।

सुहुमसांपराइयाणमोधालावे भण्णभाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासौ, छ पञ्जचीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलेाभकसाओ, चन्तारि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण शुझलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

अतिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्ती जीवोंके ओघाळाप कहनेपर----एक नौधां गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, परिग्रहसंझा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, लोभकपाय है। लोभकपाय होनका यह कारण है कि मानकपायके उदयके नए हो जाने पर पुनः एक अन्तर्मुहर्त आगे जाकर माया-कषायका उदय भी नए हो जाता है, इसलिए मायाकपाय इस भागमें नहीं है। आगे केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्त्याएं, भावसे शुक्ललेक्त्या, भव्यसिद्धिक, औपदामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवतीं जीवोंके ओघाळाप कहनेपर—एक दशवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, सूक्ष्म परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक काययोग ये नौ योग, अपगतवेद, सूक्ष्म लेभिकषाय, केवल्ज्ञानके विना चार ज्ञान, सूक्ष्मसाम्परायाविद्युद्धि संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएं, भावसे शुक्कलेक्ष्या, भव्यसिद्धिक,

र्च. २	२१
--------	----

अनिवृत्तिकरण-पंचमभाग-आलाप.

i <b>π</b> .	जी	पः मा	संग	इं. का.	] यो.	थे. व	គ.  ឡា.	सं य	द.	ਰੇ :	भ-¦	स -	। संज्ञि .	ঞা -	3.1
्ट	8	६ १०	· ? ' ?	શ શ	<u> </u>	0 1	8 8	२	્ર	। <b>६</b>	्रा	ર	, १	र	२ सारुग-
	सं∙ प <sub>′∣</sub>		<b>ч</b> .	क्ष त्रस	∣म.४ ∣व.४	li bi			केद विनाः			জা জ্বান	स्र	્ગાણ	अना.
पंच. सा	!		: !		औ. १	1 <b>7</b>		l :		मा	÷		ļ	!	
	;		i							]		 	<u> </u>		[ 

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा 📜

उवसंतकसायाणमोघालावे भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज़त्तीओ, दस पाण, उवसंतसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णत्र जोग, अवगदवेदो, उवसंतकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; केण कारणेण सुक्कलेस्सा ? कम्म-णोकम्म-लेव-णिमित्त-जोगो अस्थि ति । भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

औपदामिक और आयिक ये दो सम्यक्तव, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

उपशान्तकपाय गुणस्थानवर्तां जीवोंके ओघालाप कहने पर--एक ग्यारहवां गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तसंझ होती है। संझाके उपशान्त होने का यह कारण है कि यहांपर मोहनीय कर्मका पूर्ण उपशम रहता है, इसलिये उसके निमित्तसे होनेवाली संझापं भी उपशान्त ही रहती हैं, अतएव यहां उपशाग्तसंझ कही। आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, उपशान्तकषाय, केवल्झानके विना चार झान, यथाख्यातशुद्धिसंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे शुद्ध-लेक्त्या होती है।

र्शका---जब कि इस गुणस्थानमें ऋषायोंका उदय नहीं पाया जाता है, तो फिर यहां टाक्कलेक्या किस कारणसे कही ?

समाधान-यहां पर कर्म और नेा कर्मके छेपके निमित्तभूत योगका सद्भाव पाया जाता है, इसछिये शुक्कछेव्या कही है।

लेइयाके आगे भव्यसिद्धिक, औपशामिक और क्षायिक ये दो सम्यवस्व, संशिक,

भे. २२

#### सूक्ष्मसाम्पराय-आलाप

1	[.] 3	ft. j	<b>4</b> .	গা.	. सं.	ग.	<b>\$</b> -	काः	यो	•	à.	क.	का.	संय∙	्द	ਲੇ.	म.	.स.	(सांही	। আন্য	ੁ ਤ.
4	j.	۶	ε	10	2	2	Ł	१	٩	_	Ð	2	8	\$	3	ह्	۶	ર્	2	2	ર
सू	, सं	. प			<b>स्. प</b> .	म.	- - - -	त्रस.	म.	8		ત્ .હો.	के.	सूक्षम.	के.द	द्र.	<b>भ</b>	) ગો	सं.	आहा	साका-
							÷	ন্দা	1.4				विना		বিনা	2		क्षा.	ļ		अनाका
									ओं.	2				1		मा			Ì	1	ł
					i						i					য়.	1	1	1	1	
									1	ļ		[		ļ			<u> </u>	l I		۱	!

For Private & Personal Use Only

१, १.]

880 ]

वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाैं।

खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पञत्तीओ, दस पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, खीणकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ भावेण सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जोवनमासा, छ पञ्जनीओ,

# आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हें।

क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती जीवेंकि ओघालाप कहने पर-एक बारहवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, श्रीणसंज्ञ होती है। श्रीणसंज्ञके होनेका यह कारण है कि कपार्योंका यहां पर सर्वथा क्षय हो जाता है, इसलिये संज्ञाओंका श्लीण हो जाना स्वाभाविक ही है। आगे मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदाग्किकाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, श्लीणकषाय, केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, यथाख्यातशुद्धिसंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्याएं, भावसे शुद्धलेस्या, भब्यसिद्धिक, श्लायिक सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सयोगिकेवलियोंके ओघालाप कहने पर-एक तेरहवां गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अर्पयााप्तयां होती हैं।

मं. २३

उपशान्तकपाय- आलाप.

। ग्र	.जो	्ष.	मा.	सं	ग.	ġ.	का.	यो ।	वे	्यः	হা,	. संय	द.	े छे.	ਸ.	सं.	सं झि	় আন	ड.
2	۶ ۲	Ę	50	•	े र . म	<b>१</b> प.	१ त्रस.	९ म.४	°	-	४ के	९ यथा	्र केद.	हे. ६ मा शु	ी स.	∣्र ऑ।	े १ सं.	े <b>१</b> आहा.	्र साका.
E.	THE .		Į	ed.			Į	व.४ औ.१	ह		वि		विना	ļ .		क्षा.			अना.
										 ;	]	I		:				 	Ĺ

#### न. २४

#### क्षीणकषाय-आलाप-

] गु.	जी.	<b>प</b> .ंत्र	ा स.	ग, ः		কা	यो	•	वं क	. রা.	संय.	द.	. ल	म, स	साइ	ो. आ	े उ
1	۲.	<b>६</b> १											द्र. ६		्र	१	ર
E	Ъ.	:	क्षा.	म्.∶ा	<b>4</b> .†	त्रस.	म. =	¥`		क. .विना.	यथा.	क. इ. विना	भा. शु.	्म,क्ष	। स	आ.	
<b>1</b> ,20	<b>R</b>	i		!			व. औ.	_ `	- D	าเล่นา 		ાવના.					अना.
1	! :	i			:	:		•	÷	i.	!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!!			•			

( १, १.

छ अपऊत्तीओ, केवली कवाड-पदर-लोगपूरण-गओ पऊत्तो अपऊत्तो वा? ण ताव पऊत्तो, 'ओरालियमिस्सकायजोगो अपऊत्ताणं'' इच्चेदेण सुत्तेण तस्स अपऊत्तसिद्वीदो। सजोगि मोत्तूण अण्णे ओरालियमिस्सकायजोगिणो अपज्तत्ता 'सम्मामिच्छाइद्वि-संजदा-संजद-संजदद्वाणे णियमा पऊत्ता'' त्ति सुत्त-णिद्देसादो। ण, आहारामिस्सकायजोग-पमत्तसंजदाणं पि पऊत्तयत्त-प्पसंगादो। ण च एव, 'आहारामिस्सकायजोगो अपऊत्ताणं'' ति सुत्तेण तस्स अपऊत्तभाव-सिद्धीदो। अणवगासत्तादो' एदेण सुत्तेण

र्शका—कपाट, भतर और लोकपूरण समुद्धातको प्राप्त केवली पर्याप्त हैं या अपर्याप्त ?

समाधान∽-उन्हें पर्याप्त तो माना नहीं जा सकता, क्योंकि, 'औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है ' इस सूत्रसे उनके अपर्याप्तपना सिद्ध है, इसलिये वे अपर्याप्तक ही हैं।

रांका — 'सम्याग्मध्यादाप्ट, संयतासंयत और संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, इसप्रकार सूत-निर्देश होनेके कारण यद्दी सिद्ध होता है कि सयोगीको छोड़कर अन्य औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक हैं। यहां शंकाकारका यह अभिप्राय है कि औदारिकमिश्रयोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं यह सामान्य विधि है और सम्यग्निथ्यादि संयतासंयत और संयत जीव पर्याप्तक होते हैं यह विशेष विधि है और संयतोंमें सयोगियोंका अन्तर्भाव हो ही जाता है अतएव 'विशेषविधिना सामान्य-विधिर्बाध्यते ' इस नियमके अनुसार उक्त विशेष-विधिसे सामान्य-विधि बाधित हो जाती है जिससे कपाटादि समुद्धातगत केवलीको अपर्याप्त सिद्ध करना असंभव है ?

समाधान — ऐसा नहीं है, वयोंकि, यदि 'विशेष-विधिसे सामान्य-विधि बाधित होती है ' इस नियमके अनुसार ' औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं ' यह सामान्य-विधि 'सम्यग्मिथ्याद्यप्टि आदि पर्याप्तक होते हैं ' इससे बाधी जाती है तो आहारमिश्रकाययोगवाले प्रमत्तसंयतोंको भी पर्याप्तक ही मानना पड़ेगा, क्योंकि, वे भी संयत हैं। किंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, 'आहारकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है ' इस सूत्रसे वे अपर्याप्तक ही सिद्ध होते हैं।

र्शका--- ' आहारमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है ' यह सूत्र अनवकाश है,

१ जोग सं सू. ७६. २ जी. सं. सू. ९०. ३ जी. सं. सू. ७८.

४ अन्तरंगादण्यपवादो वर्लायान् । परि. शे. पृ. ३५८० चेन नाप्राप्ते यो विधिरारभ्यते स तस्य वाधको भवति । येन नाप्राप्ते इसस्य यत्कर्तुकावश्यकप्राप्ताविस्ययों नज्द्रयस्य प्रक्तार्थदादर्वनोधकत्वान् । एवं च विशेषशास्त्रीदेश्यविशेषधर्मावस्ळिन्नवृत्तिसामान्यधर्मावस्थित्विष्ठेदेध्यकशास्त्रस्य विशेषशास्त्रेण वाधः । तदपाप्तियोग्येऽचारि-तार्थं खेतस्य वाधकत्वे बीजग् । परि. शे ३५९, ३६८.

'संजदद्वाणे णियमा पजतां' ति एदं सुत्तं बाहिजदि, 'ओरालियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं ' ति एदेण ण बाहिज्जदि सावगासत्तेण बलाभावादों । ण, 'संजदद्वाणे णियमा पज्जत्ता'' त्ति एदस्स वि सुत्तस्स सावगासत्तदंसणादो। सजोगिदाणं दोसु वि सुत्तेषु सावगासेसु जुगर्व दुक्केसु ' संजदहाणे णियमा पज्जत्ता' ' ।त एदेण सुत्तेण ओरालियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं ' ति एदं सुत्तं बाहिज्जदि परत्तादो' । ण, परसदो इद्टवाचओं ति घेप्पमाणे पुब्वेण बाहिज्जदि ति अणेयंतियादो । णियम-सदी

अर्थात् इस सूत्रकी प्रवृत्तिके लिये कोई दूसरा स्थल नहीं है, अतः इस सूत्रसे 'संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक ही होते हैं ' यह सूत्र बाधा जाता है। किंतु औदारिक-मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है ' इस सूत्रसे ' संयतोंके स्थानमें जीव पर्याप्तक ही होते हैं ' यह सूत्र नहीं बाधा जाता, वयोंकि, ' औद्यारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है ' यह सूत्र सावकाश होनेके कारण, अर्थात, इस सूत्रकी प्रवृत्तिके लिये सयोगियोंको छोड़कर अन्य स्थल भी होनेके कारण, निर्धल है अतः आहारकसमुद्धातगत जीवेंकि जिस-मकार अपर्याप्तपना सिद्ध किया जा सकता है उसप्रकार समुद्धातगत केवलियोंके नहीं किया जा सकता है ?

समाधान-- नहीं, क्योंकि, 'संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होता है ' यह सूत भी सावकाश देखा जाता है, अर्थात्, सयोगीको छोड़कर अन्य स्थलमें भी इस सूत्रको प्रदासि देखी जाती है, अतः निर्बल है और इसलिये ' औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है ' इस सूत्रकी प्रवृत्तिको नहीं रोक सकता है।

शंका-पूर्वोक्त समाधानसे यद्यपि यह सिद्ध हो गया कि पूर्वोक्त दोनों सूत्र सायकाश होते हुए भी सयोगी गुजस्थानमें युगएत प्राप्त हैं, फिर भी 'परो विधिर्बाधको भवति ' अर्थात्, पर विधि बाधक होती है, इस नियमके अनुसार ' संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं ' इस सूत्रके द्वारा ' औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकॉके ही होता है ' यह सूत्र बाधा जाता है, क्योंकि, यह सूत्र पर है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'परो विधिर्बाधको भवति ' इस नियममें पर झब्द इष्ट अर्थात् अभिप्रेत अर्थका वाचक है, पर राज्यका ऐसा अर्थ लेनेपर जिसप्रकार 'संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं ' इस सत्रसे ' औदारिकामिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता

१ जी सं. सू. ९०. २ जी.सं.स्र. ७८.

३ अपवादो यदन्यत्र चरितार्थस्तहिं अन्तरंगेण वाध्यते निरवकाशखरूपस्य वाधकल्वत्रीजस्याभावात् । परि, शे. पृ. ३८६.

४ पूर्वात्परं बल्जवन् विश्रतिषेधशास्त्रात् (विश्रतिषेधे परं कार्यमिति सूत्रात्) पूर्वस्य परं बाधकमिति यावत् । યરિ. શે. પુ. રર્ઙ.

२ विप्रतिवेधसूत्रस्थपरशब्दस्येष्टवाचित्वम् । परि. शे. पु. २४%.

सप्पओजणो णिप्पओजणो ? ण विदिय-पक्छो, पुप्फयंत-वयण-विणिग्गयस्स णिप्फलत्त-विरोहादो । ण चेदस्स सुत्तस्स णिचत्तं-पयासण-फलं, णियम-सइ-वदिरित्त-सुत्ताणमणिचत्त-प्पसंगादो । ण च एवं, 'ओरालियकायजोगो पज्जत्ताणं'' ति सुत्ते णियमाभावेण अपज्जत्तेसु वि ओरालियकायजोगस्स अत्थित्त-प्पसंगादो । तदो णियम-सद्दो णावओ । अण्णहा अणत्थयत्त-प्पसंगादो । किमेदेण जाणाविज्जदि ? 'सम्मामिच्छाइहि-संजदासंजद-संजद-हाणे णियमा पज्जत्ता ' त्ति एदं सुत्तमणिचमिदि तेण उत्तरसरीरमुहाविद-सम्मामिच्छाइहि-संजदासंजद संजदाण कवाड-पदर-लोगपूरण-गद्द-सजोगीणं च सिद्धम-

है ' यह सूत्र बाधा जाता है. उसीप्रकार पूर्व अर्थात् ' औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है ' इस सूत्रसे संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, यह सूत भी बाधा जाता है, अतः शंकाकारके पूर्वोक्त कथनमें अनेकान्त दोप आ जाता है ।

शंका— जब कि कपाट-समुद्धातगत केवऌी-अवस्थामें अभिप्रेत होनेके कारण 'औदारिक मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' यह सूत्र पर है तो 'संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, इस सृतमें आये हुए नियम दाब्दकी क्या सार्थकता रह गई ? और ऐसी अवस्थामें यद प्रश्न उत्पन्न होता है कि उक्त सूत्रमें आया हुआ नियम दाब्द सप्रयोजन है कि निष्प्रयोजन ?

समाधान — इन दोनों विकल्पोंमेंसे दूसरा विकल्प तो माना नहीं जा सकता है, क्योंकि, पुष्पदन्तके वचनसे निकले हुए तत्त्वमें निरर्थकताका होना विरुद्ध है। और सूत्रकी नित्यताका प्रकाशन करना भी नियम शब्दका फल नहीं हो सकता है, क्योंकि, पेसा माननेपर जिन सूत्रोंमें नियम शब्द नहीं पाया जाता है उन्हें अनित्यताका प्रसंग आ जायगा। परंतु पेसा नहीं है, क्योंकि. ऐसा माननेपर ' औदारिककाययोग पर्याप्तकोंके होता है ' इस सूत्रमें नियम शब्दका अभाव होनेसे अपर्याप्तकोंमें भी औदारिककाययोगके अस्तित्वका प्रसंग प्राप्त होगा, जो कि इष्ट नहीं है। अतः सूत्रमें आया हुआ नियम शब्द झापक है नियामक नहीं। यदि ऐसा न माना जाय ते। उसको अनर्थकपनेका प्रसंग आ जायगा।

शंका-इस नियम शब्दके द्वारा क्या ज्ञापित होता है ?

समाधान — इससे यह ज्ञापित होता है कि 'सम्यग्मिथ्यादाष्ट संयतासंयत और संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं ' यह सूत्र अनित्य है। अपने विषयमें सर्वत्र समान प्रवृत्तिका नाम नित्यता है और अपने विषयमें ही कहीं प्रवृत्ति हो और कहीं न हो इसका नाम अनित्यता है। इससे उत्तरदारीरको उत्पन्न करनेवाले सम्यग्मिथ्याद्वष्टि, और संयतासंयतोंके तथा कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्धातको प्राप्त केवलियोंके अपर्याप्तपना

१ कताकतप्रसंगि नित्यं तदिपरीतमनित्यम् । परि. शे. पृ. २५००

२ जो. से. सू. ७६. ३ जी. सं. सू. ९०.

४ प्रतिष्ठ ' मि तेण ' इति पाठः ।

पज्जत्तं ।

अद्वारद्व सरीश अपज्जत्तो थाम । ७ ज सजोशस्मि सरीर-पद्ववर्णमत्थि, तदो ण तस्त अपज्जत्तमिदि ण, छ-पज्जति-सत्ति-वर्जियस्य अपज्जत्त-ववएसादो । छहि इंदि-एहि विणा चत्तारि पाणा दा वा द्व्वदियाणं णिप्पत्ति पड्डच के वि दस थाणे भणंति । तण्ण घडदे । क्रुदो ? भाविंदियाभावादो । भाविंदियं णाम पंचण्हमिंदियाणं खत्रोवसमो । ण सो खीणावरणे आत्थि । अध दव्विंदियस्स जदि शहणं कीरदि तो सण्जीणमपज्जत्त काले सत्त पाणा पिंडिदूण दो चेव पाणा भवंति, पंचण्हं दव्वदियाणमभावादो । तम्हा

सिद्ध हो जाता है।

विशेषार्थ- सम्मामिच्छाइहि-संजदासंजद संजद-हाणे णियमा पजत्ता ' इस सुतकं अनित्य बतलाकर उत्तरझरीरको उत्पन्न करनेवाले सम्यग्मिथ्याद्यष्टि और संयतासंयतोंको भी जो अपर्याप्तक सिद्ध किया है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि इस कथनसे टीकाकारका यह अभिप्राय होगा कि तीसरे गुणस्थानमें उत्तरवैक्रियिक और उत्तर-औदारिक तथा पांचर्वे गुण स्थानमें उत्तर-औदारिकको उत्पन्न करनेवाले जीव जवतक उस उत्तर-शरीरकी पूर्णतर नहीं कर लेते हैं तबतक अपर्याप्तक कहे गये हैं। जिसप्रकार तरहवें गुणस्थानमें पर्याप्त नासकमन्छ उदय रहते हुए और झरीरकी पूर्णता होते हुए भी योगकी अपूर्णतासे जीव जयभाष्त्रक कहा जाता है, उसीप्रकार यहांपर भी पर्याप्त नासकमका उद्दय रहते हुए, योगकी पूर्णता रहने हुए औन मूल झरीरकी भी पूर्णता रहते हुए केवल उत्तर शरीरकी अपूर्णतासे अपर्याप्तक कहा जाता

र्शका — जिसका अगरंभ कियः हुवा कर्रगर अर्छ अर्थात् अपूर्ण है असे अपयीप्त कहते हैं । परंतु सयोगी-अवस्थामें दार्रगरका आरंभ तो होता नहीं, अतः सयोगीके अपयीप्तपना नहीं वन सकता है ?

सयोगी जिनके पांच आवेन्द्रियां और भावमन नहीं रहता है, अतः इन छहके विना चार प्राण पाये जाते हैं। तथा समुद्धातको अपर्याप्त अवस्थामें वचनवल और श्वासोच्छ्यासका अभाव हो जानेसे, अथवा तेरहवें गुणस्थानके अन्तमें आयु और काय ये दो ही प्राण पाये जाते हैं। परंतु कितने ही आचार्य दृव्येन्द्रियोंकी पूर्णताकी अपेक्षा दश प्राण कहते हैं; परंतु उनका पेसा कहना घटित नहीं होता है, क्योंकि, सयोगी जिनके भावेन्द्रियां नहीं पाई जाती हैं। पांचों इन्द्रियावरण कर्मोंके क्षयोपशामको भावेन्द्रिय कहते हैं। परंतु जिनका आवरणकर्म समूल नष्ट हो गया है उनके वह क्षयोपशाम नहीं होता है। और यदि प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका ही प्रहण किया जावे तो संक्षी जीवोंके अपर्याप्त कालमें सात प्राणोंके स्थानपर कुल दो ही प्राण कहे जायंगे, क्योंकि, उनके ट्रव्येद्रियोंका अभव होता है। अतः यह सिद्ध हुआ कि सयोगी जिनके चार

श्मतिषु ( सरीरादवण् ) इति पाठः । २ अतिपु ( दव्वेदियाणि.....मवंति ) इति पाठः ।

सजोगिकेवलिस्त चर्चारि पाणा दो पाणा वा । खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, सत्त जोग, सच्चमणजोगो असच्चमोसमणजोगो सच्चवचिजोगो असच्च-मोसवचिजोगो ओरालियकायजोगो कवाडगदस्स ओरालियमिस्सकायजोगो पदर-लोग-पूरणेसु कम्मइयकायजोगो, एवं सजोगिकेवलिस्स सत्त जोगा भवंति । अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खड्यसम्मत्तं, णेव साण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो आणाहारिणो, सागार-अणागोरहिं जुगवदुवजुत्ता होति ।

अजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्ढाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्र-त्तीओ, पुत्विल्ल-पज्जत्तीओ तहा चेव द्विदाओ चि छ पज्जत्तीओ भणिदाओं । ण पुग पज्जत्ती-जणिद-कज्जमत्थि । आउअ-पाणो एक्को चेव । केण कारणेण १ ण ताव णाणा-

अधवा दो ही प्राण होते हैं। प्राण आठापके आगे झीण संझा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजति. त्रसकाय, सात योग होते हैं। वे सात योग कौनसे हें? आगे इसीका स्पष्टीकरण करते हैं-सत्यमनोयोग, अनुभय-मनोयोग, सत्यवचतयोग, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, कपाट. समुद्धातगत केवलीके औदारिकमिश्रकाययोग और प्रतर तथा लोकपूरण समुद्धातगत केवलीके कार्मणकाययोग इस जकार सयोगिकेवलीके सात योग होते हैं। योग आलापके आगे अप-गतेवद, अकषाय, केवलज्ञान, यथात्रपातजुद्धि संयम, केवलर्श्वान, द्रव्यसे लहें। लेक्स्यापं, औग भावसे शुक्कलेक्या, भव्यसिद्धिक, झायिक सम्यक्त्व, संज्ञी और असंज्ञी विकस्पसे रहित आहारी, अनाहारी; साकार तथा अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे प्रगपद उपयुक्त होते हैं।

अयोगिकेवली गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओखालाप कहनेपर रिक चौदहवां गुणस्थान, दक पर्याध्त जीवसमास, छहों पर्याध्तियां होती हैं। छहो पर्याध्तियोंके होनेका कह कारण है कि पूर्वस आर्र हुई पर्याध्तियां तथव स्थित रहती हैं, इसलिन यहांपर छहाँ पर्याध्तियां कही गई हैं। किन्तु यहांपर पर्याध्नजनित कोई कार्य नहीं होता है, इतः अखुनामक एक ही आज होता है।

भंका मन आय्याणके होनेका क्या कारण है।

समाधान - जानावरणकर्मके अयोपशामस्यरूप पांच इन्द्रिय प्राण तो अयोगकेवलीके

स्योगिकेवलीके आखाय.

्र गुःजी प ∣प्राःसंग्यः, का.यो. बें,क, जासंप, द. छे. स. स. सो	ज्ञे, <u>अन्</u> र	હ.
2 2 2 8 8 2 0 2 2 9 0 0 2 2 3 5 E 2 . C	·   २	્ર
मिस. प. प. मि. पंचे. यस म. २ कि यथा के.द. मा. १ म. झा. अर हि सं.था ६ हि व.२ हि छि अब कि यो २	. आहा	साका.
हिंसे आ ६ 🚊 व.२ 😸 🕅 घ.	अनः, )	अना,
આવ. અર્જ ઓ.ર		यु. उ.
का.१		

नं, २५

[ १, १.

छऋ्खंडागमे जीवटाणं

888]

वरण-खओवसम-लक्खण-पंचिंदियपाणा तत्थ संति, खीणावरणे खओवसमाभावादो | आणा-वाण-भासा-मणपाणा वि णत्थि, पज्जत्ति-जणिद-पाण-सण्णिद-सत्ति-अभावादो | ण सरीर-बल्लपाणो वि अत्थि, सरीरोदय-जणिद-कम्म-णोकम्मागमाभावादो | तदो एक्को चेव पाणो । उत्तयारमस्सिऊण एक्को वा छ वा सत्त वा पाणा भवंति | एस पाणो पुण

हैं नहीं, क्योंकि, ज्ञानावरणादि कर्मोंके क्षय हो जानेपर क्षयोपशमका अभाव पाया जाता है। इसीप्रकार आनापान, भाषा, और मनःप्राण भी उनके नहीं हैं, क्योंकि, पर्याण्तिजानेत प्राण-संज्ञावाली राक्तिका उनके अभाव है। उसीप्रकार उनके कायबल नामका भी प्राण नहीं है. क्योंकि, उनके दारीर नामकर्मके उद्य-जानित कर्म और नोकर्मोंके आगमनका अभाव है। इस-लिये अयोगकेवलीके एक आयुप्राण ही होता है ऐसा समझना चाहिये। किन्तु उपचारका आश्रय लेकर उनके एक प्राण, छह प्राण अथवा सात प्राण भी होते हैं।

विशेषार्थ-- वास्तवमें अयोगी जिनके एक आयु प्राण ही होता है फिर भी उपचारसे उनके यहां पर एक या छह या सात प्राण बतलाये हैं। ' जहां मुख्यका तो अभाव हो किन्तु उसके कथन करनेका प्रयोजन या निमित्त हो वहां पर उपचारकी प्रवृत्ति होती है ' उपचारकी इस व्याख्याके अनुसार यहां चै।दहवें गुणस्थानमें क्षयोपशमरूप मुख्य इन्द्रियोंका तो अभाव है। फिर भी अयोगी जिनके पंचेन्द्रियजाति नामकर्मका उदय पाया जाता है और वह जीवविपाकी है, इस निमित्तसे उन्हें पंचेन्द्रिय कहना बन जाता है। इसलिये उनके पांच इन्द्रिय प्राणेंका कथन करना भी सप्रयोजन है । इसप्रकार पांच इन्द्रियोंमें आयुको मिला देने पर छढ़ प्राण हो जाते हैं। यहां पर इन्द्रियोंसे अभिप्राय उस शक्तिसे है जिससे अयोगी जिनमें पंचेन्द्रिय· पनेका व्यवहार होता है । परंतु उस शक्तिके सम्पादनका या पांच इन्ड्रियोंका आधार शरीर है, अतः इस निमित्तसे अयोगी जिनके कायबळका कथन करना भी सप्रयोजन है। इसप्रकार पूर्वोक्त छह प्राणोंमें कायबलके और मिला देने पर सात प्राण हो जाते हैं। यद्यपि उनके पहलेकी छह पर्याप्तियां उसीप्रकारसे स्थित हैं, अतः वे पर्याप्तक कहे जाते हैं ! तथा पर्याप्तक अवस्थामें मनःप्राण भी होता है, इसलिये उनके मनःप्राणका भी कथन करना चाहिये था। परंतु उसके कथन नहीं करनेका यह कारण प्रतीत होता है कि उनमें संझव्यिवढार खुप्त हो गया है। औप-चारिक संज्ञीव्यवहार भी उनमें नहीं माना गया है, अतः अयोगियोंके मनः प्राण नहीं कहा। इसीप्रकार वचनबळ और इवासोछ्वासके अभावका भी कारण समझ लेना चाहिये। ऊपर सयोगी जिनके जो पांच इंद्रियां और एक मन इसप्रकार छह प्राणोंका निषेध करके केवल चार ही प्राण बतलाये हैं वह मुख्य कथन है। अतः जिस उपचारकी अपेक्षा यहां छह अथवा सात प्राण कहे हैं वही उपचार वहां भी लागू होता है । आयु प्राण तो अयोगियोंके मुख्य प्राण है फिर भी उसे भी उपचारमें ले लिया है, इसलिये इसे कथनका विवक्षाभेद ही समझना चाहिये। यहां उपचारका प्रयोजन ऐसा प्रतीत होता है कि विवक्षित पर्यायमें रखना जो आयुका काम है

Jain Education International

अप्पाणो । खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाण, जहाकखादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण अलेस्ता; लेव-कारण जोग-कसायाभावादो । भवसिद्धिया, खड्यसम्माइडिणो, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागोरेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होति

सिद्धाणं ति भण्णमाणे अस्थि एयं अदीद-गुणद्धाणं, अदीद-जीवसमासो, अदीद-प जत्तीओ, अदीद पाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी, अणिदिया, अकाया, अजोगिणो, अवगदवेदा, खीणकसाया, केवलणाणिणो, णेव संजदा णेव असंजदा णेव संजदासंजदा, केवलदंसण, दच्व-भावेहिं अलेस्सिया, णेव भवसिद्धिया, खइयसम्माइडिणो, णेव सण्णिणो

वह यहां भी पाया जाता है, इसलिये तो वह मुख्य प्राण है। फिर भी जीवनका अवस्थान अख्प है। और अवस्थानके कारणभूत नये कर्मोंका आना, योगप्रवृत्ति आदि भी नष्ट हो गये हैं, अतः आयु भी इस अपेक्षासे औपचारिक प्राण कहा जाता है। इसप्रकार अयोगियोंके उपचारसे एक या छह या सात प्राण कहे गये हैं।

प्राण आलापके आगे-झीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अयोग, अपगत-वेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यात विद्वारठ्याद्यियंग, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे लेश्याराहितस्थान होता है। लेश्याके नहीं होनेका यह कारण है कि कर्म लेपके कारण-भूत योग और कषाय, इन दोनोंका ही उनके अभाव है। लेश्या आलापके आगे-अब्यसिद्धिक, शायिकसम्यग्टाप्टि, संज्ञी और असंज्ञी विकल्पसे रहित, अनाहारक, साकारोपयोग तथा अना-कारोपयोग इन दोनों ही उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

सिद्धपरमेष्टीके ओघाळाप कहनेपर---एक अतीत-गुणस्थान, अतीत-जीवसमास, अतीत पर्याप्ति, अतीत-प्राण, सीण,संझा, सिद्धगति, अनिन्द्रिय, अकाय, अयोगी, अवेदी, सीणकवाय, केवल्रज्ञानी, संयत, असंयत और संयतासंयत विकस्पोंसे विमुक्तः केवल्दर्शनी, द्रव्य और भावसे अलेज्य, भव्यसिद्धिक विकल्पातीत, क्षायिकसम्यग्दष्टि, संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों

1	Į۰ı	जी .	ष.	<b>সা</b> - ,	सं.	च.	ş.	का.	यो.	<b>a</b> .	∣क <b>.</b>	:য়া	संय	स.	हे.	મ.	स,	(संज्ञि	आ.	उ.
ł	۶ ا	۶	Ę	8	2	2	2	2	0	· 0	0	8	÷ ٩	<u>ع</u>	Ę	12	×	१	খ	२
1		<b>q.</b>	ι Ι	एख		म.	पंचे	त्रस.	अयो	т,	अक.	क.	यथाः	के. द.	्र .	्म	क्षाः	अनु.	अना,	साका
ľ	वन		Į	ल			1			5	[	1			•	:		1		জনা-
1	עיו ו		İ	į –	ļ	1		ł	į	1	-	:	1		भा.	:			i	यु.उ.
1				1	{	ł	ļ	[	L	:	1	!	:		अले.	<u> </u>		<u> </u>		۱ 

For Private & Personal Use Only

अयोगिकेवलीके आलाप.

## नं २६

णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागोरहिं जुगवदुवजुत्ता वा होति ।

एवं मुळोघाळाचा समत्ता ।

आदेसेण गदियाणुवादेण गिरयगदीए णेरइयाणं भण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुण-द्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, ततकाओ, ओरालिय-ओरालियमिस्स-आहार-आहार-मिस्सेहिं विणा एगारह जोग, णवुंसयवेदो, णेरइया दव्य-भावेहिं णवुंसयवेदा चेव भवंति ति । चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजमो, तिण्गि दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, दव्वलेस्सा कालाकालाभासा सुडुकण्हेत्तिं जं वृत्तं होदि । एसा णेरइयाणे

विकल्पोंसे मुक्त अनाहारक, साकारोपयोग और अनाकारोपयोगसे युगयत् उपयुक्त होते हैं।

## इसप्रकार मूळ ओघाळाप समाप्त हुए।

आदेशकी अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवादसे नरकगतिमें नारकियोंके आलाप कहनेपर-आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त संज्ञी-अपयीप्त जे दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: पर्याप्तकालकी अपेक्षा दस प्राण और अपर्याप्तकालकी अपेक्षा सात प्राण, चारों संद्वाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिधकाययोग, आहा-रककाययोग, आहारकमिश्रकाययोग, इन चारों योगोंके विना ग्यारह योग, वर्षुसकवेद होता है। एक नंपुसकवेदके होनेका यह कारण है कि नारकी जीव द्रव्य और आव इन दोनों ही वेदोंकी अपेक्षा नषुंसकवेदी होते हैं। वेद आलापके आगे चारों कनायें, तीनों अज्ञान और तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असयम, आदिके तीन दर्शन, ट्रव्यसे पर्याप्तत्वकी अपेक्षा कालाकालामास लेरया, और अपर्याप्तत्वकी अवेदा कापोत और शकलेरया होती है । पर्याप्त-अवस्थामें जो कालाकालामास लेखा कही है। उसके कहनेका यह ताल्थ है कि पयीष्त अव-स्थामें कालाकालाभास अर्थात् अतिरूष्ण लेखा होती हैं। नारकियोंकी पर्याप्त अतम्थामें यह

् असिव ' करणेति ' इति पाठः ।

## सिद्धोंके आलाप.

1 13.	जी-	14.	21.	सं.	я.	ş.	목(-	यो.	ने.	ं क	হা:	संय	द.	ਲੇ	भ	્સ	संज्ञि	<u>अ</u> ।	ন.
		0	·, "	0	0	2	: 0	0	0	4	1	0	<u>ال</u>	, a	0	ং	•	१	ંગ
अ.गु	. अ.	अ.प			ीस -	अनि.	अका	अयो		: . La	के.	अन्-	के. द	ाले.	અતુ.	क्षा	ંગનુ.	ं अन्।	साका. अन्य.
	जी.		71	u H		:		:	443	Î U E	ì		:					:	अना.
		!	ন	ন্দ্র					φ.	'ख'			:				•	i	यु. उ.
	ļ	1	:		:		:	•	1		:	1		:		:		•	1

ଃଛିଣ୍ଡି

२

साका.

अन्ता.

আরা, 🗍

अना.

सं.

महल करनेके प्रथम समयसे लगाकर अपयण्तिकालके चरम समयतक शरीरकी कापोतगेश्या हो होती है, क्योंकि, उस समय दारीश संबलित सक्छ वर्णवाला होता है। भावकी अपेक्षा तो कृष्ण, नील और कलोत्तलेखा होती हैं। लेखा आलापके अले भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक छहाँ सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अलाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं। उन्हीं नारकियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी ओधालाप कहने पर - आदिके चार गणस्थान.

एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्योप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, और आदिके तीन ज्ञान रसत्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालकालाभास कृष्णलेश्या और भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहाँ सम्यक्तव, संश्विक,

पजत्तकाले मरीरलेस्सा भवदि | विग्गहगदीए प्रण णेरइयादि-सब्ब-जीवाणं दव्वलेस्सा सुक्का चेव भवदि, कम्म-विस्ससेविचयस्स धवल्वण्णं मोत्त्वण अण्ण-वण्णाभावादे। । सरीर-गहिद-पढम-समय-पाहुडि जाव अपञज्त-काल-चरिम-समओ चि ताव सरीरस्स काउलेस्सा चेव, संवलिद-सयल-वण्णादे। भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति

संत परूवणाणुयोगदारे आँदसालाववण्णणं

अणागारुवजत्ता वार्ट । तेसि चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, ह पजतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, छण्णाण , असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काला-कालाभासलेस्माओ. भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ

अरीरलेरया होती है। किन्तु वित्रहमतिमें नारकी आदि सभी जीवोंकी द्रव्यलेश्या शुक्क ही होती है, क्योंकि, कमोंक विस्तरोपत्रवका घवठवर्ण छोड्का अन्यवर्ण नहीं होता है, तथा शरीर

नं. २८

सं.प.ष.

सं. अं ६

**ა**.

नारकसामान्य आलोप.

गुको प.पा सं. ग. इ.का. यो. ते. क. ज्ञा, संय. द. छे. भ. स. संज्ञि आ. ४ २ ६ १०४ १ १ १ ९ ९ १४ ६ १ ३ इ.३'२'६ १ २

व.४ ंब-२

कार्म, १

न.पं.त. म.४ न. अज्ञा ३ असं. के.द. इ. म.

রা ২

विना.

का. अ.

ञ्.

भा. ३ अञ्च.

840 ]

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दे। गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि निण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णत्रुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, विमंगणाणेण विणा पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, कदकरणिज्जं पडुच वेदगसम्मत्तं खइयसम्मत्तं मिच्छत्तं च । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र</sup>ं।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नारकियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि और असंयत. सम्यग्दाप्टि ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, लहों अपर्याप्तियां. सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, वैक्रियकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, विभंगज्ञानके विना कुमति और कुश्रुति ये दो अज्ञान तथा मति, श्रुत और अवधि ये तीन ज्ञान, इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्याएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यासिद्धिक, मिथ्यात्व क्षायोपशमिक और कायिक ये तीन सम्यक्त्व होते हैं। इनमें वेदकसम्यक्त्व तो इतत्वरूवेदककी अपेक्षा होता है और उसमें क्षायिक और मिथ्यात्यके मिला देने पर नारकियोंकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन सम्यक्त्व होते हैं। सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ त्रथमायां पृथिव्यां पर्याप्तापर्याप्तकानां क्षायिकं क्षायोपश्रमिकं चास्ति । स. सि. १, ७.

नं, २९

### नारकसामान्य पर्याप्त आलाप.

गु. जी प⊣ प्रा. सं.: ग.	इं. का, यो. वे	. क. ज्ञा. संय द.	रू म स संज्ञि आ	
8 2 2 20 8 2	<b>२</b> २ <b>९</b>	१४६ १३३	्र.२.२.६.१.१ इ. इ. म. सं. आहा.	२ साका,
मि. सं. प. न. सा. पं.	मि रुग	। अश्रा.२ः अस कव ंक्रा.२ः ीत्रेना	ा भा∙ ३ अ	अना
सं. अ	वे. १	:	अग्रु.	

#### र्न. ३०

## नारकसामान्य अपर्याप्त आलाप

संपहि णेरइय-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणड्ढाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकाला-

अब नारकी मिथ्यादण्जीवोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्यादाष्ट गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां, दर्शों प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैफ्रियिककाययोग, वैफ्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारद्द योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभासलेक्या और अपर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और गुक्त लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्य संज्ञिक, आदारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नारकी मिथ्यादांधे जीवेंकि पर्याप्तकालसम्बन्धी आछाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संद्वाएं, नरक-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और कार्मणकाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, तीनों अझान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभासकृष्ण-

नं. ३१

## नारकसामान्य-मिथ्याद्दष्टि आलाप.

। गु.जी	. ч.	. जा.।	सं.ं ग	ş.	का, यो.	व.	क.¦	রা.	संय.	द.	ले.		स.	संज्ञि	आ	· .
2 3	_	-		·	21 22	10	- <b>v</b> 1	3		ذ د	त २	5	٤.	१	ર	ર
मि.स.प	т. ч.	q.	न.		,≓्स- ४	४ न	.	÷	असं.	च.	र्द्र का.	म.	मिथ्या.	स ।	आहा.	साका.
मि स.प सं.प	ય∙ ૬	່ວ່	i.	6	िं व. २	s   i		<u>ः</u>		अ.	ৰু	अ			अना,	अना.
		अ.			वे. =			Ì			<u>ज</u> ु.		:			
		.			कार्म	<b>۹</b> -					मा ३			ļ		
			1	:							अशु.	1	!	ĺ		
		ļ	i	· :		i		i		: 1	. –		1	1		

छन्खंडागमे जीवद्राणं

भासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो,सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वांं।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ब जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, दोण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां।

लेक्या, भावसे रूप्ण, नील और कापोत लेक्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोयोगी होते हैं।

उन्हों नारकी मिथ्यादाप्ट जीवोंके अपर्याप्तकालसंवन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादाप्ट गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्र और कार्मण ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, कुमाति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेक्याप, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं ३२

नं. ३३

नारकलामान्य-मिथ्याद्दष्टि पर्याप्त आलाप.

सु. जी ∣ प	्राग सं	ग इ.	का यो	वे. क. ज्ञा.	संय. द. ले.	म, संसीह	. आ. उ.
२ २ ६	80 8				१ २ इ.१	2 2 2	१ २
मि. सं.अ.		न. पंचे.	त्रस म.४	ন अज्ञा.	असं. चक्षु. इ.	म. स.	आहा. साका
			व.४		अच.मा∙३	अ. हि	अना.
			वि १		' अज्ञ.		
		1	, l		} } }		1

# नारकलामान्य-मिथ्याद्यप्टि अपर्याप्त आलाप.

<u>।</u> ग्र	जो।	q.,	<b>я</b> г.)	सं.   ग.	<b>\$</b> .	क।.	यो.	वे.	क.	) ज्ञा.	्संय	्द.	छ.	स.	स.	संज्ञि-		ਤ,
2	2	×	9	8 8	8	2	२ २ क	2	K	2	8	ર	द्र. २	ર	8	2	ર	ર
मि.	.स. अ.	अप	अप.	∣न-	पच.	त्रस.	वे मि कार्भ	वि		છુન. સુષ્ઠ		्चक्षु. अच्छु,		सः अ		्स.	आहा. अन्य	साका. अना
i.	14.		••			 				उ ुः		<u>ज</u> न्म छ।	भा ३		Æ	:	:  ~I•II•	
ļ	ļ	ļ				!   		j	i		1		সন্থ				i	

843 1

सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्गाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>अ</sup>।

सम्मामिच्छाइडीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ पज चीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तिहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजम, दो दंसण, द्व्वेण कालाकालामासलेस्ता, भावेण किण्ह-णील काउलेस्साओ; भवसिद्धिया,

नारकी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके आछाप कहनेपर-एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगाती, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैफिधिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कर्षायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास लेदया, भावसे रूण्ण, नील और कापोत लेक्याणं: भव्यसिदिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नारकी सम्यग्मिथ्यादधि जीवोंके आठाप कहने पर-एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचे, न्द्रियजाति, त्रसकाय चारों मनोयोग, चारों ववनयाग और वैकियिककाययोग ये नौ योग, नपुं-सकवेद, चारों कपायें, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्ष और अचक्षु ये दें। दर्शन, द्रव्यसे कालकालाभास लेड्या, भावसे कुष्ण, नील और कापोन लेड्यापं, भव्यसिद्धिक

ને. રૂઝ

नारकसामान्य~सासाइन आलाप.

गु जी. प. प्रा. सं. म. इ. का. यो. वे. क. ज्ञा. संय. द. छे. म. स. संज्ञि आं. उ. १: १ ६ १० ४ १ १ १ ९ १ ४ ३ १ २ द. १ १ १ १ २ सा स.प. न पंचे त्रस. म. ४ ज्ये अज्ञा. अ.स. च. छ. म. सासा सं. आहा. साला. व. ४ <sup>भग</sup> अज्ञ. भा ३ वे. १ अज्ञ. भा ३ जे. १ सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्क्लेरसाओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-हेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता:वा

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासे।, छ

सम्याग्नभ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं। नारकी असंयतसम्यग्दाप्टे जीवोंके सामान्य आठाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दप्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दे। जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां और छहाँ अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, इसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयाग, चैकियिककाययोग. वैकियिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालामास रुप्णलेश्या तथा कापोत और शुक्ल लेरयाएं, भावसे रुप्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यासिद्धिक, औपशभिक, क्षायिक और झायोप-दामिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

न. ३५

नारकसामान्य-सम्यग्मिथ्यादप्टि आलाप

। ग्र.	জনি ৷	ष.	मा <b>.</b> (	सं ।	ग.	<b>इ</b> .	का	∣ यो∙	वे.	( क.	ज्ञा.	संय.	द.		म.	स.	(साज्ञे.	्या	<u>ुर</u> ु
9	र	Ę	94	¥	ং	8	2	९	1	8	ļ ₹	१	२	<u>इ</u> . १	۶.	ং	( १	1 2	2
E	सं∎प	ļ		ĺ	न.	म.	नस	म. २ व. ४	عاري عاري	İ	ज्ञान मिथ्र			' क ∣ भा∙ ३		सम्य			ेसाका- अनाका-
								त्रे. १			अज्ञा	1		সগ্		   		1	
				1			ļ		Ì		ļ		l t			í			! i

#### नं. ३६

- नारकसामान्य-असंयत सम्यग्दष्टिके सामान्य आलाप.

गु.जी. प. प्रा. सं ग. इ. का. यो. वे. क. ज्ञा. संय. द. ले. स. सं. संज्ञि आ. उ. ३ ड. २ १ | २ 2 2 8 20 8 2 8 2 22 3 8 3 **1** ૧ ં ૨ સ્ के द. क. भ. आ. स. आहा साका. मति, असं, .प. ७ न । पं त्रस म ४ ਜ ਕ नि <u>भाव</u>े. **न.** ४ জনা. )वेना का इ क्षा. अना. श्रुत. **६** | भग.३ं श्चायोः व २ अव.ं ÷ ગ. कार्म. জায়, i

[ ?, ?.

पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, गर्वुसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागास्वजुत्ता होंति अणागास्वजुत्ता वा

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बे जोग, पर्वुसयवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण

उन्हीं नारकी असंयतसम्यग्दधि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंत्रेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकि-यिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास रूष्णलेश्या, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपदामिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों नारकी असंयतसम्यग्दपि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अचिरतसम्यग्दरि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगाती, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकमिश्र और कार्मण ये दो योग, नपुं-सकवेद, चारों कथायें, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और यक्त लेख्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक, उपशमसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व

#### नं. ३७

2, 8. ]

### नारकसामान्य-असंयतसम्यग्दष्टि पर्याप्त आलाप.

ł	IJ.	जी-	ष.	Ht.	सं.	Т.	ţ.	का	_यो	•	वे ।	क	্রা•	संय	्द.	<u></u> ले.	भ	स.	संझि	, आ	। उ.	1
							2					-	a,	•	3	द्र १	*	3	2	8	२	ļ
	अवि <sub>'i</sub>	सं प∙		1		न -	पर्च.	সন্ত্র.	म-	8	E.							া আঁ	स.	आहा-	साका-	
			:						-A-		े म		श्रुत.			मा∙३		क्षा,		-	अना.	
				1.			:		वं.	۲.			अत्र.	-	ł	) अগ্ত	!	क्षायोः		:		L
			;	i '			:	·	-		1			:			1	1	1	<u> </u>		I

छंत्रंखेडागमें जीवदाण

**विणा दो सम्मत्तं,** सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजतता वा<sup>\*\*</sup> ।

पढमादि-सत्तण्हं पुढवीणं लेस्साओ जाणांवेई एसा गाहा----

काऊ काऊ काऊ णीटा णीटा य णीट-किण्हा य । किण्हा य परमकिण्हा टेस्सा पढमादिपुटवीणं' ॥ २२२ ॥

पढमाए पुढवीए णेरइयाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीव-समामा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तमकाओ, एगारह जोग, णवुंमयवेद, चत्तारि कमाय,

संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रथमादि सातों पृथिवियोंकी छेश्याओंको यह निम्न गाथा बतलाती हैं---

कापोत, कापोत, कापोत और नीछ, नीछ, नीछ और इष्ण, उष्ण तथा परमऋष्ण छेश्या प्रथमादि पृथिवियोंमें कमदाः जानना च।हिये ॥ २२२ ॥

विशेषार्थ—प्रथम पृथिवीमें जघन्य कापोतलेश्या होती है । तूसरी पृथिवीमें मध्यम कापोतलेश्या होती है । तीसरी पृथिवीमें उत्कृष्ट कापोतलेश्या और जघन्य नीललेश्या होती है । चौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेश्या होती है । पांत्रची पृथिवीमें उत्कृष्ट नीललेश्या और जघन्य कृष्णलेश्या होती है । छठी पृथिवीमें मध्यम रूप्णलेश्या होती है और सातर्ची पृथिवीमें परमकृष्णलेश्या होती है ॥

प्रथम-पृथिवीभात नारकोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दा जीवसमास, छहों पर्यातियां, छहों अपर्यातियां, दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञ(एं, नरकमति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग चारों बचनयोग, वैकियिककाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह

**१ गो. जो. ५२**९- प्रतिपु ' काउ काउ तह काओ णीलं पीला ये णील किण्हा ये ' इति पाठ: 1

र्च. ३८

नारकलामान्य-असंयतसम्यग्दष्टि अपर्याप्त आलाप.

गु• जी•े प्∶प्रा. सं∘ गे, इं. य	ग, यो, वे, क, झा, संय,	द. हे. म. स. सांज्ञे. आ. उ.
2 2 5 0 8 2 2	१ २ <b>१</b> ४ २ १ इ. बै. मि. न. मति. असं. करमे. अत. 1	३ इ.२१२ १२ २
र स.अ. म. म. म. हिंह हिंह है	करमेः थुतः ।	कन्द का मन्सा संग्लाहा साका. विना छ, आयोग अना अना
	अव	भा-३ अस-

૪૧૬ ]

# १, १. ] संत-परूवणाणुयोगद्दोरे गदि-आलाबवण्णणं [४५७

छण्णाण, असंजम, निष्णि दंसण, दब्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्त, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा <sup>३०</sup>।

तेमिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण कालाकाला-भासलेस्सा, भावेण जहाण्णिया काउलेस्ता, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, तीनों अक्कान और आदिके तीन क्वान इसप्रकार छह क्वान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास रूष्णलेश्या तथा अपर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और गुक्क लेश्यापं, भावसे जघन्य कापोतलेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी गत नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दरों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्याः भव्य-

नं. ३९

and the second s

#### प्रथमपृथिची-नारकसामान्य आलाप.

1	गु,	∫जी∙∣	ч.	मा -	सं.	ग⊷,	<u>₹</u> .	का.	यो.	वि .	क.	লা-	संय ।	द.	ले.	भ.	स∙	संज्ञि.	आ.	उ.
	8	ا ۲	६ प,	१०	8	2	۲.	2	११	9	8	<u>६</u>	१	ર	ब्र.३	२	Ę	২	२	२
1	मि	सं प	६अ.	0		. न.	dite:		म ४	l initia		ज्ञान. ३	अस•			÷		. स	आहा	साका.
ĺ	सा.	स.अ					5	직원	व. ४	1 6 mm		अज्ञ।		विनाः	का	अम.		ſ	अमा.	अमा.
	सम्य.							Í	व २			₹	}		গু.	ন			1	
1	অৰি-	l.		į					का. १	1					मा १		•	1		2
		1	l				ł,			1					কা.		1	i	1	

छक्खंडागमे जीवद्वाणं

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाँ ।

तेसिं चेव अपञज्जाणं भण्णमाणे अस्थि दो गुणड्ढाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपञज्जीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

सिदिक, अभव्यसिदिक; छहाँ सम्यवत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोप-योगी होते हैं।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर--मिथ्यादप्ट और अविरतसम्यग्दप्टि ये दो गुणस्थान, एक संझी अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्यीांप्तयां, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, बैकियिकामिश्र और कार्मण ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कवायें, कुमति, कुश्रुंत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेस्याएं, भावसे जघन्य कापोतलेस्या, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, क्षायें।पशमिक और क्षायिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी होते हैं।

त्रं. ४०

प्रथमप्रथिची-नारक पर्याप्त आलाप.

गु-जिं⊦्ष, शा-	संग्रीग इं∣का योग वेगक.	ज्ञा संय द छे.	म. स.संझि. आ. उ.
8 2 4 20	४ र १ १ ९ १४	९ १ ३ १	२ ६ १ २ २
मि 🔓	में ४ में से से चेर्ये फेंट्रे से	ज्ञा ३ असं 🕞 द	म सं. आहाः : साका.
सा मन्	म हे ब ४ म		अस.   अस.
स. '	ं वे २	∾ भा १	
अ.	<u></u> .	। <sup>/16</sup> का-	

#### र्न. ४१

प्रथमपृथिवी−नारक अपर्याप्त आछाप.

ł	गु.	जी-	पन् प्रा,	सं.	न् ग	इ.	का.	यो.	वे ≀क.	.রা.	संय.	द.	े छे.	भ-	.स.	साज्ञ.	_ आ.	ੁਤ.
1	२	શ્	হ ৩			ेर <b>े</b>	۹.,	્ર	1 8	પ	୍ ୩	3	द्र. २	્ર	3	8	२	२
	मि.	.सं.अ	景		न. '	पंच.	त्रस	वे.मि.	ы÷, '	कुम.	अस	के द	का.	÷	भि-	सं.	आहा.	सग्का.
ł	अवि-		ন্স				:	कार्म.	- <b>T</b>	કુરુ.	İ	विनाः		5	क्षा.		अना.	आना.
		1	ι. 1 <sup>τ</sup>							'লা, ২	:		માન્ય	1	क्षायो.	Į		
											_		े का	:				

846]

संपहि पढम-पुढवि-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णचुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउ-लेस्सा, भवसिद्धिया अभवासिद्धिया, मिच्छत्त, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वजत्ता होति अणागारुवज्जत्ता वा<sup>81</sup>।

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, षव जोग, णत्रुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण

अब प्रथम-पृथिवीं गत मिथ्यादाष्टि नारकोंके आलाप कहने पर-पक मिथ्याद्दष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वच्चनयोग, चैक्रियिककाययोग, चेक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारद्व योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्चु और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास लेक्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और गुक्ल-लेक्याएं, भावसे जघन्य कापोत लेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, संज्ञिक, आहा-रक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं प्रथम-पृथियी-गत मिथ्याद्दष्टि नारकोंके पर्याप्तकाल्टसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादाप्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन,

नं. ४२

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि आलाप.

P	য়, জী	<b>q.</b>	म।	सं -	ग.	₹.	का.	यो	. ē	r.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	) स.	स	संज्ञि	. आ.	उ. ।
	ો રં	Ę	j o f	8	ş	×	9	१	१ १	:[	x	Ę	9	২	इ. ३		٠ १	્ર	્ર	ર
ព្រ	। सं ष	q. '	9		न.	der	<b>b</b>	म.	ی. ک	_,		अज्ञ1	असं •	च.	万.	स.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	.स.अ	Ę		!		-	ন	त्र	א ¦ה	21			1	अच-	का	अम.			अना.	अना-
		अ.	:					त्रे.	રં						शु.		İ		1	
1			1	i	' 		i	का	<u>ع</u>	1				:	) भा १		1		:	ſ
		į	İ		l				:	ĺ					का			I		
		1	1		ι ;		[	:	:			:	l			l	J	l	i i	

कालाकालाभासलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिये।, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup> ।

तेसिं चेव अपझत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णत्रुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा े।

द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेदया, भावसे जघन्य कापोतलेद्याः भव्यसिद्धिक अभव्य-सिद्धिक मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकागेपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत मिथ्यादप्टि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादाप्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुकुलेस्याएं, भावसे जघन्य कापोतलेस्याः भव्य-सिद्धिक, अभव्यासिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

१ प्रतिपु ' अभवसिद्धिया ' इति पाठो नास्ति-

નં. કર્

्राधमप्रथिवी−न(रक मिथ्य(द्दीष्ट्र पर्योप्त आलाप.

13	[]	जी•	<b>प</b> .	সা.	स.	۹ĩ.	इ.	) का.	] यो•	वे	ं क	(ज्ञा.	संय	्र.	। ਲੇ.	भ	स.	्संझि.	आ ।	. उ.
	2	২	<b>ह</b>	90	8	2	१	2	٩	१	×	्र	9	્ર	द्र. १	२:	१	! ર	হ	ર
_[]∓	r. 3	षं प्र				न.	पंचे .	चस,	म. २	ंन.	1	अज्ञा-	अस.	च	衷.	्भ.	मि	् सं •	आहा	साका.
									व. २	۲	1	İ		ं अच	भा १		1	ļ		अना,
	ļ							İ	वे ः	2		ļ	1	i	का	i				
1	1			ĺ		ļ					ļ	•	ļ		1	i				ł

#### नं. ४४

### प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप

गुजी प प्रा. सं. ग. इं. का. यो. वे. क. जा. संय. द. ल. म.स. संजि. अग ত. વુર્દ્હ ૪ શ વે વે ૨ વે ૪ ૨ વે ૨ દ્ર.૨ ૨ ૧ १ : २ R न. प. त्रस. वे. मि जार्म. फि कुम. अस. च. का. म.मि. सं. आहा. साकाः मि 😽 कार्म अच. गु. अ. अना. कुश्र. अना. 'म्र सा १ का

# १, १. ] संत-परूवणाणुयोगदारे गदि-आलाववण्णणं [४६१

सासणसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-चीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंमयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकाला-भासलेस्सा, भावेण जहण्गिया काउलेस्ता; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>33</sup>।

सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्ता; भवसिद्धिया,

प्रथम-पृथिवी-गत सासादनसम्बग्धि नारकोंके आछाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संकाएं, नरकगति, पंत्रेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वच्चनयोग और वैकिथिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास इष्णलेक्ष्या, भावसे जघन्य कापोतलेक्ष्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रथम-पृथिवी-गत सम्यग्मिथ्याद्दप्रि नारकोंके आलाप कहने पर---एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्योप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचोन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञात-मिश्चित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेड्या, भावसे जवन्य कापोतलेड्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व,

### प्रथमपृथिवी-नारक सासादनसम्यग्दष्टि आलाप.

गु.जी. प.प्रा. सं. ग. इं. का. यो. वे.क.ज्ञा. संय. द छे. स. स. संज्ञि. आ. इ. १ १ ६ ९०४ १ ९ १ ९ १ ४ ३ १ २ छ.९ १ १ १ **१ १** २ सा.सं.प. न. पंर्येग् त्रस. स.४ के अज्ञा. असं. च क. स. सं. आहा. साका. व.४ प अच. सा १ हि

नं ४' ।

सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ल</sup> । असंजदसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपज्ञत्तीओ, दस पाग सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेम्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाँ ।

संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रधम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दधि नारकोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्य-ग्दष्टि गुणस्थान, संब्री-पर्याप्त और संब्री-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, लहों पर्याप्तियां और लहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों संब्राएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ब्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, दृब्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास रूष्णलेश्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और गुक्ललेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपशमिक क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

न. ४६

प्रथमपृथिवी-नारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि आलाप.

। ग्र	ाजी प	श्रा ,	सं.	ग	इं.	का.	योग	वे.	] क -	হ্বা-	संय	द.	ਲੇ.	ਸ.	स.	संग्रज्ञ ,	আ.	<u>उ</u>
2	१ ह	٩٥	۲	શ	2	र	९	ং	8	३	8	ર	द. १	۶	<u>१</u>	۶.	۶,	ર
	सं.प.			न •	पंचे -	त्रस.	म. ४		ļ	ज्ञान.	अस	च.	穷.	्भ.	सम्य.	स	आहा	साका-
IE	सं.प.					ĺ	a. ४		Í	' अज्ञा.			मा. १	i				अनाः
~						1	<b>ä.</b> १			मिश्र			का.					
	J					i			1				:	:				ļ

#### ર્ન. ૪૭

प्रथमपृथिवी−नारक असंयतसम्यग्दष्टि सामान्य आलाप.

. गु	जी.	j <b>q</b> .	मा.	सं.	ग.	Ę.	का	यो.	त्रे	क.	<b>ॹ</b> ।	संग.	ढ.	रु	भ. <u>स</u>	. सं	ज्ञि.	31.	J.
1	-	6 m		$\checkmark$			•		4	<i>v</i>	3	,	3	ति ३ -		3	9	२	ર
10	सं.प,	६ अ.	6		न.	पंचे.	नस.	म. ४	5		मात.	अस.	कद.	। इ <b>.</b>	ন.্জ	्र	<b>त∙</b>	आहा.	साका. अना.
त्	.सं.अ						; ·									[• =>		জন 🖕	জন।,
	1		ן 1	!				व. २			अव.			্যু.	्क्षार	41.	i		
	i	:	ſ				:	का र						भा र					
	1	1	İ	:		i								का.		:			

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दुच्वेण काला-काल(भासलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्ध।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-मुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दष्टि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अचिरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संशी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्गां प्राण, चार्गे संझाएं, नरकगति, पंचेद्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वेकियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालकालामाल इष्णलेक्या, भावले जघन्य कापोतलेक्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, झायिक और झायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्य, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दष्टि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नषुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेस्याएं, भावसे जघन्य कापोतलेस्या, अह्यासिद्धिक, उप-शमसम्यत्वके विना क्षायिक और क्षायोग्शनिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, आहारक;

मे. ४८

8, 8.]

प्रथमपृथियी~नारक असंयतसम्यग्दाष्ट्रि पर्याप्त आलाप.

1 गु	जी.	٩.	त्रा सं	ग.	इ.	का.	यो.	वे क	লা.	संय.	द.	· 8.	ंभ.	स.	संज्ञि.	भा.	ਤ.
1	र सं.	Ę	<b>१</b> ० ४	१ न.	2	े <b>१</b>	<b>९</b> म. ४	१४ न.:	् मति.	१ असं.	्रे के. ट	्रद्र, <b>१</b> . ज	ं १ भ	<b>द</b> ओ	् १ . सं	र आगहा	२   साका.
জাট	स. पं.			-	đ	नम		ļ	3		त्रिना	· .•11• 3		્યા	:	aldit	अना
			, i				वॅ. १	!	अव.			का.	:	क्षायो. !			

सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांी।

विदियाए पुढत्रीए णेरइयाणं मण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, दो जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरय-गदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्गिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

### साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संशी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ आपर्याप्तियां, दशौं प्राण, सात प्राण: चारों संशाएं, नाकगति, पंत्रेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकियिककाययोग, चैकियिकमिश्रकाययोग और कार्भणकाययोग ये ग्यारद योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास छण्णलेदया तथा अपयोप्त अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्क लेदयाएं, भावसे मध्यम कापोतलेदया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक स्थायिक सम्यवत्वके चिना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

#### न. ४९

### प्रथमपृथिची−नारक असंयतसम्यद्दष्टि अपर्याप्त आलाप

] गु.	⁺ जी.	ч.	্য সাদ্ধ	र्स .	ग.	<b>*</b> .:	काः योः	व.	क झा.	। संय-	द.	हे.	म ∣	_ स.	संजि.	- আ	<u>उ</u>
1		Ę	৩	8	₹ :	8	<b>१</b> ्२	۶	∀ે <b>ર</b>	۲.	ંર્	द्र. २	χ.	ર	ંશ્	ર	ર
अवि	ंस अ	अप्.			न	i	वे मि	न.	मति	अस	के द	का छ.	भ⊶	क्षाः	सं.	आहाः	साका,
						4	र्षि काम	:	्रथुत.	:	विना	भा. १		क्षाया		अनाः	अन्।
	1								अव.	:		का.			1		
1			: 1		÷ .			1							1	:	

#### नं. ५०

#### \_ द्वितीयपृथिची−नारक सामान्य आलाप.

। गु.	ं जी -	ं प.	्रमाः	. सं.	ग.	इं.क	े यो		वे	Ф.	জা,	। संय	. α.	ਲੇ.	्म,	. स.	<sub>।</sub> संझि	ঞ্জা-	র.
8	્ર	Ę	20	¥	۶,	8 8	2 8	Ê.	۶	8	Ę		<b>3</b> .	त्र, ३	्र	4	٤ (	ર	ર
ांग.	सं प	ч.	ون		न,	र्म त.	ं म	X	न,		अञ्च।,	३ असं.	ेके द	も	ंग.	आ	.स.	आहा	साका,
स.	सं.अ	Ę					व.	8 :			ह्यान.	হ	विना.	का.	अ.	क्षायो.		अन्।	জন্য.
सम्य.		अ.			:	i	वे.	<b>ર</b> '	:				i	হা.	i i	मि.			
. अ.	•						কা.	٤ :	1			:		भा. १		सासा-			
ļ	1	:	:	:		i	i	:		-				<b>む</b> 15		'सम्य.			

₹, ₹. ]

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्दाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्गाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण काला-कालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्म-त्ताणि, सण्णिणो, आदारिणो, मागल्वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेंसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दे। अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके चार गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीयसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अञ्चान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिक नीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास ऋष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भन्यसिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; क्षायिकसम्यक्ष्वके विना पांच सम्यवस्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्भणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्ललेप्र्याएं, भावसे मध्यम कापोतलेप्र्या, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और

द्वितीयपृथििवी∽नारक पर्याप्त आलाप.

गु.	ज <u>ी</u>	<u>і</u> ч	्रमाः	। स	ग-	इं.	का,	या_	वे.	क	्रज्ञा.	संय.	द.	ੁ ਲ	<u> </u> म.	्स.	सं ज्ञि	आ.	उ	ı
X	े १	<u> </u> ह	20	8	1 8	9	1	<u>م</u>	9	૪	िं ६	হ	्र २	द्र. १	२	4	8	8	२	
ूंमि.	i si		1	<u> </u>	न	 	انت ا	म.४	I trive		(ज्ञा. ३	अ सं .	के द.	<b>.</b>	स.	मि.	सं.	आहा	साका.	ĺ
ुंसा.		1				Б	ने	म.४ व.४	নি		अज्ञा २		विना.	मा १	अ	सासा.	   .		अना-	
्स.		]	i.	l İ			i	व १	i			1 L		का.	;	सम्य.				ŀ
अ.		İ				 				ı						औप.				
	ļ					İ					i				]	क्षायो.	ļ			

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा, भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा

अनाकारोपयोगी होते हैं।

दितीय पृथिबी गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर---- एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संक्री-पर्याप्त और संक्री-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संक्राएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारद्व योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, तीनों अक्रान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालासास रूष्णलेश्या तथा कापोत और गुक्ल लेक्याप, भावसे मध्यम कापीतलेश्या, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्य, संक्रिक, आदारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

त्रं ५२

द्वितीयपृथिवी-नारक अपर्याप्त आलाप.

	, मि	१ ह	0 8 8	2 2	$\frac{\mathbf{i}}{\mathbf{z}} = \frac{\mathbf{a}}{\mathbf{z}}$ $\mathbf{a}$ $\mathbf{a}$ $\mathbf{h}$ $\mathbf{h}$ $\mathbf{h}$	<u>४</u> २	र २ असं चक्षु	द्र <b>.२</b> का.	भ.मि अ	Z	জা. ২ আहा. अनाः	<u>उ.</u> र साका अना.
--	---------	-----	-------	-----	--	------------	------------------	----------------------	-----------	---	--------------------------	--------------------------------

#### नं. ५३

द्वितीयपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि सामान्य आलाप.

1 गु	ंजी.	प.	त्रा.	सं	ग.	<b>; ;</b> .	কা.	য	•1Í	वे.	क.	। ज्ञा.	संय.	द.	<u>र</u> े.	ं भ	्स.	. संज्ञि	ं आ	उ.	ł
1	12	ક્	१०	8	Ł	१	হ	2	8	1	8	R	3	ર	द्र, २	2	2	่า	ંસ્	્ર	l
मि	. स	٩.	9		न.	٩.	त्रस.	म	8	6-0		अज्ञा,	अस.	चक्षु-	क.	भ.	मि.	. सं.	आहा.	साका-	
ł	÷.	इ						व.		15		1		अ <b>च</b> ,	কা, যু,	अ	i I		अना	अनाः	ł
Ì		अ.	:					ं बे	२			1			मा २			•			ļ
	H,			j			ŀ	का	2						का-	ļ		;			I.

¥६६ ]

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पजात्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जाग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काला-कालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण मज्झिमा काउलेस्साः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं दितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादपि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादपि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संझाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रब्यसे कालाकालाभास रूष्णलेख्या, भावसे मध्यम कापोत-लेक्ष्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादाष्टि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अच्छ ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और द्युक्ठलेश्याएं, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भन्य-

ने 🖓

2. 2. ]

# हितीयपृथिवी−नारक मिथ्यादष्टि पर्याप्त आलाप.

∣ग्यः। जी⊷ प.	प्रा.स.ग.इ.	का. यो.	वे, क. इ	ग संय.	द, ल, म	स. संहित	आ.	ਤ.
	20 8 2 2	१९	<b>१</b> ४		२ इ. १ २	१ १	2	२
मि.स.प.	न पंचे.			ज्ञा अस	च. क. म.	मि स.	आहा.	साका.
	:	व. ४	ोस्टः २ २ २	· 3	अच. मा १,अ.			अना.
		वे र			का.		ł	
			:			· · ·		

8६८ ]

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णबुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्गाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्स<sup>1</sup>, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा<sup>33</sup>।

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यास्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

दितीय-पृथिवी गत सासःदनसम्यग्टि नःरकोंके आछाप कहने पर-एक सासादन गुण-स्थान, एक संश्री-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संश्राएं, नरकगति, पंचे-न्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये नौ योग, नपुं-सकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दें। दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संग्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ત્રં. ૬૬

द्वितीयपृथिवी−नारक मिथ्याद्दष्टि अपर्याप्त आळाप.

। ग्रे	जी.	प-	<b>ял.</b> ]	स.	) ग.	₹.	] का.	यो.	ं वे -	] क.	े झा.	(संय	द	ਲੇ.	स.	स.	¦संज्ञि	_ আ.	ੁ ਤ.
1	<b>१</b> .सं.	Ę	9	x	2	१ पंचे.	१	२   चैकि	\$	8	२	ع ئىتد	२ चक्षुः	द्र. २ का.	2	्रे गिर	<u>ع</u> بن	२	२
1144	.स. अ	अप.			<b>4</b> .	44.	101	वे.मि. कार्म	Ę,		उप्प कुश्रु		्षजुः अचक्षु,	1	म अ	(4.	4.	आहा. अना	साका. अना
												ļ		भा १ का					

#### नं. ५६

द्वितीयपृथिवी⊸नारक सालादनसम्यग्दष्टि आलाप.

गुर्जी प. प्रा	संग इंका	यो। वे क ज्ञा	। संय द हे. २	न-'स.संज्ञि. आ. उ	- 1
2 2 8 8 20		९ ११४ ३			
सा. ह	न.	म ४. 🚊 अज्ञा	असंग्विक्षु कृम अच.मार	. 🛱 सं. आहा. साब	
		∃a, ४, ••	ं अच्च भा १	। 🗄 🔰 👘 अन	f. I
<b>' '</b>		A		- FF	· ·
्रम् । जन्म		<b>A</b> .		- FF	• •

8, 8.]

सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ञ-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिमा-काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां ।

असंजदसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णबुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्ता, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा दो

दितीय-पृथिवी-गत सम्यग्मिथ्यादष्टि नारकोंके आलाप कहने पर---- एक सम्यग्मिथ्यास्व गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगाति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाय-योग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानमिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यले कालाकालाभास रूष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोत-लेश्या, भव्यसिद्धिक, सम्याग्मिश्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

द्वितीय-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दाष्टि नारकोंके आलाप कहने पर--एक अविरत-सम्यग्दाप्ट गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहौं पर्याप्तियां, दशौं प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकि-यिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे कालाकालाभास रूष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक,

A. 40

हितीयम्थिवी-नारक सम्यग्निध्यादृष्टि आलाप.

गु	্র্গী-	प	я <b>т.</b> !	सं∙्	गः ।	हं का	. य	ñ.	त्रे.	'年	হী।	. संय	द.	हे.	: <b>भ</b> •¦	स.	साज्ञ	া আ	ਂ ਰ.
			10									-		द्र, १			8	2	्र
	.सं. प		i	l	न ंत	ज न	ं स	٤.	1-2		ৱান,	अ.सं.	च∙	Ŧ	्म ।	सम्य.	सं.	आहा.	साका अनाका
۱÷		1	. i	I.	Ξ.	সাঁ স ।	्य.	8	٦I	÷	२		अच.	भा १	i		ţ	i	अनाका.
			' i			:	व	۲.		÷	अज्ञा∙ '			ন্য.					:
	<u> </u>	1	i	Ì	j						मिथ.		!	 	i			Į	į

800]

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

एवं तदिय-पुढवि-आदि जाव सत्तम-पुढवि त्ति चदुण्हं गुणट्ठाणाणमालाशे वत्तच्यो। णवरि विसेसो तदियाए णवण्हं इंदयाणं मज्झे उवरिम अद्वसु इंदएसु उक्कस्सिया काउलेस्सा भवदि। हेट्टिमए णवमे इंदए केसिंचि जीवाणमुक्कस्सिया काउलेस्सा केसिंचि जहण्णिया णीललेस्सा । कुदो ? जहण्णुक्कस्स-णलि-काउलेस्साणं सत्त-सागरोवम-काल-णिदेसादो । तेण तदिय-पुढवीए उक्कास्सिया काउलेस्सा जहण्णिया णीललेस्सा च वत्तच्वा। चउत्थीए पुढवीए मज्झिमा णीललेस्सा। पंचमीए पुढवीए चउण्डमुवरिम-इंदयाणं उक्कस्तिया णीललेस्सा चेव भवदि । पंचए उक्कस्तिया णीललेस्सा जहण्णा किण्हलेस्सा च भवदि । कुदो ? जहण्णुक्कस्स-किण्ह-णीललेस्साणं सत्तारस-सागरोवम-काल-णिदेसादो ।

क्षायिकसम्यक्तवके विना औपदामिक और क्षायोगदामिक ये दो सम्यक्तव, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकार तृतीय-पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक नारकियोंमे चारों गुणस्थानेंके आलाप कहना चाहिये । इतनी विरोषता है कि तृतीय पृथिवीके नौ इन्द्रक बिलोंमेंसे ऊपरके आठ इन्द्रक बिलोंमें उत्क्रप्ट कापोतलेक्ष्या होती है और नीचेके नौवें इन्द्रक बिलेमें कितने ही नारकी जीवोंके उत्क्रप्ट कापोतलेक्ष्या होती है, तथा कितने ही नारकोंके जघन्य नीललेक्ष्या होती है, क्योंकि, जघन्य नीललेक्ष्या और उत्क्रप्ट कापोतलेक्ष्याक्ष सागरोपम स्थितिका आगममें निर्देश है। अतएव तीसरी पृथिवीके नौवें इन्द्रक बिलमें ही उत्कुप्ट कापोत और जघन्य नीललेक्ष्या बन सकती है। इसप्रकार तृतीय पृथिवीमें उत्क्रप्ट कापोतलेक्ष्या और जघन्य नीललेक्ष्या कहना चाहिए। चौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेक्ष्या है। पांचवीं पृथिवीके पांच इन्द्रक बिलोंमें उत्क्रप्ट कार्यातलेक्ष्या है। इत्स्रकार तृतीय पृथिवीमें उत्क्रप्ट और पांचवें इन्द्रक बिलमें उत्क्रप्ट नीललेक्ष्या कहना चाहिए। चौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेक्ष्या है। और पांचवें इन्द्रक बिलमें उत्क्रप्ट नीललेक्ष्या तथा जघन्य कृष्णलेक्ष्या ही, क्योंकि, जघन्य कुष्णलेक्ष्या और उत्क्रप्ट नीललेक्ष्याका आगममें सत्नह सागरप्रमाण कालका निर्देश किया

र्च. ५८

### द्वितीयपृथिवी-नारक असंयतसम्यग्टांधे आलाप.

] गु. जी. प. प्रा. सं. ग. इ. का. यो. के क. झा संय द. ले. भ	सः संझिः, आः ∤उः ∣
<b>1 2 5 8 8 8 8 8 8 8 8 8 8</b>	
अवि संपर्ं न पंचे त्रस म ४ 🚔 मति. असं के द. क. भ.	
	क्षायोः अनाः
विग् अव. का	

एदाओ दो लेस्साओ पंचम-पुढवी-णेरइयाणं भवंति। छद्वीए पुढवीए णेरइयाणं मज्झिम-किण्हलेस्सा भवदि । सत्तमीए पुढवीए णेरइयाणं उक्कस्सिया किण्हलेस्सा भवदि ।

तिरिक्खगईए तिरिक्खाणं भण्णमाणे तिरिक्खा पंचविधा भवंति, तिरिक्खा पंचिं दियतिरिक्खा पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्ता पंचिंदियतिरिक्खजोणिणी पंचिंदियतिरिक्खअपजजत्ता चेदि । तत्थ तिरिक्खाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्ठाणाणि, चोदस जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपजत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपजत्तीओ चत्तारि पजत्तीओ चत्तारि अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण नत्तारा पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्ताय, एगारह जोग, तिणि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दच्य-भावेहिं छ ठेस्सा, भवसिद्धिया अववसिद्धिया, छ सम्मत्ताणि, साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणे अणाहारिणो, सागारु-

गया है। अतपत्र पांचयी पृथियांके पांचयें इन्द्रक बिलमें ही उत्कृप्ट नीललेक्ष्या और जघन्य रुष्णलेक्ष्या बन सकती है। इसप्रकार ये दोनों ही लेक्ष्याएं पांचर्वी पृथिवीके नारकी जीवोंके होती हैं। छठी पृथिवीके नारकोंके मध्यम रुष्णलेक्ष्या होती है। सातवीं पृथिवीके नारकोंके उत्कृप्ट रुष्णलेक्ष्या होती है।

### इसमकार नरकगतिके आछाप समाप्त हुए।

अब तिर्यंचगतिके आलापोंको कहते हैं। तिर्यंच पांच प्रकारके होते हैं, १ तिर्यंच, १ पंचेन्द्रिय तिर्यंच, ३ पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच, ४ पंचेन्द्रिय योनिमती तिर्यंच, और ५ पंचेन्द्रिय लध्ध्यपर्याप्त तिर्यंच, ३ इनमॅसे सामान्य तिर्यंचोंके आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संझीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंझी और विकल्प्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; संझी पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके दशों प्राण, सात प्राण; असंझी पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके नौ प्राण, सात प्राण; चतुरिन्द्रिय जीवोंके दशों प्राण, सात प्राण; असंझी पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके नौ प्राण, सात प्राण; चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, छह प्राण: त्रीन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, पांच प्राण; ईान्द्रिय जीवोंके छह प्राण, चार प्राण; और एकेन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, तीन प्राण; इमन्द्रा जीवोंके छह प्राण, चार प्राण; और एकेन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, तीन प्राण; क्षमद्दा पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयींग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों बेद, चारों कषाय, तीनों अझान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम और देश-संयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेड्या, भन्दासिद्विक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्रिक, असंक्रिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी ১০১ ]

वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा 🐩 ।

तेसिं<sup>®</sup> चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओं पंच पज्जत्तीओं चत्तारि पज्जत्तीओं, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिकखगई, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काया, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, दो संजम,

और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों सामान्य तिर्थचोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके पांच गुण-स्थान, पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास, संझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्थचोंके छहों पर्याप्तियां, असंझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय तिर्थचोंके पांच पर्याप्तियां. एकेन्द्रिय पर्याप्त तिर्थचोंके चार पर्याप्तियां, संझी पंचेन्द्रियोंके दशों प्राण, असंझी पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, लॉन्द्रिय जीबोंके सात प्राण, डीन्द्रिय जीवोंके छह प्राण और एकोन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, लॉन्द्रिय जीबोंके सात प्राण, डीन्द्रिय जीवोंके छह प्राण और एकोन्द्रिय जीवोंके चार प्राण होते हैं। चारों संझाएं, तिर्थचगति, एकेन्द्रियादि पांचों जातियां, पृधिवीकायादि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों चेद, चारों कपाय, तीनों अझान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम, और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्य-

**ને**. '48,

सामान्य तिर्यंचोंके आलाप.

। यु⊶्जी•	ष	्रा.्.स.	ग. इ.	का यो	वे. क	ज्ञा. संय.	ंद, हे	. ( <i>म.</i> स.	संझि.	्ञा. उ.	ŧ
							₹ <b>₹</b> ,				-
मि ं	६ अ.	९,७	ति 👘	म. ४	ן יו אַן א	त्र ३¦असं-	केद मा	. ६ ं म.	सं.	आहा. साका	
स्य 💡	ષ પ્રા	, ₹		व. ४		अ.३ देश	्विनाः	ાગ	असं.	अना अन्त.	
स.	પ અ.	بەر ق		) औ. २	i . I			ķ			
अ.	४ प.	<b>६,</b> ४		कार्म, 1							
દેશ.	४ अ.	א,₹					·	1 1	'		
		i	.		i			!	 		_

नं. ६०

### सामान्य तिर्यंचेंके पर्याप्त आलाप.

1 2.	जी	्ष.	मा-	सं ग	इ.	का	यो.	∣वे -	雨.	ज्ञा.	सय.	द	ð.	म.	सं	सं झि	ાર છે.	_S.
4	9	Ę	20	8 2	4	ह	٩	३	8		२		द-६	२	ि	२	१	े २
मि	पर्याः ।	4	8	ति.			म. ४	1		ज्ञान, २				÷.		. सं.	'आहा	संकाः
सा.	1	8	6			2	ਥ. ੪		ł	अज्ञा₄३	देश.	विनाः		म		असं.		अना-
सम्य.	!		0			!!	ઔ. ૧	İ						জি				
अवि.			<b>६</b>															
देश.	}		8			1	ļ		1			{ 	<u> </u>				[	

तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंति ।

तेसिं चेत्र अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छ काया, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंग-णाणेण विणा पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील काउलेस्साओ। कि कारणं ? जेण तेउ-पम्मलेस्सिया वि देवा तिरिक्खे-सुप्पज्जमाणा णियमेण णट्ठ लेस्सा भवंति ति। भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं खइयसम्मत्तं कदकरणिऊं पडुच वेदगसम्मत्तं एवं चत्तारि सम्मत्तं,

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यक्त्व, संक्षिक, अतंक्षिकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य तिर्थचोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--मिथ्याद्दष्टि सासादनसम्यग्दप्टि और अविरतसम्यग्दप्टि ये तीन गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सातों जीव-समास, संशी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तोंके ल्हों अपर्याप्तियां, असंशी पंचेन्द्रियों और विकल्लबर्योंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संशी पंचेन्द्रियोंके सात प्राण, असंशी पंचेन्द्रियोंके सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके ल्ह प्राण, त्रान्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके तीन प्राण होते हैं। चारों संशाएं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि लहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिक्षानके विना पांच झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्धलेख्याएं, भावसे रूष्ण नील और काप्तेत लेक्याएं, होती हैं।

र्शका — सामान्य तिर्यंचौंके अपर्याप्तकालमें तीनों अग्रुभ लेक्याएं ही क्यों होती हैं?

समाधान — क्योंकि, तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावाले भी देव यदि तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते हैं तो नियमसे उनकी ग्रुभलेश्याएं नष्ट हो जाती हैं, इसलिये तिर्यंचोंकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन अग्रुभ लेश्याएं ही होती हैं।

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिकमम्यक्त्व और इतकृत्यकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व इस प्रकार चार सम्यक्त्व, संक्षिक, सण्मिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"।

संपहि तिरिक्ख-मिच्छाइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पजात्तीओ छ अपजात्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपजातीओ चत्तारि पजातीओ चत्तारि अपजातीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काया, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ

असंबिकः आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अब तिर्यंच मिथ्यादाष्ट जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर — एक मिथ्यादाष्ट गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संझी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याध्तियां; असंझी पंचेन्द्रियों और विकल्डत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: संझी पंचेन्द्रियोंके दश प्राण और सात प्राण, असंझी पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण और सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके अठ प्राण और सात प्राण, जीन्द्रियोंके सात प्राण और पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके छह प्राण और चार प्राण, पकेन्द्रियोंके सात प्राण और पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके छह प्राण और चार प्राण, पकेन्द्रियोंके चार प्राण और तीन प्राण कमशाः पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थामें होते हैं। चारों संझाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय जाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कघाय, तीनों अझान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे

नं: ६१

सामान्य तिर्यचौंके अपर्याप्त आलाप.

<u>ग. जी. प. प्रा. सं. ग. इं. का</u> ३ ७ ६अ. ७ ४ १ ५ ६ मि. अ.प. ५,, ७ ति. सा. ४,, ६ अत्रि. ४	- यो. वे. क. ज्ञा. संय. २ ३ ४ ५ ९ ओ.मि. इ.म. असं. व कार्म. कुभु. मति. स्रुत. स्रव.	द. <u>के.</u> स. स. संज्ञि. आ. <u>उ.</u> ३ द. २ २ ४ २ २ २ के. द. का. हं भि सं. आहा. साका 
---	--	--

नं. ६२

### सामान्य तिर्यंच मिथ्यादष्टि जीवॉके आलाप.

			_ '	· · · · · · · · · · · · · · · · ·	` ``	· · · · · ·	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·			্ঞা, 🐷 📊
		10,0	४ १	4 8	<b>१</b> १ ं <b>२</b>	_ <b>צ</b> ! ₹_	१ २	द्र ६   २	१. २	२ <sup>†</sup> २ <sup>¯</sup>
मि	६ अ.	९,७	์สิ.	E E	1. X 🔬		अस च	माः ६! म∙	मि. सं.	आहा. साका
	५ष-	۶, ۶		ंच	r, X		অব্য			अना. अना.
1	५ अ	0,4	ł	ुः उ	<b>प्रौ</b> ग्२ ।				:	r i
	૪૧.	६,४	i	ंब	ज. १				:	
	∣ ૪૩૧.	¥,₹	1			:			:	
		. !	;						:	: I

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पड्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एवं गुणद्दाणं, सत्त जीवसमासा, छ पड्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्द पाण सत्त पाण छप्पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छकाय, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्व्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो. सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्दाणं, सत्त जीवसमासा, छ

छहों लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अ<mark>नाहारक;</mark> साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य तिर्यंच मिथ्याद्दष्टि जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाप्टे गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलवयोंके पांच पर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां: संज्ञीके दशों प्राण, असंज्ञीके और विकलवयोंके पांच पर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां: संज्ञीके दशों प्राण, असंज्ञीके मां प्राण, चतुर्रान्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, त्रीन्द्रिय जीवेंकि सात प्राण, द्रान्द्रिय जीवेंकि छह प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, त्रीन्द्रिय जीवेंकि सात प्राण, द्रान्द्रिय जीवेंकि छह प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राण: चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकायादि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाय-योग ये नौ योग: तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चञ्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक: आहारक, साकागोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याकालसंबन्धी आलाप कहने पर----एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सातें जीवसमास, संझीके छहाँ अपर्याप्तियां,

नं. ६३

सामान्य तिर्यन्न मिथ्याहाप्रे जीवांके पर्याप्त आलाप.

र मि	 Ę	90	8	ग १ रि	··	ધ		7	 <b>२</b>	2	્ર	12	् ग्रि	٦.	र आहा.	<u>उ.</u> २ साका. अना.	
	į	ية 18					VII • 1				:						

अपज्जत्तीओ पंच अपजत्तीओं चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>क</sup>।

तिरिक्ख-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपड्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, षंचिंदियजादी, तसकाओ, एमारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

असंक्री और विकलत्रयोंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संक्रीके सात प्राण, असंक्रीके सात प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके छह प्राण, त्रीन्द्रिय जीवोंके पांच प्राण, द्रीन्द्रिय जीवोंके चार प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके तीन प्राण; चारों संक्राएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाय-योग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, च स और अचक्ष ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे रूष्ण, नील, और कार्पात लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्टपि जीवेंकि ओघालाप कहने पर-एक सासादन-गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याच्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दर्शों प्राण, सात प्राण, चार्रो संज्ञाएं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चार्रो वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये ग्यारद्द योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और

नं. ६४

### सामान्य तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

] गु.	जी.	<u>प.</u>	त्रा.	सं.	ग.	¥.,	का.	यो.	वे.	क,	লা.	्रेंग.	द.	ले.	<b>भ.</b> ∣स.	संजि.	জা.	उ.
3		६ अप						2		่ช	र	3	২	द्र. २	ेर र	્ર	२	ર
मि⊦	अप.	8.55	৩		ति₊ ;			औ,मि	İ		कुम.	असं.	च.	का.	म.मि.	सं.	आहा.	साका.
		8 ,,	Ę					कार्म.			કુશ્ર.	:	अच.	जु.		असं •	अन्।	अना.
•			4			į		!	İ	ļ	-		i	भा ३	I			
		i	8		i									<b>ઝ</b> શુ.	:			
	i 		₹		ļ	,				:			· .		1 1	i	í	

898 ]

असंजम, दो दंसण, दुव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ल</sup>।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तिसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागास्वजुत्ता होति अणा-गास्वजुत्ता वा

अचक्त ये दे। दर्शन, द्रध्य और भावसे छद्दों लेक्यापं, भन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्स्थ, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्दाप्टे जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगाति, पंचेन्द्रियजाति, बसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचधु ये दो दर्शन, दृव्य और भावसे छहों लेक्याएं. भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्स्य संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

# नं. ६७ सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्दष्टि जीवांके सामान्य आलाप.

ग.जी. प. ग्रांसेग. इं. का. यो. वे. क. ज्ञा. संय. द. छे. भ. स. संझि. आ. उ. १ २ ६प. १० ४ १ १ १ १ ३ ४ ३ १ २ इ.६ १ १ १ २ २ सा.सं.प.६अ. ७ ति पंचे. त्रस. स.४ अज्ञा. असं. चथु. भा.६ म. ई्सासा. सं. आहा. साका. सं.अ. व.४ अच. ओ.२ का.१

# नं ६६ सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्दीष्ट जीवेंकि पर्याप्त आलाप.

गु.  जी- [	प	प्रा.	सं,	ग.	इ.	का.	यो	वे.	क.	<b>রা</b> .	संय.	Ζ.	ਰੋ.		सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
2 2	Ę	20	۲	٤	2	१ १ है	3	३	۲	ર	१	ર	द्र. ६	8	?	र	१	२
सा संप.				ति.	पंचे.	न्नस.	म. ४			अझा.	असं.	चक्षु.	भा ६	म.	Ē	. सं.	आहा.	साकाः अना-
		۱ I					ষ্४			:		अच.			सार			अना.
			 		l		औ. १	ļ		İ	ł		i					
		ĺ	!		<b>,</b>	!				1	ļ							( )

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-हेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया, सासणयम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तिरिक्स-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवममासो, छ पज्रचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिष्णि णाण तीहि अण्णाणेहि भिस्माणि, असंजम, दो दंसण, दव्य-भावहि छ लेम्सा, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणा,

उन्हों सामान्य तिर्थच सासादनसम्यम्हाए जीवींके अपर्याप्तकाळसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थाान. एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवलमास. छहाँ अपर्याप्तियां. सात प्राण, चारों संद्राएं. तिर्थचगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, तसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग यें दो योग. तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यमे कार्पात और ठाकु लेखा. भावसे छप्ण. नील और कापोत लेदयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सामान्य तिर्यंच सम्याग्मध्यादाष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-एक सम्याग्मध्यादाष्ट्र गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां. दशों प्राण. चारों संज्ञाएं. तिर्यंच-गति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय. चारों मनोयोग, चार्गे वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिथित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये देा दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिध्याख,

नं. ६७

----- · · · · ·

# सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्दष्टि जीवेंकि अपर्याप्त आलाप

1	y.	जी-	ष.	म <u>ा</u> .	सं.	ग	<b>s</b> .	का.	यो.	· jē	र्ग, क.	ল্ঞা.	संय.	द.	ਲੇ.	भ	स.	संझि.	্ঞা	उ.
	٩	र	ह	\$	8	٤:	۶ !	२	ર	Ę	8.8	২্	۲.	२	द. २	۶.	2	2	ર	
ł	सा.	सं अ	अप.			ति 🖓	(mar. 1	ایتا	आ मि			कृम⊸	असं ः	चथु.	का जु.	म.	साखा-	. सं	आह्य-	साका. अना
		I					4	1	काम .			<b></b> 꽃성.	· ;	अच.	ं भा, २				अनाः	अना
1				:		· ·				÷		-			- সন্থ					
		Į.	<u>ا</u> .							•	i		•		I				i	i L

१, १.]

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तिरिक्स-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणट्टाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपज्जन्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तक्षकाओ, एगारह जोग, तिथ्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, मवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

संजिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सामान्य तिर्थच असंयतसम्यग्दष्टि जीवेंकि सामान्य आलाप कद्दने पर-एक अविरत-मम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां. दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्थचगाति, पंचेन्द्रियजाति, इसकाय, चारों मनोयोग. चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाथयोग ये ग्यारह योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और सायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्यः संज्ञिक, आहारक, जनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोग होते हैं।

#### र्च ६८

# सामान्य तिर्यंच सम्याभिथ्यादृष्टि जीवॉंके आलाग.

∣ गुन् जीन्तम ं प्रान्सन् ग	ान् इंग् ∣काग्र्योग	ेवे. क₁्झा, ॑संय	¦द.∣ ले. ृ∓	न.∣स. संझि.	अ। ।	उ. <sub>1</sub>
8 8 8 8 8 8		२४२ १	२ द.६	१ १ १	2	ર
हा सं.प.	, पंचे- त्रस. म.४	ज्ञान अस	च. भा ६ भ	न सम्य से 🗍	आहा. !	साका ।
Ê.	व.४	२	अ			अना.
					i	
		<sup>।</sup> मिश्र				

# नं ६९ सामान्य तिर्यंच असंयतसम्यग्हाष्ट जीवोंके सामान्य आलाप.

	ŋ.	जी∙ृंप	•ेत्राः सं ्	ग.इं.	का यो	वे.क.झा.	संय दः	छे.ं स⊹ स	. संझि. आ.	। ਤ. <sub>1</sub>
	Ś.	<b>१</b> ं६ ————	10.8	११	8 88	રંજ ર	ং হ র	र.६ १ ३	્ર ર	२
¢	<u>.</u>	स∘प प	<sup>א</sup> , ש	त. पच-	्त्रस. म.४	। मोते।	'असंगके द्वा २०००	ना ६ म. अ	१, २ . सं. आहा. अना.	साका.
ľ	? ,	ू अ	1		⊣ अँरि ⊤ औरि		। विना-	् क्षा आय		अনা.
					ंका. १			ধাত	<b>(</b> 1-	

860]

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवासिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>°°</sup> ।

तेसिं चेव अपछत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, छ अंपछत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दुव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो

उन्हीं सामान्य तिर्यंच असंयतसम्यग्दाष्ट्र जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अचिरतसम्यग्दाष्ट्रि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेखाएं, भव्यसिद्धिक, औपर्शामक, झायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यवत्वः संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सामान्य तिर्थंच असंयतसम्यग्टाप्टे जीवोंके अपर्याप्तकाल्ठसंबन्धी आलाप कहन पर---एक अचिरतसम्यग्द्राप्टे गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, तिर्यचगाति, पंचेन्द्रियजाति, चसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्रु लेस्या, भावसे जघन्य कापोतलेस्या; भव्य-सिद्धिक, उपश्चमसम्यक्त्वके घिना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व होते हैं।

र्च. ७०

सामान्य तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आछाप.

IJ.	जी.	प.	) प्राः सं	ंग.	इं.	का,	यो.	ं <b>वे</b> ,ंक	្ត តា	् संय.	द. ले.	मः स.	संझि, आ	ੇਤ.
1	· ·	Ę	1 S 0. R				\$	ર ૪		2	३ द.६	१ द	<b>१</b> १	्र
ल मु	<u>स</u> . प.		İ .	<sup> </sup> ति.	<b>प</b> चे	त्रस	म. ४ ब. ४	:	ुम]त श्रत		क.द.ःमाः६ विना	म. आ. क्षा.	सं. आहा.	साका. अना
<b>—</b>				I	: .		ओ. १		अ <b>व</b> .	1	••••• :	क्षायो.	· ·	
L	J	ł	, I	/		\								

सम्मत्तं । मणुस्सा पुव्ववद्ध-तिरिक्खयुगा पच्छा सम्मत्तं घेत्रृण दंसणमाहणीयं खविय खइयसम्माइद्वी होद्ण असंखेज्ज-वस्सायुगेमु तिरिक्खेसु उप्पज्जंति ण अण्णत्थ, तेण भोगभूमि-तिरिक्खेसुप्पज्जमाणं पेक्खिऊण असंजदसम्माइद्वि'-अपज्जत्तकाले खइयसम्मत्तं लब्भदि । तत्थ उप्पज्जमाण-कदकरणिज्जं पडुच वेदगसम्मत्तं लब्भदि । एवं तिरिक्ख-असंजदसम्माइद्विस्त अपज्जत्तकाले दे। सम्मत्ताणि हवंति । सण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागास्वजुत्ता होंति अणागास्वजुत्ता वा "।

तिरिक्ख-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण

पूर्वोक्त दो सम्यवत्वोंके होनेका यह कारण है कि जिन मनुष्योंने सम्यग्दर्शन होनेके पहले तिर्थंच आयुको बांघ लिया है वे पीछे सम्यक्त्वको प्रहण कर और दर्शनमोहनीयको क्षपण करके क्षायिकसम्यग्दाप्ट होकर असंख्यात वर्षकी आयुवाले भोगभूमिके तिर्थचोंमें ही उत्पन्न होते हैं, अन्यत्र नहीं ! इस कारण भोगभूमिके तिर्थचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंकी अपेक्षासे असंयतसम्यग्दप्टिके अपर्याप्तकालमें आयिकसम्यक्त्व पाया जाता है ! और उन्हीं भोगभूमिके तिर्थचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके छतऋत्यवेदककी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व भी पाया जाता हे ! इसप्रकार तिर्थन्त आसंयतसम्यग्दाप्टि जीवोंके अपर्याप्तकालमें दे। सम्यक्त्व होते हैं ! सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं !

सामान्य तिर्थंच संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे पीत, पद्म और शुक्क लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके

१ प्रतिपु '-ार्डेप्पहुाडि ' इति पाठः ।

नं. ७१

सामान्य तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

धु जी	<b>ч</b> .	দ।.	स	ग.	इं.	का.	यो•	वे.	क.	इ।.	संय.	द.	हे.	भ.	स.	। संज्ञि	आ.	ड.
1. 2	Ę	હ	ሄ	्र	१	2	्र	٩	x	२	<b>१</b>	्र	द्र २	2	ર	ং	२	ર
ा <u>म</u> सं.अ. क	÷	÷	:	ात.	dir.	त्रस-	औ.मि	વુન		∣मति∖	असं	के द	का.	भ	क्षा	ं सं	আৱা-	साका.
ক	ঈ	अप.			-ä-		कार्मः		i	श्रुत		विना	য়.	İ	क्षायो	.	अना.	अना.
1		:								अव.			भा १	Ì				
				,									का.		1			

छक्खंडागमे जीवहाणं

छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं । केण कारणेण ? तिरिक्ख-तंजदासंजदा दंसणमोहणीयं कम्मं ण खवेंति, तत्थ जिणाणमभावादो । मणुस्सा पुन्वं बद्ध-तिरिक्खायुगा खइयसम्माइहिणो कम्मभूमीस ण उपज्जंति किंतु भोगभूमीसु । भोगभूमीसुप्पण्णा वि ण संजमासंजमं पडिवज्जंति, तेण तिरिक्ख-संजदासंजदट्टाणे खड्यसम्मत्तं णत्थि । सण्णिणो, आहारिणो, सागास्त्रजुत्ता होंति अणागास्त्रजुत्ता वा" ।

पंचिंदिय-तिरिक्खाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्धाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपज्ञत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह

विना दे। सम्यक्त्व होते हैं। आयिकसम्यक्त्वके नहीं होनेका कारण यह है कि संयतासंयत तिर्यंच दर्शनमोहनीय कर्मका क्षपण नहीं करते हैं, क्योंकि, वहांपर जिन अर्थात् केवली या श्रुतकेवलीका अभाव है। और पूर्वमें तिर्यंच आयुको बांधकर पाँछे आयिकसम्यग्दर्धि होनेवाले मनुष्य कर्मभूमियोंमें उत्पन्न नहीं होते हैं; किन्तु भोगभूमियोंमें ही उत्पन्न होते हैं। परंतु भोग-भूमियोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच संयमासंयमको प्राप्त नहीं होते हैं, दसलिये तिर्यंचौंके संयता-स्वत गुणस्थानमें आयिकसम्यक्त्व नहीं होता है। सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्थचोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, संझी-पर्याप्त, संझी-अपर्याप्त, असंझी-पर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संझी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंझी पंचेन्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, संझी पंचेन्द्रियोंके दशों प्राण, सात प्राण; असंझी पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, तिर्थंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदा रिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वद,

#### नं. ७२

सामान्य तिर्यंच संयतासंयत जीवोंके आलाप.

] गु.	जी.	ष. मा	स. ]	ग, दि.	क यो	ेवे ' क	ສເ.	संयः∣ दः	ø.	भ. र	। सं€	≮, अ∤,	<u>ः</u> ।
-	1				9 3				¥. €		<u> </u>	ų	२
देश.	i —		j,	ते. हि	म.४ हि.व.४		•	देश के.द.		i i	-	आहा	L
1	ज्य				"व्यू अन्दूर		ુ બ્રુત. ' અત્ર.	विना.	શુમ•	্ব ।	या.	I.	अनाः
					ান হ		্ আ পান			.	ţ	÷	

8८२ ]

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ध</sup>।

ैतेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पजत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचदिय-जादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि

चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्थचोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके पांच गुण-स्थान, संझी-पर्याप्त और असंझी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, संझीके छहों पर्याप्तियां, असंझीके पांच पर्याप्तियां; संझीके दर्शों प्राण और असंझीके नौ प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों सनोयोग, चारों वच्चनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम

नं. ७३

### पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवोंके सामान्य आलाप.

। गु.	जी-	ľ	ч,	) भा	सं	ग.	इं. का	. यो.	े ते	क.	লা.	i	संय.	द.	ले.	भ, स	, संज्ञि	ं आ•	ਤ.
4	์ ช :	ŧ	प.	50	¥	શ	8 8	११	ंद्	<u>8</u>	Ę		ર	<b>२</b>	द्र ६	ર દ્	ર	ેર	ર
मि.	सं.प.	Ę	अ.	و .		ति.	पंःव∎	म. ४	•		ज्ञान-	३ ३	ास.	के द	भा. ६	:स.	सं.	' आहा	साका.
सा.	स.अ.	લ	ч.	٩			:	ुव्∀	:		अज्ञा.	₹ः रे	रेश.	विनाः		अ.	अस.	अ <b>ना</b> •	अना.
सम्य.	अ.प	۹	अ.	৩		:		आ २	1			÷							
अवि.	अ,अ					:		का. १											
देश.												-		İ					

#### नं. ७४

# पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। यु-	जी•]	प.	া দা •	सं.	ग.	इ.	का.	यो •	¦वे ∙	क.	ज्ञा.	संय	द.	ਲ.	म.	स	संज्ञि.	। आ	उ.
4	્રા	६	20					-			Ę	F			i .		२	र	२
		4	8		ति-	Ч.	<u>त्र</u> ,	म. ४	:		ज्ञान ३	असं•	के.द	)मा ६	Ħ		सं.	आहा	साका.
ं सा.	∣असं∙	1				:		व. ४			अज्ञा २	देश.	विनाः	]	Ŧ		अस.	1	अना-
सम्य-	Ч.							औ. १	1			i i		1	চ	ì			
अवि.	i :		1												1				
देश.	i											į –	i	l		L	i .	J	

858]

दंसण, दव्व भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो. सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपछत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ अपछत्तीओ पंच अपछत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिर्किखगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-सुकृत्रलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं उवसमसम्मत्तं णत्थि, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं खइयसम्मत्तं कदकरणिज्ञं पदुच्च वेदगसम्मत्तमिदि चत्तारि सम्मत्तं । सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावसे छहाँ छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; छहाँ सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनःकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हों पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--मिथ्याहाए, सासादनसम्यग्दाप्ट और अविरतसम्यग्दप्ट ये तीन गुणरूपानः संझी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राणः चरिं संज्ञाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति, कुश्रुत और आदिक तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यक्षे कार्पात और य्राहिक तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यक्षे कार्पात और य्राह लेड्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कार्पात लेड्याएं; धव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक होते हैं। इनके सम्यग्मिध्यास्व और उपरामसम्यक्त्व नहीं होता है, किन्तु मिथ्यास्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिकसम्यक्त्व आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोप्योगी होते हैं।

नं. ७५

पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवोंके अपर्याप्त आठाप.

। गु.	जी	ч.	সা	सं.	ग.	ŝ,	কা.	यो.	व	व्यः	.  হ্বা	संय.	द.	हे.	भ.	. स.	<sup>8</sup> संहि।	आ.	उ.
₹														द्र २				<u>२</u>	ેર 🛔
भि.	सं अप.	19.99	৩		ति.	Ý.	त्रस.	ं ओं । मि		-	कुम.	असं	के द	का.	i 🕂	ાં મે	, सं.	आहा.	साक(.
सा.	असं,,	Ì		1	ب ا			कार्म.	•	•	ં સુશુન								अन्।.
अ.	1	ļ	]		!		İ			1	मति-			भ⊡ २	1.0	ंक्षा.	1	i '	
		ļ			ļ		ļ		}	İ	श्रुत.		i i	अञ्च.	ì	क्षायो.	!	i I	1
1	I				ţ		į	Į	ł	]	अव.				ļ		j		1

पंचिंदियतिरिक्ख-मिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एथं गुणद्वाणं, चत्तारि जीव-समासा, छ पज्जतीओ छ अपजजीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्जि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, द्व्व-भावेहि छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिगो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव पज्जत्ताणं मण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्टाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओं, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदि्यजादी, तयकाओं, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

पंदेन्द्रिय तिर्थन मिथ्यादष्टि जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, संजी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीव-समास, संजीके इन्हों पर्याध्तियां, इन्हों अपर्याध्तियां: असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: संज्ञीके दशौं प्राण, सात प्राण: असंज्ञीके तौं प्राण, सात प्राण: चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मलोकोन, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिक-मिश्रकाययोग और कार्याजकायकोल के म्यारह योग: तीनों देस, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, जज्ज और अर्थाजकायकोल के म्यारह योग: तीनों देस, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, जज्ज और अर्थावक, संविक, असंशिक्षः आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनकारोपयोग होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्थच मिथ्यादृष्टि जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञीन्पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दें। जीवसमास, संज्ञीके छहौं पंचांतियां, असंज्ञीके पांच पर्यातियांः संज्ञोके दशों प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्थचगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों चेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो

नं. ७६

पंचेन्ट्रिय तिर्थंच मिथ्याद्यि जीवॉके सामान्य आळाप.

भ भि	 २ सं. प. , अ.	द्रप ६अ	¥ .¤1 ق	X   1  ति.	2	<b>११</b>	÷	8	Ŗ	٩	्र	इ. द	- ३ भ•	ेर मि	२ स	२ आहा	
	,, ज. ,असं-प. ,, ज.						:		:			       					

الا, الا, 1

असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे आत्थि एथं गुणद्वाणं, दो जांवतमासा, छ अपज्जत्तीओं पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्गिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागास्वजुत्ता होंति अणागास्वजुत्ता वा<sup>\*/</sup> !

द्दीन, द्रव्य और भावसे छहाँ छेरयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्थंच मिथ्यादाप्ट जीवेंकि अपर्याप्त कालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादाप्टि गुणस्थान, संझी अपर्याप्त और असंझी अपर्याप्त ये दा जीवसमास, संझी के छहां अपर्याप्तियां, असंझी के पांच अपर्याप्तियां: संझी के सात प्राण और असंझी के सात प्राण; चारों संझाएं, तिर्थंचगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाय-योग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, दें अझान, असंयम, चक्षु और अन्नक्षु ये दें। दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे इष्ण, नील और कापोत लेक्याएं। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्लिक, असंशिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी दोते हैं।

नं. ७७

पंचेन्द्रिय तिर्थंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आछाप.

गुजी, प.मा.सं.ग. इं. का. १ २ ६ १०४ १ १ १ मि.सं.प.५ ९ ति. पंचे. त्रस.	3	ર્૪ ર	१ २ द ह	ર શ ા	१ १ २
असं.	व, ४		अच.	अ, अर	न. अना
	আঁ. হ			: · · · ·	

#### नं. ७८

पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	) जी.	<sup>1</sup> प-;	মা.)	स.	ग.	इ.] क	।.[ये	•	वे :	क.	) हा।	संय	्र.	ਲੇ	म	स.	संज्ञि.	ઝા.	ੱ ਤੋ.	ł
2		1 1 1			र		<b>२</b>	:	<b>R</b>	۲	<u>र</u>	٤	<b>२</b>	<u>द</u> ्र. २	<u>२</u>	2	( २ · 	2	2	I
	सं अ असं ,		9	ļ	'ar (	व व व	) औ.   काम	મ	Ì		છ મ કુરુ	ł.	्पलुः अचशु,					· ·	साका. अना.	ļ
		¦अ⊦∣				ł			ł		- 3			मा ३						I
	!	1 1	[	ļ		1	I.	i	1	Í				अશુ.	¦ [		1			I

पंचिंदियतिरिक्ख-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाथे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अवज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख-गदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाँ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं

पंचेन्द्रिय निर्धच सासादनसम्यग्धपि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर--- एक सासा-दन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवलमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण: चारों संज्ञाएं, तिर्थचगाति, पंचेदियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये ग्यारह योग: तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, दुव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों पंचेन्द्रिय तिर्थंच सासादनसभ्यम्हाप्रे जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सास.दन गुणस्थान, एक संक्षी पर्योप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्थंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्ष

मं. ७९

8, 8. ]

ं पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आळाप.

] ग.जी. प. त्रा. स.	म   इं.   का. !_ यें	∙   वे ¦ क.   ।	ज्ञा। संय. 🤄 द. [	छे.ंभ√ स.	संहिन आ। उन्
2 2 8 20 8		•   •   •		द्र. ६ १ १	9 2 2
सा. हु प. ७	ग्रेते प. त्रस म	×   अ	<b>ाज्ञा. असं च</b> क्षु.	साह स. सा.	सं. आहा. साका.
े के इस	ि वि		अच.		अना अना
च अ	া বি আ	२			
्यम	<u> </u>   का	<u>      </u>			

छन्खंडागमे जीवहाण

866 ]

तेंसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पर्चिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्पाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणयम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

और अचक्षु ये दो दर्शन, ट्रब्य और भावसे छहों छेदयाएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्थंच सासादनसम्यग्दाप्टे जीवेंकि अपर्याप्तकारुसंबन्धी आरु।प कहने पर---एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहौं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्थंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दें। योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दें। अज्ञान, असंयम, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध ठेस्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेस्याणं: भव्यन्शिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक: साकारोधयोगी और अनाकारोपनोगी होने हैं।

सं. ८०

## पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यण्डपि जीवोंके पर्यान्त आलाप.

] गु.∣जी. प.	त्रा. सं	ग इ	का यो	वे क	ज्ञा. सं	प द	छे. म.स	. संहि. आ	ु उन्
2 2 8							द्र.६ ११	<u> १</u>	२ 
सा म		면 면	मिं हिंब	s s	্বাহ্বা বাং -	। অধ্য এব	मा ६ म. ह	्सः आहाः	साका ' अना
ੱਸ	ŧ i		ओ	<b>k</b> = 1			н. :	1   · ·	
					·		· · ·		

## नं. ८१ पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासन्दनसम्यग्डष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

Ļą	ाः, जी	ो. ≑ प	গা,	स	ग, इं	ं.का	यो	ः वे -	क.	ज्ञा.	संय	a	छे.	म स.	संज्ञि	া ওয়া	3.
																	2
स	ास.	অ. <b>अ</b> .		1	ति. <sub>/ त</sub>		आ मि	1		कृम.	असं	चधु-	ंका, ं	म सास	. सं	आहा	२ साका अनाका
		1	· .	- 1	6	ন	कार्म	:		कुपु.	:	अंच.	े शु. ।			ं अन्।	अनाका
1	ł.	I				ι					· ·	•	मा २				.
	ļ			4 	!	:		1	:		1		अञ्ज₊		·	:	

## संत-परूवणाणुयोगदारे गदि-आलाववण्णणं [ ४८९

पंचिंदियतिरिकख-सम्मामिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिकखगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमेा, दो दंसण, दव्य-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ल</sup>।

पंचिंदियतिरिक्ख-असंजदसम्माइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, दो जीव-समासां, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख-गदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

पंचेन्द्रिय तिर्थंच सम्याग्मिथ्याद्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छह्दों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंच-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ने योगः तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचञ्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्थंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्टाए गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्थंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग: तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपश्रामिक, क्षायिक

न. ८२

8, 2. ]

### पंत्रेन्द्रिय तिर्यंच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवांके आलाप.

:	मु.	जी-	'प	मा.	सं	Π,	इ.	का.	या-	वे.	क.	( রা,	¦ संय.	े द.	ਰੋ.	्भ-	स.	¦ संज्ञि -	্ আ	ਤ.
	9	8		20					3		-	िर्	โจ	्र	द्र. इ			ং	হ	ર
मु	∓य.	सं प	l			ति.	पंचे.	ंगस	म ४			ল্বান-	असं.	चक्षु.	मा ६	भ	स्र∓य -	सं.	आहा.	साका.
ł			•	-					व.४			३	ŧ	अच.			i i			अना.
		l						ÍÍ	ओं १			अज्ञा-		•						
ļ		1	i	i.				I i		í		मिश्र !	.	i	İ		ł		}	

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वां ।

तेंसि चेत्र पजाचाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजात्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णिं वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>74</sup>।

और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आद्वारक, अनाद्वारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों भाण, चारों संझापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, झायिक और झायोपश्वमिक ये तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ८३

.....

पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

] ग्र	जी-	ч.	प्रा.	सं.	ग.	<b>इ</b> .	का.	यो	•	वे.	क_	হা.	संय	द.	ले.	ं स	स.	संज्ञि	आ.	ਂ ਤ.
1 2	२	६	90	8	१	8	٤ ا	۹.				્યુ	``	३	द्र ६	•	∣३∙	્ષ	२	्र
de	सं प्र	Ч.	৬		न्ति.	पंच-	त्रस	म.	A,			मति.			मा∙ ६	म⊷	) ओप•	ं सं •	आहा.	साका.
<u>क्षति</u>	सं अ	६						व	کا			श्रुत.		विना			क्षा		) পন্য 🗸	अना,
		अ.			} .			ओ	2			अव.			:		क्षायोः		 :	
1	.				]	ĺ	l	क	۶.					İ	•		ĺ		l	

### नं. ८४ पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आळाप.

गु.	जी,	<b>4.</b> ]	प्रा	सं.	ग,	्रद्द.	का,	यो.	े वे	. क	. লা-	संय	τ.	् ले,	म.	₹.	साज्ञ.	આ,	उ.
र	2	Ę	१०		<u> </u>	: <b>X</b>		\$	्र	े <b>४</b>	2	શ	्र	·द. ६	٢	R	12	۶.	् २
આવે.	स.		l		ात	<u>व</u> े	<b>.</b>	म ४ व.४		-		अस.			भ		स.	•	
<b>丙</b>	प.	i	1	ĺ			1	ৰ, ১	•	ĺ	श्रुत-	!	विना-	i	1 :	क्षा.	-		্ अनाः
1			:	:			ļ	ओ, म		i	अव.	I			-	क्षायां	•	:	
	_ :	1	-			į,	i										1 .		; I

( ?, ?.

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कठेस्सा, भावेण जहण्णिया काउठेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>66</sup>।

पंचिंदियतिरिक्ख-संजदासंजदाण भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्हाप्टे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दप्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगाति. पंचेद्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकभिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेश्यापं, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्य-सिद्धिक, औपरामिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर-एक देशविरत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय-जाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों बेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्तलेश्याएं, भध्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्य,

#### नं. ८५

## पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवॉंके अपर्याप्त आलाप.

团	जी-	ेष-	ंत्रा.	सं ¦	ग.	<b>इ</b> .	]का.	] यो.	वे	<b>क</b> .	ज्ञा.	संय	्द.	ਲੇ.	भ	स.	संक्षि	ঞা	ত,	1
1	8	Ę	ف	8	२	8	2	्र	9	8	₹	१	₹	द्र.२	र	ર	8	२	ર	1
	सं.अ			į	ति.	10	त्रस.	औ.मि	पु.		मतिः	अસે.	केद.	का.	भ.	क्षायो	सं.	आहा	साकाः	I
R.		5	:			Ъ		कार्मः			श्रुत∙		विनाः	য়.		क्षा.		अना.	अনা,	1
	:							ĺ	:		अव.	1		मा १		]			•	ļ
	I	Ì	; ;	J							1			का.						ĺ

₹, ₹. ]

विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्ताणं भण्णमाणे मिच्छाइडि-प्पहुडि जाव संजदासंजदा ति पंचिंदियतिरिक्ख-मंगो । णवरि विसेसो पुरिस-णवुंसयवेदा दो चेव भवंति, इत्थिवेदो णत्थि । अथवा तिण्णि वेदा भवंति ।

पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्ठाणाणि, चतारि जीव-समासा, छ पड्जत्तीओ छ अपञ्चत्तीओ पंच पञ्चत्तीओ पंच अपड्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, द्व्व-भावेहिं

संशिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्थंच पर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—मिथ्यादाप्ट गुणस्थानसे लेकर संयतासंयत गुणस्थान तक पंचेन्द्रिय तिर्थंच सामान्यके आलापोंके समान ही आलाप समझना चाहिये। विशेष बात यह है कि इनके वेद स्थानपर पुरुष और नपुंसक ये दो ही वेद होते हैं, स्रीवेद नहीं होता है। अथवा तीनों ही वेद होते हैं।

विश्वेषार्थ — पंचेन्द्रिय तिर्थंच पर्याक्षकोंके दो ही वेद बतलानेका यह अभियाय है कि योनिमती जीवोंका पर्याप्तक भेदमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, योनिमतियोंका स्वतंत्र भेद गिनाया है। अथवा पर्याप्त और योनिमती तिर्यंच इन दोनों भेदोंको गौण करके पर्याप्त झध्दके द्वारा सभी पर्याप्तकोंका ग्रहण किया जावे तो पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्तकोंके आलापमें तीनों वेदोंका भी सद्भाव सिद्ध हो जाता है।

पंचेन्द्रिय-तिर्यंच योनिमतियोंके आछाप कहने पर--आदिके पांच गुणस्थान, संझी पर्याप्त, संझी-अपर्याप्त, असंझी-पर्याप्त, असंझी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास; संझीके छह पर्याप्तियां और छह अपर्याप्तियां, असंझीके पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां; संझीके दशों प्राण, सात प्राण, असंझाके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संझापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, ज़सकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोय और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अझान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे

नं. ८६

पंचेन्द्रिय तिर्थंच संयतासंयत जीवोंके आलाप.

<u>ग</u> ु.	র্জা.	q.	॑॑॑॑॑॑॑.	ग.	इं	ক।,	यो.	वे.	क.	া হ্যা	संय	्र.	ਲੇ	ं भ.	. स	⊺ सं झि.	आ.	ਤ.
१ देश	<b>۶</b> ۲	Ę	२० ४	1			<u>९</u> स.४		8	्र ⊒ित	्र तेज	्रि किट	.इ.६ भा २	्र	िर ∣ औप.	<b>۶</b>	<b>१</b> आरा	२ साकाः
		!			ਕ) ਦ		म. ४ व. ४		:	श्रुत.			ेशुभ		क्षायो.	G.	আছা	अना.
	·	ļ	1   			:	औ. <b>१</b>			अव,	İ		:   :	:				

छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणीओ, असण्णिणीओ, आहारिणी, अणाहारिणी, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>®</sup> ।

तासिं चेव पज्जत्तजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संज्रम, तिण्णि दंसण, दव्व भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं,

छहों लेक्याएं. भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: क्षायिक सम्वत्वके विना पांच सम्यक्त्व, संझिनी, अलंबिनी: आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हों पंत्रेन्द्रिय तिर्थंच योनिमातियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और असंझी-पर्याप्त ये दें। जीवसमास, संझीके छहों पर्या-प्तियां, असंझीके पांच पर्याप्तियां; संझीके द्शों प्राण, असंझीके नौ प्राण; चारों संझापं, तिर्यचगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग: स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अझान, और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम और देशसंयम ये देश संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; क्षायिकसम्बत्धके विना पांच सम्यक्त्व, संझिनी, असंझिनी;

#### नं. ८७

## पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमतकि सामान्य आलाप.

<u>.</u>	जी•		प.	ुं प्रा,	सं.	ं ग	इ	का.	ं यो	-	∣वे.ंक,	<b>ज्ञा</b>	, संय.	्व,	ਲੇ.	भ	. स	संज्ञि	জা.	ਤ.
4	8	Ę	Ч.	20	8	۶	· 8	2	٤.	?	१ ः ४	६	२	: ই	द्र, ६	2	4	२	ર	ર
मि•	सं. प.	्	अ.	৩		ति.	fer		म-	ጸ	स्त्री.	হাৰ	असं.	के द.	मा.६	भ.	क्षा.	सं.	आहा	साका. अना.
सा.	सं अ.	4	Ч,	<u>.</u> 3	ł		¦ F		व.	8	:	अ.३	दिश	विना		अ	वि.	અસ.	अनाः	अना.
स.	असं प	4	अ	0				;	औ.	२	1				I	j –		į		
अ,	असं.अ.					:		i	कार्म	۹.				. :		[				
देश,		:							İ					! .						
		!						ļ						.			,			

#### नं. ८८

## पंचेन्द्रिय तिर्थंच योनिमतीके पर्याप्त आलाप.

<u>गु.</u>	जी.	٩.	শা ়	. सं	ग, इ	়িকাঁ	यो	· — · ·	<u>क</u> ्ता.			·	·		· · · · · ·	ঙা.	3.
4	ર	Ę.	90	8	<b>و</b> ع	्र	९	913	ধ হ	२	ર	友. &	ર	્ય	я.	र २	२
मि	सं. प.	ч.	९	f	ते पं	त्र.	म. ४	<u>হ্</u> বা									साका-
सा.	असं.प	4					व. ४		्र	देश.	विना.		अ	विना	अस	ļ	अना.
स.		ष.			·		औ १		ज्ञान.								
).					:				1 <b>२</b>	Í							
<b>R</b> .			. :	÷	÷	. ,			:	I	. 1					ļ I	

१, १.]

सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणी, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणढाणाणि, दो जीव-समासा, छ अपज्जत्तीओ, पंच अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तमिदि दो सम्मत्तं, सण्णिणी अस-ण्णिणी, आहारिणी अणाहारिणी, सागारुत्रजुत्ता होति अणागारुत्रजुत्ता वा

पंचिंदियतिरिक्खजोणिणी-मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणटाणं, चत्तारि

आहारक, साकारोपयोगिनी और अनकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय सिर्यंच योनिमतियोंके अपर्याप्तकाल्ठसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्या-हाष्टि और सासादनसम्यग्टाप्टि ये दो गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संझीके छहों अपर्याप्तियां, असंझीके पांच अपर्याप्तियां, संझी और असंझीके सात सात प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाय-योग और कार्मणकाययोग ये दे। योग, स्तविंद, चारों कपाय, कुमति और कुशुत ये दे। अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुहुलेक्यापं, भावसे हुण्ण, नील और कापोत लेक्यापं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व और सासादन-सम्यक्त्य ये दे। सम्यक्त्व, सांझिनी, असंझिनी: आहारिणी, अनाहारिणी: साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यादृष्टि योनिमतियोंके आलाप कहने पर-एक निथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीय-

#### नं. ८९

....

## पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमसीके अपर्याप्त आलाप

	) जी.ेप. <b>२</b> ६अ सं.अ. ५ ,, असं	1.10	5	•	9	१ त्रस	्२ औ.मि	१ स्ती	8	२ कुम,	9		तः २	2				<u>उ.</u> २ साका-
सा.	असं.,,		. 1		6-	:	कार्म		i	জপ্ত.		अच	য়ু.	ञ्.	सा.	असं -	अना.	अना.
	•			Ι.				i					भा २		: '			
				, :				:					अগ্নু.					
								i	!		,	;			.			

[ १, १.

जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वार्षे।

पञ्जत्तपंचिंदियतिरिक्खजोणिणी-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

समास, संक्षिनीके छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; असंक्षिनीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; संक्षिनीके दशों प्राण, सात प्राण; असंक्षिनीके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संक्रापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-कायययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; स्त्रींचेद, चारों कषाय तोनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, संक्षिनी, असंक्षिनी; आहारिणी, अनदारिणी; साकारो-पयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्थंच मिथ्यादाप्टि योनिमतियोंके पर्याप्तकाल्ठसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादप्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और असंक्षी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, संक्षीके लहों पर्याप्तियां, और असंक्षीके पांच पर्याप्तियां; संक्षीके दशों प्राण, और असंक्षीके नौ प्राण; चारों संक्षाएं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, बक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, दृब्य और भावसे लडों लेडयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक;

A. 20

## पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती मिथ्यादाष्टिके सामान्य आलाप.

गु. जी. प. प्रा. सं. ग. इ. का.	यो. वे. क. जा.	संय. द. हे. म. स. संहि. आ. उ.
र ४ ६प. १० ४ १ १ १		
	म.४ खो. अक्वा	. अस. चक्षु. मा.१ म. मि. सं. आहा, साका.
ં સં. અ. ખપ. ં ૬ ં ં ં	व ४	अच. अ. असं अना अना,
અસંઘ. ૬અ. ૭	ઔ.ર	
असं.अ.	का १	

मिच्छत्तं, सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांध

तासिमपज्जत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ अपज्ज त्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, भिच्छत्तं, सण्णिणी असण्णिणी, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>%</sup> !

मिथ्यात्व, संक्षिनी, असंक्षिनी; आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हों पंचेन्द्रिय तिर्थंच मिथ्यादृष्टि योनिमातियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संग्निनीके छहाँ अपर्याप्तियां, असंग्निनीके पांच अपर्याप्तियां: संज्ञिनी अपर्याप्तके सात प्राण, असंग्निनी अपर्याप्तके सात प्राण: चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रविंद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेस्यापं, भावसे रूष्ण, नील और कापतेत लेक्स्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संग्निनी, असंग्निनी; आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी और अनाका-रोपयोगिनी होती हैं।

#### मं ९१

पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती मिथ्यादृष्टिके पर्याप्त आछाप.

IJ	जी.	ं प.	प्राः	<b></b> .	ा ग.	इ.	का.	यो.	à.	<b>æ</b> .	झा.	संय	द.	छे.	ं म.	) सं	संजि	आ.	उ. ।
2	२	Ę	80	8	٤.	1 2	१	९	8	-	्रि	· ·	২	द्र.६	2	2	२	२	ર
मि.	सं. प.	4	5		ਜ਼ਿ.	पंचे.	त्रस	म. ४	'स्री।		अज्ञा	असं.	चक्षु.	भा-६	. भ	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं.प	İ						ৰ্४		. 1		i	अच.	I	अ		असं.		अनाः
								औ. र	!		1	,							
						)	Í		ĮΙ	.				1			<b>i</b>		

## नं. ९२ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती मिथ्यादृष्टिके अपर्याप्त आलाप

[য়	जी.	ч.	য়।	संंग.	<b>s</b> .	का	यो.	वे.	क.   इ	<b>ता.</b>	संय	द.	ਲੇ	•	भ	स.	संज्ञि.	জা	े उ.
9	ર	६ अ	છ	8:5	<b>१</b>	8	ર	2	8	ર	۲.	<b>-</b> २	Ξ.	२	২	٤	<b>२</b>	्र	्र
मि	. सं अप अस	5 51	9	ित ।		њ <sup>3</sup>	गौःमि	स्त्री	5	म.	अस	चक्षु.	का.	য়.	भ.	मि.	सं.	आहा-	साका.
	असं ,,		:		15	1	कार्म•		ক্ত	श्रु.		अच.	भा.	.₹	अ.		अस	अना	अना-
			1		İ							I	: স্	g.,	1			•	
1	Į				! )			· )	;		•	;	:				1 :	•	

## [ १, **२**-

पचिंदियतिरिक्खजोणिणी-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ, छ अपज्जत्तीओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवज्जुत्ताओ वा होति अणागारुवजुत्ताओ वा

ैंतासिं चेव पछत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पछत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

पंचेंन्द्रिय तिर्यंच सासादन सम्यग्दाष्टि योनिमतियोंके सामान्य आछाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औद रिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दे। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी; स.कारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दाप्टे योनिमतियोंके पर्याप्तकालसंबन्धो आलाप कहने पर----एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

नं ९३ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती सासादन सम्यग्दष्टिके सामान्य आलाप.

1	गु.	: जी-	प.	त्रा.	सं	ना.	ई.	का.	यो.	्वे.	ቁ.	ज्ञा.	ं संय	द.	ਲੇ.	भ	स.	संज्ञि.	आ.	. व.
									११										ર	2
¥	11.	सं.प	प.	છ		ति.	पंचे •	त्रस.	्म ४	म्री		अज्ञा	असं.	चक्षु.	्भा ६	∣भ⊷	झासा-	सं.	आहा.	साका.
I		.सं.अ	. इ				:		्व ४					अच⊤		•		[	अना.	अना.
I		:	अ.						ં औ ર			1								
I						i	1		का. १			1	:	ļ	·	2				

## मं ९४ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती सासादन सम्यग्दष्टिके पर्याप्त आलाप.

। गु	•	जी. <b>प</b>	₹.   j	न्ना. स	ਸ਼ਂ_•∣	ग.	इ	का.	यो.	्वे.	क	্ জ্বা-	संय	_द.	છે.	ं स.	स. संज्ञि	্ আ	<u>उ.</u>
2		<b>१</b>	₹¦	20			१	۶ ا	5	<b>9</b>	8	ર	્ર	ર	द्र.इ	ંશ	१ १	्र	२
सा	. ( <del>c</del>	<b>г.ч</b> .				ति.	पंचे.	त्रस.	म. ४	্র্দ্ম।		अज्ञा.	असं	च.	मा. ६	्भ.	सासा. सं.	आहा.	साका.
									व. १					अ.					अना
		1							ओ. ध				i						
	1	J		ļ						!	l		1		ļ.	!	l i		i

तासिमपज्जत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अप-अत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ण-णील-काउलेस्साओ, भवासिद्धियाओ, सासणसम्मत्तं, साण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सामारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा<sup>89</sup>।

पंचिंग्दियतिरिक्खजोणिणी-सम्मामिच्छाइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छप्पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदिय-

और औदारिककाययोग ये नौ योगः स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्य, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हों पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दाष्ट्र योनिमतियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थाान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, कुमाति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चञ्च और अचञ्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ठ्राह्न लेरया, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेरयाएं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्रिनी, आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच सम्यग्मिथ्यादाप्टे योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञापं,

## नं. ९५ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती सासादनसम्यग्दष्टिके अपर्याप्त आलाप

गु.	जी.	ं प.	সা.	सं	्ग '	इ	কা '	यो ।	वे.	ेक.	ज्ञा.	संय-	ुद.	ले.	; म.	स.	संज्ञि.	आ	ਚ.
9	१	Ę	9	¥	2	٤.	۲.	्२	2	8	ર	ંશ	২	द्र २	۶.	२	2	્ર	٦
. सा.	सं अ	⊾अ⊷	1		ति•	110	а я	ઓ.મિ.	स्री	ļ	कुम.	असं -	चक्षु	র্. ২ কা. হা.	म.	सासा.	सं.	आहा	साका •
1		:	:		i	ן ים ו	1	कार्म.		;	કુ્ઝુ.	i	अच.	ञु.	i I	1		'अना.	अनाका
		ł	. !			1	!		:				1	, भा₊ ३					
		1	(				ļ		i.	 	İ.	<u>)</u>	i	अशु.		]		i -	

१, १. ]

जादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिष्णि णाणाणि तीहिं अण्णा-णेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सम्मा-मिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वार्ध।

पंचिंदिय-तिरिक्ख-जोणिणी-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागाहवजुत्ता होंति अणागाह्यजुत्ताओ वां ।

तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिकवाययोग ये नौ योग, स्त्रविद, चारों कषाय, तीनों अझानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चधु और अचक्षु ये दे। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्थग्मिथ्यात्व, संक्षिनी, आद्वारिणी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होती हैं।

पंचेन्द्रिय-तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग, स्त्रविंद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

नं. ९६

## पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके आलाप.

I	गु.	जी.	<b>q</b> .	्रा	र्स.	ग.	ई.	का.	यो	•	वे.	क.	्रज्ञा-	संय	द.	ਂ ਲੇ.	ं भ-	. स	संज्ञि-	आ,	<u>उ</u> .	ſ
ĺ	 	्र		20	8	ិ។	ং	9	٩		१	8	्र र	٩,	્ર	द्र. ६	8	१	2	१	ं २	ł
	सम्य∙	सं प	i			ति •	पंचे.	त्रस	म.	ሄ	स्री.;		ज्ञान-	असं.	चक्षु.	मा⊷ ६	ं भ	सम्य.	सं.	आहा.	साका.	
ł	•			i I		:		1	व.	8	i		३		अच-			1		i	<b>अना</b> ,	
		ĺ	ļ			:		1	औ.	٩			अज्ञा-									l
		ļ	1	1 I 1 -				'					मिश्र.	l		ļ	1		•	i		

## नं. ९७ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती असंयतसम्यग्दष्टियोंके आलाप.

। ग्र	जी ।	प.	( म्रा.)	सं.	ग.	<b>₹</b> .	) का.	यो •	वे -	क	হা•	. सय	ंद,	ਂ ਲੇ.	ं भ	स.	संज्ञि.	. आ	ਤ.
12	হ	ह	٩٥	ሄ	2	2	१	९	र	8	्र	ং	3	द्र, ध	र र	2	۶	१	ર
1	सं.प				ति₊	पंचे •	त्रस.	म• ४	,स्त्री,		मति.	असं				ऑप		आहा	साका.
धवि.								व, ४		]	श्रुत•		विना.			क्षायोः	i	, ] ·	अना,
1			ļ					औ.9	i		अत्र.		Ì	İ	!				
1					1					ł		•	]	ļ	:	[			

### छक्खंडागमे जीवटाणं

पंचिंदिय-तिरिक्ख-जोणिणी-संजदासंजदाणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेभ छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धियाओ, खइय-सम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवज्जत्ताओ वा होंति अणागारुवजुत्ताओ वा<sup>94</sup>।

पंचिंदिय-तिरिक्ख-लुद्धि-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, वे जीव-समासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्व्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-

पंचेन्द्रिय-तिर्यंच संयतासंयत योनिमतियोंके आलाप कहने पर-एक देशाविरत गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तिर्थंचगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संझिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

पंचेन्द्रिय-तिर्थंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके आलाप कहने पर---एक मिथ्यादाष्ट्रि गुणस्थान, संझी-अपर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, संझीके छहों अपर्याप्तियां, असंझीके पांच अपर्याप्तियां, संझी-अपर्याप्तके सात प्राण, असंझी-अपर्याप्तके सात प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दें। योग, नर्पुसकवेद, चारों कषाय, कुमाति और कुश्रुत ये दें। अझान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दें। दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेक्याएं, भावसे रुष्ण, नील, और कापोत लेक्याएं; भव्य-

न. ९८

сц<sup>1</sup>

पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती संयतासंयतोंके आलाप.

J.	जी.	ч.	সা	सं.	ग,	इ.	का.	यो.	े वे	क.	হা.	संय.	ंद.	ਲੇ.	स.	स.	। संझि.	লা,	<sup>।</sup> उ. ।
र	2	Ę	१०	8	٤	۶.	१	٩	{ <b>1</b>	; × ;	a.	2	्रि	द. ६	٤	ર	१	१	२ साका. अना.
5	सं. प.	1.		l	त.	( <b>P</b>	ъ÷.	म.४	্দ্বা-	: I	मात.	্রহা.	क.द.	भा २	मि.	'গাঁণ.	ं सं.	आहा.	साका,
140	ष.					, pu l	Ť.			i i	श्रुत.	י i	तिनाः	શુમ.	!	क्षायो.	1		अना ।
		l; I	ĺ	i		į .		औ. १		•	अव.		1		ł	l	1	i	
	J	<u> </u>	ļj	:								. •	[	1		1		i	

होता है, तीनें वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी होता है। चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी होता है। आईं। ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेक्याएं तथा अलेक्या-स्थान भी होता है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहाँ सम्यक्त्व, संश्विक, तथा संश्वी

चारों संक्राएं, और क्षीणसंक्रारूप भी स्थान होता है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग और वैक्रियिकभिश्रकाययोगके विना तेरह योग, तथा अयोग-स्थान भी

और अनाकारोपयोगी होते हैं। इस प्रकार तिर्यंचगतिके आलाप समाप्त हुए। मनुष्य चार प्रकारके होते हैं---मनुष्य, मनुष्य-पर्याप्त, मनुष्यिनी और लब्ध्यपर्याप्त मनष्य । उनमेंसे मनुष्यसामान्यके आलाप कहने पर-चौदहों गुणस्थान, संझी-पर्याप्त, संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां छहाँ अपर्याप्तियां, दशौं प्राण सात प्राण.

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संश्लिक, असंश्लिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी

मणुसा चउच्चिहा हवंति मणुस्सा मणुस-पज्जत्ता मणुसिणीओ मणुत-अपज्जत्ता चेदि । तत्थ मग्रस्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणद्दाणाणि, दो जीवसमासा, छ पडजत्तीओ छ अपडजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदा वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अड णाण, सत्त संजम. चत्तारि दंसण, दव्य-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अस्थि, आहारिणो अणाहारिणो.

लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

संत-परूवणाण्योगदारे गदि-आलाववण्णणं

एवं तिरिक्खगदी समत्ता ।

पंचेन्टिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

<u>ग्र.</u> जी. प. प्रा. सं. ग. इं. का. २ २ ६ ७ ४ २ १ १ भि. सं. अ. अ. ७ असं. ,, ५ अ. अ.	२ १४ २ १ म्रो.मि. <sub>म</sub> , कुम. असं. च	द.     ले.     म. स. संहि.     आ.     उ.       २     द. २     २     २     २       चक्षु.     का.     म. मि. सं.     आहा.     साका.       चक्षु.     जु.     अ.     असं.     अना.       भा.३     अग्र.     अग्र.     अग्र.
---	---	---

और असंबी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। आहारक, अनाहारक; साकारो-

ર્મ, ૬૬

# सागरुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा" 🕯

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोद्स गुणद्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग ओरालिय-आहार-ामेस्स-कम्मइएहि विणा दस वा अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदेा वि अत्थि, चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थि, अद्व णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-मावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिगो णेव सण्णिणो णेव अस्णिणो

पयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार अनाकार इन होनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, लहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तथा क्षीणसंज्ञारूप भी स्थान होता है। मनुष्यमाति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैकिथिककाययोग वैकिथिकमिश्र-काययोगके विना तेरह योग। अथवा पूर्वोक्त दो और औदारिकमिश्रकाययोग आहारकमिश्र-काययोग और कार्मणकाययोग इन पांच योगोंके विना दशयोग तथा अयोग-स्थान भी है। तीनों वेद तथा अपगत-वेद-स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्यापं, तथा अलेश्या-स्थान भी है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित

#### नं. १००

## सामान्य मनुष्योंके सामान्य आलाप.

] गु.! जी. प. प्रा. सं. ग.	इं. का. यो. वे. क. ज्ञा स	र्गय द. ले. म. स.	सांझे आ.   उ.
18 8 8 8 80 8 8		७ ४ द ६२ ६	् १ २ २
स. प. प. ७ . म	पंचे त्रस. वे. द्वि 💡 👘	. मा-६्म	सं. 'आहा. साका.
सं.अ. ६ हि	विना हि हि	અંજે ગ	अनु अना, अना,
া অন্	े अयो 👘 🥙	i i i	यु. उ.
			<u></u>

५०२ ]

वि अत्थि, आहारिणो अग्राहारिणो, अजोगि-भयवंतस्स सरीर-णिमित्तमागच्छमाण-परमाणूणमभावं पेक्खिऊण पज्जत्ताणमणाहारित्तं लब्भदि । सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागोरहिं जुगवदुवजुत्ता वा<sup>रल</sup> ।

भी स्थान हैं, आद्वारक, और अनाद्वारक भी द्वोते हैं। मनुष्योंके पर्याप्त अवस्थामें अनाद्वारक द्वोनेका कारण यह है कि अयोगिकेवली भगवानके झरीरके निमित्तभूत आनेवाले परमाणुओंका अभाव देखकर पर्याप्तक मनुष्योंके भी अनाद्वारकपना बन जाता है। साकारोपयोगी अनाकारो-पयोगी तथा साकार अनाकार इन दोनें। उपयोगोंसे जुगपत् उपयुक्त भी द्वोते हैं।

विशेषार्थ- ऊपर योग आलापका कथन करते हुए वैक्रियिकढिक, आद्दारकमिश्र, औद्दारिकमिश्र और कार्मणकाययोगके विना दश अथवा केवल वैक्रियिकढिकके विना तेरह योग वतलाये हैं। दश योग तो मनुष्योंकी पर्याप्त-अवस्थामें होते ही हैं, परंतु अपर्याप्त-अवस्थामें होनेवाले औदारिकमिश्र आद्दारकमिश्र और कार्मणकाययोगको मनुष्योंकी पर्याप्त अवस्थामें बतानेका यह कारण है कि यद्यपि तेरहवें गुणस्थानमें समुद्धातके समय योगोंकी अपूर्णता रहती है फिर भी उस समय पर्याप्त-नामकर्मका उदय विद्यमान रहता है और शरीरकी पूर्णता भी रहती है, इसलिये पर्याप्त-नामकर्मको उदय और शरीरकी पूर्णताकी अपेक्षा कपाट, प्रतर और लोकपूरणसमुद्धातगत केवली भी पर्याप्त हैं और इसप्रकार पर्याप्त अवस्थामें औदा-रिकमिश्र तथा कार्मणकाययोग बन जाते हैं। इसीयकार छठवें गुणस्थानमें आद्दारमिश्रकाय-योगके समय भी पर्याप्त-नामकर्मका उदय रद्दता है, इसलिये ऐसा निर्शृत्तिसे अपर्याप्त होता हुआ भी जीव पर्याप्त-नामकर्मका उदय रद्दता है, इसलिये ऐसा निर्शृत्तिसे अपर्याप्त होता हुआ भी जीव पर्याप्त-नामकर्मके उदय रद्दता है, इसलिये ऐसा निर्शृत्तिसे अपर्याप्त ही पर्याप्त-अवस्थामें बन जाता है। इसप्रकार उपर्युक्त तीनों योग विवक्षा मेदसे पर्याप्त-अवस्थामें भी बन जाते हैं इसलिये मनुष्योंकी पर्याप्त-अवस्थामें तेरह योग भी गिनाये हैं।

#### र्म, १०१

सामान्य मनुष्योंके पर्याप्त आलाप.

] गुं.जी. प. प्रा. सं. ग.	इंग्का / योग / वे	े के. हो। संय 🖉 🤻	<b>ले.</b> भ. स.	संज्ञि. आ	उ.
१४ १ ६ १० ४ १	9 2 23 3	8 6 9 8	द्र ६ २ ६	<b>१</b>   २	र –
<u>स</u>	ी के रविना में स्थित के राजना के राजना के राजना के राजना के राजना के राजना के राजना के राजना के राजना के राजना क	1 k	मा ६ म	सं आहा.	साका.
्स सी	हु ४ म। ०१ जे म	अ <b>क</b> थ।	ઝછે∙ !अ	अनु अन्।	अना.
	व- ६ ओ.१आ.१				यु. उ.

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे आत्थि पंच गुणद्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अवज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ अदीदसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिं-दियजादी, तसकाओ, आहारमिस्सेण सह तिण्णि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, पंच णाण केवलणाणेण छ णाण, असंजम सामाइय-छेदोवट्ठावण-जहाक्खादेहि चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउन्सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त-उवसमसम्मत्तेण विणा चत्तारि सम्मत्तं, सण्णिणो अणुभओ वा, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता हेंति अणागारु-बजुत्ता वा तदुभया वा<sup>84</sup>।

उन्हों सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दाष्टि, अविरतसम्यग्दष्टि, प्रमत्तसंयत और संयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान, एक संब्री-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं तथा अतीतसंबा स्थान भी हैं; मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारमिश्रकाययोगके साथ औदारिक-मिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग इसप्रकार तीन योग, तीनों वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय स्थान भी है, कुमति, कुश्रुत तथा आदिके तीन बान ये पांच बान और केवलबान इसप्रकार छढ़ बान, असंयम, सामायिक, छेदेपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयमः चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुकु लेदयाएं, भावसे छहों लेदयाएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्व और उपशामसम्यक्त्वके विना चार सम्यक्त्व, संब्रिक, और अनुभय अर्थात् संब्रिक और असंब्रिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, आहारक, अना-हारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

#### मं. १०२

सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्त आलाप.

<u>ग</u>	जी-	<b>q.</b>	त्रा.	र्स.	ग.	इं.	কা-	यो.	वे.	<u>क</u>	<u></u>	संय	द.	<u>.</u>	म.	(₫.	संग्री.	<u> </u>	ड.	ſ
4		६अ.	9	8	१	१	१	3	3	8	<b>ह</b>	X	8	द्र. २	<b>२</b>	8	9	ેર ∣	२	
मि.	सं, अ.				म.	٩ <b>.</b>	त्रस.	औ.मि,	=	i i i	त्रिमं -	असं •		কা	भ.	ामि.	सं.	आहा.	साका.	
er.				क्षीणसं.			ļ	आःमि.	ગવગ	अक्षा.	मनः.			গ্র.	अ,	) सा-	अनु.	अना.	अना.	
अ.	ļ			.a⊎∽				कार्म		100	बिना.	छेदो.	l	मा द		क्षा.			यु. उ.	
я.		ļ										यथा.				क्षायो.				
स.					1			[	l			ļ			ł	<u> </u>				

408]

मणुस-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र्य</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त, और संक्षी-अपर्याप्त, ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अना-हारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्याद्दाष्टि सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—पक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, एक संब्री-पर्योप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संब्रापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चञ्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संब्रिक,

#### नं, १०३

सामान्य मनुष्य मिथ्याद्दष्टियेंकि सामान्य आलाप.

<b>}</b> ग्र	.जी.	प.	সা.	सं.	म.	З.	কা.	यो.	वि	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ•	ਤ.
2	<u> </u> २	ह	<b>t</b> •	8	٤	१	१	२१	३	8	<b>ર</b>	ື	२	द्र. ६	२	र	9	२	ર
મિ	लं	٩.	9		.म.	पं.	त्रस.	म ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा-६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साकाः
	TH	६					ł	व. ४					अच,		अ.			अना.	अना.
	ь	अ.									]	ĺ	1	ĺ	•	i i	ŀ		
	i 🖻							का १			· ·	1			]				<u>}</u> ſ

होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र</sup>"।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, देा अण्णाण, असंजम, देा दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?"</sup>।

आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादाष्टि सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों चेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे ऋष्ण, नील और कापोत लेक्याएं; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

#### तं. १०४

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी-	q	प्रा	सं.	म.	इं.	का.	<u>यो</u>	•	वे•	क.	ज्ञा.	संय.	द∙्	छ	भ.	स	सं हि।	) आ	ु उ.
१  मि.	<b>१</b>	Ę	20	-	٤	9	१ त्र.	् भ.	~	३		1 -	१ आर्ग-		द्र.६ भार ह	२	ह कि	१ मं	र भारा	२ साका
341.	स <b>.प</b>				म.	Ч.	1.	म. व.				णशा•		ণজু. अच	1	ज. भ	[#] _	Υ	পার্।	साका. अना.
								औ.	٩											

#### नं. १०५

सामान्य मनुष्य मिथ्याद्दष्टियोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>. गु.</u>		· · ·				_ !		! <b>वे.</b> क. ३.४		· · · · ·		·		1	आग. ं २	ਡ
मि.	सं.अ.						औ.मि. कार्म•	Тіі	कुम.	अस.	चक्षु,	का.	म. मि. अ.	सं.	-	
			 i I		:	!		] ; ; [	ઝહા		, <b>~</b>	भा. ३	!	· 、		01411.
				;	:					:		<b>अ</b> शु.		i	ļ	

१, १.]

मणुस्स-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्ताओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो आणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रू</sup>।

तेसिं चेव पडजत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ ठेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

सासादनसम्यग्दष्टि सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर---पक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेद्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, ट्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अना-हारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्टाप्टि सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नो योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहां लेश्यापं, भन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक,

नं. १०६

लामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दष्टियोंके सामान्य आलाप.

Ī	9 : 11.	 .इ.प.	10	8	१   1	त्रस. ४	११	र	8	્ર	<u> </u>	२ -	ब्र. ६	8	8	 १	आ. २ आहा. अना.	उ. २ साका. अना.
	÷						का. १	: !										

अणामारुवजुत्ता वा<sup>\*</sup>ं।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासा, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>74</sup>।

मणुस्स-सम्मामिच्छाइद्वणिं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दाप्टे सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्प्रणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दें। अझान, असंयम, चश्रु और अचञ्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेखाएं, भावसे छष्ण, नील और कापोत लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संशिक, आहारक, अनाहारक; साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सम्यग्मिथ्यादाप्टे सामान्य मनुष्यांके आलाप कहने पर-एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-

नं, १०७

सामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

							· ·- ·		i		·			द.	ਰੇ.	ं स.	्स.	संज्ञि.	জা.	ਤ.
3	2	Ę	१०									ર			द्र, द्		1	٤.	ং	ર
सा	सं.प	: !		ł	म.	पंचे •	त्रस.	1		i		अજ્ञा.	अस.	च.	भा. ६	ः भ	[सासग.	सं.	आहा.	
								व.					-	अ.			[	·	· ·	अना.
			j					आ.	\$ }		į			ļ			1			

नं. १०८ सामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्हीरयोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>।</u> ग्र	) जी.	q.	ंश्रा. सं	.] ग.	Ì <b>Ş</b> .	का.	्यो.	व	क.	<b>ज्ञा</b> .	संय.	्द.	रे.	स.	स	सं।ज्ञि.	) आ.	ব.
9	. १	६ अ.	9 ¥	8	9	्र	2	३	8	' २	9	२	द्र. २	्र	२	2	२	२
सा.	सं.अ		. :	म.	- - -	नस	२ ओ.मि कार्म.			कुम.	अस.	चक्षु.	का.	भ.	στ.	स.	आहा.	साका.
		:	·	]	۳.	i	कार्म.			कुश्रु.	İ	अच.	गु.				अना.	अना.
1		!		1	1								भा २	:	-			l
		1			į		iļ	.		i		ĺ	अગ્રુ.	i i	į i			
	[		1	ĺ	; _:		ļ	1				1			· !	· ·	Í	

406]

१, १.]

पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दन्त्र-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुत्रजुत्ता वा होति अणागारुत्रजुत्ता वा<sup>22</sup>।

"मणुत असंजदसम्माइहीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम,

स्थान, एक संबीत्पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संबाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग: तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अवानोंसे मिश्रित आदिके तीन बान, असंयम, चक्षु और अचछु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिध्यात्व, संविक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

असंयतसम्यग्दष्टि सामान्य मनुष्योंके सामान्य आलाप कहने पर-एक अविरतसम्य-ग्दार्ट गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दे। जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सान प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्ट्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग, ओदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग: तीनों चेद, चारों कपाय, आदिके तीन ब्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,

A 209

#### सामान्य मनुष्य सम्याग्मध्यादृष्टियांके आलाप.

1.5	<b>जी</b> ः	प-}ः	‼⊹ सं	ं ग.	<b>s</b> .	का	यो.	े वे	ъ.	হা.	: सर्य	ं द.	के.	ं भ	. स.	संझि.	্ঞা,	ਰ.	J
	8					-				-			:			\$	2	ર	Ï.
1	<b>सं.प.</b> !			Ч.	1प्रेंचे.	ंत्रेस.	म. ४	:		ज्ञान -	अस्	चशु	मा	∻ ग.	म∓य	, सं.	आहा.	साका,	
E.	ļļ	1		į			'व ४		!	ষ	Ì	थच.			ļ	1	i	अना.	ł
	•	ļ	1			:	া,	1		গলা	ļ								
			_	i	i		_			मिश्र			ļ						Ļ

#### नं. ११० सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दप्रियोंके सामान्य आछाप.

12.	_जी.	प.	मा.	सं ग	. इ.	का,	यो.	े वे	क.	र्श.	संग	द.	ले.	स.	. स.	संशि	આ.	उ.
12	२	६प.	20	8	र र	َ <b>ک</b>	२१	ं २	8	•	\$		द. ६		3	१	२	२
Crist .	२ सं. प सं. अ	६ अ	.e	Ħ	ं पंचे.	¦त्रस∘ <sup>∣</sup>	म, ४		.	मति-			मा.६	स.	औप.	सं.	आहाः	साका
সিঁ	सं. अ		:			:	व् ४			श्रुत.	'	विना.	. :		क्षा.		अनाः	अनाः
	I		i İ	į	i	1	জীন্থ	:		अ <b>त</b> ।		<b>I</b>	' İ		श्वायो			
<u> </u>	i <u>-</u>	ì	.				का र				!		1	i	, ,	ļ		

तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जविसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णत्र जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>???</sup> ।

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुगढाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसंवेद । देव-णेरइअ मणुस्स-असंजदसम्माइडिणो जदि मणुस्सेसु उप्यज्जंति तो

इव्य और भावसे छहाँ छेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, झाथिक और झायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्य, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयतसम्यग्दष्टि सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक अविरतसम्पग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोप-शमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयतसम्यग्टष्टि सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकाल संबन्धी आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी अपर्याप्त जीवसमास, लहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग, एक पुरुषवेद होता है। केवल एक पुरुषवेद होनेका यह कारण है कि देव, नारकों और मनुष्य असंयतसम्यग्दष्टि जीव मरकर यदि मनुष्योंमें उत्पन्न होते हें, तो

र्न १११

सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्डष्टियेंकि पर्याप्त आलाप.

गु. जी.	 · · -			इ.	का.	ं यो -	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	छे.	भ	. सं	संक्रि	आ,	उ.
१ <b>१</b>	٢.	-	•	2	१	ና	२	8	<b>N</b>	٤.	्र	द्र ६	શ	R	2	१	২
ख़ संप क	· ·	-	म.	पच.	ंत्रस.	म. ४ 	}			अस.	कं.द.	मा-६	भ	1	सं.		साका.
	ļ	ĺ				व ४ औ.र			श्रुत. अव.		विना.			ঞ্জা.	( 		अनाः
						2014 2								क्षायो.			

8, 8, 1

णियमा पुरिसवेदेसु चेव उप्पर्ज्जति ण अण्णवेदेसु, तेण पुरिसवेदो चेव भणिदो । चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ । तं जहा — णेरहया असंजदसम्माइडिणो पढम-पुढवि-आदि जाव छट्ठी-पुढवि-पज्जवसाणासु पुढवीसु द्विदा कालं काऊण मणुस्तेसु चेव अप्पपणो पुढवि-पाओग्ग-लेस्साहि सह उप्पर्ज्जति त्ति किण्ह-गील-काउलेस्सा लब्भंति । देवा वि असंजदसम्मा-इडिणो कालं काऊण मणुस्सेसु उप्पर्ज्जमाणा तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साहि सह मणुस्सेसु उववज्जंति, तेण मणुस्स-असंजदसम्माइडीणमपज्जत्तकाले छ लेस्साओ हवंति । भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणे, आहारिणे अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता दा<sup>???</sup> ।

मणुस्स-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ

निय नसे पुरुषयेवी मनुष्योंमें ही उत्पन्न होते हैं, अन्यवेदवाले मनुष्योंमें नहीं; इससे एक पुरुष येद ही कहा है । बेद आलाप के आगे चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोल और शुक्ल लेदयाएं, भावसे छहों लेदयाएं होती हैं । अधिरतसम्यग्दर्धि अपर्याप्त मनुष्योंके छहों लेदयाएं होनेका कारण यह है कि प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी-पर्यंत पृथिवियों में रहनेवाले असंयतसम्यग्दष्टि नारकी मरण करके मनुष्यों अपनी अपनी पृथिवीके योग्य लेदयाओंके साथही उत्पन्न होते हैं, इसलिये तो उनके रूष्ण, नील और कापोत-लेदयाएं पाई जातीं हैं । उसीप्रकार असंयतसम्यग्दष्टि देव भी मरण करके मनुष्यों अपनी अपनी प्रथिवीके देव आती हैं । उसीप्रकार असंयतसम्यग्दष्टि देव भी मरण करके मनुष्यों अं उत्पन्न होते हुए अपनी अपनी पीत, पद्म और शुक्ल लेदयाओंके साथ ही मनुष्यों के उत्पन्न होते हैं, इसलिए मनुष्य असंयतसम्यग्दष्टियोंके अपर्याप्तकालमें छहों लेदयाएं बन जाती हैं । सम्यक्त्व आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके विना दे सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संयतासंयत सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर-एक देशविरत गुणस्थान, एक

## नं. ११२ सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दष्टियोंके अपर्याप्त आलाप

गु•ंजी∙ंप प्र∣ंसं   ग, इं.∤व	हा.   यो. वे. क. ज्ञा. सिय. द.	ले. भ. स. सांही. आ. उ.
<b>1 2 2 5 0 8 7 7</b>	१ <mark>२ १ ४ ३</mark> १ ३	इ.२१२१२२२
क सं.अ.अ. म. हि	स. औ. बि. पु. मति असं. के द.	
ାମ ମୁମ୍ଭ କରୁ କରୁ କରୁ କରୁ କରୁ କରୁ କରୁ କରୁ କରୁ କରୁ	कार्म. श्रुत. विना अव	शु. क्षायोः अना, अना, भारद
	514.	

4 ( ? ]

पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ रेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकक्रलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

संपहि पमत्तसंजद-प्पहुडि जाव अजोगिकेवलि ति ताव मूलोघालावे। अण्णो अण-धिओ वत्तच्वे।।मणुस्त-पज्जत्ताणं भण्णमाणे मिच्छाइट्टि-प्पहुडि जाव अजोगिकेवलि ति ताव मणुस्तोघभंगो।। अथवा इत्थिवेदेण विणा दे। वेदा वत्तव्वा एत्तियमेत्तो चेव विसेसे।।

संज्ञी-पर्योप्त जीवसमास, छहीं पर्योप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्याएं, भावले पीत, पद्म और शुद्धछेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अब प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक न्यूनता और अधिकतासे रहित मूल ओघालाप कहना चाहिये, अर्थात् , गुणस्थानोंकी अपेक्षा जो आलाप छठे गुणस्थानसे लेकर चौदहवें गुणस्थान तक कह आये हैं वे ही यहां मनुष्योंके लटे गुण स्थानसे चौदहवें गुणस्थान तकके समझना चाहिये, क्योंकि लठेसे आगेके सभी गुणस्थान मनुष्योंके ही होते हैं, इसलिये सामान्य कथनमें और इस कथनमें कोई विद्योपता नहीं है।

मनुष्य-पर्याप्तकोंके आलाप कहने पर-मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक मनुष्य-सामान्यके आलापोंके समान आलाप जानना चाहिये। अधवा बेद आलाप कहते समय स्त्रीवेदके विना दो वेद ही कहना चाहिये, क्यॉकि सामान्य मनुष्योंसे पर्याप्त मनुष्योंमें इतनी ही विदोषता है।

विशेषार्थ---जब मनुष्योंके अवान्तर भेदोंकी विवक्षा न करके पर्याप्त दाव्दके हारा सामान्यसे सभी पर्याप्त मनुष्योंका ब्रहण किया जाता है तब पर्याप्त मनुष्योंमें तीनें वेद्-

न. ११२

सामान्य मनुष्य संयतासंयतोंके आलाप.

2	ं जी- १ सं- प.	<b>Ę ?</b> 0 8	 × ×	\$	३ ४	2	देश के द.	ड. ६ भा.३	म. औ.	साझे १ सं.	आ. २ आहा.	<u>उ.</u> २ साका. अना.
				1	ļ							

१, १. ]

मशुसिणीणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणद्ठाणाणि, दो जीवसमाक्षा, छप्पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मशुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, एत्थ आहार-आहारमिस्सकायजोगा णत्थि । किं कारणं ? जेसिं भावो इत्थिवेदो दर्व्यं पुण पुरिसवेदो, ते वि जीवा संजमं पडिवर्ज्जति । दग्वित्थिवेदा संजमं ण पडिवर्ज्जति, सचेलत्तादो । भावित्थिवेदाणं दव्वेण पुंवेदाणं वि संजदाणं णाहाररिद्धी समुप्पजदि दव्व-भावेहि पुरिस-वेदाणमेव समुप्पजदि तेणित्थिवेदे पि णिरुद्धे आहारदुगं णत्थि, तेण एगारह जोगा भणिया । इत्थिवेदो अवगदवेदो वि अत्थि, एत्थ भाववेदेण पयदं ण दव्ववेदेण । किं कारणं ?

वालोंका प्रहण हो जाता है, अतः इस अपेक्षासे पर्याप्त मनुष्योंके आलाप सामान्य मनुष्योंके समान बतलाये गये हैं। परंतु जब मनुष्योंके अवान्तर भेदोंमेंसे पर्याप्त मनुष्योंका प्रहण किया जाता है तब पर्याप्त मनुष्योंसे पुरुष और नपुंसक वेदी मनुष्योंका ही ग्रहण होता है, क्योंकि स्त्रीवेदी मनुष्योंका स्वतंत्र भेद गिनाया है। मनुष्यके अवान्तर भेदेंमिं पर्याप्त दाब्द पुरुष और नपुंसकवेदी मनुष्योंमें ही रूढ है, इसलिये इस अपेक्षासे पर्याप्त मनुष्योंके आलाप कहते समय स्त्रीवेदको छोड़कर आलाप कहे हैं।

मनुष्यनी (योनिमती) स्त्रियोंके आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और असंक्री-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दर्शों प्राण, सात प्राण; आरों संक्रापं तथा स्रीणसंक्रारूप भी स्थान है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; तथा अयोगरूप भी स्थान है। इन मनुष्यनियौंके आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये दो योग नहीं होते हैं।

र्शका-—मनुष्य-स्त्रियोंके आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होनेका क्या कारण है ?

समाधान — यद्यपि जिनके भावकी अपेक्षा स्त्रविद और द्रव्यकी अपेक्षा पुरुषवेद होता है वे (भावस्त्री) जीव भी संयमको प्राप्त होते हैं। किन्तु द्रव्यकी अपेक्षा स्त्रविद्वाले जीव संयमको नहीं प्राप्त होते हैं, क्योंकि, वे सचेल अर्थान् यस्त्रसदित होते हैं। फिर भी भावकी अपेक्षा स्त्रीवेदी और द्रव्यकी अपेक्षा पुरुषवेदी संयमधारी जीवोंके आहारऋदि उत्पन्न नहीं होती है, किन्तु द्रव्य और भाव इन दोनों ही वेदेंकी अपेक्षासे पुरुषवेद्वाले जीवोंके ही आहारऋदि उत्पन्न होती है। इसलिए स्त्रीवेदवाले मनुष्योंके आहारकदिकके विना ग्यारह योग कहे गए हैं। योग आलापके आगे स्त्रीवेद तथा अपगतवेद स्थान भी होता है। यहां भाववेदसे प्रयोजन है, द्रव्यवेदसे नहीं। इसका कारण यह है कि यदि यहां द्रव्यवेदसे 'अवगदवेदो वि अत्थि' त्ति वयणादो । चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थि, मणपजजव-णाणेण विणा सत्त णाण, परिहार-संजमेण विणा छ संजम, चत्तारि दंसण, दुव्व-भावेहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणीओ णेव सण्णिणी णेव असण्णिणी वि अत्थि, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा<sup>सर</sup> ।

तासिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणहाणाणि, एओ जीवसमासो, छप्पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग णव वा अजोगो वि अत्थि, इत्थिवेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, छ संजम, चत्तारि दंसण,

प्रयोजन होता तो अपगतवेदरूप स्थान नहीं बन सकता था, क्योंकि, इब्यवेद चौदहवें गुण-स्थानके अन्ततक होता है। परन्तु 'अपगतवेद भी होता है ' इस प्रकारका वचन निर्देश नैवें गुणस्थानके अवेदभागसे किया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि यहां भाववेदसे ही प्रयोजन है, द्रब्यवेदसे नहीं। वेद आछापके आगे चारों कपाय, तथा अकषाय स्थान भी होता है। मनःपर्ययक्षानके विना सात ज्ञान, परिहारविद्युद्धिसंयमके विना छद्द संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेइयाएं, तथा अछेइयारूप भी स्थान होता है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिनी तथा संज्ञिनी और असंज्ञिनी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी, अनाकारोपयोगिनी; तथा साकार और अनाकार उपयोगसे युगपत् उपयुक्त भी होती है।

उन्हीं मनुष्यनियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर चौदहों गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, लहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तथा क्षीणसंझा-स्थान भी है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैकिथिककाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इन चार योगोंके विना ग्यारह येग, अथवा, उपर्युक्त चार और औदारिकमिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग इन छह योगोंके विना नौ योग तथा अयोग स्थान भी होता है। स्तीवेद तथा अपगतवेद स्थान भी होता है। चारों कपाय, तथा अकषाय स्थान भी होता है। मनःपर्ययक्षानके विना सात झान, परिहारविश्वदिसंयमके

नं. ११४

मनुष्यनी स्त्रियोंके सामान्य आलाप.

<u>गि</u> जी. प. प्रा. सं. गा इं. का. यो. वे. क. जा. संय. द. ले. स. स. संज्ञि. आ. १४४ २ ६ १०४ १ ९ ९ ९९ १४ ७ ६ ४ ४.६ २ ६ १ २	
152 5 6 160 2 1 2 1 1 1 1 1 C 2 6 6 8 8 8 6 6 1 1 1 1 1 1 6 8	्र
$y_1$ <t< td=""><td></td></t<>	
सं.अ ६ हैं - कि ब ४ - कि विना. बिना. अले. अ. अनु. अना.	
· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	ुयु∙ उ∙

8, 2. ]

दच्व-भावेहिं छ लेस्सा अलेस्सा वि अस्थि, भवसिद्धियाओं अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणीओ णेव सण्णिणी णेव असण्णिणी, आहारिणी, अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता होति अणागाह्वजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा<sup>200</sup>।

तासिं चेव अपञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगढी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेदो अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अक-साओ वा, दो अण्णाण केवलणागेण तिण्णि णाण. असंजमो जहावखादेण दोण्णि संजम,

विना छह संयम, चारों दर्शन, दृब्य और भावसे छहाँ लेख्याएं तथा अलेख्या स्थान भी होता है । भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहाँ सम्यक्त्व, संह्रिनी, तथा संक्रिनी और असंक्रिनी विक-ल्पसे रहित भी स्थान होता है। आहारिणी, अनाहारिणीः साकारोपयोगिनी, अनाकारोपयो-पयोगिनी तथा साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत उपयुक्त भी होती हैं।

विशेषार्थ- पर्योप्त सामान्य मनुष्योंके तेरह अथवा दश योगोंके होनेका स्पद्यीकरण ऊपर कर आये हैं, उसीप्रकार पर्याप्त मनुष्यानियोंके ग्यारह अथवा नौ योगोंके संबन्धमें भी जीनें लेना चाहिये। यहां इतनी विशेषता है कि स्रीवेदियेंकि आहारक ऋदि नहीं होती है, अतएव इनके आहार और आहारमिश्र ये दो योग नहीं पाये जाते हैं। इसप्रकार स्वीवेदियोंके पर्याप्त अवस्थामें ग्यारह अथवा नौ योग ही होते हैं।

उन्हीं मनुष्यनियोंके अपयोप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-मिथ्यादृष्टि, सासादन-सम्यग्दपि और सयोगकेवली ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्या-प्तियां, सात प्र.ण, चारों संश्राणं तथा क्षीणसंशा स्थान भी है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, स्वीवेद, तथा अपगत-बेदस्थान भी हैं। चारों कपाय तथा अकपाय स्थान भी है। कुमति और कुश्रत ये **हो** अज्ञान तथा सयोगकेवली गुणस्थानकी अपेक्षा केवल ज्ञान, इसप्रकार तीन ज्ञान, असं. यम और यथाख्यातविहारशुद्धि ये दो संयम, चक्षु, अचक्षु और केवल ये तीन दर्शन.

નં. ૬૧૧

मनुष्यनी स्त्रियोंके पर्याप्त आलाप.

પક્ષ]

केवलदंसणेण तिण्णि दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा सुक्कलेस्साए चत्तारि वा; भवसिद्धियाओ अभवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, सासणसम्मत्तं खइयसम्मत्तेण तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ अणुभयाओ वा, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा<sup>226</sup>।

""मणुसिणी-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणट्टाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तप्तकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेस्या, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेस्याः अथवा शुक्कलेस्याके साथ उक्त तीनों लेस्यापं मिलकर चार लेस्यापं होती हैं। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और क्षायिकसम्यक्त्व ये तीन सम्यक्त्वः संक्षिनी और अनु भय अर्थात् संक्षिनी असंक्षिनी विकल्प-रहित स्थान भी होता है। आहारिणी, अनाहारिणीं। साकारोपयोगिनी अनाकारोपयोगिनी तथा उभय उपयोंगोसे उपयुक्त होती हैं।

मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संशोल्पर्याप्त, और संझी-अपर्याप्त, ये दो जीवसमास, छहौं पर्याप्तियां, छहौं अपर्याप्तियां; दशौं प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंत्रेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनो-योग, चारों बचनयोग, औद्यारिककाययोग, औद्यारिकभिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चञ्च और अचश्च ये दो

#### ને. ૧૧૬

### मनुष्यनियोंके अपर्याप्त आलापः

। गु.	जी-	<b>q</b> .()	न्ना, सं	. ग	, इं.	का	यो -	वे.	ं क	<b>डा</b> .	सग.	. द.	े ले.	भ.	स.	संजि	্রা.	ਤ.
.३	2	ξ.	້. ຮູ້¥	8	<u>र</u>	े र	২	્ર	8	્ર	ર	ંગ્	द्र २	્ર	३	\$	ર	्र
मि.	सं अं	अ.	·	म.		5	ઐો.મિ	ਸ਼ੀ	÷	कुम.	असं.	चक्षु.	কা, যু	. भ	મિ.	स.	आहा-	साकाः अनाकाः यु. उ.
सा.	I I	1	ीवा	1	<b>"</b>	ন	कार्म•		<u>स</u> ्त	ंकुक्षु.	यथा.	अच.	ं मा • `	ধ স	स।	અનુ∙	्अना.	अनाका.
स.		1	ສ		ļ			स्त	10	ক	1	कव-	अগ্ <u>য</u> .	<b>R</b> i	क्षा.	1	÷	यु. उ.
		į		•	ļ						I.		্যু ৭					

#### नं. ११७

### मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आरुाप

गु. <u>ज</u>ी. प. प्रा. सं. ग. इं. का या. वे. क. झा. संय. द. हे. भ. स.संझि. आ. उ. 9 २ ६प. १०४ १ १ **१ ११** १४ ३ १ २ इ.६ २ १ १ २ २ भि. सं. प. ६अ ७ म. म. स.४ स्त्री. अज्ञा असं. चथ्रु. भा. ६ भ.भि. सं. आहा. साका. स. अ भ. अ भ. अ भ. अना. अना. अना. का.१

[ १, १.

असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होति अणागारु-वजुत्ताओ वा।

मिच्छाइहि-पञ्जत्त-मणुसिणीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मगुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ ठेस्साओ, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारु-वजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा <sup>344</sup>।

मिच्छाइहि-अपझत्त-मणुसिणीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्पाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेखाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्रिनी, आहारिणो, अनःहारिणोः साकारोपयोगिनी तथा अनाकारोपयोगिनो होती हैं।

मिथ्यादाष्टि मनुष्यनियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञीपर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग तथा औदारिककाय-योग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेरयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

मिथ्यादधि अपर्याप्त मनुष्यनियोंके आल्लाप कहने पर-एक मिथ्यादाधि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रविंद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्रान,

### A. 226

## मिथ्याइष्टि मनुष्वनियोंके पर्याण्त आछाप.

गु. जी	ष.	я1.	. सं	4	इ	কা	यो	•	वे.	क.	জ্ঞা-	संय	द.	ले.	भ	ं स.	संदि.	জা,	उ.
	Ę	ţa	ं४	٤.,	9	ંશ	\$		?	ሄ	્ય	হ	ેર	द्र.६	. २	2	1	۶.	ર
मि म			i I	म.	91	i 😰	म.	૪	स्र)	:	अज्ञा	ं अ <b>स</b>	च <b>क्ष</b> ्	भा ६	म•	मि	. स.	आहा.	साका.
म		ĺ	: .		5	े <b>ग</b> रा -	व. के	Υ.					अच		्ञ	:	: :		अনা.
1		ĺ				:	জা-	. <b>(</b>				:		:					

काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होति अणागारु-वजुत्ताओ वा'''।

मणुसिणी-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्व भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणी अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"।

द्रध्यसे कापोत और शुक्क लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत ये तीन अशुभ लेश्यापं, भव्यसिदिक, अभव्यसिदिक; मिथ्यास्व, संक्षिनी, आहारिणी, अनाहारिणी: साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

सासादनसम्यग्दाप्टे मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप कहने पर---एक सासादन गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्या-प्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, स्त्रविद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्च और अवश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहा-रिणी, अनाहारिणी साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

र्च. ११९

मिथ्याद्दाध्रे मनुष्यनियांके अपर्याप्त आलाप.

1 7	े जी•	। प	मा	सं.	ग.	5.	का.	यो.	व.	専.	झा.	संय.	₹.	ले.	म.	। स.	मध्जे.	<u> আ</u>	3.	1
1	2	६अ.	৩	8		8	8	્ર	۶.	8	२	ર	ર	<i>द.</i> २	र	2	9	२	ર	
मि	. स. अ.	<u>}.</u>			म्.	<b>ч</b> .	त्रस.	औ.मि,	स्री.		कुम.	असं	चथु	का.	भ	मि.	स.	आह्रा.	स (कः।.	
					L F	1		कार्म.		ł	कुश्च.		अच.		(अ.			अन्।	अन्।.	
ľ	1						1	]		1			ĺ	। মা∙ ३				1		
	1 1							1			1		1	অগ্র,						
				Ì						ĺ		i					1			

न. १२०

#### सासादनसम्यग्दाप्ट मनुष्यनियोंके सामान्य आछाप.

गुजी प.प्रा. सं. ग. इं. का. यो. वे. क. झा. संय द. ठे. स. स. संज्ञि आ. उ. •१ २ ६ १० ४ १ १ १ १ १ ४ ३ ३ २ इ.६ १ १ २ २ २ सा. सं. प. प. ७ म. पंचे. त्रस. स. ४ खी. अज्ञा. असं. चक्षु. सा.६ म. सासा. सं. आहा. साका. सं.अ ६ व. ४ व. अच. अच. अत्ता. असं. जज्जा. अत्त. अ. ओ.२ का.१ पजत्त-मणुसिणी-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सासणसम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सामारु-वजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा<sup>78</sup>।

अपज्जत्त-मणुसिणी-सासणसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्यिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवासिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

पर्याण्त सासादनसम्यग्दाष्टे मनुष्यनियाँके आठाप कहने पर-एक सासादन गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमाल, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, मनुष्य-गंति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दें। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अपर्याप्त सासादनसम्यग्टाप्टे मनुष्यनियोंके आछाप कहने पर--- एक सासादन गुज-स्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेखाएं, भावसे रूष्ण, नलि और कापोत ये तीन अगुभ लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्तव, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोप-

ત્રં, શ્વર્

सासादनसम्यग्ददि मनुष्यनियोंके पर्याप्त आलाप.

ग.	जी.	ष	मा   स	ग.	ंड्	का	यो.	à.	क	রা	संय.	ह.	ੈ.	] म.	.स.	संझि.	জা,	ਤ.
े सा.	र सं.प.	ų	808	<b>२</b> स.	पते. २	≺ .फ्रह	९ म₊४ व∙४	र स्री।	8	<b>१</b> अज्ञा.	१ असं.	२ चक्षु. अच	द्र. ६ भा. ६	२ स.	∾ .1ह1म	१ सं.	१ आहा.	र साका अना
۱				<u> </u>	1	[	ओ. १						ł	ļ 				

सण्णिणी, आहारिणी अणाहारिणी, सामारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा'ं ।

मणुसिणी-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ञत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागाह्यजुत्ताओ होंति अणागाह्यजुत्ताओ वा<sup>24</sup> ।

मणुसिणी-असंजदसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो,

योगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

सम्याग्मध्याद्दाष्टि मनुष्यानियोंके आरुाप कहने पर एक सम्याग्मध्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त अविसमास, छहों पर्याण्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कथाय, तीनों अज्ञानोंसे मिधित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचश्च ये दे। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों ठेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

असंयतसम्यग्टाप्टि मनुप्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्टप्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छढों पर्यातियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञाणं, मनु-

मं. १२२ सासादनसम्यग्दछि मनुष्यनियोंके अपर्याप्त आलाप.

∣ गु.!जी.  प. प्रा.   सं.   ग. इ	।का,[यो.∣वे.]क.	झा ( संय द.	ले. <u>  म.  </u> स.  संज्ञि	<u>आ.</u> <b>उ.</b>
<u>११</u> ६७४११	। १ २ १ ४ औ.मि. स्ती	र १ २ युम असं चक्ष्	द्र.२११११ का.स.सारा.स.	र २ आहा. साका.
सा.स. अ.अ. म		कुश्र, जिस्तु, कुश्र, अचक्षु,		अन्। अना
			मा २ अश	

#### नं.१२३

### सम्यग्तिथ्यादष्टि मनुष्यनियोंके आलाप.

1 4 4 4 4 9 9 1 1	9 8 8 8	रि. १ र	छे. भ स. संहित. इ.इ. १ १ १ भा ६ स. सम्प. सं	१ २
	व.४ औ⊦१	३ अच- अझा- मिश्र		अना.

छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ताओ वा'''।

<sup>107</sup>मणुसिणी-संजदासंजदाणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दत पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ,

प्यगति, पंचेद्रियजाति, जसकाय, चारों मने.योग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रविद, चारों कपाय, आदिके तीन ब्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेक्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्ष्व, संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

संयतासंयत मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर-पक देशाविरत गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, चारों मनोवोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन क्रान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेरयाएं, भावसे तेज, पग्न और छुक्क लेरयाएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक

नं. १२४

2. 2. 1

#### असंयतसम्यग्दाप्टे मनुष्यनियोंके आलाप.

। ग्र	जी.	q.	সা ৷	स.	] ग.	<b>\$</b> -	কা.	यो •	∣ वे ग	क.	<b>হা</b> •	ं संय	द.	े ले.	ं स•	स्	सं)ज्ञे.	्ञा.	े उ.
18	- ২	Ę	90	8	2	8	શ	९	र	3	्र	8	३	द्र. ६	्र	्र	۲,	१	२
	सं.प				म.	पंचे.	चस.	म. :	४ छ।		.मति.	अस	के.द.	भा ६	म.	) औप	सं.	आहा.	ंसाकाः
लाम्	सं∎प.							a. :	s'		श्रुत.	:	विना.			क्षा.		1	अना.
1	t						ĺ.	औ.	<b>3</b> ]		એવ.	1	1		'	क्षायो	:	ŀ	
					ļ				ļ	l	1			:		l	1	3	

#### नं. १२५

## संयतासंयत मनुष्यनियोंके आलाप.

[ गु.	जी,	ष.	प्रा	सं,	ग.	इ	का,	्यो.	ंवे	क.	হ্লা-	ं संय	द.	ਲੇ	) म.	स.	संझि.	आ.	े उ.
3	2	Ę	201	8	१	٤.	१	S	្ទា	8	३	; १	<b>1</b>	द्र. ६	<b>! १</b> ;	২	2	۶.	्२
देख.	सं.	1		;	म.	1.	· • • •	म. ४	स्त्री.	. f		दश.	के. द.	भाः३	[म.		् स.	आहा.	साका.
110	q.						1	व.४	1	i 1	श्रुत•	1	विना	ु छुम		क्षा	i i		্ জনা
1	ł	. 1	1	;			i	<b>अ</b> । १			अन.	1	I	!	; '	क्षायो.	! . 	•	r
ľ	]	' i	:				-												

सामारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणुसिणी पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद-णचुंसयवेदाणमुदए आहारदुगं मणपज्जवणाणं परिहारसुद्धिसंजमो च णत्थि । इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

मणुसिणी-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणदाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, आहारसण्णाए विणा तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी,

ये तीन सम्ययत्व, संबिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

प्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर-एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग होते हैं। नौ योगोंके होनेका कारण यह है कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उदय होने पर आहारक-काययोग, आहारकामिश्रकाययोग, मनःपर्ययझान और परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होते हैं योग आलापके आगे स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेदयापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल ये तीन शुभ लेदयापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और सायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अप्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आछाप कहने पर---एक अप्रमत्तविरत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार-संझाके विना शेप तीन संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिक-

#### नं. १२६

प्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप

तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होति अणागारुवजुत्ताओ वा<sup>\*\*</sup>।

<sup>112</sup>मणुसिणी-अपुव्वकरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भोवेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणी,

काययोग ये नौ योग; खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोप-स्थापना ये दें। संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और ग्रुह्र ये तीन शुभ लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आछाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याण्तियां, दर्शों प्राण, आहारसंज्ञाके विना रोष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचत्रयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेद्दोपस्थापना थे दो संयम, आदिके तीन दर्शन, दृब्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्क-लेश्या; भब्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्वके विना औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व,

मं. १२७

अप्रमत्तसंयत मनुष्यनियांके आलाप.

्र स	जी, प २ (१	5 20	सं • २ आहा. त्रिना	१   म	8	٤.	। ९   म   व	४ ४	१ स्री. 	¥ 	्र मति. श्रुत-	छेदो.	<del>द.</del> ३ के.द. विमा.	ले.   द्र. ६ भा. ३   ग्रुम.	່ງ່	. ३	9	2	ર	
				!		 	औ.	. १		]	अव.					क्षाया.	۱   		ļ ļ	

#### नं. १२८

# अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु. जी. प. श. सं. ग. इं. का. यो. वे. क. ज्ञा. संय. द. छि. स. स. संग्लि. आ. उ. १ १ ६ १० ३ १ १ १ ९ १ ४ ३ २ ३ द. ६ १ २ १ १ २ अपू. सं.प. आहा. म. पं. त. म. ४ ह्यी. मंति. सामा. के.द. मा. १ म. औ. सं. आहा. बिना. ब. ४ छत. छेदो. बिना. छ. क्षा. औ. १ अव.

Jain Education International

आहारिणी, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणुसिणी-पढम-अणियईणिं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, आहार-भयसण्णाहि विणा दो सण्णाओ, मणुसगदी, पचिंदियजादी, तसकाओ, जव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुन्नकलेस्सा; भवसिद्धिया, दे। सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहा-रिणी, सागाहवज्जत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा<sup>815</sup>।

मणुसिणी-विदिय-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अबगदवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्सा, भावेण

संदिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अतिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आठाप कहने पर -- एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संक्री-पर्याध्त जीवसमास, छहों पर्याध्तियां, दशों प्राण, आहार और मयसंक्राके विना शेव दो संक्राएं, मनुष्यगति, पंवेक्ट्रियजाति, जसकाय, चारों मनो-योग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रविद, चारों कवाय, आदिके तीन क्रान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे शुक्क लेक्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

आनिवृत्तिकरण गुणस्थानके दितीय भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर-एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुद्धलेश्या;

### नं. १२९ अनिवृत्तिकरण प्रथमभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

र र इ २०२ २ २ २ २ ९ १ ४ ३ २ ३ द. ६ १ २ <b>२ १ ९</b> अ. सं. प. मै. म. पंचे. त्रस. म. ४ छी. मति. सामा. के.द. मा. १ म. औप. सं. आहा. प्र. परि. व. ४ श्रुत. छेदो. विना. शु. झा.	ਤ_
	२
	गकत शना-
भा. औ.१ अव.	

438]

[ પરપ

सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया, दे। सम्मत्तं, साण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ह्य</sup>ा

मणुसिणी-तदिय-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पडजत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णन जोग, अवगदवेदो, कोधकसाय विणा तिण्णि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?!!</sup> ।

भव्यसिद्धिक, औपशमिक और झायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके तृतीय भागवर्तिंनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर---पक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, परित्रहसंझा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और ओदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, कोधकषायके विना रोष तीन कषाय, आदिके तीन झान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे शुक्ललेक्या; भव्यसिद्धिक, औपदामिक और झायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

र्न. १३०

अनि∄स्तिकरणके द्वितीयभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आळाप.

	ग्रु २   न अ.स.प. द्वि. मा,	ष मा.) सं. ६ १० १ प.	2	र १	यो. ९ स.४ व४ औ.१	0	क. झा. ४   ३ मति. श्रुत अव.	्र सामा. छेदा	<b>२</b> के.द.	द्र.६ मा-१	१	ેર	संग्ति र सं.	१ आहा.	उ. २ साका, अना,	
--	---	----------------------------	---	-----	------------------------------	---	---	---------------------	-------------------	---------------	---	----	--------------------	-----------	--------------------------	--

नं. १३१ अनि हुत्तिकरणके तृतीयभागवातींनी मनुष्यनियोंके आऌाप.

्र गुर्¦जी≓ पर्] प्रा.∫ संग गर्न इ. <sub>।</sub>	का. यो. वे.	क. ∣ झा.	संय. द. छे.	_ म स.	संज्ञि आ	उ
रि. १ ६ २० १ १ १ अ. म. प. म.	१ ९ ० 		२ ३ द. सामा के द. मा. छेदो विना रा.	६ १२ १ म. औ.	११ संग्रीहाः	२ साका
तु. प. । िमि भाः	र्के व.४ हि औ.१	विना. श्रुत. अव.	छेदो विना छ.	क्षा.		अना.

मणुसिणी-चउत्थ-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, दो कसाय, तिण्णि णाण, अग्गि-दद्ध-बीए अंकुरो व्व इत्थि णवुंसय-वेदोदय-दूसिय-जीवे वेदोदए फिट्टे वि ण मणपज्जवणाणमुप्पज्जदि । दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दे। सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागास्रवज्जत्ता होंति अणागारुवज्जत्ता वा

मणुसिणी-पंचम-अणियङ्घीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके चतुर्थ भागवर्तिनी मनुप्यनियोंके आलाप कहने पर--एक आनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परि-ष्रहसंझा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औद्दारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, माया और लोभ ये दो कषाय, आदिके तीन झान होते हैं। यहांपर स्तविदेके नष्ट हो जाने पर भी मनःपर्ययझानके नहीं होनेका कारण यह है कि जैसे अग्निसे दग्ध हुए बीजमें अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता है, उसीप्रकार स्त्री और नपुंसकवेदके उदयसे दूषित जीवमें, वेदोदयके नष्ट हो जाने पर भी, मनःपर्ययझान उत्पन्न नहीं होता है, इसलिये यहां पर भी तीन झान ही कहे गये हैं। झान आलापके आगे सामा. यिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएं, भावसे शुक्कलेक्या; भव्यसिद्धिक, औपशामिक और सायिक ये दे। सम्यक्त्व, सांक्षेनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्तिंनी मनुष्यनियोंके आळाप कहने पर-एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संझी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण<sub>,</sub> एक परिग्रहसंझा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चार्गे वचनयोग

Ĥ.	१३२
----	-----

### अनिवृत्तिकरणके चतुर्थभागवार्तनी मनुष्यनियोंके आलाप.

13.	জী	्य -	न्रा -	सं -	ग.	Ę.	का.	यो.	े वे	क.	ं ज्ञा.	¦ संगं•	द.	ले.	ंभ	∣ स.	संझि	: আ.	∣ उ. [
		. N	90'	•	•	÷ •		ેલ		ર	•	2		द्र द्		· -	8	<u>ع</u>	્ર
अ.	सं.		6	₹.	म.	पंचे -	त्रस.										र्स.	आहा	साका,
च.	<b>ή</b> -						ļ	·	अप	ं लोभ.	ुश्रुत.	छेदी.	विना	হু,		क्षा			अना.
H11.					ı –	t. T		औ. १			अव•		i	:	I				
			i		]	)	_j			)	_i			,	]	<u>;                                    </u>	J		i

जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्ताओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मर्च, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्त</sup>।

<sup>स्थ</sup>मणुसिणी-सुहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकसाओ, तिण्णि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, दो सम्मत्तं,

और औदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, लोभकषाय, आदिके तीन झान, सामा-यिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेड्यापं, भावसे धुक्ललेड्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्रिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर---पक सुक्ष्मसा म्पराय गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों माण, सूक्ष्म परि-ग्रहसंझा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और ओदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकषाय, आदिके तीन झान, सूक्ष्म-साम्परायशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेदयाएं, भावले शुक्कलेक्ष्या। भष्य-

## नं. १३३ अनिवृत्तिकरणके पंचमभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

<u>  ग</u> . ।	जी,'	षः म	ं सं.	ग-	इ	का,	यो.		<b>à</b> .!	क,	লা.	ं संय.	ं द.	ਂ ਲੇ.	ं म्	ं स	'सं झि.	आ।	<u>उ.</u>
2	۶.	<b>६</b> र	5 2	2	1	٩.	९		2	٤.	ર્	२	ંર	.द.६	3	<b>,</b>	2	1	् २
। अ	सं 🔆	:	्परि	म.	l min	ं	म₊`	۲. ۱	- 3	ਤੇ ਼ਿ	मति-	् सामा-	के द	्मा-१	्म.	औष,	्स.	आहा.	्साका ।
ोप <b>.</b> ¦		і	i		6	. F	व,	¥١	5	!	श्रुत.	े छेदो.	विनः	্যু.	ļ.	्रक्षा.		r t	साका. अना.
मा	i	i	+		{		ओ.				अव	•	ł		) 1		:	1	
		:	· .		1	· ·			ļ	1		ı		!	1	i		1	

### नं १३४ सुक्षमसांपराय गुणस्थानवार्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु√कोेेेेेेेेेेेेे प्रा∤संग   गः  इंगक	. यो. थे. क. झा	संय द छे.	म. स. संज्ञि.	<u> </u>
2 2 6 20 2 2 2 1		१३ द.६	2 2 2	१ २
म्. सं. स्. म. १९	म.४ ट्रिश्म. मति	. सूक्षम-के.दः भा. १ . सां विना. शु.	भ. आप. स.	आहाः साकाः अत्राः
q. q. p.	व ४ ह लाम थुत ओ. १ अव	• ता• ।वना- छ•	sa   -	<b>A11</b>
				(]

५२८ ]

सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सामारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मणुसिणीसु उवसंतकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, उवसंतकसाओ, तिण्णि णाण, जहाकखादविहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होति अणागारुवजुत्ताओ वा<sup>88</sup>।

मणुसिणीसु खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, खीणकसाओ, तिण्णि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण,

सिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्तव, संबिनी, आहारिणी, साकारोपयो गिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उपशाम्तकषाय गुणस्थानवर्तिनो मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक उपशान्त-कवाय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, उपशान्त-संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों यचनयोग और औदा-रिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, उपशान्तकपाय, आदिके तीन ज्ञान, यथाख्यात-विद्वारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्तलेश्याः भव्यसिद्धिक, औपशक्ति और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

क्षीणकषाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आल्ठाप कहने पर—एक क्षीणकषाय गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, क्षीणसंझा, मनुष्यगति, पंचे-न्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, क्षीणकषाय, आदिके तीन झान, यथाख्यातविद्वारयुद्धिसंयम, आदिके

**ল**, মূহাৰ

उपशान्तकषाय गुणस्थानवतिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

9	<u>जी.</u> प. १ द् सं. प.	प्रा. सं. ग १० ० १ उ. म. सं.	9 9	<u>e</u>	0 0	3	9 3	दृहृ १	. स. संज्ञि. २ <b>१</b> ओप सं. क्षा.	<u>अा.</u> र आहा.	उ. २ साका, अना,
				औ. <b>१</b>	l	अव		<u> </u>	!		

१, १.]

दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>???</sup> ।

<sup>229</sup>मणुसिणी-सजोगिजिपाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणड्ढाणं, दो जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजनीओ, चत्तारि पाण दो वा, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, सत्त जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धि संजमो, केवलदंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं,

तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ छेर्याएं, भावसे शुक्कछेरयाः भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त, संत्रिनी, आह्वारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

सयोगिजिन गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर--पक सयोगि केवली गुणस्थान, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; वचनबल, कायबल, आयु और इवासोच्छ्वास ये चार प्राण, तथा समुद्धा-तर्का अपर्याप्त अवस्थामें, वचनबल और इवासोच्छ्वासका अभाव हो जानेसे, अथवा तेरहवें गुणस्थानके अन्तमें आशु और कायबल ये दो प्राण होते हैं। झीणसंक्षा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दोनों बचनयोग, औदा-रिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये सात योग, अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवलक्कान, यथाख्यातविद्वार्य्युद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेड्याएं, भावसे शुक्कलेस्या; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिनी और असंक्षिनी इन दोनों

नं. १३६

#### क्षीणकषाय गुणस्थानवर्तांनी मनुष्यनियोंके आळाप

P	ŗ. ¦	जी-	ेष	मा	सं.	[ ग,	ं इं.	का.	यो.	<u>व</u> े.	क.	्रज्ञ.	संय.	<u>द</u> .	े.	<b>म</b>	स.	संहि	् आ.	_ उ.	I
ľ	۲.	्र	Ę		. 0	\$	\$	8	8	. •	, o	R	২	्र	द्र.६	१	શ	۶ .	3	ર	ł
		सं.प			E	₩.	मः	त्रस.	म.४ व	म	5		F	केद		भ	क्षाः	सं.	) आहा.	साका.	ł
	2		I		<u>ب</u>				ু × অগ্	સં	સી <b></b> વ	। श्रुत. अव.		विना	য়.			ļ		अना.	I
		:	:	:		ļ	:	ļ	<b>, ,</b>	1				I	ļ			<b>)</b>			ł

#### नं. १२७

सयोगिकेवली गुणस्थानवार्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

$\begin{array}{c ccccccccccccccccccccccccccccccccccc$	22022
---	-------

णेव सण्णिणीओ णेव असण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागार-अणागोरहि जुगबदुवजुत्ताओ वा होंति।

मणुसिणी-अजोगिाजिणाणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, एओ पाणो, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणीओ णेव असण्णिणीओ, अणाहारिणीओ, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ताओ वा होति<sup>134</sup>।

लंद्रि-अपञत्त-मणुस्साणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे

विकल्पोंसे विमुक्त, आहारिणी, अनाहारिणी, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगीसे युगपत् उपयुक्त होती हैं।

अयोगिंग्रिजन गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर---एक अयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, एक आयु प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्य-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अयोगस्थान, अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवल-ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्याएं, भावसे अलेश्यास्थान; भव्यसिद्धिक, झायिकसम्यवत्व, संग्निनी और असंग्निनी इन दोनों विकल्पोंसे मुक्त, अनाहा-रिणी, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होती हैं।

लुब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके आलाप कहने पर--एक मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संक्री-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्राएं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नषुंसकवेद,

न. १३८

# अयोगिकेवर्ळा गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप

		· -								-			. 9	- 2	1 <b>9</b>	. ч	संज्ञि	ι τ	1
	;∣पर्या.	г.	<u>ज</u>	मि	म.	11	नेस,	अयोग	. It b	Fat.	के.	यथा.	के.द.	द्र.	भ.	ंक्षा <b>-</b>	उस । विना	অনা.	साका अनाका
Ĩ	51	 	ন । । ।	क्षे व				I	িন্ত	র	1		:	सा.	!	i		ļ	यु. उ.
	1	•						:		:		j	1		1	Ì			

५२०]

2, 2. ]

जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स</sup>े।

### एवं मणुसगदी समत्ता।

" देवगदीए देवाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण,

चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्त लेदयाएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत ये तीन लेक्याएं; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

#### इसप्रकार मनुष्योंके आलाप समाप्त हुए।

देवगतिमें सामान्य देवोंके सामान्य आछाप कहने पर--आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों घचन-योग, वैकिथिककाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसक बेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान,

#### न, १३९

्लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यके आलाप.

<u>गु. जी. प. त्रा.सं. ग. इं. का.</u> २ २ ६अ. ७ ४ २ २ २ मि. सं. अ. म. पं. त्रस.	<u>यो. वि. क. हा. संय. द.</u> २ १ ४ २ २ २ ओ.मि.न. कुम. अस. चधु कार्म. जुशु. अच.	द्र. २ २ १ १ २ २ . का. म. मि. सं. आहा. साका.
---	--	---

#### नं. १४०

#### देवींके सामान्य आलाप

[गु. ]	जी.	q.	प्रा∙े से	ग. <sup>†</sup> ।	<b>र</b> का	यो.	वे,	<del></del>	ज्ञा."	' संय •	द.	ਲੇ.	भ	स.	संग्रि.	आ.	ਤ.
8	<u>२</u>	६प.	80 8	2	ર ર	११	२	x	ଞ୍	÷. ۲	্র	द्र. ६	্ৰ	Ę	१	ર	् २
मि.	संप संअ	६अ	9	à .	<del>.</del>	म. ४	स्री.		ঁ অ <b>ज्ञा</b> ३	असं	के.द.	मा. ६	' स	İ	सं.	आहा	साका,
सा.	सं. अ				जें द	<b>ब,</b> ४	षु.		ज्ञान.३	:	विना.		).		! !	अना.	अना.
स.						ंवे. २	۱~ ۱			1		i					]
अ.		: 1		i ;	·	ं का २	! !		i	:			!	!	· ·	1	

असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणे। अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणडाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ एत्थ सिस्सो भगदि - देवाणं पजजतकाले दव्वदेा छ लेस्साओ हवंति चि एदं ण घडदे, तेसिं पजत्तकाले भावदो छ-लेस्साभावादो । मा भवंतु देवाणं भावदो छ लेस्साओ दब्वदो पुण छ लेस्सा भवंति चेव, दब्व-भावाणमेगत्ताभावादो। इदि एदमति वयणं ण घडदे, जम्हा जा भावलेस्सा तल्लेस्सा चेव ओरालिय-वेउव्विय-आहारसरीरणोकम्म-षरमाणबो आगच्छंति । तं कधं णव्वदि त्ति भणिदे सोधम्मादिदेवाणं भावलेस्साणुरूव-द्व्वलेस्सापरूवणादो णव्वदि । ण च देवाणं पज्जत्तकाले तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ मोत्तूणण्णलेस्साओ अस्थि, तम्हा देवाणं पज्जत्तकाले दव्वदो तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साहि होदव्यमिदि । एत्थ उवउज्जंतीओ गाहाओ---

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेखाएं, (यहां तीन अशुभ लेखाएं अपर्याप्तकालकी अपेक्षा जानना चाहिये।) भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहौं सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ुउन्हीं सामान्य देवोंके पर्याप्तकाळसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संबी-पर्योप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौं प्राण, चारों संबाए, देवगति, पंचे-न्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नो योगः स्त्री और पुरुष ये दो चेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेख्याएं होती हैं।

शंका - यहांपर शिष्य कहता है कि देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यसे छहाँ लेश्याप होती हैं यह वचन घटित नहीं होता है, क्योंकि, उनके पर्याप्तकालमें भावसे छहों लेश्याओंका अभाव है। यदि कहा जाय कि देवोंके भावसे छहों छेश्याएं मत होवें, किन्तु द्रव्यसे छहों लेक्याएं होती ही हैं, क्योंकि द्रव्य और भावमें एकताका अभाव अर्थात् भेद है। सो ऐसा कथन भी नहीं बनता है, क्योंकि, जो भावलेइया होती है, उसी लेइयावाले ही औदारिक, वैकि-यिक और आहारकदारीरसंबन्धी नोकर्म परमाणु आते हैं। यदि यह कहा जाय कि उक्त बात कैसे जानी जाती है, तो उसका उत्तर यह है कि सोधर्म आदि कल्पवासी देवोंके भाव-लेक्याके अनुरूप ही द्रव्य लेक्याका प्ररूपण किये जानेसे उक्त बात जानी जाती है। तथा देवोंके पर्याप्तकालमें तेज, पद्म और शुक्ल इन तीन लेक्याओंको छोड़कर अन्य लेक्याएँ होती नहीं है, रसलिये देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यकी अपेक्षा भी तेज, पद्म और शुक्ल लेक्याप होना चाहिये। इस प्रकरणमें निम्न गाथाएं उपयुक्त हें---

### संत-पंरूंवणाणुयोगदारे गदि-आलाववण्णणं

किण्हा भमरसमण्णा णोला पुण णीलगुलियसंकासा । काओ कओदवण्णा तेऊ तवणिञ्जवण्णा य ॥ २२३ ॥ पम्मा पउमसवण्णा सुक्का पुण कासकुष्ठुमसंकासा । किण्हादि-दब्बलेस्सा-वण्णविसेसो मुणेयच्यो` ॥ २२४ ॥

# भावलेस्सा-लिंगं थोरुचएण एसा गाहा जाणावेई —

णिम्मूलखंधसाहुवसाहं बुच्चित्तु वाउ-पडिदाई । अब्भंतरलेस्ताणं मिंदइ एदाई वयणाई<sup>६</sup> ॥ २**२५ ॥** 

रुण्णलेख्या भौरेके समान अत्यन्त काले घर्णकी होती है, नीललेड्या नीलकी गोलीके समान नीलवर्णकी होती है, कापोतलेड्या कपोतवर्णवाली होती है, तेजोलेदया सोनेके समान घर्णवाली होती है, पद्मलेड्या पद्मके समान दर्णवाली होती है और शुक्ललेट्या कांसके फूलके समान द्वेतवर्णकी होती है। इसप्रकार रुष्णादि द्वव्यलेदयाओंके वर्ण-विद्रोप जानना चाहिए॥ २२३,२२४॥

भावलेरयाओंके स्वरूपका थोड़ेमें संत्रहरूपसे यह गाथा झान करा देती है— जड़-मूलसे बृक्षको काटो, स्कन्धसे काटो, शाखाओंसे काटो, उपशाखाओंसे काटो फलोंको तोड़कर खाओ और वायुसे पतित फलोंको खाओ, इसप्रकारके ये वचन अभ्यन्तर अर्थान् भावलेरयाओंके भेदको प्रकट करते हैं॥२२५॥

विशेषार्थ — गोम्मटसार जीवकांडमें उक्त अर्ध इस प्रकारसे स्पष्ट किया गया है कि फलेंसि लेदे हुए वृक्षको देखकर कुष्णलेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षको जड़-मूलसे उखाड़कर फलेंको खाना चाहिये। नीललेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षको स्कन्ध अर्थाद मूलसे ऊपरके भाग को काटकर फलेंको खाना चाहिये। कापोतलेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी झाखाओंको काटकर फलेंको खाना चाहिये। तेजोलेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी झाखाओंको काटकर फलेंको खाना चाहिये। तेजोलेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी डपझाखाओंको काटकर फलेंको खाना चाहिये। तेजोलेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी उपझाखाओंको काटकर फलेंको खाना चाहिये। पद्मलेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी उपझाखाओंको काटकर फलेंको खाना चाहिये। पद्मलेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षके जलतेंको तोड़कर खाना चाहिये। छुक्ललेक्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षके वायुसे गिरे हुए फलेंको खाना चाहिये। उक्त प्रकारके भावोंसे लहों लेक्याओंके तारतम्यको जान लेना चाहिये।

१ ' गौला पुण ' इति स्थाने ' आ, क ' प्रत्योः ' भीलायण ' इति पाठः ! ' अ ' प्रतो ' भीलाघण ' इति पाठः ।

🤏 पंचसं, १, १८३, १८४, ( दि, हस्तलिखित )

३ णिम्म्लखंधसाहुतसाहं डिस् मिणिसु पश्चिमाइं। खाउं फलाइं इदि जं गणेण वयणं **इ**ते कम्म ॥ गो. जी. ५०८. ५३४ ]

तेऊ तेऊ तेऊ पम्मा पम्मा य पम्म-पुक्का य । सुक्का य परमसुक्का लेस्ससमासो मुणेयव्वो<sup>र</sup> ॥ २२६ ॥ तिण्हं दोण्हं दोण्हं छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च । एत्तो य चोदसण्हं लेस्साभेदो मुणेयव्वो<sup>र</sup> ॥ २२७ ॥

एत्थ परिहारो उच्चदे—-ण ताव एदाओ गाहाओ तो पक्खं साहेंति, उभय-पक्ख-साधारणादो । ण तो उत्त-जुत्ती वि घडदे, ण ताव अपञत्तकालमावलेस्समणुहरइ दव्व-लेस्सा, उत्तमभोगभूमि-मणुस्साणमपञत्तकाले अमुह-ति-लेस्साणं गउरवण्णाभावापत्तीदो । ण पञत्तकाले भावलेस्सं पि णियमेण अणुहरइ पज्जत्त-दव्वलेस्सा, छव्विह-भावलेस्सासु परियद्वंत-तिरिक्ख-मणुसपज्जत्ताणं दव्वलेस्साए अणियमप्पसंगादो । धवलवण्ण-वलायाए

तीनके तेजोछेत्त्याका जघन्य अंश, दोके तेजोछेत्त्याका मध्यम अंश, दोके तेजेछित्त्याका उत्क्रष्ट एवं पद्मलेत्त्याका जघन्य अंश, छहके पद्मलेत्त्याका मध्यम अंश, दो के पद्मलेत्त्याका उत्क्रष्ट एवं शुक्र लेत्त्याका जघन्य अंश, तेरहके शुक्रलेत्त्याका मध्यम अंश तथा चौदहके परमशुक्रलेत्त्या होती है। इस प्रकार तीनों शुभ लेत्त्याओंका भेद जानना चाहिये॥ २२६, २२७॥

विशेषार्थ — भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क इन तीन जातिके देवोंके जघन्य तेजोलेक्या होती है । सौधर्म और पेदाान इन दो स्वर्गवाले देवोंके मध्यम तेजोलेक्या होती है । सानत्कुमार और माहेन्द्र इन दो स्वर्गवाले देवोंके उत्कृष्ट तेजोलेक्या और जघन्य पग्नलेक्या होती है । ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ठ, शुक और महाशुक्र इन छह स्वर्गवालोंके मध्यम पग्नलेक्या होती है । शतार और सहस्रार इन दो स्वर्गवालोंके उत्कृष्ट पन्नलेक्या और जघन्य युक्ललेक्या होती है । शतार और सहस्रार इन दो स्वर्गवालोंके उत्कृष्ट पन्नलेक्या और जघन्य शुक्ललेक्या होती है । शतार और सहस्रार इन दो स्वर्गवालोंके उत्कृष्ट पन्नलेक्या और जघन्य शुक्ललेक्या होती है । आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नौ श्रेवेयक इन तेरह विमानवालोंके मध्यम शुक्ललेक्या होती है । इसके ऊपर नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर इन चौदह विमान-यालोंके उत्कृष्ट या परमशुक्ललेक्या होती है ।

समाधान—दांकाकारकी पूर्वाफ दांकाका अब परिद्वार कइते हैं—उपर कही गई ये गाथाएं तो तुम्हारे पक्षको नहीं साधन करती हैं, क्योंकि, वे गाथाएं उभय पक्षमें साधारण अर्थात् समान हैं। और न तुम्हारी कही गई युक्ति भी घटित होती है। जिसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—द्रव्यलेदया अपर्याप्तकालमें होनेवाली भावलेदयाका तो अनुकरण करती नहीं है, अन्यथा अपर्याप्तकालमें अग्रुभ तीनों लेदयावाले उत्तम भोगभूमियां मनुष्योंके गौर वर्णका अभाव प्राप्त हो जायगा। इसीप्रकार पर्याप्तकालमें भी पर्याप्त-जीवसंबन्धी द्रव्यलेदया भाव-लेदयाका नियमसे अनुकरण नहीं करती है। क्योंकि, वैसा मानने पर छह प्रकारकी भाव-लेद्र्याओंमें निरन्तर परिवर्तन करनेवाले पर्याप्त तिर्यंच और मनुष्योंके द्रव्यलेद्र्याके अनियम-

र गो. जी. ५३५. परंतत्र चतुर्थचरणस्वयम्--' भवणतिया पुण्णगे असुद्दा'। प्रतिष्ठ प्रथमपंक्तों ' तेउ तेड तह तेऊ यन्मं पन्मा य ' इति पाठः

२ गो, जी. ५३४, परं तत्र चतुर्थचरणरत्वयम्-' हेस्सा सवणादिदेवाणे ' |

1.5

# संत-परूवणाणुयोगद्दारे गदि-आङाववण्णणं [ ५३५

१, १.]

भावदो सुक्कलेस्सप्पसंगादो । आहारसरीराणं धवलवण्णाणं विग्गहगदि-द्विय-सच्वजीवाणं धवलवण्णाणं भावदो सुक्कलेस्सावत्तीदो चेव । किं च, दव्वलेस्सा णाम वण्णणामकम्मो-दयादो भवदि, ण भावलेस्सादो । ण च दोण्हमेगत्तं णाम, वण्णणामं-मोहणीयाणं अघादि-घादीणं पोग्गल-जीवविवागीणं एगत्त-विरोहादो । विस्ससोवचयवण्णो भावलेस्सादो भवदि, ओरालिय-वेउव्विय-आहारसरीराणं वण्णा वण्णणामकम्मादो भवंति, अदो ण एस दोसो । इदि ण, 'चंडो ण मुयदि वेरं 'इच्चादि-बाहिरकज्जुप्पायणे द्विदिबंधे पदेसबंधे च भावलेस्सा-वावार-दंसणादो । अदो दव्वलेस्साए ण कारणं भावलेस्सा त्ति सिद्धं । तदो वण्णणामकम्मोदयदो भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियाणं दव्वदो छ लेस्साओ भवंति, उत्तरिमदेवाणं तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ भवंति । पंच-वण्ण-रस-कागस्स कसण-ववएसो व्व एगवण्ण-ववहार-विरोहाभावादो । भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया

पनेका प्रसंग प्राप्त हो जायगा। और यादे द्रव्यलेइयाके अनुरूप ही भावलेइया मानी जाय, तो धवल-वर्णवाले गगुलेके भी भावसे शुद्धलेदयाका प्रसंग प्राप्त होगा। तथा धवलवर्णवाले आहारक शरीरोंके और धवलवर्णवाले वित्रहगतिमें विद्यमान सभी जीवोंके भावकी अपेक्षासे हुद्वलेख्याकी आपत्ति प्राप्त होगी। दूसरी बात यह भी है कि ट्रव्यलेश्या वर्णनामा नामकर्मके उदयसे होती है, भावलेक्यासे नहीं। इसलिये दोनों लेक्याओंको एक कह नहीं सकते; क्योंकि, अघातिया और पुद्रलविपाकी वर्णनामा नामकर्म, तथा घातिया और जीवविपाकी ( चारित्र ) मोहनीय कमें इन दोनोंकी एकतामें विरोध है। यदि कहा जाय कि कमौंके विस्त्रसोएचयका वर्ण तो भावलेक्यासे द्वोता है, और औदारिक, वैक्रियिक, आहारकदाररिोंके वर्ण वर्णनामा नामकर्मके उदयसे होते हैं, इसलिए इमारे कथनमें यह उक्त दोष नहीं आता है, सो भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, 'रूण्णलेश्यायाला जीव चंडकर्मा होता है, वैर नहीं छोड़ता है ' इत्यादि रूपसे बाहरी कार्योंके उत्पन्न करनेमें, तथा स्थितिबन्ध और प्रदेशबन्धमें ही भावलेझ्याका व्यापार देखा जाता है, इसलिप यह बात सिद्ध होती है कि भावलेरया द्रव्यलेरयाके होनेमें कारण नहीं है। इसप्रकार उक्त विवेचनसे यह फलित।र्थ निकला कि वर्णनामा नामकर्मके उदयसे भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिषी देवॉके द्रव्यकी अपेक्षा छहाँ लेखाएँ होती हैं, तथा भवनात्रिकसे ऊपरके देवोंके तेज, पद्म और शुक्ल लेड्याएं होती हैं। जैसे पांचों वर्ण और पांचों रसवाले काकके अथवा पांचों वर्णवाले रसेंसि युक्त काकके कृष्ण व्यपदेशा देखा जाता है, उसी प्रकार प्रस्थेक शरीरमें द्रव्यसे छहाँ लेइयाओंके होने पर भी एक वर्णवाली लेइयाके व्यवहार करनेमें कोई विरोध नहीं आता है।

🤋 प्रतिषु ' बण्णणाम ' इति पाठो नास्ति ।

......

अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>रस</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, ततकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, द्व्वेण काउ सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?\*\*</sup>।

द्रध्यलेख्या आलापके आगे भावसे तेज, पदा और ठाुक्रलेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, छह्वों सम्प्रवत्व, संद्विक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अन्हों देखोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादपि, सासादनसम्यग्दपि और अविरतसम्यग्दपि ये तीन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकामिध्र और कार्मण ये देा योग, स्त्री और पुरुष ये दो वेद, चारों कषाय, विभंगझानके चिना पांच झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे कापोत और शुद्ध लेदयाएं, भावसे छहों लेदयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं !

र्न. १४१

देवोंके पर्याप्त आलाप.

गुर्जी प प्रा	्संत गत ई छ	हा यो।	वे.क.	. হা	संय द	हे. भ. स.	संज्ञि. आ	उ.
8 2 8 20	8.2.9	२, ९	ર ૪	, ६	१ ३	ः इ.६ २ ः ६	9   X	२
मि. 🚽	ζ.	. म.४	<u>स्त्री</u> -	া প্রজ্ঞান ব	असंग्रेद	્ઝ.પ્રુપ્ મારમ શુમ. અ	सं, आहा,	साका.
सा. 🚌	ъ	हिंब ४	પુ.	হান- ২	ेविनाः	રામ અ		अनाः
स, ⊨िं ⊨		व. १		I	!			
अत् ।	i	i	i i		i ·	ł	) ·	1

#### 

### देवोंके अपर्याप्त आलाप.

J	.   जी <b>.</b>	प.	[म्रा	( सं	. ग.	ं इं	.का.	यो•	वे.	क	্র্যা.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संझि.	आ.	उ.	
Ĩ	1 2	िह	0		• १			२	ंर	8	4	្រា		द्र. २	२ :	4	٤.	२	२	
1	. सं अ		1	I	.दे.	q.	'শ-	वे.मि.	स्री		। क्रुम,	असं.	के है.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
я	।.सं.अ ।	1	5		1			कार्म.						য়ু,				अना.		
Э	- 1	i					ł				मति.			मा. ६		औ.		1		
ľ	-	1		:		-	ŗ	:		:	श्रत-		1		l .	क्षा.				
		1	ł	:	:		ц :	1	1	!	ં અવન					क्षायो.	1 1	ļ		ł

ધરેદ ]

### संत-परूषणाणुयोगदारे गदि-आलाववण्णणं

देव-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>228</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

मिथ्यादृष्टि देवोंके सामान्य अलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संर्श्वा पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकियिककाययोग, वैकियिकभिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नषुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चश्चु और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो(पयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि देयोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अक्कान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रब्यसे छहों लेइयाएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेइयाएं; भव्यसिद्धिक,

नं. १४३

मिथ्य।इष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

																		. आ	
12	२	Ę	१०	8	१	રં	\$	\$ \$	ર	۲	३	1	ર	द ६	२	2	2	र -	२
			ভ		दे.	पंचे₊	त्रस,	म. ४	र्ह्ता		अज्ञा,	असं	चक्षु.	.मा ६	ं स-,	मि•	.स.	आहा.	साका.
1	स.अ	ं६्						व. ४				!	अच.		अ.			अना.	अना.
	!	अ.			,		:	वे. २			i			1	i			Í	
						ļ	1	का, र				I		ļ	· .		· .	i ļ	

2, 2-]

430

५३८ ]

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्क-रेस्सा, भावेण छ ठेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>86</sup>।

देव-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ .....

अभष्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संह्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्त लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्लिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्दाष्टि देवोंके सामान्य आछाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान,

નં. રઇક

मिथ्याद्दाप्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

۱	गु.	जी.	q.	<b>я</b> г.	सं	ग,₌	े इ.	का	यो •	∤वे.	क.	<b>রা</b> .	संय.	द.	हे.	<u>म</u> .	.स	साज्ञ	আ.	उ.	Í
l	٩.	्र	६	20	¥	2	2	3	९	্হ	x	₹	્ર	ર	द्र. ६	२	१	ર	२	3	
	मि.	सं.प.				दे.	.1107	. ज	म. ४	स्त्री		अज्ञा-	अस	चक्षु,	મા.ર	म∙	मि	स	आहा.	साका.	
1		' 					य प	र्भे	व. ४	पु.				अच-	যুম.	अ.				अना-	ĺ
			l				ļ		वे. १				}		1						

#### नं. १४%

मिथ्यग्दष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

13.	র্জা.		<b>я</b> ,	] <b>सं</b> .	) ग,	ं इं.	का,	यो.	। वे.	) क.	) ज्ञा-	संय	द.	ਲੇ.	ं स-	स.	संज्ञि.	- সান	ਤ.
1	1 2	Ę	0		१	ا ک	2	२	२	8	२	र	२	द्र, २	२	2	2	ર	ર
ÎĤ.	सं. अ	ं अ			इ.	ील	÷	वे.मि.	स्री ।		कुम,	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	. स	आहा.	साका.
		1	]			पचे	Ĩ	कार्म.	षु.	!	લુ; શુ.		अचशु.		अम-			अना.	अना.
					}						- <b>-</b>		_	भा ६		1	ļ		
		i j											1	İ	1	1	1		

१.]

पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाह्वजुत्ता होति अणागाह्वजुत्ता वा<sup>34</sup> !

<sup>200</sup>तेसिं चेव पजताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण

संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अवक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहां छेइयाएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्विक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दाप्टे देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं, देव-गाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, चक्षु और

નં. ૧૪૬

सासादनसम्यग्दाधि देवोंके सामान्य आलाप.

1	9	जी. २ सं. प. सं. अ.	६प.	20 8	2	9	२	<u>यो.</u> ११ म.४ व,४ वै.२	े२ स्री.	۲	3	१ असंग	२	<i>हे.</i> द्र. ६ मा.६	१ भ•	\$ 9 सं.	ર	<u>उ.</u> २ साका. अमा.
								का. १									:	

नं १४७

### सासादनसम्यग्टाप्टि देवोंके पर्याप्त आळाप.

गुन्जी पन्त्रा संग इं. का. यो. 'वे.क. ज्ञा, सयं. दन् ले. भ स. संहि. आ. उ. १ १ ६ १०४ १ ९ ९ २ ४ ३ १ २ द.६ १ १ १ १ २ सा.सं. दे. पंचे. त्रस. म.४ स्रो. अज्ञा. असं. चक्षु. सा. ३.म. सासा सं. आहा. साका. प. व.४ पु. अच. छुभ. वे. १

?, १. ]

तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साणिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपजत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा <sup>१४४</sup>।

देव-सम्मामिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो

अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहाँ छेश्याएं, भावसे तेज, पग्न और ग़ुक्ललेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दाष्ट देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासा-दन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमाति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

सम्याग्मथ्याद्दाष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, द्शों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानींसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेक्याएं, भावसे तेज,

ने. १४८

सासादनसम्यग्हीष्ट देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.जी. प प्रा. सं. ग. इं.का. य १ १ ६ ७ ४ १ १ १ २ सा. सं. अ. हू ह	<b>ξ ¦૨  ४   ૨   ૨</b>   ૨   ૨	ले.     म. स. सांझे.     आ.     ड.       इ. २     १     १     २     २       का.     स. सा.     सं.     आहा.     साका.       जु.     अना.     अना.     अनाका.       भा. ६     अना.     अनाका.
---	--------------------------------	--

**१**, १. ]

दंसण, द्व्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>886</sup>।

देव-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवासीद्विया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणे, आहारिणे अणाहारिणे, सामारुवजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा<sup>रक्ष</sup>।

पग्न और शुक्ल लेखाएं; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

असंयतसम्यग्दधि देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकियिककाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहां लेक्ष्याएं, भावले तेज, पद्म और ग्रुक्ल लेक्ष्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और झायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; सांज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

र्न. १४९

सम्यग्निथ्यादृष्टि देवोंके आलाप.

] गु.   जी. प.   त्रा. सं. ग. इ.	का यो वे क	<u>ज्ञाः   संय े</u> द-	ले. म. स. संज्ञि.	आ. ड.
9 2 4 20 8 9 2	• • • • • •			१ २
सम्य सं.प. प. दे. पंचे.				आहा. साका.
	व. ४ पु.	<b>३</b>   अच∙	રોમ	अना.
		ज्ञान- सिश्च		

#### नं, १५०

#### असंयतसम्यग्दाष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

13	जी.	q.	त्रा.	स.	<b>η</b> .	<b>ह</b> .)	का.	यो	•	वे.	ዋ.	<b>有</b> 1-	संय.	τ.	. ह	ं म •	स.	संज़ि.	आ	<u>ु</u> . (
1	२	Ę	90	8	ર	8	१	2	2	२	8		2	₹	द्र, ६	2	R	8	ર	ર
-	सं.प.	٩.	છ		वे.	पंचे -	त्रेस,	म.	۲ţ	<b>е</b> ј.	ĺ	मति.					ओप	सं.	आहा.	साका.
क्र	स.प. सं.अ	ষ্		İ				व.	¥	զ.	ŀ	श्रुत.		विना	ः शुम		क्षा-	i.	अना	अना,
1		अ.						वि.	3			ं अव.		-			क्षायो.	-		
	1		1 1			I I	i	কা	. و				۱.		1			1		l

तेसिं चेव पज़त्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ पज़त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्येण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणे।,

उन्हीं असंयतसम्यग्दाप्टि देवोंके पर्याप्तकाललंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरत-सम्यग्द्दाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दें। वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और छानललेक्याएं; भव्यसिद्धिक, औप-इामिक, झायिक और झायोपदामिक ये तीन सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयतसम्यग्दाष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, देवगति, पंचेद्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग़ुक्ल लेख्या, भावसे तेज, पद्म और ग़ुक्ल लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, औप-श्रामिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व; संक्षिक, आहारक, अनाहारक;

#### નં. ૧५૧

असंयतसम्यग्टपि देवोंके पर्याप्त आलाप.

अति. ~ <u>ि</u> भ	र	६	१०	8	2	9	9	९ म. व.	ያ	२ स्री	8	२	ર	१ भ•	<u></u>	2	2	<u>उ.</u> २ साका- अना-
D L								वेंग		5		-						

१, १.]

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र्स्त</sup>।

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, दो जविसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ जहण्णा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवासिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आद्यारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>888</sup>।

### साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके सामान्य आलाप कहने पर-आदिके चार गुणस्थान, संक्षी पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या-प्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, बसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकचेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेरयाएं, भावसे अपर्याप्त-कालकी अपेक्षा रूष्ण, नलि और कापोत लेरदया, तथा पर्याप्तकालकी अपेक्षा तेजोलेरया; भव्यासिद्धिक, अभध्यसिद्धिक; क्षायिकसम्यक्तवके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनांहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

#### મં. શપર

### असंयतसम्यग्हाप्टे देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु. , ज	गि∘ंष.	त्राः स	ं ग, इ	, কা	यो.	ेवे.	क.	গা.	संग.	द.	ੁ ਹੋ.	भ. स.	संझि	া আন্	ਤ.
ب ج (	र ंइ	98	و و خ	2 2	र के कि	1	8	३	्र	्य देखेल	.द.२ स्व	्र⊧३ ज औπ	१ मं	্ <u>২</u> আলা	२ मामा
આવ. સ	জন ৬		લ પ	<u>ସ</u>	्वः।म. कार्मः	3	:	+।त∙ ≫्त	¦ আবে । :	विनाः		म. औप. क्षा	. (1.	,आहा <sub>।</sub> अ <b>ना</b> .	अ <b>न</b> ा.
i	:	:	4 i	•	1	:		अत्र. अत्र.	:		भा. ३			י ו נ	
	:		1	:		1	i		i	1	्रास-		:		

#### नं. १५३

### भवनत्रिक देवोंके सामान्य आलाप.

गु. जी. प. प्रा. सं. ग. इ. का. यो. वे. क. हा. संय. द. हे. भ. स. सं. सं. जा. उ. ४ २ ६ १० ४ १ १ १ १ २ ४ ६ १ ३ द. ६ २ ५ १ २ २ मि स. प. प. ७ दे. पंचे. त्रस. म. ४ झी. हा. ३ असं. के.द. मा.४ स. सायि. सं. आहा. साका सा. सं. अ. ६ व. ४ पु. अज्ञा.इ विना. अज्ञा. आना. अना. स. अ. धे. २ अ. का. १

[ ં પ્રષ્ઠ ર

488]

### छनखंडागमे जीवहाण

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण जहण्णिया तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दे। गुणद्दाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

उन्हीं भवनात्रिक देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुण-स्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंवेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैकिधिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दें। वेद, चारों कषाय, तीनों अझान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेखाएं, भावसे जधन्य तेजोलेखा; भव्यसिद्धिक, अभध्यसिद्धिक; क्षायिकसम्यवत्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं भवनात्रिक देवोंके अपर्याप्तकाल्लसंबन्धी आलाप कहने पर-मिथ्यादाष्टि, और सासादनसम्यग्दाप्टि ये दो गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमाति और कुश्रुस ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुझु लेख्याएं, भावसे छण्ण, नील और कापोत लेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासा

ર્મ, ર્પક 👘

भवनत्रिक देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु. जी.	प्रांगः सं	ो <b>ग</b> े इं.)का	्यो.	वे. क.	्रहा. सं	य.   द.	8.   म	. स.	संशि.	্ৰা,	े . ।
2 2	<b>δ</b> 3 ο: Χ		4	R 8	Æ	१ 🔍	द्र.६ २	4	१	٩	२
मि संप	<b>q</b>	वे. तह वस	.   म. ४	स्री	গাৰ ২ অ	सं. थेः.द∕	मा.१ भ	े <mark>क्षा</mark> यिः	. सं.	আৱা,	साका.
साः	1	5			अज्ञा₊३	विनाः	ते. अ	विनाः			अना.
स.			वे र						1		
<b>अ.</b> ∫								1	i i	. !	

# १, १. ]

सण्णिणे, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेवमिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा जहण्णा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

दन ये दो सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

मिथ्यादाप्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके सामान्य आलाप कहने पर--एक मिथ्यादाप्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कथाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेरयाएं, भावसे अपर्याप्तकालकी अपेक्षा रूष्ण, नील और कापोतलेश्या, तथा पर्याप्तकालकी अपेक्षा जघन्य तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; निध्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ર્ન, ૧૫૫

भवनत्रिक देवोंके अपर्याप्त आलाप.

1 2	. ज	ĥ٠;	ч.	न्न.	सं	्ग.	इ.	का.	यो.	ेवे.	क.	ज्ञा-	संय.	द.	ં છે.	ं म.	₹.	साज्ञ	- आ	उ.
२	-	१	Ę	0	8	٤	1 2	र	્ર	२	8	२	8	ર	द्र २	ેર	ર	१	्र	ર
मि	. सि	•	÷			दे.	1	i 🕂	वे.मि.	,र्ह्या.	ļ	_ कुम∙	असं.	चक्षु	का.	ः स	मि .	सं.	आहा-	साका-
सा	୍ୱାଙ	េ់	ন্স				युः	त्रस	कार्म.	g.	ĺ	জু পু.	[	अच.	शु.	স	सा.		अना.	अना-
	ľ	:													्मा, २					
	Ι	j								;		1	1		, ગગુ.	1		<u> </u>	i l	

#### न. १५६

#### भवनत्रिक मिथ्यादष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

2 2 8 80 8 2 2 2 22 2 8 3 १ २ द. ६ २ १ ₹ R R मि.सं.प. ष. ७ पंचे. त्रस. म. ४ स्त्री. दे. अज्ञा असे. चक्ष, मान्४ | म मिन सं. आहा. साका. सं.अ. € व ४ पु. अच. अशु.२ अ. | अना, अना, वै. २ अ. तेज १ कार्म. १

५४६ ]

छर्खंडागमे जीवदाणं

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण जहण्णिया तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?\*\*</sup> ।

<sup>\*\*</sup>तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो

उन्हीं भवनत्रिक मिथ्याद्दाप्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाप्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्झो प्राण, चारों संशाएं देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिक काययेगा ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दे। वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेडयाएं, भावसे जघन्य तेजोलेड्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्विक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं भवनत्रिक मिथ्यादाप्टे देवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाप्टे गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वौकियिकामिश्रकाययोग और कार्मण-

नं. १५७ भवनत्रिक मिथ्याद्यष्टि देवोंके पर्याप्त आळाप.

									লা,							আ	उ.	f
				` ا _	<b>J</b>   ,	3	<b>২</b> 	8	3	8	ેર	द्र.६	्र	8	2	្ទ	२	L
14.	सं. प	प.	:	∣ द.	प्ते. व	्रमः ४	ंखाः र प्रं	.	জ্য।	अस ।	चक्षु. भूज	भा १ ने च	भ. अ	रम.	.स.	आहा.	२ साका, अना,	
		i		ĺ	! 1 :	वै.	' उ. १	i			ગપ	(1914	· <b>·</b> ·				পশান	l
I	ļ			1					!		:		· ·		:		ı	ļ

#### न. १५८

भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

[ ग्र	. जी	<b>.</b>	ч.	) प्रा	.स	ग.	Ξ.	কা,	्यो.	े ने	क.	ज्ञा.	संय.	<u>द</u> .	ਡੇ.	्म.	स.	सं झि.	आ,	उ.
2	2		Ę	יט ו	۲	۶ 	<b>۲</b>	\$	<b>२</b> कि	২	8	૨	٤.	২	द. ६	२	્ર		રં	ર
<b>Р</b> Ч.	सं अ		લું.	l		द.	च	त्रस	वे.मि कार्म	• स्त्रा. ग			अस.							साका.
	1	•					. –	IA	শাদা	3.	1	કુ <b>ઝુ</b> .		अच.	⊺ छ• !मा ३		ļ	i ·	अना.	अना.
	]				·		. ;		-	1			· . 1 ·		अગ્र		:	 		t i

[ १, १.

 $(-\infty)$ 

**K**• ]

जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, देा दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

भवणवासिय वाणवेंतर-जोइसियदेव-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण-द्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो बेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा जहण्णा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाह्रवजुत्ता होंति अणागाह्रवजुत्ता वा<sup>88</sup>1

काययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके चिना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्याएं, भावसे रूणा, नील और कापोत लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्दष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके सामान्य आछाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, देवगति, पंचे-विद्यजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकिथिककाययोग, वैकिथिकमिश्न-काययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके विना दे। वेद, चारों कषाय; तीनों अझान, असंयम, चक्षु और अचञ्च ये दे। दर्शन, द्रव्यसे छहों छेझ्याएं, भावसे अपर्याप्तकालकी अपेक्षा रूष्ण, नील और कापोत लेझ्याएं; तथा पर्याप्तकालकी अपेक्षा जघन्य तेजोलेझ्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सांक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

# नं. १५९ भवनत्रिक सासादनसम्यग्दष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

। ग्र		ષાં પ્રદા	सं∙¦ग ∣	5	का.	यो.	वे.	क.	<b>ज्ञा</b> .	संय	द.	हे.	भ.	. स.	संहि .		ਰ.	
2	्र सं.प. प	8 <b>१०</b>	8 2	8	१	११	२  स्रो.	8	३ अज्ञा	१ अस	२ चक्ष.	द्र. ६ भा. ४	१ भ.	<b>े १</b> सासा.	<b>१</b> 	<b>२</b> आहा.	२ साकाः	
alai.		ε. ৩  ε	i <b>a</b> ∙.   	ч.	(स • ∣ म ∶ वू		g.		्रसा		अच.	अशु, ३	<u>ا</u>			अना	अना.	
		я.			्वें ¦का	-		l				तेज. १	]					

٩, १.]

1 489

[ १, १-

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दे वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण जहण्णिया तेउल्लेस्साः भवसिद्धिया. सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजत्ता होति अणागारुवजत्ता वा<sup>१०</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दुच्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साः भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणे अणा-

उन्हीं सासादनसम्यग्दाष्ट्रि भवनत्रिक देवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संशी पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारौ संग्राएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रि-यिककाययोग ये नौ योगः नपुंसकवेदके विना दो वेदः चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, चक्ष और अचक्ष ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेख्याएं, भावसे जघन्य तेजोलेखाः भव्य-सिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि भवनत्रिक देवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्राएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चैंक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम. चक्ष और अचक्ष ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शक्कलेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक;

नं, १६०

भवनात्रिक सासादनसम्यग्टाष्ट्र देवोंके पर्याप्त आलाप.

																	<u>आ.</u> १	
सींसा.	सं. प.	. <b>प.</b> :		त् स	त्रस.	म. व वे.	४ ४ १	खी 9		ৠয়	असं !	चक्षु अच	मा.१ तेज	भ.	सासा.	सं.	<b>१</b> आहा.	साका. अना.
		1		1	: I		•		} } 1		;		: : :	!		:		

१, १.]

हरिणे, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ??? ।

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेव-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पडनचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण जहण्णिया तेउ. लेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्गिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि भवनयासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवेंके आछाप कहने पर-एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्त्तां प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और बैकियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आहिके तीन ज्ञान, असंयम, चश्च और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्याएं, भावसे जघन्य तेजोलेश्या; भध्यसिद्धिक, सम्यग्मिध्यात्व, संज्ञिक, आद्दारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

# नं. १५१ भवनत्रिक सासादनसम्यग्डण्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

1	<b>y</b> .	र्जी.	<u>ं</u> ष.	iস্ব <u>া</u> ,	सं	] ग.	<u>.</u>	का,	्यो	¦ वे	] क.	. इन	( संय	्द.	ले.	भ.	(स.	संझि.	্ৰা.	ਤ.
	8	्र	६	0	8	<b>۲</b>	٤	१	्र	12	8	ર	2	२	द्र, २	१	8	2	२	ર
	81.	सं. अ	l e	ĺ		द	4	πÌ	वे.मि.	स्र ।	I I .	कुम.	अस.	चक्षु.	का	भ.	सा.	स.	आहा.	साका.
			াক				. 62-	۱×۲	कार्म.	g		कु झु.		अचक्षु.	[য়ુ∙				अनाः	अना-
			1			i i		i			ļ				माः ३	I				
	į		i	{		ł	į	Í		ļ	ļ		-		अञ्.		Ι.	l		

#### **न.** १६२

### भवनत्रिक सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंके आरुाप.

-

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेव-असंजदसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण जहण्णिया तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, खइय-सम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

एसो इत्थि-पुरिसवेदाणमोघालावो समत्तो । एवं चेव पुरिसवेदस्स वत्तव्वं । णवरि जत्थ दो वेदा ठविदा तत्थ पुरिसवेदो एक्को चेव ठवेदव्वो । एवं चेव इत्थिवेदणिरुंभणं काऊण वत्तव्वं । णवरि जत्थ दो वेदा ठविदा तत्थ इत्थिवेदो चेव ठवेदव्वो ।

असंयतसम्यग्दाष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और उयोतिष्क देवोंके आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संशी पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे जघल्य तेजोलेक्या; भव्य-सिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दे सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसप्रकार भवनत्रिक स्त्रविदी और पुरुषचेदियोंके संयुक्त सामान्य आछाप समाप्त हुए । इसीप्रकार भवनत्रिक देवोंमें पुरुषवेदके आछाप कहना चाहिये। विशेषता केवल यह है कि ऊपर जहां भवनत्रिक देवोंके सामान्य आलापमें देा वेद स्थापित किये गये है, वहां एक पुरुषवेद ही स्थापित करना चाहिये। इसीप्रकार भवनत्रिक देवोंमें स्त्रीवेदका आश्रय करके आलाप कहना चाहिये। विशेष बात यह है कि पहले जहां सामान्य आलापमें दो वेद स्थापित किये गये हैं, वहां एक स्त्रीवेद ही स्थापित करना चाहिये।

विशेषार्थ—ऊपर जो भवनत्रिक देवेंकि आलाप कह आये है, वे सामान्यालाप हैं।उनमें पुरुषवेद और स्तीवेदका भेद नहीं किया गया है। परंतु उन्हीं आलापोंमें दो वेदके

नं. १६३

 $\sim \gamma_{c}$ 

भवनात्रिक असंयतसम्यग्हाष्टि देवोंके आलाप.

1	र	80	8	गः इ. १ १ १ १	्र चि	S	२ १ स्री	• <b>*</b>	३	१ ∣असं∙	्ये के.द.	द्र, ६	भ.	स. २ औप. क्षायो,	र सं.	<u>आ.</u> १ आहा.	<u>उ</u> . साका अना.
	1					4.						· · ·		]			

सोधम्मीसाणदेवाणं भण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अवज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमतेउलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सां; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>!!\*</sup>।

तेसिं चेव पजताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,

स्थानमें केवल पुरुषवेद या केवल स्त्रीवेद इसप्रकार एक वेदके स्थापित कर देने पर वे अलाप पुरुषवेदी और स्त्रीवेदी भवनत्रिकोंके हो जाते हैं। भवनतिकके सामान्य आलापोंसे विशेष आलापोंमें इससे अधिक और कोई विशेषता नहीं है।

सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर-आदिके चार गुणस्थान, संझी पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दें जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दर्शो प्राण, सात प्राणः चारों संझापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग थे ग्यारह योग; नपुंसक-वेदके विना दो वेद. चारों कषाय, तीनों अझान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्क और मध्यम तेजोलेश्या, भावसे मध्यम तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्तकाळसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, देवगाति, पंचे-न्द्रियजाति, ब्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये मौ

१ प्रतिषु ' दब्वेण काउ-सुकलेस्सा मडिझमां तेउलेस्सा भावेण ' इति पाठः ।

**#.** १६४

### सौधर्म पेद्यान देवोंके सामाग्य आलाप

। इ. ⊂ जी	. ्ष ेश⊷ सं	गंड. का	यो.	ेवे, क	ি হ্বা.	संय ि	<b>द</b> . ;	ਲੇ.	भ.	स. सं	<b>রি</b> .	आ.	<u>उ.</u>
			- 9 y	1218	1 8	' ¥ i	3 1	द्र. ३	ंर	। दि <sup>†</sup>	٤	ર	ર
िमिम	प. इ.स. ७	à .	म ४	स्री	ज्ञान.२	ं अस ¦वे	<b>Б.</b> а.	কা.	म∙	, ¦₹	ส่ง	आहा	साका,
सा. । सं.	્ર હ્ય. ૯૯ ક પ. ૬. સ. ૭ 	3 12	ं न. ४	प•	अज्ञा ३	i j	वेनाः	जु. ते.	अ.	   .		अनाः	अन्।
स.	-•• 		वे. २				1	भा. १					
અ			का १		ļ	5		तेज-	<u>ا</u>				

Jain Education International

442 ]

#### छक्खंडागमे जीवदाण

दो वेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेउ-लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

तेसिं चैव अपजत्ताणं भण्णमाणे अस्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपड्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-रेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्ताः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं । उवसमसम्मत्तेण सह उवसमसेढिम्हि मद-संजदे पडुच सोधम्मादि-उवरिम-देवाणमपंज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-

योग, नषुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनें अझान और आदिके तीन झान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे और भावसे मध्यम तेजोलेश्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यवत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-भिथ्यादाध सासादनसम्यग्दाष्टे और अविरतसम्यग्दाष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैकि-यिक मिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमाति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्सान ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्सापं, भावसे मध्यम तेजोलेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिध्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व होते हैं। यहां पर औपशमिकसम्यवस्व होनेका कारण यद्द है कि औपशमिकसम्यक्त्वके साथ उपशम श्रेणीमें मरे हुए संयतोंकी अपेक्षा सौधर्म आदि ऊपरके देवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है।

ર્લ શ્વપ

सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

] ग्रु.	जी-	<b>দ</b> ্রা	् सं	ग	इं.	কা	्य	1.	े वे	ক	<u>ाह</u> े।	! संय-		ਲੇ.	ं स	.स	संझि.	आ.	ਤ.
8	81	<b>६</b> र र									÷६		<b>₹</b>			Ę	9 '	ং ।	२
मि.				Ξ.			ं म.	۷	ःस्री		হাল, ব	३ असंग ३¦	के. द.	भा १	'भ∙		स '	आहाः	साका
सा.		;	1	1	,Щ.	त्रम	व.	x	ч.	1	अज्ञा -	₹¦ '	विनाः	तेज.	স		1	• •	अना.
н.	- <b>' R</b> '	1	1	i -	1		वे.	\$		1			!				l ì	1	
अ	i .	1	1		i			•	!	i i	ł.			1	; ;			]	

वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा 👯 ।

सोधम्मीसाणदेव-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमतेउलेस्सा', भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?(\*</sup> )

सम्यक्स्व आलापके आगे संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो<sup>.</sup> पयोगी होते हैं।

मिथ्यादाप्ट सौधर्म ऐशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर-- एक मिथ्यादाप्ट गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसक वेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्क और मध्यम तेजोलेस्या, भावसे मध्यम तेजोलेस्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

नं. १६६

सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	) जी.	प.	त्रा.'	सं.	ग,	ः इ	.का.	योग	व.	क	রা.	संय	ं द.	ले.	भ.	. स.	सं ज्ञि	आ.	<u>उ</u> .
२	_۶	Ę	e/	8	হ	१	2	्र	ર	8	4	้ๆ่	় হ	द्र. २		4	2	২	ર
मि.	सं.अ.	ь. Бт			दे.	Ч.	त्र.	वे.मि.	स्री		कुम,				भ.	औप.	सं.	आहा.	-साका
सा.		ক						कार्म.	पु-		ਕੁਖ਼.		विनाः	য়ু	अ.	क्षा.		অন্য.	अना.
अ.									I		मति.		;	भा. १		क्षायो.			1
						-	:		:		थुत.	: 	· :	तेज•	i	मिथ्या.			
	<b>۱</b>					į.	:		: :		अद.	1	;		!	सासाः	:	į <u>1</u>	

९ प्रतिषु ' दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा ' इति पाठः !

### नं. १६७ मिथ्याद्दाप्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

] जी प• प्रा सं, ग	, इ. का यो वे क	ज्ञा संय. द. ले. भ स संज्ञि	_आ उ
1 2 E 80 8 .	2 2 2 2 22 2 8	३ १ २ द ३ २ १ १	२ २
मि.स.प.प.७)वे	दे, पंचे, त्रस. म. ४ स्त्री. 👘	अज्ञा असं चक्षु <sup>का</sup> भ मि से.	आहा. साका.
सं.अ.६	व_४,पु.	अच रु.ते अ	अना, अना,
) अ.	वे.२	मा २	
	का_ १	तेज.	

2, 2.]

448 ]

#### छक्खंडागमे जीवहाणं

तेसिं चेव पड्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>हर्य</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो

उन्हीं मिथ्यादाष्ट्र सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिक-काययोग ये नौ योग; नपुंसक्रवेदके विना दें वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रब्य और भावसे मध्यम तेजोलेस्या, भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों मिथ्याद्दष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, लहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसक वेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चक्षु और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और टाुक्क लेक्ष्याएं, भावसे मध्यम तेजोलेक्ष्या; भब्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-

मिथ्यादाष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	( प्रा.	सं	ग.	इ.	का.	यो-	वे•	क.	, রা.	संय.	द.	हे.	¦ म,	स.	संझि.	आ.	ਰ.
9	्र	Ę	१०	8	্থ	2	१	९	2	8	ર	8	२	द्र. १	٦	१	২	१	२
ांग.	सं,प.	प.		'	द.	म.	ी. सि	म. ४	म्री. प	Į	अज्ञा,	असं.				[	सं.	आहा.	साका-
		i		ĺ				वि. ४ वे. १	<b>g.</b>				अच <b>.</b> 	तेज.	अ.				अना.

नं. १६८

१, १. ]

[ 444

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा " ।

सोधम्मीसाण-सासणसम्माइईीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमतेउलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सांसणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>??</sup>।

पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्दाष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर--- एक सासादन गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकचेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चशु और अचशु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेक्या, भावसे मध्यम तेजोलेक्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारे(पयोगो होते हैं।

न. १६९

मिथ्यादृष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>।</u> यु.	जी. प.	प्रा   सं.   ग	इं.का	्यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय	द.	ਲੇ.	म.	स.	संझि.	भा,	ੇ ਚ.
1		9 8 S	१ १ १	્ર	28	२	٤	ર	द. २	२	2	2	ર	ર
मि.	सं अ	्र	मने जस. १	वि मि	र्खाः	कुम.	अस.	चक्षु	কা	. म.	मि.	ं सं	' आहा.	साका.
	अ	. :	ज म	कार्म.	पु.	<u> કુ</u> શ્રુ		अच.	্যু.	अ.		ļ	अना.	अना
	i .		, I	1			i 1		मा १	! '		!	: I İ	
	ļļļ	i		i	. '				तेज-	. 1		1		

### नं. १७० सासादनसम्यग्हहि सौधर्म ऐशान देवॉके सामान्य आलाप.

<u>ग</u> ु.	जी.	q.	भ।	सं.	ग	इ.	का.	यो.	<b>]</b> वे.	क.	्ज्ञा.	संय.	द.	ਰੇ.	)भ.	[ स.	संज्ञि	आ,	े ज.
9	ર	६प.	20	-	१	9	१	91	्र	8	, ३	9	्र	द्र. ३	1	. २	1	२	२
Ē	सं. <b>प.</b> सं. अ.	६अ.	وبا		दे.	্রাচ	त्रस.	म. ४	र्द्धा		अज्ञा.	असं.	चक्षु	কান	स.	<u>ب</u>	सं.	आहा.	साका
Ē	सं. अ.	i				·p.	71	· ~ •	, <b>g</b> .				अ च	য়	ĺ	सासा		अना.	अना.
1		I						वैग्२	1					ते.					
1				1				का.१				İ		सा. १					ľ
				ļ					1					तेज.			Í		
I			<u>.</u>	<u> </u>			1		۱. I	ļ		!			.	ı	l	, I	F

छर्क्खंडागमे जीवदाणं

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ. दस पाण. चत्तारि सण्णा. देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, द्रो बेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, देा दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेडलेस्ता, भनसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणे।, सागारुवजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा<sup>१९१</sup> !

"तेसि चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो बेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दण्वेण काउ-सुकलेस्सा,

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्योप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, चारों संन्नाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और बीक्रियिककाययोग ये नौ योगः नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अधान, असंयम, चक्ष और अचक्ष ये दे। दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेरया, भव्यसिदिक, सासादनसम्ययत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सासावनसम्यग्दष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धो आलाप कहने पर----एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहौं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, वैकियिकामिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो

नं १७१

सासादनसम्यग्दाध सौधर्म ऐशान देवॉके पर्याप्त आलाप.

। गु	. 3	Ĥ•;	٩.	त्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	εр.	ज्ञा.	. सयं,				. स.	संक्रि.	্ঞা.	ਭ.	t
2	-1-	र	Ę	90			-	\$	९	ર	8	ર	ং		द्र. १		्र १	શ	१	२	Į
मा	.¦e	<b>†.</b>	q.			द.	पंचे -	त्रस.	म.४	<b>ख्ये</b> ।		'গল্পা-	i i	-	•		'सासा	स.	आहा		l
	q	r.					!		<b>व.४</b>	્યું.		:	İ	∣अच.	्मा.	₹ <sub>1</sub>				अना.	l
						ļ	l t		्व.	<b>د</b> إ		i		1	्तेज.	i		]		l	ĺ
		1	1			i		I		:		1		1				) 	<u> </u>	   	

#### सासादनसम्यग्दीष्ट सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्त आलाप. न, १७२

] गु.	जी-	<b>प</b> ्र	प्रा <mark>,</mark> ! स	ते. ? व	. <b>  ŧ</b> -	কা	यो •	वे.	ं क.	ज्ञा.	संय	। द.	ਲੇ.	म.	स.	संझि.	ं आ.	ਰ.	l
12	2	× .	ډ وט	<u>د</u> ع	<u>ا</u> ا	2	्र	२	8	ર	8	ર	द्र २	1	٤.	2	२	२ साकाः अनाकाः	
<b>8</b> 1.	<b>सं.</b> अ	<u>,</u>		दे.	Ē	19	व.मि.	খ্যা.	i I	कुम.	अस.	चक्षु. याज	কা. হা	भ	∣सा	स.	आहा. अवा	साका. अन्यका	Ì
		1			1	1	कार्म.	। पु• ।	!	લુ.સુ.		տղագ.	्यः भाः १	1	1		পশা	সন্ধান্ধা	
	1	l	ţ	1	1			:			j .	; ,	तेज.				1		ł

[ 2. 2.

٤, १.]

मावेण मज्झिमा तेउलेस्साः भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्पिणेा, आहारिणेा अणस्वारिणे, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

सोधम्मीसाण-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दघ्व-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?®</sup> ।

सोधम्मीसाग-असंजदसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम,

अज्ञान, असंयम, चञ्च और अचञ्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्ष्याएं, भावसे मध्यम तेजोलेक्ष्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आद्वारक, अनाद्वारकः साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सम्याग्मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवेंकि आछाप कहने पर-एक सम्याग्मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं, देवमाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दें वेद, चारों कषाय, तीनों अझानोंसे मिश्रित आदिके तीन झान, असंयम, चश्चु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेश्या, भर्व्यासिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

असंयतसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये देशे जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, घारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके विना देशे वेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान,

#### મં. ૧૭૨

### सम्यग्निथ्याद्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके आलाप.

<u>ग</u> ु.	] जी।	<b>4</b> .	<b>प्रा</b> ं	र्स.	ग.	े है.	का.	्यं	f.	ेवे.	寄.	ज्ञा.	संय.	द.	. ले.	्म.	स.	संक्रि.	জা.	उ.
1	<u>ع</u>	Ę	· ·	-		. N				ેર	_	-	2	२	द्र. १ ⇒	12	<u>ع</u>	<b>१</b>	2	ર
लम्य	.सं.प.	· <b>q.</b> 	t 		α.	' <b>વચ.</b> !	1			્લા ાવા		সহ। ३	. બલ	चध्रु अच-	्त. सा. १		સ+ય.	. स.	आहा.	साका अना
						l		वे.	۹			ज्ञान.			तेज.					
1			1		ĺ		,					मिश्र.	ι			I		1		1

ਸਨ। ਸਿੰਗ ਤੇ ਸਾਲ ਤਰਕੇ ਸ਼ਾਲ ਕਾਰ- ਸਰਕ ਸ

तिण्णि दंसण, द्व्वेण काउ-सुक्क-मन्झिमतेउलेस्सा, भावेण मन्झिमा तेउलेस्सा; भव-सिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणे, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?\*\*</sup>।

तेसिं चेव पजाचाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजाचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो बेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेदि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?\*\*</sup>।

असंयम, आदिके तीन दर्शन, ट्रब्यसे कापोत, शुक्त और मध्यम तेजोलेरुया, भावसे मध्यम तेजोलेरुया; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, झायिक और झायोपशमिक ये तीन सम्ययत्व, संक्षिक, बाहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयतसम्यग्दाष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां. दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और चेक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कवाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेरया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यवत्व; संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ર્ન, ૧૭૪

### असंयतसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

ł	ŋ.	जी.	q.	 मा⊣	<b>सं</b> .	ग.	<b>इ</b> . '	का.	∫यो	à	क.	লা,	संय.	द.	हे.	म	.स	संज्ञि	अन.	उ.
	<u>~</u>	२	६	90	x	२	8	২	११	. २	8	Ę	2	_ ३	द्र. ३	1.	3	ং	ર	२
	÷	<b>सं.प</b> ्र	ч.	છ		<u>द</u> े.	पंचे -	त्रस	म⊷	४ स्त्री	·							स.		साका
ſ	5	स.प. सं.अ.	इ						व.	४¦पु.	1	श्रुत.	I	विना.	धुः ते		क्षा		अना.	अना.
			अ.	:			f		वे.	२	ļ	अ <b>त</b> .			सा १		क्षयाः		i t	
				,			ļ		का.	۶	[			1	ेतेज-	1			۱	<u> </u>

#### ર્ન. ૧૭૯

असंयतसम्यग्दधि सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

2 2 6 20 8 2 9 9 2 2 8 3 2 2	संय. द. हे. भ. स. संझि. आ. उ. र ३ द. १ १ ३ १ १ २ असं. के. द. तेज भ. आप. सं. आहा. साका. विना. मा.१ क्षा. तेज. क्षायो.
------------------------------	--

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ अपडजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसबेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ मुक्क-ठेस्सा, भावेण भज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सभ्मत्तं । देवासंजदसम्माइद्टीणं कथमपजत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि ? वुच्चदे—वेदगसम्मत्तमुवसामिय उवसमसेदि-मारुहिय पुणो ओदरिय यमत्तापमत्तसंजद-असंजद-संजदासंजद-उवसमसम्माइट्टि-ट्टाणेहि मज्झिम-तेउलेस्सं परिणमिय कालं काऊण सोधम्मीसाण-देवेसुप्पण्णाणं अपजत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि । अध ते चेव उक्तस्स-तेउलेस्सं वा जहण्ण-पम्मलेस्सं वा परिणमिय जदि कालं करेति तो उवसमसम्मत्तेण सह सणक्कुमार-माहिंदे उप्पर्जति । अध ते चेव उवसमसम्माइट्टिणो मज्झिम-पम्मलेर्स परिणमिय कालं करेति तो वक्ष-बक्कोत्तर-लांतव-कातिट्ट-सुक्क-महासुक्केसु उप्पर्जति । अध उक्कर्स-पम्मलेर्स्सं वा जहण्ण-सुक्कलेस्सं वा परिणमिय जदि ते कालं करेति तो उद्यसमसम्यत्ते तो उत्त्रसमसम्माइट्रि-सं वा परिणमिय जदि ते कालं करेति तो उद्यसमसम्यत्त्रि परिणायि कालं करेति तो वक्ष-वक्कोत्तर-लांतव-

उन्हीं असंयतसम्यग्दाप्टि लोधर्म पेद्यान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--- एक अविरतसम्यग्दाप्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, लहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगाति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दें। योग, षुरुषयेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेड्यापं, भावसे मध्यम तेजोलेड्या; भन्यसिद्धिक, औपरामिक, क्षायिक और शायोपशामिक ये तीन सम्ययत्व होते हैं।

रांका असंयतसम्यग्दाष्टि देवोंके अपर्याप्तकालमें औपरामिकसम्यक्तव कैसे पाया जाता है ?

समाधान — वेदकसम्यक्त्वको उपरामा करके और उपरामश्रेणी पर चढ़कर फिर वहांसे उतर कर प्रमत्तसंयत, अग्रमत्तसंयत, असंयत और संयतासंयत उपरामसम्यग्दष्टि गुणस्थानोंसे मध्यम तेजोलेश्याको परिणत होकर और मरण करके सौधर्म पेदाान कल्प-वासी देवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके अपर्याप्तकालमें औपरामिकसम्यक्त्व पाया जाता है। तथा, उपर्श्वक गुणस्थानवर्ती ही जीव उत्क्रप्ट तेजोलेश्याको अथवा जधन्य पद्मलेश्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो औपशामिकसम्यक्त्वके साथ सनत्कुमार और महेन्द्र कल्पमें उत्पन्न होते हैं। तथा, वे ही उपशामसम्यग्दप्टि जीव मध्यम पद्मलेश्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ट, शुक्र और महाशुक्र कल्पोंमें उत्पन्न होते हैं। तथा, वे ही उपशामसम्यग्दप्टि जीव नत्कुप्ट पद्मलेश्याको अथवा जधन्य होकर यदि मरण करते हैं, तो ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ट, शुक्र और महाशुक्र कल्पोंमें उत्पन्न होते हैं। तथा, वे ही उपशामसम्यग्दष्टि जीव उत्क्रप्ट पद्मलेश्यको अथवा जधन्य शुक्कलेश्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो औपशामिकसम्यक्त्वके साथ शतार, अध उवसमसेढि चढिय पुणोदिण्णा चेत्र मज्झिम-सुक्कलेस्साए परिणदा संता जदि कालं करेंति तो उवसमसम्मत्तेण सह आणद-पाणद-आरणच्चुद-णवगेवज्जविमाणवासिय-

देवेसुप्पजंति। पुणो ते चेव उक्करस-सुक्कलेस्सं परिणमिय जदि कालं करेंति तो उवसम-सम्मत्तेण सह णवाणुदिस-पंचाणुत्तरविमाणदेवेसुप्पजंति । तेण सोधम्मादि-उवरिम सव्व-देवासंजदसम्माइद्वीणमपजत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि ति । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

एवमित्यिपुरिसवेदाणमोघाळावो समत्तो ।

एवं चेव पुरिसवेद-देवाणमालावो वत्तव्वो । णवरि जत्थ दो वेदा बुत्ता तत्थ पुरिसवेदो एकको चेव वत्तव्वो । एवं सोधम्मीसाणदेवीणं पि वत्तव्वं । णवरि जत्थ

सहस्रार कल्पचासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं। तथा, उपशमश्रेणी पर चढ़ करके और पुनः उतर करके मध्यम शुक्रुलेखासे परिणत होते हुए यदि भरण करते हैं तो उपशमसम्यक्त्वके साथ आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नौ प्रैवेयकविमानवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं। तथा, पूर्वोक्त उपशमसम्यग्दधि जीव ही उत्कुष्ट शुक्रुलेक्ष्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो उपशमसम्यक्त्वके साथ नौ अनुदिश और पांच अनुतर-विमानवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं। इसकारण सौधर्म स्वर्गसे लेकर ऊपरके सभी असंयतसम्यग्दष्टि देवोंके मर्पाप्तकाल्यमें औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है।

सम्यकत्व आलापके आगे---संझी, आद्वारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

इसप्रकार स्रविद और पुरुषवेदका भेद न करके सौधर्म और ऐशान स्वर्गके देवोंके सामान्य आछाप समाप्त हुए ।

सौधर्म ऐशान कल्पके देवोंके सामान्य आलापोंके समान ही पुरुषवेदी देवोंके आलाप कहना साहिये। विशेषता यह है कि सामान्य आलाप कहते समय जहां पर पहले स्नीवेद और पुरुषबेद ये दो वेद कहे गये हैं, वहां पर केवल एक पुरुषवेद ही कहना चाहिये। इसीप्रकार सौधर्म ऐशान स्वर्गकी देवियोंके आलाप कहना चाहिये। विशेषता यह है कि

નં. ૧૭૬

असंयतसम्यग्दष्टि सौधर्म ऐशान देवांके अपर्याप्त आलाप.

IJ.  :	जी.⊟	ष. प्रा.		<b>ग</b> _]	ξ.	কা,	यो.	ं वे.	ক,	হা।	संय.	्र	ं हे,	' भ₊	्स,	संझि.	জা-	3.
2	2	द् ७	8	8	१	2	<b>२</b>	3	8	₹	۶ ا	, २	द्र २	े र	₹	ं १	२	্ৰ
জাৰি স	t.अ.	् स्व		đ.	ġ.	<b>₫</b> .	वैमि. कार्भ	<b>y.</b>	I	मति श्रत			ণা. যু.	1	अगप. अज्ञा-			ंसाका. अना.
							े नग <b>ान</b> •	{		अब. अब.	:	1	भा. १		क्षायो-			
	, !	İ	:   	ł		l			:	İ		İ	तेज-	!				
	;											į	तेज-	ļ 	•			I

पुरिप्तवेदो बुत्तो तत्थ इत्थिवेदो चेव वत्तव्वो । असंजदसम्माइद्विस्स इत्थिवेदम्हि उप्पत्ती णत्थि ति तस्स पज्जतालावो एक्को चेव वत्तव्वो । पज्जतालावे उच्चमाणे वि खइयसम्मतं णत्थि ति वत्तव्वं, देवेसु दंसणमोहणीयस्त खवणाभावादो । एत्तिओ चेव विसेसो ।

सणक्कुमार-माहिंददेवाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्सतेउं-जहण्णपम्मलेस्साओ, भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवासिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा?" ।

पुरुषवेदी देवोंके आलापोंमें जहां पुरुषवेद कहा गया है वहां केवल स्वविद ही कहना चाहिए। यहां इतना और समझना चाहिये कि असंयतसम्पग्दष्टि जीवोंकी स्वविदमें उत्पत्ति नहीं होती है, इसलिये स्वविदी असंयतसम्पग्दष्टिका एक पर्याप्त-आलाप ही कहना चाहिए। और पर्याप्त-आलाप कहते समय भी झायिक सम्पक्त्व नहीं होता है, अर्थात् स्वविदी पर्याप्तोंके (देवियोंके) दो ही सम्यक्त्व होते हैं, ऐसा कहना चाहिएः क्योंकि, देवोंमें दर्शनमोहनीय कर्मके आलापोंसे इतनी ही विरोषता है।

सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वगौंके देवोंके सामान्य आलाप कहने पर-आदिके चार गुणस्थान, संझी पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्या-प्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, द्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकिथिककाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अझान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और शुक्ल लेक्याएं तथा पर्याप्त कालमें उत्हार पीत और जधन्य पद्मलेक्या, भावसे उत्हार तेजोलेक्या और जधन्य पद्मलेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहाँ सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ प्रतिषु ' उक्कस्सतेउ ' इति पाठा नास्ति

નં. ૧૭૭

सानत्कुमार माहेन्द्र देवींके सामान्य आखाप.

। य.	जी•	<b>प</b> .	সা	सं.	ग.	इ.	का,	यो	•	i <b>a</b> .	क,	. झा	संय	द.	छे.	) म.	. स.	संझि	आ.	ं उ.	F
8	२	Ę	२०	8	٤.	· ·						ह	1	-	<u>द</u> .४क।		-	2	२	२	
मि.	सं. प.	<b>.</b>	9	ļ	दे.	4	त्रस.	म.	X	षु.	:	ज्ञा. २	अस.	के द,	शु.ते.प	ं म.		. सं.	आहा.	साकाः	
सा.	सं. अ.	Ę		!	I	, ₽	-	व.				अस्।. १		विना.	भा २	э.			अना.	अनाः	E
<b>H</b> .		अ,	ļ		:	!		वे.	२	ì	!	1		İ	ते. उ.	;			1	ŀ	Ł
<b>ST</b> (		ł.			! 	İ	1	<b>\$</b> ].	ŧ	ļ	ļ	ţ	1	1	प.ज.	: 					İ.

छक्खंडागमे जीवदाणं

[ ۶, १.

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि उक्तस्स-तेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागाल्वजुत्ता वा<sup>14</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिस वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच

उन्हों सानत्कुमार मोहेन्द्र देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कुष्ट तेजोलेश्या और जघन्य पद्मलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सानरकुभार माहेन्द्र देवोंके अपर्याप्तकाल्लंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्या टाप्टे, सासादनसम्यग्दाप्टि और अविरतसम्यग्दाप्टि ये तीन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, त्रैत्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दे। योग, पुरुषवेद, चारों कचाय, कुमति और कुश्रुत ये दे। अझान तथा आदिके तीन झान ये पांच झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, आवसे उस्कृष्ट तेज और जधन्य पद्म लेक्याएं; भ्व्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अना-

#### न. १७८

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके पर्याप्त आछाप

गु.(	जी-	प.	<b>प्रा</b> .	सं	[ग,	इ.	का.	) यो	•	वे.	क.	_ हा.	संय.	द.	ले.	स•	स	संज्ञि.	. আ	उ.
2	१	· ·	१०	¥	1 2	१	१	९		१	8	६	१		द्र,२ते.उ.		Ę	१	٩	२
मि.	सं.प.	ч.			दे.	मु मु	Я.	म.	ጸ	<b>J</b> .		ল্লান ২			प ज.	ਮ-		सं.	आहा.	साका.
सा.		1	:			- <del>1</del> ,	Ä		x	1		अज्ञा₊३		विना	सा. २	अ.		( ;		अना.
स.		:	I					वे.	8	1					ਰੇ. ਤ.	1				
) अ.			.	]											प ज.	1				

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

संपहि मिच्छाइट्टिप्पहुडि जाव असंजदसम्माइट्टि त्ति ताव चदुण्हं गुणद्वाणाणं सोधम्म-भंगो। णवरि उवरि सव्वत्थ इत्थिवेदो णत्थि, पुरिसवेदो चेव वत्तव्वो । ओधा-लावे भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तव्वाओ। भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तव्वाओ। पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ। तेसिं चेव अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ त्ति चेव विसेसो।

बम्ह-बम्हुत्तर-लांतव कापिट्ठ सुक्क-महासुक्ककप्पदेवाणं सणक्कुमार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दच्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमपम्मलेस्साओ, भावेहि मज्झिमा पम्म-लेस्सा । पज्जत्तकाले दच्व-भावेहि मज्झिमा पम्मलेस्सा । अपज्जत्तकाले दव्वेण

# हारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सानरकुमार माहेन्द्र देवोंके मिथ्यादाप्ट गुणस्थानसे लेकर असंयतसम्यग्दाप्ट गुणस्थान तक चारों गुणस्थानोंके आलाप सौधर्म देवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए। विशेषता केवल इतनी है कि ऊपर सभी कल्पोंमें स्त्रीवेद नहीं है, अतः एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए। उसमें भी ओघालाप कहते समय द्रव्यसे कापोत, शुक्त, उररुष्ट तेज और जघन्य पद्म लेश्याएं कहना चाहिए। भावसे उररुप्ट तेज और जघन्य पद्म लेश्याएं कहना चाहिए। पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उररुप्ट तेज और जघन्य पद्म लेश्याएं होती हैं। उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उररुप्ट तेज और जघन्य पद्म लेश्याएं होती हैं। उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्य से कापोत और शुक्त लेश्याएं और भावसे उररुष्ट तेज और जघन्य पद्म लेश्याएं होती हैं, इतनी विशेषता है।

प्रक्ष-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ट और शुक-महाशुक कस्पवासी देवोंके आलाप सानत्कु-कुमार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए। विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर--द्रव्यसे कापोत, शुरू और मध्यम पद्म लेक्या होती है, तथा भाषसे केवल मध्यम पद्मलेक्या होती है। उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम पद्मलेक्या होती है।

#### न १७९

# सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके अपर्याप्त आछाप.

गु.	जी∵प-	я.	सं ।		इं	का.	यो.	à.	क.	झा.	संय	द.	ਰੇ.	म.	. स.	साज्ञ.	জা.	<sub>।</sub> उ.	L
₹	र इ	1	8	۶	۶	2	્ર	່ງ	8	५कुम	ং	3	द्र, २	૨	५ औष.	१	२	ર	
मि .		ĺ		दे. <sub>।</sub>	पंचे.	<b>.</b>	वे.मि.	पु.		कुश्रु.	असं.	के. द	का शु.			सं.	आहा	साका	
ंश.	াজ. চ		'		ъ	त्रस	कार्म.	'		मति.		গিনা.	मा. २	ञ.			अना.	अना.	
अ.										श्वत.	:		i <b>ते. उ</b> .		मि.	-			
	Ę /	[	1	i				ļ	[	अव.	i .		प, ज.	.	सासा.	,			ļ

काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा पम्मलेस्सा। एत्तियमेत्तो चेव विसेसो। सदार-सहस्सारकप्पदेवाणं वम्हलोग-भंगो। णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दब्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ। पज्जत्त-काले दब्व-भावेहि उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ। अपज्जत्तकाले दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ। आणद-पाणद-आरणच्चुद-सुदंसण-अमोध-सुप्पनुद्ध-जसोधर सुनुद्धं-सुविसाल-सुमण-सउमणस-पीदिंकरमिदि एदेसिं चदु-णव-कप्पाणं सदार-सहस्सार-भंगो। णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दब्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमसुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुक्कलेस्सा। पज्जत्तकाले दब्व-भावेहि मज्झिमा सुक्कलेस्सा। अपज्जत्तकाले दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुक्कलेस्सा।

ंअच्चि-अच्चिमालिणी-वइर-वइरोयण-सोम-सोमरूव-अंक-फलिह-आइच्च-विजय-

उन्होंके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्या तथा भावसे मध्यम पद्मलेख्या होती है। इतनीमात्र ही विशेषता है।

रातार और सहस्रार कल्पवासी देवोंके आलाप व्रह्मलेकके आलापोंके समान समझना वाहिए। विरोषता यह है कि उनके सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, ग्रुक्ठ, उत्कृष्ट पद्म और जघन्य ग्रुक्ठ लेखाएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य ग्रुक्ठ लेखाएं होती होती हैं। उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य ग्रुक्क लेखाएं होती हैं। उन्हींके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य ग्रुक्क लेखाएं होती हैं। उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य श्रुक्क लेखाएं होती हैं। उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्क लेखाएं होती हैं। उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्य के कापोत और ग्रुक्क लेखाएं होती हैं, तथा

आनत-प्राणत, आरण-अच्युत तथा खुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुबुद्ध, सुविशाल, सुमनस्, सौमनस और प्रीतिंकर इन चार और नौ इस प्रकार तेरद्द कर्त्योंके आलाप शतार-सद्द-सार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए। विशेषता यद्द है कि सामान्यसे आलाप कहने पर---द्रघ्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम शुक्ल लेश्यापं होती हैं, तथा भायसे मध्यम शुक्ललेश्या द्वोती है। उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम शुक्ललेश्या द्वोती है। उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रब्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं तथा भावसे मध्यम शुक्ललेश्या द्वोती है।

अर्चि, अर्चिमालिनी, वज्र, वैरोचन, सौम्य, सौम्यरूप, अंक, स्फाटिक, आदित्य, इन

१ ' सुभद ' इति पाठः ! त. रा. वा. पू. १६७.

२ अच्ची य अचिमालिणि बहरे वहरोयणा अणुद्दिसगा। सोमो य सोमरूवे अंके फलिके य आहचे ॥ ति. सा. ४५६. तत्रानुदिश्वविमानगनि येन्वेक एवाऽऽदिस्रो नाम तिमानप्रस्तारः । तत्र दिश्च विदिश्च चलारि चलारि श्रेणिषिमानगनि । प्राच्यां दिशि अभिविंमानं, अपाच्यामर्चिमाली, प्रतीच्यां वैरोचनं, उदीच्यां प्रभासं, मध्ये आदि-त्याख्यं । विदिश्च पुष्पप्रकीर्णकानि चलारि । पूर्वदक्षिणस्यामर्चिप्रभं । दक्षिणापरस्यां अर्चिर्मध्यं । अपरोत्तरस्यां अचिरावर्त । उत्तरपूर्वस्यामर्चिविंशिष्टं । त. रा. वा. पू. १६७. श्वेताम्बरप्रधेधु अनुदिश्वविमानानामुक्केलो नास्ति ।

(-1)

वइजयंत-जयंत अवराइद-सव्वद्वसिद्धि त्ति एदेसिं णव-पंच-अणुदिसाणुत्तराणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुनक्र-उक्करससुक्कलेस्साओ, भावेण उक्तस्सिया सुक्रलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>82</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि उक्क-

नौ अनुदिश विमानोंके तथा विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्धसिद्धि इन पांच अनुत्तर विमानोंके आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकिथिककाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और गुकल लेदयापं तथा पर्याप्तकालमें उत्कृष्ट गुक्ललेदया, भावसे उत्कृष्ट शुक्ल लेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और कार्यापशमिक ये तीन सम्यक्त्व; सांज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दप्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहें पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैकि।यिककाययोग ये नौ योग। पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयक्ष, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट शुक्कलेक्या, भन्यसिद्धिक, औपशमिक-

त. १८० नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके सामान्य आलाप.

13	1	ष.	त्रा.	सं	ग.	इ.	का.	यो-	] वे.]	क.	र्शा.	; संय.	्र-	ੋ.	भ	. स	संज्ञि.	ঙা:	₹.	ł
2	ંર	Ę	१०	8	ेर	र ।	2	22	2	¥	<b>₹</b>	र	ર	द्र. ३	2	्र	र	र	२	l
	सं.प.	प.	ט		दे.	पंचे.	त्रस.	म ४	पु.		मति.					) औष•	सं.	आहा.	साका.	ł
<b>F</b>	स.अ.	ষ্						व ४			श्रुत.		त्रिना.	ञ्च. उ.		क्षा.		अना.	अना.	
ł		अ.						वे. २			সন.			सा. र		क्षायो,			•	
	1	۱				<u>                                     </u>		कार्म. र				ļ		शु. उ.		Į	<u>}</u>		·	

सिया सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं । केण कारणेण उवसमसम्मत्तं णत्थि ? वुच्चदे— तत्थ द्विदा देवा ण ताव उवसमसम्मत्तं पडिवज्जंति, तत्थ मिच्छाइद्टीणमभावादो । भवदु णाम मिच्छाइद्वीणमभावो, उवसमसम्मत्तं पि तत्थ द्विदा देवा पडिवज्जंति; को तत्थ विरोधो ? इदि ण, ' अणंतरं पच्छदो य मिच्छत्तं' ? इदि अणेण पाहुडसुत्तेण सह विरोहादो । ण तत्थ द्विद-वेदगसम्माइद्विणो उवसमसम्मत्तं पडिवज्जंति, मणुसगदि-वदिरित्तण्णगदीस वेदगसम्माइद्विजीवाणं दंसणमोहुवसमणहेदुपरि-णामाभावादो । ण य वेदगसम्माइद्वित्तं पडि मणुरसेहिंतो विसेसाभावादो मणुरसाणं च

सम्यक्स्वके विना दे। सम्यक्त्व होते हैं।

**शंका** — नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानोंके पर्याप्तकालमें औपशभिक सम्यक्त्व किस कारणसे नहीं होता है ?

समाधान – नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानोंमें विद्यमान देव ते। औपशामिक सम्यक्त्वको प्राप्त होते नहीं है, क्योंकि, वहां पर मिथ्याइप्टि जीवोंका अभाव है।

र्श**का— भ**ले ही वहां मिथ्यादाप्टे जीवोंका अभाव रहा आवे, किन्तु यदि वहां रहने∙ वाले देव औपशमिक सम्यवत्वको प्राप्त करें, तो इसमें क्या विरोध है ?

समाधान — ऐसा कहना भी युक्ति-युक्त नहीं है, क्योंकि, औपशामिक सम्यक्तवके अनन्तर ही औपशामिकसम्यक्त्वका पुनः शहण करना स्त्रीकार करने पर ' अनादि मिथ्यादृष्टि जीवके प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्तिके अनन्तर-पश्चात् अवस्थामें ही मिथ्यात्वका उदय नियमसे होता है। किन्तु जिसके द्वितीय, तृतीयादि वार उपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई है, उसके औपशामिक सम्यक्त्वके अनन्तर-पश्चात् अवस्थामें भिथ्यात्वका उदय भाज्य है, अर्थात् कदाचित् मिथ्यादाष्टि होकरके वेदकसम्यक्त्व या उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है, कदाचित् सम्याग्मिथ्यादाष्टि होकरके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है हत्यादि '। इस कवायप्राभृतके गाथास्त्रके साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है। यदि कहा जाय कि अनुदिश और अनु-क्तर विमानोंमें रहनेवाले वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है इत्यादि '। इस कवायप्राभृतके गाथास्त्रके साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है। यदि कहा जाय कि अनुदिश और अनु-क्तर विमानोंमें रहनेवाले वेदकसम्यक्त्वको सिवाय अन्य तीन गतियोंमें रहनेवाले वेदकसम्यक्त्व षात नहीं है; क्योंकि, मनुष्यगतिके सिवाय अन्य तीन गतियोंमें रहनेवाले वेदकसम्यक्त्व जाय कि वेदकसम्यक्ति प्रत्नि मनुष्योत्ति कारणभूत परिणामोंका अभाव है। यदि कहा जाय कि वेदकसम्यक्ति प्रति मनुष्यों अन्त के उपशमन योग्य परिणाम मनुष्योंके कोई विदोषता नहीं है, अतएव जो दर्शनमोहनीयके उपशमन वोग्य भाग्य परिणाम मनुष्यों के पाये जाते हैं वे

१ सम्मत्तपढमलंभरसाणंतरं पच्छदो य मिच्छतं । लंभस्स अघटमस्स हु भजियव्यो पच्छदो होदि ॥ (कसाय-पाहुङ ) सम्मत्तरस जो पडमलंमो जणादियमिच्छाइडिविसओ तरसाणंतरं पच्छदो अणंतरपच्छिमावःथार् भिच्छतमेय होद । तत्थ जाव पढमडिदिचरिमसमओ क्ति ताव मिच्छतोदयं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो । लंभरस अपढमस्स दु जो खुलु अपढमो सम्मत्तपडिलंमो तरस पच्छदो मिच्छतोदयो भजियच्यो होइ । जयधा अ. पू. ९६१.

[ 2, 2.

दंसणमोहुवसमणजोगपरिणामेहि तत्थ णियमेण होदव्वं, मणुस्स-संजम-उवसमसेढिसमा-रुहणजोगत्तणेहि भेददंसणादो । उवसमसेढिम्हि कालं काऊणुवसमसम्मत्तेण सह देवे-सुप्पण्णजीवा ण उवसमसम्मत्तेण सह छ पज्जत्तीओ समाणेति, तत्थतणुवसमसम्मत्त-कालादो छ-पञ्जत्तीणं समाणकालस्त बहुत्तुवलंभादो । तम्हा पज्जत्तकाले ण एदेसु देवेसु उवसमसम्मत्तमत्थि त्ति सिद्धं । सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंमें नियमसे होना चाहिए। सो भो कहना युक्ति-संगत नहीं है, क्योंकि, संयमको धारण करनेकी तथा उपशमश्रेणीके समारोहण आदिकी योग्यता मनु-प्येंके ही होनेके कारण अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंमें और मनुष्योंमें भेद देखा जाता है। तथा उपशमश्रेणीमें मरण करके औपशमिक सम्यक्त्यके साथ देवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीव ओपशमिक सम्यक्त्वके साथ छह पर्याप्तियोंको समाप्त नहीं कर पाते हैं, क्योंकि, अपर्याप्त अवस्थामें होनेवाले औपशमिक सम्यक्त्वके कालसे छहों। पर्याप्तियोंके समाप्त होनेवाले जीव आधिक पाया जाता है, इसलिए यह बात सिद्ध हुई कि अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्तकालमें औपशमिक सम्यक्त्व नहीं होता है।

विशेषार्थ — उपरामसम्यग्दष्टि जीव औपरामिक सम्यवत्वसे पुनः औपरामिक सम्य-यरवको प्राप्त नहीं होता है किंतू यदि उसके मिथ्यात्वका उदय हो जाये तो मिथ्याहरि हो जाता है, यदि सम्यग्मिथ्यात्वका उदय हो जावे तो सम्यग्मिथ्यादाए हो जाता है. यष्टि सम्यक्प्रकृतिका उदय हो जावे तो वेदकसम्यग्दाष्टि हो जाता है और यदि अनन्तानुबन्धीमेंसे किसी एक प्रहातिका उदय हो जावे तो सासादनसम्यग्टाए हो जाता हैं। इस नियमके अनुसार नौ अनुदिश और पांच अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुआ उपशमसम्यग्दष्टि जीव फिरसे उप-शमसम्ययत्वको तो ग्रहण कर नहीं सकता है और मिथ्यात्व गुणस्थान उसके होता नहीं है, क्योंकि, अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थानको छोड़कर उसके दुसरे कोई गुणस्थान नहीं पाये जति हैं, इसलिए मिथ्यात्वसे भी पुनः वह उपशमसम्ययत्वको ग्रहण नहीं कर सकता है। वेदक-सम्यक्तवसे कदाचित् उसके उपरामसम्यक्तव माना जाय सो ऐसा मानना भी ठीक नहीं है. क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वसे उपशमश्रेणीके सन्मुख मनुष्योंके ही उपशम (हितीयोपशम) सम्यक्तव होता है अन्य गतियोंमें नहीं। तथा पूर्व पर्यायसे आया हुआ उपश्रमसम्यवस्व अपर्योप्त अवस्थामें ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वके कालले छह पर्याप्तियोंके पूरा करनेका काल अधिक होता है। इसप्रकार इतने कथनसे यह निष्कर्ष निकला कि नौ अनुदिश और पांच अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुआ उपशमसम्यग्दष्टि जीव नियमसे वेदकसम्यग्दाए ही हो जाता है और जो वेदकसम्यग्दाष्ट्र उत्पन्न होता है वह भी अन्त तक

१ प्रतिपु ' छ-पजत्तीओ ' इति पाठः ।

२ उवसमसम्मत्तद्धा छावळिमेचो दु समयनेत्तो त्ति । अवसिट्ठे आसाणो अणअण्णदरुदयदो होदि ॥ अंतीमुहुत्तमद्धं सब्वोवसमेण होदि उवसंतो । तेण परं उदओ खञ्ज तिण्णेकदररस कम्मरस ॥

ल. झ. १००, १०२.

अणागारुवजुत्ता वा<sup>?2?</sup> ।

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसग, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उकस्सिया सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>???</sup> । एवं देवगदी

सिद्धगदीए सिद्ध-भंगो ।

एवं गइमग्गणा समत्ता ।

वेदकसम्यग्टाप्टे ही रहता है।

सम्यक्त्व आऌापके अगे संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--- एक अविरतसम्यग्दारे गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, बसकाय, वैक्रियिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दें। योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे उत्कृष्ट शुक्त लेक्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और झायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं। इसप्रकार देवगतिके आलाप समाप्त हुए।

सिद्ध गतिके आलाप सिद्धेंके आधालापके समान जानना चाहिये।

इसप्रकार गतिमार्गणा समाप्त हुई।

नं. १८१ नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्त आऌाप.

गुःजीः पः प्राः संं ग	इंका यो. वे.	क, 'ज्ञा, संय.	दि हे स! र	न संकी आ ट.
2 2 2 2 20 8 2		8 3 8	् ३ इ.१ १ २	१ १ २
सं.प. दे. रूप.	भूम भ । भूम में ब ४	मात ्अस∙ अत	कन्द्र, सु∎ कन्मन । क्ष त्रिना⊷ मा∎ १   क्षाय	ि सं. आहा. साका. गो. जना.
	वै. १	अव.	जु.उ.	
	E i E E E	j l	· · ·	

नं. १८२ नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	] जी	ष.	र्श्री सं	्य.	इ	কা,	ं <u>यो</u> ग	वे-	ं क	्रज्ञा.	सं <b>य</b> .	द. हे.	म.	स.	संझि.	) আ.	। उ.
1	१	Ę	৩ ' ४	१	्र	१	્ર	÷ 8	8	3	÷ 9	, ३ . इ. २	2	३ ।	1	ર	2
-	सं.अ.	अप.		दे.	Ч.	त्र.	वे.मि.	ुनुः	:	मति.	अस.	के.द. का	म, उ	भौप.	सं.	आहा.	साका.
त		ক	-	İ	1		कार्म.	!	•	श्रुत.	i	विना शु.		क्षा.	1	अना	अना.
									1	अव•		्मा, १		ायो.	1		
					:			,	÷.			া রু. র.	j				
				i		.			. 1			1	:		:		

٩,

१, १. ]

इंदियाणुवादेण अणुवादो मूलोघो। णवरि अत्थि अदीदगुणदृाणाणि, अदीद-जीवसमासा, अदीदपज्जत्तीओ, अदीदपाणा, सिद्धगदी वि अत्थि, अणिंदिया वि अत्थि, अकाया वि अत्थि, णेव संजदा णेव असंजदा णेव संदजासंजदा वि अत्थि, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया अत्थि। एदे आलावा ण वत्तव्वा, सिद्धाणमेइंदियादि-जादिणाम-कम्मस्सुदयाभावादो।

सामण्णेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्बत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-गदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, पुढवि-वणण्फई अस्सिद्ण सरीरस्स छ लेस्साओ हवंति । भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणे। अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>24</sup>।

इन्द्रियमार्गणके अनुवादसे आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि अतीतगुणस्थान, अतीतजीवसमास, अतीतपर्याप्ति, अतीतप्राण, सिद्धगति, अनिन्द्रिय, अकाय, संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक रहित स्थान इतने आलाप नहीं कहना चाहिए: क्योंकि, सिद्धजीवोंके एकेन्द्रियादि जाति नामकर्मका उदय नहीं पाया जाता है।

सामान्य पकेन्द्रिय जीवेंकि आलाप कद्दने पर-एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, बादर-पर्याप्त, बादर-अपर्याप्त, सूक्ष्म-पर्याप्त और सूक्ष्म-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, मनः-पर्याप्ति और भाषापर्याप्तिके विना चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, कायबल, आयु और इवासोच्छ्वास ये चार प्राण, अपर्याप्तकालमें स्वासो-च्छ्वासके विना तीन प्राण, चारों संझाएं, तिर्थंचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावर काय, औद्यारिककाययोग, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमाते और कुश्रुत ये दो अझान, अतंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं होती हैं, क्योंकि, पृथिवी और चनस्पतिकायिक जीवेंकि दारीरकी अपेक्षा दारीरकी छहों लेइयापं पायी जाती हैं। भावसे इज्जा, नील और कापोत लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

	नं.	શ્ટર
--	-----	------

सामान्य एकेन्द्रियोंके सामान्य आलाप.

। गु	ुजी.	ं प-( प्रा	ι <b>π</b> .	ग ं	इं. का.	यो ।	े वे.	ं क.	्रज्ञा.	संय.	ं द.	ਲੇ.	स.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
1	*	88	8	٤ [	2 4	3	12	8	्र	1	[ १	द ६	. २	१	1 2	ર	ર
ामे	ंबा- प	વ ્ર	İ	d.,	<sub>ि</sub> ्रत्रस	ો ઔ. ર	ंकं		'कुम,	अस.				मि ।	. सं.	आहा.	साका.
1	ৰা.জ	8	I	1	🗳 ।विनाः	्र का. र	च		कुशु.	1	:	: সহ্য,	`अ⊦ ∣		:	अना.	अना.
i i	सू.प.	अ•	l	1 1	1	ľ			i		I	i			1		
1	ંત્ર, અ.		ļ	i	,		; i		I		ı.	:					

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पजत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय. ओरालियकायजोगो, गवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खदंसण,

दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>247</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि अवजत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदि्यजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवंदसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्ख़दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

उन्हीं सामान्य एकेन्द्रिय जीवॉके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक मिथ्याद्यप्टि गुणस्थान, बादर-पर्याप्त और सक्षम-पर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, बादर-अपर्याप्त और सुक्ष्म-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संश्वाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दें। योग, नवुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अन्नान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे कण्ण, नील और कापोत लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंश्विक,

## नं. १८४

सामान्य एकेन्द्रियोंके पर्याप्त आलाप.

१ मि -	जी. २ बा.प.प स्.प.	8 8	8	2	٤.	का. यो ५ <b>२</b> रसः और वेना	٤	8	২	संय. द. १ १ असं. अच	.इ.इ	२ म.	. १	2	٩	<u>उ.</u> २ साका, अना,
		;	;			:	:		_	:	_	:	i	! 		

2. 2. ]

असण्णिणेा, आहारिणेा अणाहारिणेा, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

बादरेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं. दो जीवसमासा, चत्तारि पज-त्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, बादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असँजम, अचक्खुदंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साः मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागास्वजुत्ता वा<sup>24</sup> ।

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर-पर्याप्त और बादर-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राणः चारों संझाएं, तियंचगति, बाद्र एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदा-रिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः न्युंसकवेद, चारों कवाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे छहाँ ले**श्या**एं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, असंक्रिक, आद्दारक, अनाद्दारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १८५

सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

] गु. जी.   प. पा. सं. गः इ. का	यो। वे.व. हा। संय	. ले. स. स. संहि. आ. उ.
12 2 8 2 8 2 4 4	र १४२ १ १	द्र.२.२.१.२.२.२
भि. बा.अ. अ. ति. 👌 त्रस मू.अ. 🖻 विना	· ऑॉमे	व. का. स. मि. अस. आहा. साका. ह. अ. अना. अना.
स्.अ.	. कामें. " इुश्च	भा र
		अशु₊

नं. १८६

बद्धर पकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप

गु. जी. प. प्रा. सं. ग. इं. का. यो. वे. क. झा. संय. द. छे. स. स. संझि. आ. ड. १ २ ४प ४ ४ १ १ ५ ३ १ ४ २ १ १ इ. इ २ १ १ २ २ मि. बा. प. ४अ. ३ ति बा. ए. त्रस. औ. २ हु बा अ जाति विना. का.१ हि कुभु. अस. अन्न. आ. ३ स. मि. असं. आहा साका बा अ जाति विना. का.१ हि कुभु. अन्न. अन्न. अन्न. अना. अना कुम. असं. अच. मा. ३ भ. मि. असं आहा साका. জনা.

# छर्क्खंडागमे जीवडाणं

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, बादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

<sup>222</sup>तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिकखगदी, बादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण,

उन्हीं बादर पकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्याहष्टि गुणस्थान, एक बादर-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेक्याएं; भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं बादर एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादर-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मण

नं. १८७

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>ग</u> ु.	] ज	<u>îr.</u>	<b>q</b> .(	я.	से.	ग.	इ	কা-	यो.	वि	क.	রা.	संग.	द.	छे.	4	<b>ਜ</b>	संज्ञि.	_ आ	<u>ु.</u>
۶_	१	t	A	8	8	2	\$	1	<b>२</b>	र	8	ર	8	٤ -	ह १	€¦ <b>२</b>	18	8	<b>१</b>	२
मि.	ৰা,	<b>.</b> ¶.				ĥ.	वा ए.	त्रस-	औदा	निषु.		कुम.	असं -	अच-	मा.	∜भ⊷	मि.	सं.	आहा.	साका.
							जाति.	विना	- -		-	कुथु.			, সহা,	. अ		j		अन्।
[									Í	ļ	I	Ŭ			1					

नं. १८८ बादर एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	ਤੀ-	٩.	त्रा.	<del>सं</del> ,	ग,	इ.	का	्यो.	वे.	ंक,	्रज्ञा.	. संय	ंद.	ਲੇ,	म,	स.	संहित.	आ.	ਤ.
2	2	ጸ	3	8	2	২		्र											
ाम.	ৰা.স	$\mathbf{s}^{*}$			ति ।	बा.ए.	त्रस.	आ मि.			∣ कुम⊷	अस.	अच-	का.	भ.	ंगि,	असं.	आहा-	साका.
		57				जाति.	विना.	कामे.	. h <b>r</b>		कुञ्च.			. शु	ॱअ_			अना.	अना.
								ļ	1		Ť		1	भा. ३			:		
									:			1		ં ગગ્રુ.	i i				
1			, 1					l	j			į.	! .	-	!	1		:	

দও্য ]

2, 2.]

दव्वेण काउन्सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्ता; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अगाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा।

एवं बादरेइंदियपज्जत्ताणं पज्जत्तणामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तच्वा। अपज्जत्तणामकम्मोदयाणं वादरेइंदियलद्धिअपज्जत्ताणं भण्णमाणे बादरेइंदियअपज्जत्ता-लाव-मंगों ।

""सुहुमेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, वे जीवसमासा, चत्तारि पज्ज-त्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चतारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, सुहुमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा;

काययोग ये दे। योग, नपुंसकचेद, चारों कवाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचञ्चद्यर्रान, द्रव्यसे कापोत और ठुक्क ठेस्यापं, भावसे रुष्ण, नील और कापोत लेक्यापं; भव्यसिदिक, अभव्यसिदिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकारसे पर्याप्तनामकर्मके उदयवाले बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले बादर एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवेंकि आलाप बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तक जीवेंकि आलापोंके समान जानना चाहिए।

सूक्ष्म पकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादष्टि गुणस्थान, सूक्ष्म पर्याप्त और सूक्ष्म अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, तिर्धचगति, सूक्ष्म पकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, आदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुशुत ये दो अहान, असंयम, अचश्चदूर्रान, द्रव्यसे कापोत,

१ प्रतिय ' बादरेहंदियपञ्जत्तालावी संगी ' इति पाठः ।

नं. १८९

## सुक्षम एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

	र, जै।	ेष.	সা-	सं	Π.	Ę.,	কা,	े यो	•	वे.	ंक	झा.	संग	द.	े ले.	भ.	. स	संक्रि	ঙা,	ਤ,	ł
	१, २	8	8	8	X	٤ ،	-		-			-	•	2			۶.	2	२	२	
î۹	। स् प	<b>q.</b>	; <b>R</b>		ति.	सू.ए	्त्रस	औ.	ર		i	कुम.	अस.	अच.	কা.	) भ.	मि.	असं.	आहाः	साका.	ł
	स्. अ.	8	1		;	जाति	ंविना	ቀ1	Ł	٦,		कुश्र.			<u>3</u> .	अ.			अना.	अना.	
		) স			į	1	Ì	÷				•	4	ĺ	भा ३	!					l
	:	j.		ļ		i	i	i				) )		1	ઝજ્ઞુ.	1					l

[ 493

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, सुहुमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउलेस्सा', भावेण किष्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-बजुत्ता वा'''।

उन्हीं सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, एक सूक्ष्म-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, सूक्ष्म एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचञ्चद्र्दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेइयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आदारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्या इष्टि गुणस्थान, एक सूक्ष्म-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संझापं, तिर्यंचगति, सूक्ष्म एकेन्द्रियज्ञाति, पांचें स्थावरकाय, औदर्शरेकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमाति और कुश्रुत ये दें। अझान,

भातिपु ' काउसुवकलेरसा ' इति पाठः । सध्वंसिं सहुमाणं कावोदाः गो. जी ४९७.

## र्च. १९०

सुक्षम एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>U</u> .	जी-	प.	সা-	<b>सं</b> .	η.	ŧ.	का.	यो -	वे.	क.	झा.	संय.	व.	ले.	म.	स.	संझि.	আ.	उ.
1	र सू.प	8	۲	8	१ ति.	∫ १ स्.ए. ∣	५ त्रस.	<b>१</b> ओदा	9	8	२ कुम.	र असं	१ अच	द्र. १ का.	्र भ.	२ मि.	१ असं.	<b>१</b> आहा.	२ साकाः
						जातिः	त्रस. विना.		- <b>H</b>		કુઝુ.			भाः३		•			अना.
							4			1				े अशु.					
1	1							•	<u> </u>		1		ì		1	1	۱ ۱	1	]

दंसण, दन्वेण काउ-सुकलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>88</sup>।

एवं पङजत्त-णामकम्मोदय सहियाणं सुहुमेईदियणिव्वत्तिपडजत्ताणं तिणि आलावा वत्तव्वा । सुहुमेईदियलद्विअपडजत्ताणं पि अपडजत्तणामकम्मोदय-सहियाणं एओ अपडजत्तालावो ।

वेइंदियाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुण्डाणं, वे जीवसमासा, पंच पजत्तीओ पंच अप-जत्तीओ, छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, ओरालिय-ओरालियामिस्स-कम्मइय-असचमोसवचिजोगा इदि चत्तारि जोग, णवुंसयवेद,

असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्यापं, भावसे ऋष्ण, मील और कापोत लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक, साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सुरुम एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीवींके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सुरुम एकेन्द्रिय लघ्ध्यपर्याप्तकोंके एक अपर्याप्त आलाप जानना चाहिए।

हीन्द्रिय जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर-एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, हीन्द्रिय-पर्याप्त और हीन्द्रिय-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्यास ये छह प्राण, अपर्याप्तकालमें उक्त लह प्राणोंमेंसे वचनबल और श्वासो-च्छ्वासके विनाचार प्राण; चारों संझाएं, तिर्यंचगाति, हीन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, कार्मणकाययोग और असत्यमुषावचनयोग ये चार योगः नपुंसक

## **न.** १९१

# सुक्ष्म एकेन्द्रिय जीवेंकि अपर्याप्त आलाप

	गु.ेजी∙	प. प्रा	. सं	. गः	ъ.	কা.	ं यो.	ं वे.	ማ.	<b>का</b> .	संय	व.	ਡੇ.	' भ.	स.	सं हि	आ.	ਰ.	ŧ
	2 2	४ ३	្ន	8	٤.	4	२	۲.	8	ँर	<u>१</u>	ંશ	द्र. २	<u>,</u> २	2	्र	्रे	ર	ĺ
ÎÌ	। सू अ	ь. -	:	<b>ति</b> •	સુ. ए.	त्रस.	औ.मि	·	•	कुम.	असं.					असं	आहा.	साका.	ł
		ര്		   	जाति.	विना.	कार्म.	: <b>1</b>		কুপ্তু.	i	Ì	3	अ.	i		<b>अना</b> .	अना.	I
			1				i	;			1	;	भा व	ų –	:	•	:		I
	i	i (	•	: :	i		į	ļ.	į 1			1	ায়.			ļ.	į.		l

कुक्खंडासमे जीवदाण

408 1

[ 2, 2,

णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अमवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असाण्गिणो, आहारिणा अणा-हारिणो. सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा "ा

तेसिं चेव पजतताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, पंच पज्जत्तीओ, छप्पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा. भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहा-रिणो. सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

वेव, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दे। अज्ञान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेइयाएं, भाषसे कृष्ण, नील और काणोत लेइयाएं। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंक्षिक, भाहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं द्वीन्ट्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, एक द्वीन्द्रिय-पर्योप्त जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां. प्रवीक्त छह प्राण, चारों संझाएं, तिर्यचगति, झीन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयेाग और औदारिक-काययोग ये दो योगः नपुंसकथेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अच्छादर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, असंक्षिकः आहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मं. १९२

द्वीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

11	Į.	जी-	प-	<b>प्रा</b> .	đ.	П.	₹.]	का.	यो.	से.	क,	গা	_ संग	. द.	ੁ ਲੇ.	्म-	स.	सं।ज्ञी	आ.	ਤ.	ł
1	2	२	4	Ę	R	१	2	٤	8	2	8	<b>२</b>	2	\$	¢. Ę	્ર	۶.	٤ ا	ર	્ર	L
Î	। द्व	ो₊प ∣	۹.	8		ति.	E	त्रस,	ઓ ર	- 5-2		ुकुम	. अस	अच.	)मा⊶३	਼ਸ.	भि.	असं.	आहा	सांध्रा.	
	S.	1.अ∙	4				-		का १	Ĩ		রস্থ	•	ì	⊌য়∙	अ			अना	अना.	
1			अ.				° <b>h</b> .4		वि. १				1					•			ł
		1		ŀJ					अनु.	i	ļ		ł					ì	i í	İ	l

## નં શ્વર

डीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

) ग्र	.जी	<b>q.</b>	मा-;	सं.	ग.	<b>\$</b> .	का.	्यो -	वे.	क.	ह्य.	् सयं-	ζ.	ले.	म.	. स.	संझि.	গা,	ਚ(
2	2	4	8	8	2	१	8	२	1	8	२	2	१	द्र. ६	ર	2	8	8	२
मि	Î.				i <b>đ.</b>	द्वी.	त्रस.	वै. १	· <b>৮</b> 2		कुम.	असं.	अच.	भा ३	म.	मि.	असं -	आहा.	साका.
	<b>q</b> .	i		,		जा	:	ઞ્નુ.	11		कुश्च-	!	:	अશુ.	अ.				अन्।.
	1			:			l.	. औ. १							İ	i I			
	j.	Ì			i ;		1	J	i 1		!	į	Į		ļ		j		ļ

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जविसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंक्षयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>?\*\*</sup>।

एवं वीइंदिय-पञ्जत्तणामकम्मोदय-सहियाणं वीइंदियपज्जत्ताणं तिण्णि आलावा वत्तव्या । बेइंदिय-लद्धिअपज्जत्तणामकम्मोदय-सहिदाणं एगो आलावो वत्तव्यो ।

तेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, पंच पजत्तीओ पंच अपजत्तीओ, सत्त पाण पंच पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, तीइंदियजादी,

उन्हीं द्वीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाष्टि, गुणस्थान, एक द्वीन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, कायबल और आयु ये चार प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, द्वीन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कार्पोत लेक्याएं, भूव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक आहारक-अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीमकारसे हॉन्द्रियजाति और पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले हॉन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्योप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। हीन्द्रियजाति और लब्ध्यपर्या-प्तक नामकर्मके उदयवाले हीन्द्रिय अपर्याप्तक जीवेंकि एक अपर्याप्त आलाप ही कहना चाहिए।

त्रीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आळाप कहने पर—एक मिथ्यादाष्ट्र गुणस्थान, त्रीन्द्रिय-पर्याप्त और त्रीन्द्रिय-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घाणेन्द्रिय, वचनवल, कायबल, आयु, और श्वासोच्छ्वास ये सात प्राण; अपर्याप्तकालमें उक्त सात प्राणोंमेंसे वचनवल और ज्वासो-

नं. १	68
-------	----

2, 2. ]

इीन्द्रिय जीबोंके अपर्याप्त आलाप.

1 ग्र.	जी. ¦	<b>q</b> .j	न्ना,	सं.	ं ग.	इ.	का.	यो.	वे.	ক.	झा-	í <u>सं</u> य∙	द.	<b>ले</b> .	म-	स.	संज्ञि.	आ.	ড,
े १	۲	• 1	لا			۶.	2	ર્	8	8	२	8	২	द्र. २	ર	2	२	्र	२
मि. द्व	ो. अ.	अ.			ति	स	н.	औ.मि. कार्म.			कुम.	असं -	अचधु.	का.	भ.	मि	असं 🛛	आहा.	साका.
	i	į					7	कार्म.	L.		कु धु.	1		ন্থ্য	अ.	•		अना.	अनाः
			i	ĺ	į .	ъР				!		1		भा• ३			:		
					ļł				ļ			J	l	अञ्च.	4	ļ	l		

406 ]

तसकाओ, चत्तारि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिाद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

ैतेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, पंच पञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, तीइंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णबुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्वेण छ लेस्सा,

च्छ्वासके विना रोष पांच प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्यंचगाति, त्रीन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभय-वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे छहों ठेदयाएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेदयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आद्दारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारे(पयोगी होते हैं।

उन्हीं त्रीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—पक मिथ्यादप्टि गुण-स्थान, एक त्रीन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त सात प्राण, चारों संद्वापं, तिर्यंचगति, त्नीन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिककाययोग ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचक्षु-

नं. १९५

## त्रीस्ट्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

। यु. जी. प. प्राः} सं√गः∤ इ	. का यो. वि.क. ज्ञा संय.	द. हे. भ स. संक्रि. आ. उ.
<u>१२५</u> , ७ ४ १ १	2 8 2 8 2 2	१ इ.६२११२२२ अच भा.३भा मि असं आहा साका.
मि. त्री.प. ५अ.५ ति. ह त्री.अ.	ાં વાય છે. ગુમાં અસમ જે અનુ જ બ્રુપ	अर्थना. २ में जिस अतः जीवा सम्म अस्त
	ઓ.ર	
	का. १	

ने, १९६ -

# त्रीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु. झी. प.	त्रा. सं	ग, इं. का	. यो-	वे क	হা	संय.	द.		भ	ेस∙	संझि.		<u> </u>
१ १ ५ मिः त्री-प-	৬ ধ	२ २ २ ति. ⊨ ⊨	्र व. १	नतु. <b>२</b>	२ कुम.	र असं	<b>र</b> अच	ड.६ मा∙३	ť	मि.	असं.	आहा.	
		में स स	અ <u>ન</u> ુ. औ. ૧	"ग	कुथ			अશુ.	ઝા.			i I	অলা.
	_ ;   ]		SII. 3	: 					1				

[ 2, 2.

भोवेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहा-रिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागाहवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे आखि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, पंच पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, तीइंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुत्रजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>(\*\*</sup>)

एवं तीईंदियणिव्वत्तिपञ्जत्ताणं पञ्जत्त-णामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा। लद्धि-अपञ्जत्ताणं पि अपज्जत्त-णामकम्मोद्याणं एगो आलावो वत्तव्वो ।

चउरिंदियाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, पंच पज्जत्तीओ

दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंश्विक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों त्रीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--- एक मिथ्याहष्टि गुणस्थान, एक त्रीन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, आदिकी तीन इन्द्रियां, कायबल और आयु ये पांच प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, त्रीन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदा-रिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुर्मात और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्त लेक्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्याख, असंक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उद्ययवाले बीन्द्रिय निवृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले जीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंके भी एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए ।

चतुरिन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरि-

## ন. १९७

त्रीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<b>!</b> ग्र.	जी.	्ष.	) प्रा.	सं. ग	<b>.</b> .	ंका,	्यो.	वे.	क,	ज्ञा.	ं संय	द.	: è,	<b>म</b> .		. संहि	्ञा_	। ਤ.	ı
2	1	ંબ	4	8.8	<u>ب</u>	<u>ع</u>	2	2	ጸ	૨	<u></u> १	१	द्र. २		2	र	२	२	ŀ
ł		अ,	•	ਾਰ	. রী `জা	d l	ओ,मि कार्म	Ъ,				अच.			मि.	· .	आहा.		
	(अ.	j		İ	ાગા	· 17**	વગ+ન.⊧ ∣		:	જી <b>ઝુ</b> .	·   :		ु शु. भा २	अ.		1	अ <b>न</b> ाः	अनाः	
	ļ			j				. <b>1</b>			:		্ <del>য</del> া ২ ্ সন্থ্য					i	

[ 469

## छक्खंडागमे जीवहाणं

पंच अपज्जत्तीओ, अह पाण छप्पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>14</sup>।

तेसि चेव पजताणं मण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं. एओ जीवसमासो, पंच पज्जत्तीओ, अद्व पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो,

न्द्रिय-पर्याप्त और चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्या-पितयां, पांच अपर्याप्तियां: पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, झाणेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, कायबल, वचनबल, आयु और दवासोच्छ्वास ये आठ प्राण, अपर्याप्तकालमें उक्त आठ प्राणॉमेंसे बचनबल और द्यासोच्छ्वासके विना रोष छह प्राणः चारों संझाएं, तिर्यंचगति, खतुरिन्द्रियजाति, जसकाय, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योगः नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुध्रुत ये दें। अज्ञान, असंयम, बध्रु और अचधु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेदयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कार्पात लेद्र्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिध्यात्व, असंश्विक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चतुरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त आठ प्राण, चारों संझाएं, तिर्थंचगति, चतुरिन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिक-काययोग ये दो येगा; नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अक्षान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्यापं; भज्यासाद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंधिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना

## नं. १९८

चतुरिन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

। गु-	जी.	प.	SI.	सं.	ग.	<b>\$</b> .	ৰু।.	यो	i.	वे.	क.	ज्ञा.	संय	द.	छे.	भ.		संज्ञि	ঙা	ਤ.
१	२	4	٤	¥	र	2	१	8		2	¥	2	8	ર	द्र. ६	2	۶	8	२	ર
मि	च.प.	प.	प.		ति.	÷	त्रस.	व.	१	. <b></b> .		कुम	असं.	च थु.	भा २	ुंभ.	मि	असं.	आहा.	साका.
l.	च.अ.	ષ	Ę			! .		93		π		જુશ્રુ,		अच	<u> અ</u> જ્ઞુ.	জ.		!	अना.	अना.
		अ,	अ.			च		ओ.	٩				1	]	!	ļ	ĺ			
1								কা,	१		ļ	1	]	ł					ĺ	ł

460]

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>10</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, छप्पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, मावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>50</sup>।

कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चतुरिन्द्रिय जीवोंके अपयीप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच अपर्याक्षियां, आदिकी चार इन्द्रियां, कायबल और आयु ये छह प्राण, चारों संझापं, तिर्यंचगति, चतुरिन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये देा योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चश्रु और अचशु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्ल लेखाएं, भावसे ऋष्ण, नील और कापोत लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्य-ासिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

र्न, १९९

चतरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जीं प	ं प्रा, सि	ः ग	<b>इं</b> ंक	ं यो	à.	क.	ল্পা.	सय.	द.	ਂ ਲੇ.	म.	.स.	संझि.	आ.	₹.
1	2 4	<u>د اک</u>	۶ ا	2 2	२	2	¥	२	2	્ર	द्र ६	<b>२</b>	શ	2	2	ર
मि '	च ्		'ति -		ंब. १ अञ्च	ч		कु म	अस	चक्षु-	भा. ३	्म	मि -	असं.	आहा.	स्राका.
	ष.		I	אן כי <u>ו</u>	ਂ ਕੁਰੁ	না	:	∄શ્રુ.		अच,	अगु.	अ.		1		अना.
ł		i	:	्या ।	्रेओं. १	۲,										
	ι. ι.	1 i	1 1		i		l	1			}	!				

तं, २००

चतुरिन्द्रिय जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

]गु.	जी	Ч.	प्रा	सं.	्ग.	ş	<b>T</b> .	योग	त्रे.	क	হ্বা.	संय	τ.	ð.	) भ.	स.	संझि.	आ.	J.
12	ং	4	Ę	8	<u>ع</u> ا	्र	2	ર	2	8	2	8	. २	<b>इ. २</b>	<b>   </b>	۶.	1	२	२
मि.	च,अ	¦अ.ं					<b>ד</b>	ओ.मि	E?	i i	कुम.	अस.	चक्षु.	का.	म.	मि •	असे ।	•	
			ļ :		•	'রা,	1	काम.		 :	कु थु.	ł	अन्व-	-	1 '		,	জনা,	अना.
1		 	Į		:	:			:	:	:	Ì	: !	) भा. २ अन्य			1		
	ł	1		i	:		ì		ł	•				अગ્રુ.				1 <sup>°</sup> 1	
		1	I		!	1	-					l	!	i	4 i				

8, 8, ]

સ૮ર ]

एवं चउरिंदियाणं पज्जत्त-णामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा । चउरिंदि-याणमपज्जत्त णामकम्मोद्याणं एओ आलावो वत्तव्वो ।

<sup>201</sup>पंचिंदियाणं भण्णमाणे अत्थि चोइस गुणद्दाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण चत्तारि पाण दो पाण एय पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, बत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अड णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्वे-भावेहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, मबसिद्विया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि

इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले पर्याप्तक चतुरिन्द्रिय जीवींके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले लब्ध्यपर्याप्तक चतुरिन्द्रिय जीवोंके एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए।

पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, संझी.पर्याप्त, संझी. अपर्याप्त, असंझी-पर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संझी-पर्याप्त जीवोंके छहाँ पर्याप्तियां, संझी-अपर्याप्त जीवोंके छहाँ अपर्याप्तियां; असंझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके छहाँ पर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, असंझी-अपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके पांच अपर्याप्तियां; संझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके दर्शों प्राण, संझी-अपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके पांच अपर्याप्तियां; संझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके दर्शों प्राण, संझी-अपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकाल्ट-भावी सात प्राण, असंझी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके मनोबलके विना नौ प्राण, असंझी-अप-र्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालभावी सात प्राण, सयोगिकेवली जिनके वचनबल, कायबल, आयु और स्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, केवलिसमुद्धातकी अपर्याप्त अबस्थामें आयु और कायबल ये दे! प्राण, और अयोगिकेवली भगवान के एक आयु प्राण होता है। चारों संझापं तथा श्रीणसंक्षास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, पंद्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है। तीनों वेद तथा अपगत्तवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। आठों झान, सातें संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों हेइयाएं तथा अलेड्यास्थान भी है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहों सम्यक्त्व, संझिक,

## नं. २०१

पंचेन्द्रिय जीवेंकि सामान्य आलाप.

[गु.	जी-	ч.	সা.	<b>.</b>		<b>\$</b> .:	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय	व.	हे.	भ-	<b>đ</b> .	संज्ञि	আ.	3.
118		इ.प.	80,0		8.	3	9	9'5	R	8	۲	৩	ሄ	द्र. ६	२	Ę	२	ર	२
	सं. प-	६ अ.	8,9			; चि	त्रस.		÷	- -				सा. ६	म∙	ŀ	सं.	आहा.	साका.
	स. अ.	५प.		क्षीण्		Ч		સંયોગ	लव	<u>अ</u> कृत				्ञलेश्य.	জ.		असं.	अना.	अ <b>न</b> ा.
	असं प.		2	<u>.</u>	l			ন্ত		ন					1		अनु.		यु उ
	असं.अ.		1						1			İ		ί	[				

अत्थि, आहारिणो अणाहारिणे, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पछत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणद्धाणाणि, दो जीवसमासा, छ पछत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण चत्तारि पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्व-भावेदि छ लेस्सा अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव आत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव आत्थि, भवसिद्धिया आवासिणि अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा<sup>62</sup>।

असंक्षिक तथा संक्षी और असंक्री इन दोनों चिकल्पोंसे रहित भी स्थान है। आहारक, अना-द्वारक: साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर — चौदहों गुणस्थान, संझी पर्याप्त और असंझी पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; इशों प्राण, नौ प्राण, खार प्राण और एक प्राण; चारों संझाप तथा सीणसंबास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग, वैक्रियिककाययोग और आहारककाययोग ये ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है। तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। आठों बान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेड्यापं तथा अलेड्यास्थान भी है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षी और असंक्षी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है। आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार तथा अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते है।

मं,	२०२

पंचेन्द्रिय जीवांके पर्याप्त आछाप.

] J.	জী. `	<b>q</b> .;	সা.	र्स.	ग.	÷.	का.	्यो.	ं वे	带.	হা.	संय.	ंद.	हे.	म.	.स.	संबि.	ঙ্গা.	3.
128	<b>२</b> '	<b>ह</b>	ţ۰	8	8	े १	<u>ع</u>	११म.	¥ંર્	¥ I	2	IJ		इ. ६		۹.	। २	<b>२</b>	ર
	सं• प ्र	ય	٩			-	THE STREET	व.४		<u>ت</u> ر ا		:		ः भा. ६	स.		स.	आहा.	साका-
	अ∎ष	, I	४स.	Ē	l	÷ 📴 –	, <del>K</del>	व.४ औ.१			1			ं अले.	э.		असं.	अना-	अना.
			१अ.			:	:	ये. १	t i T	61	:	i		i		!	ं अनु,	i	यु. उ.
					ļ	(		: আ. १		1	,	1			I		i		
					1	•	1	ं अयो.	· .	1	l		!		1				

٩, १.]

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, वे जीवसमासा, छ अपजत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णा खीण-सण्णा वा, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-बजुत्ता वा तदुभया वा

पंचिदिय-मिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणड्डाणं, चत्तारि जीवसमासा, छ

उन्हीं पंचेन्द्रिय जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्याहाएं, सासादनसम्यग्हाप्टे, अविरतसम्यग्हाप्टे, प्रमत्तसंयत और संयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, संशी-अपर्याप्त और असंशी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, संशी-अपर्याप्त और असंशी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, तथा सयोगकेवलि समुद्धातके अपर्याप्तकालमें दो प्राण, चारों संशारं तथा क्षीणसंशास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, तसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। विभंगावाधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञानके विना छह्न ज्ञान, असंयम, सामायिक छेदे। पिभंगावाधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञानके विना छह्न ज्ञान, असंयम, सामायिक छेदे। पद्याख्यात ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्छ लेड्यापं; भावसे छहों लेड्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्निध्यात्त्वके विना पांच सम्यक्त्व, संश्विक, असंश्विक तथा अनुभयस्थान भी है। आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अना-कारोपयोगी और दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, पूर्वेकि चार जीवसमास, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याण्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी पंचे

## Pt. 203

٠,

# पंचेन्द्रिय जीवोंके अपयोप्त आलाप.

<u>.</u> य.	जी.		সা	स.		Ę.	ধ্য	] यो	वे.	क.	) ज्ञा.	संय.	ζ.	<u>ल</u> े.	भ.	स.	साज्ञ.		े.
4	2	<b>६</b> अ.	ও	8	8	٩.	۱٩,	*	२	8	६	8	8	द्र. २	१	4	২	२	2
मि.	सं, अ.	ષ્ડ અ.	৩	.:		<b>વં</b> . '		औ मि.	<u>ب</u>	<u>ب</u>	विभं.	असं.		का.	स.	मि.	सं.	आहा.	साका,
hт.	अ <b>स</b> . अ.			<u>tinti</u>			नस.	वे.मि	अपग	अक्ष	मनः	सामा-		য়.	अ.	सा.	असं.	अना.	अमा.
34.				22		-	ļ	आःमि.	12	185	त्रिन्ता.	छेदों.		भा ६		(औप	अनु.		यु. उ. ।
я. 1								कार्म,				यथा.	ļ			क्षा			
स.	_									Ì		l				क्षायो -			

पज्जत्तीओ छ अपञत्तीओ पंच पजत्तीओ पंच अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणा अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>574</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एगं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्गि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

न्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, संझी पंचेन्द्रियोंके दशों प्राण, सात प्राण; असंझी पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय मिथ्यादाध जीवोंके पर्याप्तकाल्संबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्याद्यप्टि गुणस्थान, संक्री-पर्याप्त और असंक्री-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण; चारों संक्राएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैफ्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों बेद, चारों कषाय, तीनों अक्रान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं; भ्रब्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक; आहारक,

ત્ર. ૨૦૪

पंचेन्द्रिय मिथ्यादष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

र मि	जी. ¥ सं. प. सं. अ.	ध्य. इ.अ.	• ۶ و ا	8	81	2	ং	यो १३ आ.डि. विना.	3	8	, <b>⊋</b>	र असं.	२	द्र ६ मा-६	भः सः २ १ भः मिः अ•	२ स.	२	उ. २ सार्का, अना.	
	असं. <b>प.</b> असं.अ.	પ્લ.		î	Ì	i İ			l	1		:			: <u>:</u> : <u>.</u>	5			ļ

सण्णिमो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वांे।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ अपजनीओ पंच अपजनीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहतजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा 🐃

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जविोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याः ष्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, चैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग. तीनों चेद, चारों कवाय, कुमति और कुश्रुत ये दें। अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दे। दर्शन, द्रम्यसे कापोत और ठाक्क लेक्यापं, भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संहिक, असंहिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

न. २०५ पंचेन्डिय मिथ्याद्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	q.	प्रा∄	सं.∣	ग.'	ţ.	का.	यो	•	à.	<b>₹</b> 5.	ज्ञा-	संय.	्द.	. ले.	्म.	. स.	संझि.	) আ.	उ.	Į
1.2	२	Ę	20	8	۲	2	्र	र	0	ર	8	ર	2	2	द्र.६	২	2	२	۶	૨	
मि.	सं.प.	4	ا ج ا		ļ	पंचे.	त्रंस.	म.	8		ļ	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा ६	भ	मिः	सं.	आहा.	साका.	
	अस.			i				व्	៵				ļ	अच-		ુઝા	ļ	असं.		अनाः	
•	प.	Ì	· ·	1				औ.	१									i i			
<u>ا</u>		ļ	ι.	i		:	•	वे.	2		ţ		l		]	l _	<u> </u>	<u> </u>			

## र्न, २०६

पंचेन्द्रिय मिथ्यादाष्ट्र जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<b>१</b> २ मि.सं.्	Ę	8 9	ग. ई. ४ <b>१</b> म	त्रस. 🖕	यो। वे. ३ २ ओ.मि. वे.मि. कार्म.	<b>क</b> . ४	२ १	2	द्र.२ का.	भ. २ म. अ.	१ मि.	संझि. २ सं. असं.	ર	उ. २ साकाः अमाः	- E
-----------------------	---	-----	--------------------------	---------	---	-----------------	-----	---	--------------	---------------------	----------	---------------------------	---	--------------------------	-----

428]

सासणसम्माइडिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति मूलोघ-भंगो । एवं सण्णिपंचि-दियाणं पज्जत्त-णामकम्मोदयाणं मिच्छाइडिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति जाणिऊण सकलालाया वत्तव्वा ।

असण्णि-पंचिदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, पंच पजत्तीओ, णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो

सामान्य पंचेन्द्रिय जीवोंके सासादनसम्यग्दाष्टि गुणस्थानसे ळेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप मूल ओघाळापके समान जानना चाहिए। इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके मिथ्यादष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके समस्त आलाप जानकर कहना चाहिए।

असंझी पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर--एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, असंझी-पर्याप्त और असंझी--अपर्याप्त ये दो जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, नौ प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग; तीनों वेद, बारों कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्रान, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्याएं; भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंझिक, आदारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंझी पंचेन्द्रिय जीवेंकि पर्योप्तक ठसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादधि गुणस्थान, एक असंझी पर्योप्त जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, नौ प्राण, चार्रो संझाएं, तिर्यंचगति ,

## नं. २०७

असंक्षी पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

1	∣५ <b>प</b> ⊷ ∣५अ⊷	8	8	۶	8	त्रस. ∼	४ व. १ अनु.	77	8	रि	१ असं.	े <mark>२</mark> अच.	ले. इ. ६ मा. ३ अज्ञु,	ेर भ•	र मि	्र	ર	२ साका.	
							औ. २ का. १			 :									

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र्थ</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*</sup>।

पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिककाययोग ये दो योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रब्यसे छहों लेइयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंग्री पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्याद्यष्टि गुणस्थान, एक असंग्रो-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संग्रापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चश्रु और अचश्रु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुवल लेड्यापं, भावसे रूप्ण, नील और कापोत लेड्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंग्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

न. २०८

असंही पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप-

२	जी १ अर्स- प	प प्रा. सं ५९४४	ग इ २ २ वि. (ष्ट्र	यस. २ अ.स.	यो. वे. क. २ ३ ४ व. १ अतु.	झा. २ कुम. कुश्र.	संय. १ असं.	- २	द्र. ६ मा. ३	2	2	संक्षि. १ असं	2	उ. २ साका अना.
					ઔ. ર						1	) ;	!	

## नं. २०९

# असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु, जी, प. प्रा. सं. ग. ई. का. यो. वि. क. ज्ञा. संय. द. ले. भ. (स. संग्रि.) आ. ਚ, २ इ.२ २ 8 2 8 2 2 3 8 2 12 ٦Ę ર १ 8 4 3 ٤ 2 कुम, असं. चिक्षु. मि. असं. आहा. साका. औ.मि. কা ম ਸ਼ੂ **ਦ**ਾ ਸੀ मि. अस. अ <u>क्ष</u> वि कार्म. अन्। अनाः କୃଞ୍ଚ. अच. શુ. | ઝ. सा. ३ अश्च.

2, 2. ]

संपहि पंचिंदियलदिअपजत्ताणं अपजत्त-णामकम्मोदयाणं भण्णमाणे अस्थि एर्य गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ अपजत्तीओ पंच अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदि-तिरिक्खगदीओ त्ति देा गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणे अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र</sup>ं।

सण्णिपंचिदिय-रुद्धिअपञ्जत्ताणमपञ्जत्त णामकम्मोदयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुकलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया

अपर्याप्त नामकर्मके उद्यवाले पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवेंकि आलाप कहने पर-एक मिथ्यादधि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति और तिर्यंच-गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिधकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अच्छ ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और जुक्त लेड्यापं, भावसे रूष्ण, नील और कार्यात लेड्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संग्लिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोप-योगा और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले संझी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवेंकि आलाप कहने पर-एक मिध्यादाष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति और तिर्धंचगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्याएं, भावसे ऋष्ण, नील और कापोत लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व,

नं. २१०

पंचेन्द्रिय उच्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप

퀸.	जी.	المحمد منهار و	· ^ .			 · · ·							<u>छे.</u> द. २				<u>आ</u> . २	3.
्र   मि	्र . सं. अ					त्रस	ઓ.મિ			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि	. सं.	आहा	साका,
1	्असं.अ		-	! \ . i i i	ति	, ,	कार्म•	न्द्र ।	1	<u></u> 동경.	:		े शु∙ भा. ३	i <b>अ.</b> ∶	ļ 1	अस.	अना	अना.
	1		]	] [		ļ		1	:		:		अয়.				· ]	

[ 4८९

अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\* ।</sup>

असण्णिपंचिंदिय-लद्धिअपज्जत्ताणमपज्जत्त-णामकम्मोदयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, अणाहारिणो, सागास्वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>78</sup>।

अणिदियाणं सिद्ध-भंगो ।

एवं विदियमग्गणा समत्ता ।

संद्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले असंझी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्यान्तक जीवेंकि आलाप कहने पर---एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक असंझी-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, तिर्थचगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये देा योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेक्यापं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिन्द्रिय जीवोंके आलाप सिद्धोंके आलापोंके समान समझना चाहिए ।

इसप्रकार दूसरी इन्द्रिय मार्गणा समाप्त हुई।

नं. २११

संज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवांके आलाप.

गु, जी, प. प्रा. सं. ग.	इ. का. यो. वे. क.	<u>क्षा संय द</u> छे. स.	स. साहे आ उ.
2 2 5 9 8 2	१११२ २ १४ पंचे• त्रसः ओे मि <sub>ाम्फ</sub>	२ १ २ इ.२ २ कुम. असं. चक्षु. का. म.	१११२२
मि.सं.अ.अ. म.		कुश्र, अस. पद्ध, पतः स. कुश्र, अच. शु. अ.	
		भा ३	
		ઝશુ.	

नं. २१२

असंझी पंचेन्द्रिय ळव्ध्वर्याप्तक जीवोंके आलाप.

। गु, जी. ( प, पा. सं. ग. इं. ) का. यो. ( त्रे. क.)	इग. संय. द. छे. भ. स. संक्रि. आ. उ.
2 2 4 9 8 2 2 2 2 2 3	२ . १ २ . दें २ २ १ १ २ ! २
	कुम. असं. चञ्च. का. स. मि. असं. आहा. साका.
अ. कार्म. म	कुथ्रु. अच शु. अ. अना. अना. अना.
	मा.३ अग्र-
	ાબહન

# संत-पद्धवणाणुयोगदारे काय-आलाववण्णणं [ ५९१

१, १.]

कायाणुवादेण ओघालावे भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणद्दाणाणि, दो वा तिण्णि वा, चत्तारि वा छव्वा, छव्वा णव वा, अट्ठ वा बारह वा, दस वा पण्णारह वा, बारस वा अट्ठारह वा, चोद्दस वा एकव्वीस वा, सोलस वा चउवीस वा, अट्ठारह वा सत्तावीस वा, वीस वा तीस वा, बावीस वा तेत्तीस वा, चउवीस वा, अट्ठारह वा सत्तावीस वा, वीस वा तीस वा, बावीस वा तेत्तीस वा, चउवीस वा छत्तीस वा, छव्वीस वा एगुणचालीस वा, अट्ठावीस वा बायालीस वा, तीस वा पंचेतालीस वा, बत्तीस वा अट्ठ-तालीस वा, चउतीस वा एकपंचास वा, छत्तीस वा चउपंचास वा, अट्ठत्तीस वा सत्तपंचास वा जीवसमासा । दो जीवसमासेत्ति भणिदे पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि सव्वे जीवा दुविहा भवंति, अदो दो जीवसमासा बुचंति । तिण्णि जीवसमासेत्ति बुत्ते णिव्वत्तिपज्जत्ता णिव्वत्ति-अपज्जत्ता लद्धिअपज्जत्ता इदि तिण्मि जीवसमासा हवंति । चत्तारि वा इदि बुत्ते तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, थावरकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि चत्तारि जीवसमासा । छन्वा इदि बुत्ते दो णिव्वत्तिपज्जत्त्रजीवसमासा दो णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा दो लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं छ जीवसमासा । आधवा थावर-

कायमार्गणाके अनुवादले ओघाळाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान होते हैं। दो अथवा तीन, चार अथवा छह, छह अथवा नौ, आठ अथवा बारह, दश अथवा पम्द्रह, बारह अथवा अठारह, चौदह अथवा इक्रीस, सोलढ अथवा चौवीस, अठारह अथवा पम्द्रह, बारह बीस अथवा तीस, बावीस अथवा देतीस, चौवीस अथवा छत्तीस, छत्र्वीस अथवा उनचालीस, बहुावीस अथवा तीस, तीस अथवा पैताल स, बत्तीस अथवा अड्तालीस, चौतीस अथवा पकावन, छत्तीस अथवा चौपन, अडतीस अथवा सत्तावन जीवसमास होते हैं। आगे इन्हींका स्पष्टीकरण करते हैं—

दो जीवसमास दोते हैं पेसा कहने पर पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे सभी जीव दो प्रकारके होते हैं। अतपव दो जीवसमास कहे जाते हैं। तीन जीवसमास होते हैं पेसा कहने पर निर्वृत्तिपर्याप्तक, निर्शृत्यपर्याप्तक और छष्ण्यपर्याप्तक इसप्रकार तीन जीवसमास होते हैं। चार जीवसमास होते हैं पेसा कहने पर जसकायिक जीव हो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार चार जीवसमास कहे जाते हैं। छह जीवसमास होते हैं पेसा कहने पर त्रस और स्थावरके दो निर्शृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, वो निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और वो लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार छह जीवसमास कहे जाते हैं। अथवा, स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके

१ प्रतिषु ' ओघालावे मण्णमाणे ' इति पाठो नास्ति | २ प्रतिषु ' अट्टावीस वा ' इति पाठः | ३ प्रतिषु ' चोवीस वा तेत्तीस वा ' इति पाठव्युतकमः | अत उपरि प्रतिषु ' चडतीस वा ' इति पाठोऽभिकः | ४ प्रतिषु ' एतार्लस ' इति पाठः | 492 ]

काइया दुविहा पञ्जत्ता अपञ्जत्ता, तसकाइया दुविहा सगलिंदिया विगलिंदिया, सगलिं, दिया दुविहा पञ्जत्ता अपञ्जत्ता, विगलिंदिया दुविहा पञ्जत्ता अपञ्जत्ता इदि छ जीव-समासा । तिण्णि णिव्वत्तिपञ्जत्तजीवसमासा तिण्णि णिव्वत्तिअपञ्जत्तजीवसमासा तिण्णि लद्धिअपञ्जत्तजीवसमासा एवं णव जीवसमासा हवंति । थावरकाइया दुविहा वादरा सुहुमा, बादरा दुविहा पञ्जत्ता अपञ्जत्ता, सुहुमा दुविहा पञ्जत्ता अपञ्जत्ता, तसकाइया दुविहा सगलिंदिया वियलिंदिया त्ति, सयलिंदिया दुविहा पञ्जत्ता अपञ्जत्ता, तसकाइया दुविहा पञ्जत्ता अपञ्जत्ता एवं अट्ट जीवसमासा । चत्तारि णिव्वत्तिपजत्तजीवसमासा चत्तारि णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा चत्तारि लद्धिअपजत्तजीवसमासा एवं वारस जीव-समासा हवंति । थावरकाइया दुविहा पात्रत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा पज्जत्ता, सुहुमकाइया दुविहा पज्जत्ता अपजत्त्ता, तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपजत्ता, सुहुमकाइया दुविहा पज्जत्ता अपजत्त्ता, तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपजत्ता, अत्ति । द्विहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा पजत्ता अपजत्ता, अत्तण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, अपंचिदिया दुविहा पञ्जत्ता एवं दस जीवसमासा हवंति । पंच णिव्वत्तिपज्जत्त्रीवसमासा पंच णिव्वत्तिअपज्जत्ता

होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। त्रसकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इसप्रकार छह जीवसमास कहे जाते हैं। एकोन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रियके तीन निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, तीन निर्धत्यपर्याप्तक जीवसमास और तीन लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार नौ जीवसमास होते हैं। स्थावरकाधिक जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सुक्ष्म। बादर जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक। सुक्ष्म जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और चिकलेन्द्रिय। सकले-न्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इसप्रकार आठ जीवसमास होते हैं। बादर स्थावर-कायिक, सक्षम स्थावरकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवेंकि चार निईत्तिपर्याप्तक जीवसमास. चार निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और चार छब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार बारह जीवसमास होते हैं। स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सुक्षम । बाटरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक। सूक्ष्मकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक । जसकाधिक जीव दें। प्रकारके होते हैं, पंचेन्द्रिय भौर अपंचेन्द्रिय (विकलेन्द्रिय)। पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, संक्षिक और असंक्षिक। संबिक जोव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। असंबिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। अपंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। र्सप्रकार दश जीवसमास होते हैं ! बादर स्थावरकायिक, सूक्ष्म स्थायरकायिक, संझी

 $1 - \frac{1}{2}$ 

जीवसमासा पंच लद्धिअपड्जत्तजीवसमासा एवं पण्णारस जीवसमासा हवंति । पुढवि-काइया दुविहा पड्जत्ता अपड्जत्ता, आउकाइया दुविहा पड्जत्ता अपड्जत्ता, तेउ काइया दुविहा पड्जत्ता अपड्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पड्जत्ता अपड्जत्ता, वणप्फ इ-काइया दुविहा पड्जत्ता अपज्जत्ता, तप्तकाइया दुविहा पडात्ता अपड्जत्ता, वणप्फ इ-काइया दुविहा पड्जत्ता अपज्जत्ता, तप्तकाइया दुविहा पडात्ता अपड्जत्ता एवं बारस जीवसमासा हवंति । छ णिव्वत्तिपड्जत्तजीवसमासा छ णिव्वत्तिअपडात्तजीवसमासा छ लद्धिअपड्जत्तजीवसमासा एवमद्दारस जीवसमासा हवंति । एइंदिया दुविहा बादरा सुहुमा, वादरा दुविहा पड्जत्ता अपड्जत्ता, सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वेइंदिया दुविहा पड्जत्ता अपड्जत्ता, तेहादिया दुविहा पड्जत्ता अपज्जत्ता, वेईदिया दुविहा पड्जत्ता अपड्जत्ता, तेहादिया दुविहा पड्जत्ता अपज्जत्ता, चउरिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो, सण्णिणो दुविहा पड्जत्ता अपड्जत्ता, अतण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपड्जत्ता सि एवं चोहस जीवसमासा हवंति । सत्त णिव्वत्तिपड्जत्ता सत्त णिव्वत्तिअपड्जत्ता सत्त लद्धिअपज्जत्ता एदे सव्ये घेत्त्ण

पंचेन्द्रिय, असंबी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके पांच निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, पांच निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और पांच लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार पन्द्रह जीवसमास जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। तैजस्कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं. पर्याप्तक और अपर्याप्तक। वायुकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अस-कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार बारह जीयलमास होते हैं। छहाँ कायिक जीवोंकी अपेक्षा छ निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, छ निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और छह रुष्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार अठारह जीवसमास होते हैं। एकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सुक्ष्म। बादर दे। प्रकारके होते हैं, पर्या-प्तक और अपर्याप्तक। सुक्ष्म दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। द्वीन्द्रिय जीव हो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। जीन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। चतुरिस्ट्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्या-प्तक। पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, संशिक और असंश्विक। संश्विक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। असंक्षिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इसप्रकार चौद्द जीवसमास होते हैं। बादर एकेन्द्रिय, सुक्ष्म एकेन्द्रिय, हीन्द्रिय, जीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संझी पंचेन्द्रिय और असंझी पंचेन्द्रिय इन सात प्रकारके जीचेंकी अपेक्षा सात निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सात निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और सात सञ्ध्यपूर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलकर इक्षील जीवसमास होते हैं। पृथिवी- एकवीस जीवसमासा हवंति । पुढाविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पजत्ता अपजत्ता, तेउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वणप्फइकाइया दुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा पजत्ता अपजत्ता, साधारणसरीरा दुविहा पजत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा सयस्टिंदिया वियस्टिंदिया चेदि, सयस्टिंदिया दुविहा पजत्ता तसकाइया दुविहा सयस्टिंदिया वियस्टिंदिया चेदि, सयस्टिंदिया दुविहा पजत्ता अपज्जत्ता, वियस्टिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एवं सोलस जीवसमासा हवंति । णिव्वत्तिपजत्तजीवसमासा अट्ट, णिव्यत्तिअपज्जत्तजीवसमासा वि अट्ट, अट्ठण्हमपज्जत्तजीवसमासा अट्ट, णिव्यत्तिअपज्जत्तजीवसमासा वि अट्ट, आट्ठण्हमपज्जत्तजीवसमासा मज्झे अट्ट रुद्धिअपजत्तजीवसमासा हवंति एवं चउवीस जीवसमासा । पुढविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपजत्त्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता वणप्फदिकाइया दुविहा पत्त्रत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता, वणप्फदिकाइया दुविहा पत्त्रत्ता स्विरि, बादरणिगोदपडिट्ठिदा दुविहा पज्जत्ता, अपज्जत्ता,

कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। अप्कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। तैजस्कायिक जीव दें। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। वन-स्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकद्यारीर और साधारणद्यरीर । प्रत्येकद्यारीर जीघ दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। साधारणज्ञरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विक लेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार सोलह जीव-समास होते हैं। पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तैजस्कायिक, वायुकायिक, प्रत्येकवनस्पति-कायिक, साधारणवनस्पतिकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवॉकी अपेक्षा आठ निईत्तिपर्याप्तक जीवसमास, आठ निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और आठ अपर्याप्तक जीव-समासोंमें आठ लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास होते हैं। इसप्रकार सब मिलाकर चौबसि जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। जलकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। अग्निकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्यत्तक और अपर्याप्तक। वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्या-प्तक और अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दी प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर । प्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, बादरनिगोद्प्रतिष्ठित और बादर-निगोदअप्रतिष्ठित । बादरानिगोद्पतिष्ठित जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक।

 $< k_{\rm p}$ 

वादरणिगोदपडिट्ठिदवादेरित्त-पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, साधारण-सरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा वियलिंदिया सयलिंदिया चेदि, सयलिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियलिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, एवमद्वारस जीवसमासा हवंति । णव णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा णव णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा गव लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा' एदे सव्वे वि घेत्तूण सत्तावीस जीवसमासा हवंति । पुव्विष्ठ-अद्वारस-जीवसमासां एदे सव्वे वि घेत्तूण सत्तावीस जीवसमासा हवंति । पुव्विष्ठ-अद्वारस-जीवसमासां एदे सव्वे वि घेत्तूण सत्तावीस जीवसमासा हवंति । पुव्विष्ठ-अद्वारस-जीवसमासाव्भंतरे साधारण वणप्फइपज्जत्तापज्जत्तजीवसमासे अवाणिय साधारणवप्फइकाइया दुविहा णिच्चणिगोदा चटुगादीणिगोदा वेदि । णिच्चणिगोदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, चटुगादिणिगोदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे चत्तारि जीवसमासे पक्षित्वत्ते वीस जीवसमासा हवंति । दस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा दस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा दस लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एदे तीस जीवसमासा हवंति । पुढविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया वणप्फकाइया एदे सच्वे दुविहा

बादरनिगोदप्रतिष्ठितसे भिन्न अर्थात् बादरनिगोदअप्रतिष्ठितप्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। साधारणशरीर जीव दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय। सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके द्वोते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इसप्रकार ये अठारह जीवसमास होते हैं। पृथिवकाियिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, सप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, साधारणवनस्पतिकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय इन नौ प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा नौ निईत्तिपर्याप्तक जीवसमास, नौ निर्वृत्यपर्याप्तक जीव-समास और नौ लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर सत्तावीस जीवसमास होते हैं। पूर्वमें कहे गये अठारह जीवसमासोंमेंसे साधारणवनस्पतिकायिक जीवेंकि पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दे। जीवसमास निकाल कर साधारणवनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, नित्यनिगोद और चतुर्गतिनिगोद्। नित्यनिगोद दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। चतुर्गतिनिगोद दे। प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। ये चार जीवसमास मिलाने पर बीस जीवसमास द्वोते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक, नित्य-निगोद, चतुर्गातेनिगोद, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय इन दश प्रकारके जीवोंकी अपे**सा** दश निर्वतिपर्याप्तक जीवसमास, दश निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और दश उज्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर तीस जीवसमास द्वोते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, बायुकायिक, वनस्पतिकायिक ये पांचों कायके जीव दो दो प्रकारके होते हैं, बादर

१ भूतिषु ' णत्रलाज्ञे...समासा ' इति पाठो नारित ।

बादरा सुहुमा चि, सच्वे बादरा सच्वे च सुहुमा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि चउव्विहा हवंति, तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एवमेदे बावीस जीवसमासा। णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा एकारह, णिव्वति-अपज्जत्तजीवसमासा एक्कारह, लद्धि-अपज्जत्तजीवसासा एकारह एवं तेत्तीस जीवसमासा हवंति । बावीस-जीवसमासा-णमब्भतरे तसपऊात्तापऊात्तजीवसमासे अवणिय तसकाइया दुविहा हवंति समणा अमणा चेदि, समणा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, अमणा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एदे चत्तारि पक्खित्ते चउवीस जीबसमासा हवंति । बारस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा वारस णिव्वत्ति-अपज्जत्त्रजीवसमासा हवंति । बारस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा जीवसमासा हवंति । पुव्विछ-चउवीसण्हं मज्झे अमणाणं पज्जत्त-अपज्जत्त-दो-जीवसमासे अवणिय अमणा दुविहा सयलिंदिया वियलिंदिया चेदि, सयलिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियलिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे चत्तारि पक्खित्ते छव्वीस जीवसमासा हवंति । तेरस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा तेरस णिव्वत्तिअपज्जत्तजीव-

और सुक्ष्म। ये सभी बादर और सभी सुक्ष्म जीव पर्याप्तक और अपर्याप्तक होते हैं। इसप्रकार प्रत्येक एक एक कायके जीव चार चार प्रकारके हो जाते हैं। त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इसप्रकार ये सब मिलाकर बाबीस जीव· समास हो जाते हैं। पृथिषीकायिक, जलकायिक अग्निकायिक, वायुकायिक और वन-स्पंतिकायिकके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद होते हैं और त्रसकायिक इन ग्यारह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा ग्यारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, ग्यारह निर्वृत्यपर्याप्तक जीव-समास और ग्यारह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार सब मिलाकर तेतीस जीवसमास होते हैं। पूर्वोक्त बाबीस जीवसमासोंमेंसे असकायिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकालकर त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, समनस्क (संबी) और अमनस्क (असंझी)। समनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक, अपर्याप्तक। अमनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। ये चार जीवसमास मिलाने पर चौबीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वाग्नुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सुझ्मके भेदसे दश भेद और समनस्क त्रसकायिक तथा अमनस्क त्रसकायिक इन बारह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा बारह निर्वृत्तिपयीप्तक जीवसमास, बारद्व निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और बारद्व छब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर छत्तीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक चौबीस जीवसमासोंमेंसे अमनस्क जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर अमनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, सकले-न्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इन चार जीवसमासीका मिला देने पर छन्बीस जीवसमास होते हैं। पांची स्थावरकायिक जीवॉके बादर और समासा तेरत लद्भिअपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे सव्ते घेत्रण एगूणचालीस जीव-समासा हवंति । छव्वीसण्हं मज्झे वणप्फइकाइयाणं चत्तारि जीवसमासे अवणिय वणप्फइकाइया टुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा टुविहा पज्जत्ता अप-जत्तता, साधारणसरीरा टुविहा बादरा सुहुमा, ते टुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे छ जीवसमासे पक्षित्ते अट्टावीस जीवसमासा हवंति । चोदस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा चोदस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा चोदस लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे बायालीस जीवसमासा । अट्टावीसण्हं मज्झे पत्तेयसरीर-पज्जत्तापज्जत्ता दो जीवसमासे अवणिय पत्तेयसरीरा टुविहा बादरणिगोयजोणिणो तेसिमजोणिणो चेदि, तेवि सच्वे दुविहा पज्जत्तजीवसमासा पण्णारस, णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा पण्णारस, लद्धि-अपज्जत्त्रजीव-

सुक्षमके भेवसे दश भेव तथा विकलेन्द्रिय, असमनस्क पंचेन्द्रिय और समनस्क पंचेन्द्रिय इन तेरह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा तेरह निईस्तिपर्याप्तक जीवसमास, तेरह निर्हत्यपर्याप्तक जीवसमास और तेरह उच्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब भिलाकर उनतालीस जीवसमास होते हैं। छन्धीस जीवसमासोंमेंसे वनस्पतिकायिक जीवौंके चार जीवसमास निकाल कर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकदारीर और साधारणदारीर। प्रत्येकदारीर वनस्पतिकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारण-शरीर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं बादर और सुक्ष्म। ये दोनों प्रकारके जीव भी दो तो प्रकारके होते हैं पर्याप्तक और अपर्याप्तक। ये छह जीवसमास मिला देने पर अझवीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारण-वनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सुझ्मके भेदसे दश भेद, प्रत्येकवनस्पतिकायिक, विक-लेन्द्रिय, समनस्कपंचेन्द्रिय और अमनस्कपंचेन्द्रिय इन चौदहों प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा चौदह निर्वत्तिपर्याप्तक जीवसमास, चौदह निर्वत्यपर्याप्तक जीवसमास और चौदह लज्प्य-पर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिलाकर व्यालीस जीवसमास होते हैं। पूर्वीक्त भट्टावीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकवनस्पतिकाधिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक रे दो जीवसमास निकाल कर प्रत्येकहारीर जीव दो प्रकारके होते हैं, बादरनिगोदयोनिक और बादरनिगोवअयोनिक। वे भी सब दो दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इस प्रकार ये चार भंग मिला देने पर तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायकायिक और साधारणशारीर इनके बादर और सुक्ष्मके भेदसे दश भेद तथा सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पाति और अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पति, विकलेन्द्रिय, अमनस्कपंचेन्द्रिय और समनस्कर्षचेन्द्रिय इसप्रकार इन पन्द्रह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा पन्द्रह निर्वृतिपर्याप्तक जीवसमास, पन्द्रह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और पन्द्रह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास

496 ]

समासा पण्णारस एवमेदे सच्वे वि पंचेदालीस जीवसमाता हवंति। पुढवि-आउ-तेउ-वाउ-साधारणसरीरवणप्फइकाइया पत्तेयं पत्तेयं बादर-सुहुमपज्जत्तापज्जत्तमेदेण चउव्विहा हवंति, पत्तेयसरीरा वेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-असण्णिपंचिंदिय-सण्णिपंचिंदिया पत्तेयं पत्तेयं पज्जत्ता अपज्जत्ता दुविहा हवंति एदे सच्वे मिलिदे वर्त्तास जीवसमासा हवंति। सोलस णिव्वत्तिपज्जत्त्रजीवसमासा सोलत णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा सोलस लद्धि-अपजत्त-जीवसमासा च मेलिदे अद्वतालीस जीवसमासा हवंति । वत्तीस-जीवसमासेसु पत्तेयसरीर-दो-जीवसमासे अवणिय पत्तेयसरीरा दुविहा बादरणिगोदजोणिणो तेसिमजोणिणो चेदि, ते च पत्तेयं पज्जत्तापज्जत्तमेदेण दुविहा एदे चत्तारि पक्षित्ते चोत्तीस जीवसमासा हवंति। सत्तारस णिव्वत्तिपज्जत्ता सत्तारस णिव्वत्ति-अपज्जत्ता सत्तारस लद्धि-अपजत्ता एदे सच्वे एक्कावण जीवसमासाहवंति। पुढवि-आउ-तेउ-वाउ-णिच्चणिगोद-चउगदिणिगोदा बादरा

इसप्रकार ये सब मिलाकर पैंतालीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकाथिक, जलकाथिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारणशरीरवनस्पतिकायिक ये पांच प्रकारके जीव पृथक् पृथक् बादर, सूक्ष्म और उनमें भी पर्याप्तक और अपयप्तिक इसप्रकार चार चार प्रकारके होते हैं। प्रत्येकदारीरचनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंबी पंचेन्द्रिय और संझी पंचेन्द्रिय थे छहों प्रत्येक प्रत्येक पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं। इसप्रकार ये सब मिलाने पर बत्तील जीवसमास होते हैं। प्रथिवीकायिक जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारणशरीर-वनस्पतिकायिक जयिंके बादर और सक्षमके मेदसे दश भेदरूप तथा प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंब्री-पंचेन्द्रिय और संब्री-पंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा सोलह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सोलह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और सोलह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिला टेने पर अडतालीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त बत्तीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकशरीरसंबन्धी पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायिक जीव दे। प्रकारके होते हैं, बादरनिगोदयोनिक (प्रतिष्ठित) और बादरनिगोद अप्रतिष्ठित। वे दोनों पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं। ये चार जीवसमास मिला देने पर चौतीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायकायिक, और साधारणवनस्पतिकायिकके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दरा भेदरूप तथा सप्रतिष्ठित प्रत्येक-वनस्पतिकाथिक, अप्रतिष्ठितप्रत्येक-वनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतरिन्द्रिय, असंक्षिकपंचेन्द्रिय और संक्षिकपंचेन्द्रिय जीवेंकी अपेक्षा सत्रह निर्वृत्तिपर्योप्तक जीवसमास, सत्रह निर्हृत्यपर्याप्तक जीवसमास और सत्रह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर श्कावन जीवसमास होते हैं। पृथिवीकांयिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, निरयनिगोद-

1.1

सुहुमा च पज्जत्तापञ्जत्तभेषण टुविहा हवंति, पत्तेयवणप्फदि-वेइंदिय-तेइंदिय-चअरिंदिय-असाण्ण-सण्णिपंचिंदिय-पज्जत्तापजत्तभेएण एदे वि पत्तेयं दुविहा हवंति एदे सच्वे वि छत्तीस जीवसमासा हवंति । अद्वारह णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा, तेत्तिया चेव णिव्वत्तिअपजत्त-जीवसमासा वि अद्वारह, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा वि अद्वारह सच्वेदे एगद्दे कदे चउपण्ण जीवसमासा। पुणे। पत्तेयसरीर-दो-जीवसमासे छत्तीस-जीवसमासेसु अवणिय पत्तेय-सरीरबादरणिगोद-पदिद्विदापदिद्विद'-पज्जत्तापजत्त-सण्णिद-चदुसु जीवसमासेसु पक्सि त्तेसु अद्वत्तीस जीवसमासा हवंति । एत्थ एगुणवीस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा, तेत्तिया चेव णिव्वात्ति-अपज्जत्तजीवसमासा हवंति, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा वि तेत्तिया

साधारणवनस्पतिकाधिक और चतुर्गतिनिगोदसाधारणवनस्पतिकाधिक ये छहों प्रकारके जीव षादर और सूक्ष्मके भेदसे बारह प्रकारके होते हैं। और वे प्रत्येक पर्याप्तक और अपर्या-प्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं। प्रत्येकधनस्पतिकायिक, डीन्द्रिय, जीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंबी-पंचेन्द्रिय और संबी-पंचेन्द्रिय जीव ये सभी पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं। इसप्रकार उक्त चौबीस और निम्न बारह ये सभी जीवसमास मिलाकर छत्तीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, तैजस्कायिक, वायुकायिक, नित्य-निगेद साधारणवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोद साधारणवनस्पतिकायिकके बादर और सूक्ष्म भेद, प्रत्येकवनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, बीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंझी-पंचेन्द्रिय और संग्री-पंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा अठारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, उतने ही अठारह निर्वृत्य-पर्याप्तक जीवसमास और अठारह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब इकट्टे करने पर चौपन जीवसमास होते हैं। पूर्वोक्त छत्तीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकशरीरसंबन्धी पर्याप्तक और अपर्या प्तक ये दो जीवसमास निकाळ कर प्रत्येकदारीरसंबन्धी बादरनिगोद प्रतिष्ठित और भप्रतिष्ठित इन दोनोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक इन चार जीवसमासोंके मिलाने पर अड़तीस जीवसमास होते हैं। पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, नित्यनिगोद साधा-रणज्ञरीरवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोव साधारणज्ञरीरवनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सूक्ष्म भेवरूप तथा सप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंग्री-पंचेन्द्रिय और संग्री-पंचेन्द्रिय जीवॉसंबन्धी उन्नीस निईत्तिपर्याप्तक जीवसमास होते हैं, उन्नीस ही निईत्यपर्याप्तक जीवसमास होते हैं और उत्रीस ही लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास होते हैं। ये सब मिलाकर सत्तावन जीवसमास होते

१ प्रतिषु ' पदिट्टिय-पञ्जता----' इति पाठः ।

१, १.]

[ 2, 2]

, ]

चेव सथ्वेद सत्तावण्ण जीवसमासा हवंति। एदे जीवसमासमेया सव्व-ओघेसु वत्तव्वा। छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ पंच पजत्तीओ पंच अपजत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्ताया, पण्णारह जोग अजोगो वि अस्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अस्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अस्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अस्थि, आहारिणो अणाहारिणो. सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवज्जता वा सागार-अणागारेहि जगव-

हैं। ये उपर्युक्त जीवसमासोंके भेद समस्त ओघालापोंमें कहना चाहिए।

जीवसमास आलापके आगे संझी पंचेन्द्रिय जीवेंके पर्याप्तकालमें और अपर्याप्तकाल में छहों पर्याप्तियां. छहों अपर्याप्तियां, अलंझी पंचेन्द्रिय और विकलत्रय जीवेंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमद्दाः पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रिय जीवेंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें कालमें क्रमद्दाः पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रिय जीवेंकि पर्याप्त अपर्याप्तकालमें कमद्दाः चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, संझी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमद्दाः इसों प्राण, सात प्राण; असंझी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमदाः दर्शों प्राण, सात प्राण; असंझी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमदाः नौ प्राण, सात प्राण; चतुरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमदाः आठ प्राण, छह प्राण; त्रीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आयोग्तकालमें क्रमदाः सात प्राण, पांच प्राण; द्वीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमदाः छह प्राण, चार प्राण; पकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमदाः चार प्राण, तीन प्राण; सयोगकेवली जिनोंके चार प्राण, तथा समुद्धातकी अपर्याप्त अवस्थामें दो प्राण और अयोगकेवली जिनोंके एक आयु प्राण होता है। चारों संझाए तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, पकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहाँ काय, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतत चेद्स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्दान, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं तथा अल्डेस्यारथान भी है, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यदत्व, संहिक असंहिक तथा संक्रिक और असंहिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है,

१ प्रतिपु ' वीए ' इति पाठः ।

२ सामण्णजीव तसथावरेतु इगिनिगलसयलचरिमदुगे । इंदियकाये चरिमस्त य दुतिचदुपणगभेद छदे ॥ पणजुगले तससहिये तसस्त दुतिचदुरपणगभेद छदे । छददुगपत्तेयग्हि य तसस्त तियचदुरपणगभेद छदे ॥ सगजुगलग्हि तसस्स य पणमंगजुदेतु होंति उणवीसा । एयादुणवासोत्ति य इगिवितिग्रणिदे हवे ठाणा ॥ सामण्णेण तिपंती पदमा विदिया अपुण्णगे इदरे । पञ्चते लक्तिअपज्जत्तेऽपदमा इवे पंती ॥ गो. जी. ७५-७८. दुवजुत्ता वा<sup>"</sup> ।

तेंसि चेव पडजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणद्वाणाणि, एको वा दो वा तिण्णि वा चत्तारि वा पंच वा छव्वा सत्त वा अद्व वा णव वा दस वा एकारह वा बारह वा तेरह वा चउदस वा पण्णारह वा सोलस वा सत्तारस वा अद्वारह वा एगुणवीस वा जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओं चत्तारि पज्जत्तीओं, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण एक पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओं, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओं, पुढविकायादी छकाया, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि आत्थ, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओं अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मर्च,

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं षट्-कायिक जीवोंके पर्याप्त कालसंबधी आलाप कहने पर---चौदहों गुणस्थान, पूर्वमें कहे गये पर्याप्तक जीवसंबन्धी एक, अधवा दो, अधवा तीन, अधवा चार, अधवा पांच, अधवा छह, अधवा सात, अधवा आठ, अधवा नो, अधवा दश, अधवा ग्यारह, अधवा बारह, अधवा तेरह, अधवा चौदह, अधवा पन्द्रह, अधवा सोलह, अधवा सत्रह, अधवा अठारह, अधवा उन्नीस जीवसमास होते हैं, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां और चार पर्याप्तियां, पूर्वमें कहे गये पर्याप्तक जीवसंबन्धी दशों प्राण, नो प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण और एक प्राण; चारों संक्राप्त तथा क्षीणसंक्रास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रिय" जाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग और आहारककाययोग ये ग्यारह योग और अयोग-स्थान भी है; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों क्षान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेडरयाएं तथा अलेक्श्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्रिक, असंक्रिक तथा संक्रिक और

षट्कायिक जीवेंकि सामान्य आलाप.

रा जी प. ता. सं. ग. इं. का.यो. वे. क. झा. संय.	द. हे. म. सं. संक्रि. आ. उ.
18404.3 10,0 9,0 8 8 4 6 94 2 8 0 0	४ ह. ६ २ ६ २ २ २
	मा ६ म. स. आहा. साका.
अ के बचा ना सिंग रे रे रे रे रे रे रे रे रे रे रे रे रे	अले. अ. असं. अना. अना.
8,8 8,7 1	अन्तु. यु.उ,

तं. २१३

६०२]

सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा<sup>५४</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहुाणाणि, एगो वा दो वा, दोणिंग वा चत्तारि वा, तिण्णि वा छच्वा, चत्तारि वा अट्ठ वा, पंच वा दस वा, छच्वा बारस वा, सत्त वा चोद्दस वा, अट्ठ वा सोलस वा, णव वा अट्ठारह वा, दस वा वीस वा, एकारस वा बावीस वा, वारस वा चउवींस वा, तेरस वा छच्वींस वा, चोद्दस वा अट्ठावींस वा, पण्णारस वा तींस वा, सोलस वा बत्तींस वा, सत्तारस वा चोत्तींस वा, अट्ठावींस वा छत्तींस वा, एगुणवींस वा अट्ठत्तींस वा जीवसमासा; छ अपज्जत्तीओ पंच

असंद्रिक इन दोनों विकर्ल्योंसे रहित भी स्थान है, आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ — उपर सत्तावन जीवसमास बतला आये हैं उनमें उन्नीस जीवसमास पर्याप्तसंबन्धी हैं और अड़तीस अपर्याप्तसंबन्धी। उनमेंसे यहां पर्याप्तसंबन्धी उन्नीसका ही प्रहण करना चाहिये। जिनका प्ररुतमें 'एक अधवा दे।' इत्यादि रूपसे उल्लेख किया गया है।

उन्हीं षट्-कायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-मिथ्यादाएं, सासादनसम्यग्दाएं, अविरतसम्यग्दाएं, प्रमत्तसंयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, पूर्वमें कहे गये अपर्याप्तक जीवोंसंबन्धी एक अथवा दो, दो अथवा चार, तीन अथवा छह, चार अथवा आठ, पांच अथवा दश, छह अथवा बारह, सात अथवा चौदह, आठ अथवा सोलह, नौ अथवा अठारह, दश अथवा बीस, ग्यारह अथवा बाईस, बारह अथवा चौबीस, तेरह अथवा छथ्वास, चौदह अथवा आहाईस, पन्द्रह अथवा वाईस, बारह अथवा बौबीस, तेरह अथवा छथ्वास, चौदह अथवा आहाईस, पन्द्रह अथवा तीस, सोलह अथवा बत्तीस, सत्रह अथवा चौतीस, अठारह अथवा छत्तीस, उन्नीस अथवा अड्रतीस जीवसमास होते हैं। छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह

१ मतिषु ' तिण्णि ' इति पाठः ।

नं. २१४

षट्कायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>ग</u> ्य	जी.	प. प्रा	. सं	। ग. व	. का		वे.	क, ज्ञा.	. सय.	ंद. (	ਲੇ. ∓	.ं स.	संक्षि.	आ.	। उ.
18	१९	<b>६   १</b>	• ४	8 .	. ह	रर	3	¥ c	_ ອ	<u>ר</u> א	द ६ र	्ह	<b>.</b> .	ર	२
1		4 3	۲.			म.४	ੱਚ	Ē			मा,्६॑म.		. स.	आहा.	साका
		<u>ט</u> צ 	भी सीम		÷	व•४	अपन -	अक्त्बा. 	ļ	1	ઝਲે∙ ¦ઞ		अस.	अनाः	अना.
		ંક	_γ∞		i	ंआ. र	i	1	!		:	I	अनु <b>.</b>		यु, उ.
1 1		_ ! <b>'</b>	<b>۲</b>		Í	¦वै. १ आ∙१	· 1					I	.		

अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभया वा<sup>7(\*</sup>।

प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण; चारों संझाएं तथा श्रीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदा-रिकमिश्र, वैकिथिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मण ये चार योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावधि और मन:-पर्ययझानके विना छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्तव, संक्षिक, असंक्षिक तथा अनुभयस्थान भी है; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और उभय उपयोगोंसे युगपन् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ – ऊपर जो सत्तावन जीयसमास कहे हैं उनमें अपर्याप्त सामान्यके उन्नीस हैं जिनका यहां पर 'एक अथवा दो, दो अथवा चार, इत्यादि संख्याओंके कथनमें आई हुईं पूर्ववर्ती संख्याओंका एक, दो, तीन इत्यादि संख्याओंसे निर्देश किया है । अपर्याप्तके निर्वृत्य-पर्याप्त और उच्ध्यपर्याप्त ऐसे दो भेद कर ठेने पर उनका निर्देश दो, चार, छह इत्यादि संख्या-ऑके द्वारा किया गया है । यहां पर इतना और समझ ठेना चाहिये कि पूर्व पूर्ववर्ती संख्याएं जीवसमासोंको सामान्यरूपसे और उत्तर उत्तरती संख्याएं उनको विशेषरूपसे बतलाती हैं। इसका यह अभिप्राय हुआ कि किसी भी संख्याके द्वारा संपूर्ण अपर्याप्त जीव संग्रहीत कर लिये गये हैं । भिन्न भिन्न संख्याएं केवल उनके भेद-प्रभेदोंको स्रचित करनेके लिये ही दी गई

नं २१५

षट्कायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

, <u>य</u> ∙¦ः	जी ।∣	ч.	দা,	सं .	ন.	इ. का	यो.	वे.	[क.	ज्ञा.	संय.	द.	ਲੇ.	भ.	_ स.	संझि.	आ.	ड.	E
41	₹८∣	६अ.	9 9	۲	x	५ ६	X	३	8	िंह	8	8	द्र. २	२	4	२	२	्र ।	l
सि.	1	اريدا	Ę			i	औ मि.	E.		विसं	अस.	ĺ			सम्य.		आहा.	साका.	
सा.		۲,	4	क्षीणसं	L I	ļį	वे.मि	अपग.	अक्त अक्त	मनः.	सामा		য়.	अ.	त्रिना.	असं.	अना.	अना.	
. ગ			8	35-			ाआ मि	<b>1</b>	100	विना.	छेदो ।		सा.६		Í,	અનુ.		यु. च.	ľ
Я. [			₹	i			कार्म.	ŀ		1	यथा.		-	ļ					
स.		l	२	ļ	Į			j	1						1			<b>i</b>	l

[ ६०३

मिच्छाइडिप्पहुाडि जाव अकाया ति मूलोघ-भंगो । णवरि मिच्छाहडिस्स तिवि-हस्स वि कायाखुवाद-मूलोघब्धुत्तजीवसमासा वत्तव्वा । णत्थि अणत्थ विसेसो ।

<sup>शः</sup>षुढविकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पुढविकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-

हैं। पर्याप्त जीवसमासके उन्नीस विकल्पोंमें भी यही कम जान लेना चाहिये। गोम्मटसार जीवकाण्डमें जीवसमासोंको बतलाते हुए तीन पंक्तियां कर दी हैं। पहली पंक्तिमें एक, दो, आदि उक्नीसतक जीवसमास लिये हैं और यह कथन सामान्यकी अपेक्षा किया है। दूसरी पंक्तिमें दो, बार आदि अड़तीसतक जीवसमास लिये हैं और यह कथन पर्याप्त और अपर्याप्त इन दो मेदोकी अपेक्षा किया है। तथा तीसरी पंक्तिमें तीन, छह आदि सत्तावनतक जीव-समास लिये हैं और यह कथन पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त इन तीन मेदोंकी अपेक्षा किया है।

सामान्य पट्कायिक जीवोंके मिथ्याद्दष्टि गुणस्थानसे लेकर अकायिक अर्थात् सिद्ध जीवों तकके आलाप मूल ओघालापके समान ही जानना चाहिए। विरोष बात यह है कि सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त इन तीनों ही प्रकारके मिथ्याद्दष्टि जीवोंके आलाप कहते समय कायानुवादके मूलोघालापमें कहे गये सभी जीवसमास कहना चाहिए। इसके अतिरिक्त अम्यच अम्य कोई विरोषता नहीं है।

पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—पक मिथ्यादाष्टे गुणस्थान, बादरपृथिवीकायिक-पर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त, सुक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त और सूक्ष्मपृथिवीकायिक-अपर्याप्त ये चार जीवसमास; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझापं, तिर्यंचगति, पकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिककाय-योग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे हुण्ण

नं. २१६

पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

। ग्र.	জী. 🛛	Ч.	प्रा.	स.	ग.	( <b>ਵ</b> .)	কা.	यो.	वे.	क.	झा.	संय.	द.	ੇ ਲੈ.	. स.	स.	संझि		ੱ ਤਾ.
2	¥	8	8	8	2	8	২	२	2	8	ર	ং	् १	द्र. ६	ર	१	१	२	ર
मि.	बर-प.	শ-	प.		ਰਿ.	48	पृ.	औ.२	50		कुम.	अस.	1	भा  ३	म.	मि.	असं,	आहा.	साका.
	,, અ.	ጻ	R,			6		कामे.	च।		कुश्रु,			अগ্র,	ञ्.		i	अना.	अना.
	सू. प.	अ.	अ.		ļ.								ĺ				!		
1	,, अ.		[					<u> </u>				,					' I I		

लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, दो जीवसमासा चत्तारि वि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एईंदिय-जादी, पुढविकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारू. वजुत्ता वा<sup>\*\*</sup>।

नील और कापोत लेख्याएं; भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंशिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्याहाष्टे गुण-स्थान, बांदरपृथिवीकायिक-पर्याप्त और सक्षमपृथिवीकायिक-पर्याप्त ये दो जीवसमास, अखवा शुद्ध वादरपृथिवीकायिक-पर्याप्त शुद्ध सूक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त, खर बादरपृथिवीकाविक-पर्याप्त और खर सूक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त ये चार जीवसमास; चार पर्याप्तियां, चार प्राण, बारों संझर्म, तिर्थचगति, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुम्मत और कुश्रुत ये दो अन्नान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हेति हैं।

विशेषार्थ — ऊपर पृथिवीकायिक आवोंके पर्याप्त आठाप कढते समय दो अथवा चार जीवसमास बतलाये हैं। उनमें दो जीवसमास बतलानेका कारण तो स्पष्ट ही है। परंतु विकन्पसे जो चार जीवसमास बतलाये गये हैं उसके दो कारण प्रतीत होते हैं एक तो यह कि गोम्मटसारकी जीवप्रबोधिनी टीकामें जीवसमासोंका विशेष वर्णन करते समय पृथिवींके शुद्धपृथिवी और खरपृथिवी पेसे दो मेद किये हैं। ये दो मेद बादर और सझ्मके मेदसे दो दो प्रकारके हो जाते हैं। इसप्रकार पर्याप्त अवस्था विशिष्ट इन चारों मेदोंके प्रहण करने पर चार

### ર્મ. ૨૧૭

.....

पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

J.	! जी₊	₫.	সা	<b>सं.</b>	ग.	5	का,	यो.	ेवे.	ক.	\$11	ं संय.	α.	₹.	ं म.	.स.	संक्षि,	आ.	ব,	1
्र	2	8	¥	8	. ۲	٢ :	१	<u> </u>	<b>१</b>	8	ર	्र	\$	द्र ६	२	१	्र	2	ર	1
	जा-प.	1 1	1		R.	Ή <b>θ</b>	ą.	औ <b>दा</b> -	5		कुम,	असं	'अच.			मि.	अस	आहा.	साका.	4
	सू.प.					₽″:			<b>F</b>	4	<u></u> 중경·			अशु,	अ			• ' •	अना.	
	¥		I					i			:	÷			i			! 		l
	]	i				. !		1	1	•			i.	1	i.	ļ				1

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे आर्रिथ एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पुढविकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

जीवसमास हो जाते हैं। दूसरा कारण ऐसा प्रतीत होता है कि वीरसेनस्वामीने स्वयं बादर और सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके अतिरिक्त बादर और सुक्षम पृथिवीकायिक निर्वत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त इसप्रकार तीन प्रकारके आछाप और बतलाये हैं। इनमेंसे प्रथम सामान्यालापमें पर्याप्तक. निईत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक इन तीनों प्रकारके जीवोंके आलापोंका अन्तर्भाव हो जाता है और निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामाम्यालापमें पर्याप्तक और निर्वृत्यपर्याप्तक इन **दो प्रकारके जीवोंके** आछापोंका ही अन्तर्भाव होता है। दुसरे पर्याप्तालापकी अपेक्षा प्रथम और दितीय दोनों पर्याप्तालापोंमें वास्तयमें कोई विशेषता नहीं है. क्योंकि. निर्वत्तिसे पर्याप्तक जीव ही दोनों जगह पर्याप्तरूपसे प्रहण किये गये हैं। अपर्याप्तालापकी अपेक्षा प्रथम अपर्योप्तालापमें निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक इन दोनां प्रकारके जीवोंके आलापॉका अम्तर्भाव होता है। परंतु निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके अपर्याप्तालापमें केवल एक निर्वृत्यपर्याप्तक कालसंबन्धा आलापोंका हो ग्रहण होता है । इनमेंसे निर्वत्तिपर्याप्तकर्वा अपर्याप्तावस्थामें पर्याप्तनामकर्मका उदय ते। रहता है परंतु उसकी पर्याप्तियां पूर्ण न होनेके कारण वह अपर्याप्त कहा जाता है। इसप्रकार निईत्यपर्याप्तक पर्याप्तनामकर्मके उदयकी अपेक्षा पर्याप्त भी है। प्रतीत होता है कि इसी विवक्षाको ध्यानमें रखकर वीर-सेनस्वामीने यहां पर चार आलाप कहे हैं। यद्यपि प्रथम कल्पना गोम्मटसारकी जीववरो-धिनी टीकाके आधारसे दी गई है परंतु उसकी यहां पर मुख्यता प्रतीत नहीं होती है, क्योंकि, भागे जलकायिक जीवेंकि आलाप पृथिवीकायिक जीवेंकि आलापोंके समान बतलाये हैं । परंतु जल आदिके उसी टीकामें शद्ध आदि भेद नहीं किये हैं। अथवा इसी बातको ध्यानमें रखकर उक्त टीकामें केवल पृथिवीके चार भेद किये गये हों। इसप्रकार प्रथिवीकायिक जीवेंकि दे। या चार जीवसमास जान छेना चाहिये।

उन्हीं पृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-- एक मिथ्यादाष्टे गुणस्थान, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त और सूक्ष्मपृथिवीकायिक-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चारों अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संझापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्यापं, भावसे हज्या, नील और कापोत लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंझिक, १, १.]

असण्णिणो, आहारिणे। अणाहारिणे, सामारुवजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा " ।

वादरपुढविकाइयाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, बादरपुढविकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अग्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और आनाकारोपयोगी होते हैं।

बादरपृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरपृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, बादर-पृथिवीकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्चद्र्र्शन, द्रव्यसे छहों छेड्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाएं; भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी दोते हैं।

के. २१८

## पृथिवीकायिक जीवींके अपर्याप्त आलाप

। गुजी प ना संग इं	का यो त्रे क ज्ञा	. सय द. ले ।	म. स संज्ञि आ	
2 2 8 2 8 2 2	2 2 9 8 2	११ द्र.२ असं. अच. का.	२ : २ : २ : २ :	<b>२</b> साका-
मि,बा,अ,अ, ति. एक. स्.अ	कार्म- मि खुश्र		ধ সন্য	
		भा• ३ अञ्च		

# नं. २१९ बादरपृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

१ २ मि.बा.प.	'४ 'प,ं	 ≼   ₹	ग. इ. १११ ति. एके.	1 8	े ३	<u>২</u> ४	र्शाः संय २ १ कुमः असं. कुश्रः	2	्र.६ मा₊३	्र	र मि-	<b>१</b> असं.	्र आहा.	<u>उ.</u> २ साका. अना.
,, अ.	े ४ अ.	 		:	प्र <b>।</b> श • ९		3.3.		્ઞજી	   			   	

806]

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासेा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, एइंदियजादी, बादरपुढविकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खु-दंसण, दब्वेण छ लेस्सा,भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, भिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>330</sup>।

"'तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपजत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, बादरपुढवि-

उन्हीं बादरपृथिवीकायिक जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्याहाष्टि गुणस्थान, एक बादरपृथिवीकायिक-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, बादरपृथिवीकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दें। अज्ञान, असंयम, अचश्चद्दर्शन, द्रब्यसे छहों लेइयाएं, भावसे हष्ण, नील और कापोत लेइयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व; असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं बाद्ररपृथिवीकायिक जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, बादरपृथिवीकाय, औदारिकमिश्रकाययोग

### मं. २२०

षादरपृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>y</u> .	] जी.	ч.	प्रा.	स.	ग.	<b>ş</b> .	का	यो-	<b>वे</b> .	क.	( ज्ञा.	संय.	द.	हे.	<u>म</u> ,	स	संज्ञि.	্ঞা.	ड.
1	2	8	8	8	2	٤.	र	2	1	۲	२	१	ર	द्र. ६	२	8	१	٤ .	२
मि.	बा,प,		1		R.	एके.	पू.	'औৰা-	नपुं₊		कुम.	असं .	জন্ম,	মা. ર	भ.	मि.	अस	आहा.	साका-
1						-		į			कुश्रु.			अशु.	अ.				अना-
				]	ļ					ļ	Ľ١,				]		l i		

### નં. રરર

बादरपृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। गु. <sup>3</sup>	जी.	ष.∘प्रा.	संेग <b>े इं</b> ∙	का.	यो वे व	<b>ह.   इत्ता</b> -	ंसंय द	ð.	म• स.	संज्ञि. आ	<u>उ.</u>
<b>२</b> मि.	र ग.अ	४ ३ अ.	४ १ २ ति. कि	२ पूरु अ	२ १ गैमि. क	४ २ कुम.	र र असं∙ं अच∙	द्र.२ का.		१ २ अस. आहा.	२ लाका-
			Ē	1	कार्म. <sup>! कि</sup>	- জুপ্তু,	1	शु.		अमा.	अना.
		:				ĺ		मा.३	I	:	
		!	I		;	i		अग्रु.			
	:	!								ιi	4

काओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउन्सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा ।

एवं बादरपुढविणिव्वत्तिपज्जत्तस्स तिण्णि आलावा वत्तच्वा । बादरपुढविलद्धि-अपजत्तस्स बादरेइंदिय-अपज्जत्त-भंगो । सुहुमपुढवीए सुहुमेइंदिय-भंगो । णवरि सुहुम-पुदविकाइओ त्ति वत्तरुवं ।

आउकाइयाणं पुढवि-भंगो । णवरि सामण्णालावे भण्णमाणे आउकाइओ, दच्वेण काउ-सुक्क-फलिहवण्ण-लेस्साओ वत्तव्वाओ । तेसिं चेव पज्जत्तकाले दव्वेण सुहुमआऊणं काउलेस्सा वा बादरआऊणं फलिहवण्णलेस्सा । कुदो ? घणोदधि-घणवलयागास-पदिद-पाणीयाणं धवलवण्ण-दंसणादो । धवल-किसण-णील-पीयल-रत्ताअंब-पाणीय-दंस-णादो ण धवलवण्णमेव पाणीयमिदि के वि भगंति, तण्ण घडदे। कुदो ? आयारभावे

और कार्मणकाययोग ये दो योगः नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्वत ये दो अज्ञान, असंयम, अचधुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्छ छेइयाएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभर्व्यासोद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आह्वारक, अनाह्वारक; साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकार बादर पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवेंकि सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिये। बादर पृथिवीकायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए। सूक्ष्म पृथि-वीकायिक जीवोंके आलाप सुक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए। विद्रोषता यह है कि 'सूक्ष्म एकेन्द्रिय' के स्थानपर 'सूक्ष्म पृथिवीकायिक' ऐसा आलाप कहना चाहिए।

अप्कायिक जीवोंके आलाप पृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए। विशेष बात यह है कि सामान्य आलाप कहते समय ' पृथिवीकायिक ' के स्थानपर 'अप्कायिक ' और लेक्या आलाप कहते समय द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और ग्रुक्ल लेरयाएं और पर्याप्तकालमें स्फटिकवर्णवाली अर्थात् दाक़ लेरया कहना चाहिए। उन्हीं सूक्ष्म अप्कायिक जीवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत लेक्या कहना चाहिए। तथा बादरकायिक जीवोंके स्फटिकवर्णवाली हाक्क लेइया कहना चाहिए, क्योंकि, धनोदधिघात और धनवलयवात द्वारा आकाशसे गिरे हुए पानीका धवलवर्ण देखा जाता है। यहां पर कितने ही आचार्य ऐसा कहते हैं कि, धवल, रुष्ण, नील, पीत, रक्त और आताम्र वर्णका पानी देखा जानेसे पानी धवलवर्ण ही होता है, ऐसा कहना नहीं बनता है ? परंतु उनका यह ६१०]

[ १, १.

महियाए संजोगेण जलस्स बहुवण्ण-ववहार-दंसणादो । आऊणं सहाववण्णो पुण धवलो चेव ।

एवं चेव बादरआउकायस्स वि तिण्णि आलावा वत्तव्वा। णवरि पञ्जत्तकाले दव्वेण फलिहलेस्सा एक्का चेव। णत्थि अण्णत्थ विसेसो। बादरआउकाइयणिव्वत्तिपजत्ताणं पि तिण्णि आलावा एवं चेव वत्तव्वा। बादरआउलद्विअपज्जत्ताणं बादरआउणिव्वत्ति-अपज्जत्त-भंगो। सुहुमआउकाइयाणं सुहुमपुढविकाइय-भंगो। सुहुमआउकाइयणिव्वत्ति-पज्जत्तापजत्ताणं सुहुमआउकाइयलद्विअपज्जत्ताणं च सुहुमपुढविपज्जत्तापजत्त-भंगो।

तेउकाइयाणं तेसिं चेव पञ्जत्तापञ्जत्ताणं बादरतेउकाइयाणं तेसिं चेव पञ्जत्ता-पज्जत्ताणं च पञ्जत्त-णामकम्मोदयतेउकाइयाणं तेसिं चेव पञ्जत्तापज्जत्ताणं बादर-तेउलद्विअपजत्ताणं च, आउकाइयाणं तेसिं चेव पजत्तापजत्ताणं बादरआउकाइयाणं तेसिं चेव पजत्तापज्जत्ताणं पजत्तणामकम्मोदयआउकाइयाणं तेसिं चेव पजत्तापजत्ताणं

कहना युक्ति-संगत नहीं है: क्योंकि, आधारके होने पर महीके संयोगसे जल अनेक वर्णवाला हो जाता है पेसा व्यवहार देखा जाता है। किन्तु जलका स्वाभाविक वर्ण घवल ही है।

रसप्रकार बादर अप्कायिक जीवोंके भी सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। विशेष बात यह है कि उनके पर्याप्तकालमें ट्रव्यसे एक स्फटिक वर्णवाली शुक्ल लेश्या ही होती है, इसके सिवाय अन्य पृथिवीकायिकके आलापोंसे अप्कायिकके अन्य आलापोंमें और कोई विशेषता नहीं है। इसीप्रकार बादर अप्कायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक जीवोंके अन्य आलापोंमें और कोई विशेषता नहीं है। इसीप्रकार बादर अप्कायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक जीवोंके उक्त तीन आलाप कहना चाहिए। बादर अप्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप अप्का यिक निर्शृत्यपर्याप्तक जीवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए। स्क्ष्म अप्कायिक जीवोंके आलाप स्क्ष्मपृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। स्क्ष्म अप्कायिक निर्शृत्तिपर्याप्तक, स्क्ष्म अप्कायिक निर्शृत्यपर्याप्तक और स्क्ष्म अप्कायिक जिश्वेत्तिपर्याप्तक जीवोंके समान जीवोंके आलाप स्क्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याय्त आलापोंके समान जीवोंके आलाप स्क्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके समान जीवोंके आलाप स्क्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके समान

तैजस्कायिक जीवोंके और उन्हीं पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवोंके, बादरतैजस्कायिक जीवोंके और उन्हीं बादरतैजस्कायिक पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवोंके, पर्याप्त नामकर्मके उदय-वाले तैजस्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्त अपर्याप्त भेदोंके तथा बादर तैजस्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदेंकि, बादर अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, पर्याक्ष नामकर्मके उद्दय-वाले अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, पर्याक्ष नामकर्मके उद्दय-वाले अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, तथा बादर अप्कायिक वाले अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, तथा बादर अप्कायिक

१ प्रतिषु ' पञ्जत्तापञ्जत्तणामकम्मोदयाणं ' इति पाठः ।

बादरआउकाइयलद्विअपजताणं च जहाकमेण भंगो। णवरि तेउकाइयाणं दब्वेण काउ-सुक्क-तवणिजलेस्साओ। तेसिं चेव पजत्ताणं दब्वेण काउ-तवणिजलेस्साओं। एवं पजत्तणामकम्मोदयाणं दोण्हं पि वत्तव्वं। बादरकाइयाणं तेउ-भंगो। एवं चेव तेसिं-पज्जत्ताणं। णवरि दब्वेण तवणिज्जलेस्सा। एवं पज्जत्तणामकम्मोदयाणं पि दब्व लेस्सा वत्तव्वा।

सुहुमतेउकाइयाणं सुहुमआउकाइयाणं सुहुम-भंगो । वाउकाइयाणं तेउ-मंगो । णवरि दव्वेण काउ-सुक-गोमुत्त-मुग्गवण्णलेस्साओं । तेसि पज्जत्ताणं काउ-गोमुत्त-

लब्ख्यपर्याप्तक जीवोंके आलापोंके समान यथाकमसे जानना चाहिए।

विशेषार्थ—तैजस्कायिक जीवेंकि आलाप अप्कायिक जीवेंकि आलापोंके समान होते हैं, इस बातके ध्वनित करनेके लिये मूलमें 'इव' या 'सददा' पेसा कोई पठ नहीं दिया है। परंतु पहले अप्कायिक जीवोंके संपूर्ण भेद-प्रभेवोंके आलाप कह आये हैं और यहां तैजस्कायिक जीवोंके आल पोंके कथन करनेका प्रकरण है। इसलिये प्रकृतमें तैजस्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलापोंके समान बतलाये हैं यही समझना चाहिए। मूलमें आये हुए 'जहाकमेण' पदले भी इसी कथनकी पुष्टि होती है।

विशेष बात यह है कि तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यसे कापोत. शुक्त और तपनीय लेश्या होती है। तथा उन्हीं पर्याप्तक सक्ष्मजीवोंके द्रव्यसे कापोतलेश्या और पर्याप्तक बादर-जीवोंके तपनीय लेश्या होती है। इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सामान्य और पर्याप्त इन दोनोंही प्रकारके तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यलेश्या कहना चाहिए। बादर तैजस्कायिक जीवोंके आलाप सामान्य तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यलेश्या कहना चाहिए। बादर तैजस्कायिक जीवोंके आलाप सामान्य तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यलेश्या कहना चाहिए। इसीप्रकार बादर जीवोंके आलाप सामान्य तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यलेश्या कहना चाहिए। इसीप्रकार बादर तैजस्कायिक पर्याप्त जीवोंके आलाप भी होते हैं। विशेषता यह है कि इनके द्रव्यसे तपनीय अर्थात् शुक्ललेश्या होती है। इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले तैजस्कायिक जीवोंके भी द्रव्यलेश्या कहना चाहिए।

सूइम तैजस्कायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म अण्कायिक जीवोंके आलापोंके समाम जानना चाहिए । व.युकायिक जीवोंके आलाप तैजस्कायिक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । विद्येष बात यह है कि द्रव्यसे कापोत, शुक्क, गोमूत्र और मूंगके वर्णवालो लेक्याएं होती हैं । उन्हों पर्याप्तक सूक्ष्म जीवोंके कापोतलेक्या और बादर पर्याप्त जीवोंके गोमूत्र

**१ बा**दरआऊतेऊ सुक्का तेऊ य 🗙 🖌 गो. जी. ४९७.

२ तत्र घनोदधयो मुद्रसलिभाः, धनत्राता गोमूत्रवर्णाः, अव्यक्तवर्णोस्ततुवाताः । त. रा. वा. ३. ९. ७ × × वायुकायाणं । गोमुत्तमुग्गवण्णा कमसो अव्वक्तवण्णो य । गो. जी. ४९७. गोमुत्तमुग्गणाणावण्णाण घणंडुघण-तणूण इवे । वादाणं वरुपतयं चविस्र तयं व लोगस्त ॥ त्रि. सा. १२३.

1

[ ₹, ₹+

मुग्गवण्णलेस्साओ । एवं बादरवाऊणं तेसिं पजत्ताणं च दव्वलेस्साओ हवंति । जदि वि मुग्गा अगेयवण्णा, तो वि रूढिवसा सामलवण्णो मुग्गवण्णो ।त्ति घेप्पदि । सुहुम-वाऊणं सुहुमतेउ-भंगो ।

"वणप्फइकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चारस जीवसमासा, चत्तारि पद्धत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-गदी, एइंदियजादी, वणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो

और मूंगके वर्णवाली लेरयाएं होती हैं। इसीवकार बादर वायुकायिक सामान्य जीवोंके और उन्हीं बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंके द्रव्य लेरयाएं होती हैं। यद्यपि मूंग अनेक वर्णवाली होती है, तो भी रूढिके वशसे 'स्यामलवर्ण' ही मूंगका वर्ण प्रकृतमें प्रहण किया गया है। सुक्ष्म वायुकायिक जीवोंके आलाप सुक्ष्म तैजस्कायिक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए।

वनस्पतिकाधिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, और बारह जीवसमास होते हैं, जिनमें सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, सप्रति-**ष्ठित-प्रत्येकवनस्पातिका**यिक-अर्थ्याप्त, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-पर्योप्त, अप्रति∙ ष्ठित-प्रत्येकवनस्पातिकायिक-अपर्याप्त, इसप्रकार प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके चार **जीवसमास होते हैं । ब**दरनित्यनिगोद्-साधारणवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, बावरमित्य· सुङ्मनित्यनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-मिनोव-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, पर्याप्त, सुक्ष्मनित्यनिगोद-लाधारणचनस्पतिकाथिक-अपर्याप्त, वादरचतुर्गतिनिगोद-साधारण-वनस्पतिकायिक-पर्याप्त, बादरचतुर्गतिनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, सक्षम" **चतुर्गतिनिगोद्-साधारणवनस्पतिकायिक-पर्याप्त** और सूक्ष्मचतुर्गतिनिगोद्-साधारण-चन-स्पतिकायिक-अपर्याप्त, इसप्रकार साधारणवनस्पतिकायिक जविंकि आठ जीवसमास होते हैं। चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्र.ण, तीन प्राण, चारों संशाएं तिर्यंच-गति, एकेन्द्रियजाति, वनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तनि योगः नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान.

#### 🛉. સ્ટર

वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

<u>गु</u> , १ मि.	12	प. ४प. ४अ	प्रा. ४ ३	8	2	3	1	ર	वे. १. हिंह	8	झा. २ कुम. कुथु.	<b>१</b> असं.	द. १ अच.	द्र. ६ मा. ३	२	9	<u>र</u>	उ. २ साका. अना.	
	प्रजे. ४											_						·	

ŝį į į

अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दच्वेण छ लेस्सा, मावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेंसि चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, छ जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वणप्कदिकाओ, ओरालियकायजाेग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ग्र</sup>ा

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, छ जीवसमासा, चत्तारि अपञत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वणप्फरकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दय्वेण

असंयम, अचभुद्र्शन, द्रव्यसे छहाँ लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं, भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्याख, असंश्विक, आद्दारक, अनाद्दारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वीते हैं।

उन्हीं वनस्पतिकायिक जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--- एक मिथ्याहष्टि गुणस्थान, सामान्य आलापोंमें बताये गये बारह जीवसमासोंमेंसे पर्याप्तकसम्बन्धी छह जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संझाएं, तिर्थंचगति, एकेन्द्रियजाति, वनस्पति-काय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावले छष्ण, नील और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, सामत्य आलापोंमें कहे गये बारह जीवसमासोंमेंसे छह अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संझापं, तिर्थचगति, एकेन्द्रियजाति, वनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नषुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति

नं. २२३

वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी-	ч.	দ্বা-	. सं	ग-	<b>.</b>	का,	यो	वे.	क.	क्रा.	संय.	[ द-	) ਲੇ.	म.	स.	संक्षि.	জা.	ਂ ਤ.
18		8	8	8	2	. <del>र</del>	१	2	9	8	२	2	१	द. ६	2	१	2	2	२
मि	साधा.				ोते ।	एके.	वस.	औदाः			कुम.	असं.	अच.	मा ₹	भ.	मि.	असं	आहा.	सका.
	8				i I			ļ		i	कुश्रु.			अशु.	अ.				अना.
i	प्रत्ये.		:					l t		Ì		ł			Į. –		<b>1</b>		
	<pre></pre>						i		İ										
	गलन २						i								1		•		

१,१.]

काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रभ</sup>।

पत्तेयसरीरवणप्फईणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्पि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-गदी, एइंदियजादी, पत्तेयवणप्फदिकाओ, तिण्णि जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचवखुरंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-हेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>%</sup> ।

और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अच युदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेडयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेडयाएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहा-रक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रत्येकदारीर-घनस्पतिकायिक जीवेंकि सामान्य आछाप कहने पर—एक मिथ्यादष्टि गुणस्थान, प्रत्येकदारीर-चनस्पतिकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तोन प्राण; चार्रों संक्षापं, तिर्धचगाते. एकेन्द्रिय-जाति, प्रत्येकघनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकभिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, नपुंसकवेद, चार्रों कषाय, कुमति और कुध्रुत ये दो अक्षान, असंयम, अच द्वर्रान, द्रव्यसे छद्दों लेड्यापं, भावते इष्ण, नील और कापोत लेड्यापं; भग्पसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; भिथ्यास्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोग और जामारोपयोग होते हैं।

नं. २२४

यनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>य</u> .	जी	<b>4.</b>	<b>प्रा</b>	सं	( ग	ई.	কা,	यो.	वे	ক	: হা	संय	द	_ਲੇ.	] म '	. स.	मंत्रि.	<u> आ.</u>	ड.
Ī	Ę	8	3	۲	2	2	2	२	2	8	ं२	٤	, X	द्र. २	÷κ	۶	र	ર	ર
Ĥ.	साधा,	अ.			ति∙	 	Ŀ	औ.मि	شا		कुम.	अस.	अच-	ं का.	म.	मिन	असं.	आहा	साका
	8					Ę,	वन	कार्म.	33		कु धु.	(	Ì	η.	अ. !		İ	अना.	अना-
	प्रत्ये -									i	. • •		! 	भा. ३			-		
	2		ļ									ł		अशु.					
		ļ	ļ				İ							-			1		

### नं. २२५

## प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

1 छ	जी.	<b>م</b> .	[ प्रा.	सं.	ग.	τ.	) का.	यो.	वे.	क.	. हा-	संग	द.	ले.	भ.	. स.	संज्ञि.	आ.	उ.
1	२	8	8	8	१	2	2	्य	5	8	्र	१	٢	द्र,६	ંર	2	2	ર	२
मि	प्र. <b>प</b> .	<b>q</b> .	₹		ति.	15		औ.ર			-	असं •	अच.	मा∙₹	1		) असं •	आहा.	साका.
	प्र. अ	8				Þ″		का.१	च	ļ	कुशु-			) अशु	ंअ.	1	i	<b>अन</b> ाः	अना.
		अ.	1											:					

684

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पजनीओ, चनारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पत्तेयसरीर-वणप्फइकाओ, ओरालियकायजेगो, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचनखुदंसण, दुच्द्रेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धियाँ अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>स्त</sup> ।

तेसिं चेव अपडजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्राणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, एइंदियजादी, पत्तेयसरीरवणप्कइकाओ, दो जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो. अचक्खुर्रंसण, दव्वेग काउन्सकलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति

उन्हीं प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवों के पर्याप्त कालसंबर्धाआलाप कहने पर---पक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक प्रत्येकदारीर-वनस्पतिकायिक-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संझाएं. तिर्थवगति, एकेन्द्रियजाति, प्रत्येकशारीर-वनस्पति-काय, औदारिककाययोग, नषं क्वेवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचञ्चदर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्य.पं भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना. कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं प्रत्येकशररीर-बनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक-अपर्यात जीवसमास. चार अपर्यातियां तीन प्राण, चारों संबाएं, तिंधेचगति, एकेन्द्रियजाति, प्रत्येकशरीर-चनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये देा योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचयुद्र्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेड्याएं, भावसे क्रणा. नील और कापोत लेख्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक,

ने. २२६

8, 8, 1

प्रत्येकधनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप

<u> १ २ ४ ४ ४ १ २ १ २ २ १ ४ २ १ २ ३ २ २ २ २ २ २ २ २ २ २ २ २ २ २ २ २</u>				·	}	ਲੇ			ল্লা.			यो.	491.	्रे इ.	·	<del>. स</del>	- IR	Ч.	जी.	<u> </u>
मि प्रियः   ति. 🔐 📩 औदा. न. कुम. असंग अच. माग्३ म. मि. असंग र	र २ आहा. साका.	१ आहार	्१ अम.	१ चि	२ भ.		१ अत्त	१ असं.	२ ऊम.	. •	्र न.	१ औरता	<b>X</b>	<b>१</b>	र ति	K	8	۲	<b>१</b> जन्म	<b>१</b> गि
मि प्र प. ति. हु, औदा. न. कुम. असं. अच. मा. ३ म. मि. असं. २ कुथ्रु. अशु. अशु. अशु. अशु. अ	अना.				1 1		-1 11		I -				वन	ું સ	'\ <b>!</b> •				<b>יד</b> ר	
			ļ													i i				

अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup> ।

एवं णिव्वत्तिपज्जत्तरस वि तिण्णि आलावा वत्तव्वा । लद्धिअपज्जत्ताणं पि एमो आलावो पत्तेयवणप्पह-अपज्जत्ताणं जहा तहा वत्तव्तो । जहा पत्तेयसरीराणं, तहा बादरणिमोदपडिद्विदाणं पि वत्तव्वं ।

साधारणवणप्फइकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, अट्ठ जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणे, आहारिणे। अणाहारिणो,

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकार निर्धृत्तिपर्याप्तक प्रत्येकदारीर वनस्पतिकायिक जीवोंके भी सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । रुष्ध्यपर्याप्तक प्रत्येकदारीर वनस्पतिकायिक जीवेंका एक अपर्याप्त आलाप प्रत्येकदारीर वनस्पतिकायिक अपर्याप्त जीवोंके आलापके समान कहना चाहिए । तथा, जिसप्रकार अभी प्रत्येकदारीर वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप कहे हैं, उसीप्रकारसे बादरनिगोद-प्रतिष्ठितवनस्पतिकायिक जीवोंके भी आलाप कहना चाहिए

साधारण वनस्पतिकायिक जविंकि सामान्य आछाप कहने पर--एक मिध्याद्दष्टि गुणस्थान, नित्यनिगोद और चतुर्गतिनिगोद इन दोनोंके यादर और सूक्ष्म ये दो दो मेद तथा इन चारोंके पर्याप्त और अपर्याप्तके मेदसे आठ जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियआति, साधारण-वनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, और कार्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचश्चदर्शनः द्रब्यसे छहों हेइयाएं, भावसे रूष्ण, नीह और कापोत हेइयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक;

नं. २२७

# प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी	ч.	म्रा.	सं.	ग, इ	. का	्यो.	वे.	ፍ.	्रज्ञा-	. संय	्र.	ले.	)भ.	। स.	। संझि.	आ,	ਤ.	i
~	2	X	<b>२</b> ।	8	१ : १ <del>)</del>	2	્ર ઓ ખે	1	8	२ कुम.	१	<b>१</b> अच.	ंद्र. २ का	२ )7	<b>१</b>	2	२ आहा.	२	
मि,	। अ.	•म.	*	j	1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	वन	औ.मि. कार्म.	ੰਹ	į	ઝુન કુઝુ.	બત્તા.	ખાય.	1	न अ.	1	ગલા	अन्। अना-	साका. अना	ĺ
					•	:		: ;		-	ı . !		मा २	:	:	; ; ·	i	( ·	Ì
	}	1	l ;	j	l	;		: :			, i		अग्रु.		J			:	

# १, १. ] संत-परूवणाणुयोगदारे काय-आलाववण्णणं

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा "

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिकखगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दच्वेण छ लेस्ता, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया; मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणा-गारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरनित्यनिगोद-पर्याप्त, सुक्ष्मनित्यनिगोद-पर्याप्त, बादरचतुर्गति-निगोद-पर्याप्त और सूक्ष्मचतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त ये चार जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संझापं, तिर्यंचगति, एकोन्द्रियजाति, साधारणवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचश्चद्दर्शन, द्रब्यसे छहों लेक्याएं; भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २२८

साधारण वनस्पतिकायिक जीवाँके सामान्य आलाप

<u>रु.</u> २ मि.	2 .89	XX	 १३ वनः औः	¥ ۶ ] رو ۶	२ १	र सं.चक्षु.	द्र. ६ २	र १ सि. असं-	आ. <u>उ</u> . २ २ आहा साका, अना, अना,
			j į	1			j		

## नं २२९ साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>गु</u> .जी, प.	। प्रा∙ सं ग. इं.	<u>का.यी.</u>	४ २ १	। द. है.   स.	<u>स.</u> संज्ञित् आत्	<u>उ</u> .
१४४४	४४११	११११		२ द.६२२	२ २ २	२
मि.	दि. एके.	वन.औदा. <sub>69</sub>		अच. मा.३स.	मि. असं- आहा	साका,
			कुशु.	अशु. अ.		अना.

छनखंडागमे जीवहाणं

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चतारि जीवसमासा चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा

बादरसाधारणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपजत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिकखगदी, एइंदियजादी, बादरसाधारणवणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचकखुदंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-

उन्हीं साधारण वनस्पतिकायिक जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, बादरनित्यनिगोद-अपर्याप्त, सुक्ष्मनित्यनिगोद-अपर्याप्त, बादर-चतुर्गनिनिगोद-अपर्याप्त और सुक्ष्मचतुर्गति निगोद-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, साधारणवनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दे। योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दे। अझान, असंयम, अवश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्याएं. भावसे कृष्ण, नील और कार्पात लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

बादर साधारणवनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरनित्यनिगोद-पर्याप्त बादर नित्य.नेगोद-अपर्याप्त ब दरचतुर्गति निगोद-पर्याप्त और बादरबर्तुर्गतिनिगेाद-अपर्याप्त ये चार जीवसमास; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, तिर्थंचगति, एकेन्द्रियज्ञाति, बादरसाधारणवनस्पति-काय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे

नं. २३०

### साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपयोप्त आळाप.

<u>गु</u> .	_र्जी.	<b>q</b> .	<u>त्र</u> ा,	्सं.	ग.	। इ.	ेका,	्यो.	वे.	] क.	) झा.	( संय	द.	ਲੇ.	म-	स	संझि.	্ আ.	অ,	
۶.	8	۲	વ	8	\$	8	१	्र	2	8	ર	8	१	द्र. २	२	2	१	ર	२	1
मि,		अ.			ति.	÷	h <del>.</del>	औ.मि. कार्म		l	कुम.	असं	अच∎	কা		मि.	असं.	आहा.	साका.	
						5	वन	कार्म.	च		कु थु.			য়ু	अ.			अना.	अना.	I
											}			भः २				ļ		l
								l j				ļ	1	अगु,			!		1	ł

[ १, १.

# १, १.] संत-परूत्रणाणुयोगदारे काय-आलाववण्णणं [६१९

णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>सर</sup>।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पञ्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, बादरसाधारण-वणप्फइकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>धर</sup>।

छहों लेक्यापं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंबिक, आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर नित्यनिगोद-पर्याप्त और बादर चतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त ये दे। जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संझाएं, तियंचगति, एकेन्द्रिय-जाति, बादरसाधारणवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कवाय, कुमति और कुश्रुत ये दे। अझान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रब्यसे छढों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २३१ बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवॉके सामान्य आलाप.

<u>र</u> ु. २ मि.	जी. ४	प. प्रा ४४ प. ३ ४	้ช १	: <u> </u>	१ वन-	े थो. ३ औ. २ कार्म.१	१ 	क. झा. ४२ कुम. कुश्रु.	र असं.	2	द्र.६	२ भ.	र	<b>१</b> असं.	२ आहा	उ. २ साका, अना.
		अ.								!				 	 	

## नं. २३२ बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवेंकि पर्याप्त आलाप.

जी. प. प्रा. स. ग. इ. का. यो. वि. क. शा. संय. द. छे. म. स. संग्री आ. इ. इ. २ १ १ ર ٢ 8 8 8 2 2 R 8 १ ۲. \$ र 8 ٤. मि. एके. बन. औदा. नपुं. कुम. असं. अच मा. २ म. मि. असं. आहा. ति. | सामा अना, ক্তস্থ अशु. अ.

E 20 ]

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, बादरणिगोद-वणष्फइकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता बा

एवं साधारणसरीरबादरवणप्फईणं पञत्तणामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा। लद्धि-अपज्जत्ताणं पि एगो अपज्जत्तालावो वत्तव्वो । सव्वसाधारणसरीरसुहुमाणं सुहुम-पुढवि-भंगो । णवरि चत्तारि जीवसमासा, सुहुमसाहारणसरीरवणप्फइकाओ त्ति वत्तव्वो । चउगदिणिगोदाणं साधारणसरीरवणप्फइकाइय-भंगो । तेसिं बादराणं बादरसाधारणसरीर-

उन्हीं षादर साधारण वनस्पतिकाधिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर नित्यानिगे,द-अपर्याप्त और बादर चतुर्गतिनिमे।द-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्यंचगति, पकेन्द्रियजाति, बादर निगोद चनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग; नपुं-सकवेद, चारों कपाय, कुमाति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्याएं, भावसे इष्ण, नील और कार्पात लेश्याएं; भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यत्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाका-रोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकार पर्याप्त नाभकर्मके उदयवाले साधारणशरीर बादर वनस्पतिकायिक अविंकि सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। लब्ध्यपर्याप्तक साधारणशरीर वनस्पतिकायिक जीवोंका भी एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए सभी सुक्ष्म साधारणशरीर वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप सुक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंको आलापोंके समान जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि जीवसमास आलाप कहते समय ' चार जीवसमास ' और काय आलाप कहते समय ' सूक्ष्म साधारणशरीर वनस्पतिकाय ' ऐसा कहना चाहिए। चतुर्गति निगोद वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप साधारणशरीर वन

### नं. २३३

बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। गुः	जी.	प. त्रा.	सं. ग. इ.	का.	यो. वे	क	র্গা-	संय.	द.	<b>छे</b> .	स	स.	संक्रि-	<u>आ</u> .	_ उ.
2	হ	8.5	8 8 8	٤ ا	2 2	8	ર	° ₹ !	٤	द्र.२		۶ ا	2	ર	र २
मि.		अ.	ति 👝	वनग	औं मि. कार्म		कुम.	अस •	अच-	কা.	भ.	मि.	अस.	आहा.	साका.
			Ľ		कार्म, 👎	1	कुश्च.	;		गु.	अ.			अना.	अना.
		{ '		!	!	1			·	भाः ३			İ		
				ļ				i	:	<b>अ</b> शु.	İİ		I	I	
													ļ .		
	i					.		J							[

2, 2. ]

वणप्फइ-मंगो ! तेसिं चेव सुहुमाणं समेदाणं साधारणसरीरसुहुमवणप्फइकाइय-भंगो | णवरि चउगदिणिगोदो त्ति वत्तव्वं | एवं णिचणिगोदाणं पि, णवरि एत्थ णिचणि-गोदो त्ति वत्तव्वं ।

<sup>\*\*\*</sup>तसकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणद्ठाणाणि, दस जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण दो पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, वेइंदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण,

स्पतिकायिक जीवोंके आलापेंकि समान होते हैं। उन्हीं बादर चतुर्गति निगोद वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप बादर साधारणदारीर वनस्पतिकायके आलापोंके समान होते हैं। सामान्य पर्याप्त अपर्याप्त मेदसहित उन्हीं सुक्ष्म चतुर्गति निगोद जीवों के आलाप साधारणदारीर सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि साधारण दारीरके साथमें 'चतुर्गति निगोद' इतना और कहना चाहिए। इसीअकार नित्यनिगोद साधारणदारीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके भी आलाप होते हैं। विशेष बात यह है कि यहां पर ' नित्यनिगोद ' इस पदको कहना चाहिए।

तथा असकायिक जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर---चौदहों गुणस्थान, होन्द्रिय, बीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, अलंबी पंचेन्द्रिय और संबी पंचेन्द्रिय जीवेंकि पर्याप्त और अपर्याप्तके मेदसे दश जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, दो प्राण; एक प्राण; चारों संझाएं, तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, हीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, जसकाय, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों

नं. રરૂષ્ઠ

त्रसकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

। गुजी प.		ग इं	का, यो,	वे. क. ज्ञ	. संय द	हे. ं म.	स. संज्ञि.	আন্ত. ।
१४ १० ६ प.	20,9 8	8 8	8 84	्र ४ ८	ע פי			
হ জ	8,9 10	्रहो.	तस. अयोग		:			आहा-ंसाका.
५ प	د پو هراهظ ۲۰, و	त्री		अपग असचा		अलेश्य. अ.		अना.   अना.
ું પગ્ર	9,9	चतुः		-		. !	अनु.	्यु. उ.
	६,४	पंचे.		. i	: :			
<b>I</b>	४,२,१	1	:	)	- (	1		

छक्खंडागमे जीवदाणं

[ १, १.

दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारू-वज्जत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ।

<sup>33</sup> तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणद्वाणाणि, पंच जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदी, वेहंदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि छ ठेस्सा अठेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो

लेक्याएं तथा अलेक्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहाँ सम्यक्त्व, संक्रिक, असांक्रिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, होन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंशी पंचेन्द्रिय और संशी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां: दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, चार प्राण और एक प्राणः चारों संशापं तथा क्षीणसंशास्थान भी है, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योगोंको छोड़कर शेष ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएं तथा अलेइयास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान

**नं. २**३५

त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

्य.	<mark>) जी.</mark> 'प	. त्रा. सं	.	्यो.	वे.	क. ज्ञा.	संय. द.	े ले. म. स.	संक्रि	आ.	। उ.
124	પ દ્	80 8	888	११ म.४	R	¥ ¢	৬ ४	इ. ६ २ ६	ંરં	2	ર
	द्वी∙प ⊢ ५	s ь	्री. ह	व.४		, <b>-</b>		भा. ६ भ.	सं.	आहा.	साका.
	त्री.प	र्ह्रीणसं क्षीणसं	ने गि	औ. १	स्रवग	अकृत्।	:	ਅਲੇ ₁अ.	ं असं.		अना.
	चतु.प	ু ড <sup>: রু</sup>	च	वे. १	1.	ক	:		' अनु		यु, उ.
ł	सं.प	<b>ξ</b> ,	<b>प</b>	आ र	· i				1		
İ	असं.प.	* 2		अयोग							

६२२ ]

संत-परूवणाणुयोगदारे काय-आछाववण्णणं

٩, १.]

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा।

<sup>\*\*</sup>तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, पंच जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णा खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, वेइंदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग चत्तारि वा, तिण्णि वेद अवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ

है, आद्यारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार अनाकार उप-योगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ – त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलापोंका वर्णन करते समय उन्हें अनाहारक भी कहनेका कारण यह है कि सयोगकेवली गुणस्थानमें केवलिसमुद्धातके प्रतर और लोकपूरणरूप अवस्थाओंमें नोकर्म वर्गणाओंके नहीं आनेके कारण जीव अना-हारक तो होता है परंतु उस समय पर्याप्त नामकर्मका उदय और वर्तमान द्वारीरके पूर्ण होनेके कारण वह पर्याप्त भी है, इसलिये इस अपेक्षासे पर्याप्त अवस्थामें भी अनाहारकता होनेके कारण वह पर्याप्त भी है, इसलिये इस अपेक्षासे पर्याप्त अवस्थामें भी अनाहारकता बन जाती है। इन्द्रिय मार्गणामें पंचेन्द्रिय मार्गणाके आलापोंका कथन करते हुए पर्याप्त आलापोंका कथन करते समय इसीप्रकार अनाहारक कहा है। वहां पर भी अनाहारक कंहनेका ऊपर कहा हुआ कारण जान लेना। इसीप्रकार दूसरे स्थलोंमें भी जानना चाहिए।

उन्हीं त्रसकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर — मिथ्यादाष्टि, सासा-दनसम्पग्दष्टि, अविरतसम्यग्दाष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रोन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंझी और संझी पंचेन्द्रिय जीवोंसंबन्धी पांच अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और दो प्राण; चारों संझापं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी तीन योग अथवा चार योग, तीनों बेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावाधि

र्नः २३६

त्रसकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी•	<b>q.</b>	সা,	<b>सं</b> .	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	ं संय.	द.	े.	म.	स.	संबि.	आ.	। उ.
4	ել	ধ্ ঐ.	৩	8	8	x	1	x	1 ३	8	Ę	` <b>X</b>	ິ ຮີ	द्र. २	2	4	2	2	5
मि.	द्री अ	4 ,,	ون	Ĥ.		<b>đ</b> .		औं मि.		÷	त्रिमं	अस.		1	भ.	मि.	. सं.	आहा.	साका.
- सा. !	<del>री</del> .,,		६	क्षी ण (		ৰ্বা.	त्रस	वे.मि	કાવના	<u>अकवा</u>	मनः	सामा		য়.	अ.		असं.	-	अना.
. અ.ો	च~,,		ય	82		च.		आ मि		100	विना.	छेदो ।		सा.६		(2)			यु. उ.
Я.	अ. ,,		8			đ.		कार्म.	1			यथा.		F		क्षा.	-		
स.	सं. ,,		२	1						1	l	l		ĺ	ĺ	क्षायो.	]		

छक्खंडागमे जीवहाणं

वा, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो अर्साण्णिणो अगुभया वा, आहारिणे। अणाहारिणो, सामारुवज्जत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएणुवजुत्ता वा ।

""तसकाइय-मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अहु पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि

और मनःपर्यय इतनके विना रोष छह झान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्छ लेख्याएं, भावसे छहों लेख्याएं, भन्यसिद्धिक, अभन्यसिद्धिकः सम्यग्मिथ्यात्वके विना दोष पांच सम्यक्तव, संक्षिक, असंक्षिक तथा अनुभय स्थान भी है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, आनाकारोपयोगी तथा दोनों उपयोगोंसे गुगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ – यहां पर विकल्पसे तीन अथवा चार योग बतलाये हैं इसका कारण यह है कि जन्मके मथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्तपर्यंत औदारिकमिश्र और वैक्रियिकमिश्र ये दो योग होते हैं और विग्रहगतिमें कार्मणकाययोग होता है इसलिये थे तीनें योग अपर्याप्त अवस्थामें बन जाते है। परंतु आहारकमिश्रकाययोग आहारकशरीरकी अपेक्षा अपर्याप्त अवस्थामें होता तो अवस्य है। पिर भी औदारिकशरीरकी अपेक्षा वहां पर्याप्तता भी है, इसलिये जब छठवे गुणस्थानमें होनेवाले आहारकशरीरकी अपेक्षा अपर्याप्त दी जाती है तब तीन योग कहे जाते हैं, और जब उसकी विवक्षा कर ली जाती है तब अपर्याप्त अवस्थामें चार योग भी कहे जाते हैं।

त्रसकायिक मिथ्यादाप्ट जीवेंके सामान्य आलाप कहने पर----एक मिथ्यादाष्टि गुण-स्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंक्षी पंचेन्द्रिय और संक्षी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पर्याप्त अपर्याप्तके भेदसे दश जीवसमास; संक्षी पंचेन्द्रिय जीवोंके छह पर्याप्तियां और छह अपर्याप्तियां; असंक्षी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां, संक्षी-पंचेन्द्रियोंके दश प्राण और सात प्राण, असंक्षी-पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण

ৰ, ২३৩

त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

	<b>g</b> .	ৰ	Ì.	ष.	भा.	<u>सं</u> .	<b>1</b> .	इ.	का.	यो	वे.	Ф.	ज्ञा.	संय.	। द.	छे.	स	स.	(सं क्षि	_ आ.	उ.	ł
	2	र	0	६प.	20,9	X		~ 1		1 N N 1		X	िर	1	। २	द्र. ६	2	१	रि	र	2	Ĺ
ត្រ	ŧ.	ជា.	२	<b>६</b> अ.	٩,७			द्वी.	-	आ दि			अज्ञा.	असं,	चक्ष.	भा ६	म	मि.	सं.	आहा.	साका.	l
		হ্বী.	R	५प.	८,६			त्री.	ι.	आ-द्रि. विना.					अच.		अ.			अना.		
ļ		चतु	.२	৬স.	9,4	ļ		च.					ĺ									
Ł		असं	.२	l	ξ,¥			<b>q.</b>														Ì
		सं.	२ं																			
Ł	Í					ļ			ĺ	1												

## संत-पद्धवणाणुयोगद्दारे काय-आरुाववण्णणं

सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

<sup>34</sup>तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, पंच जीवसमासा, छ पजजतीओ पंच पजत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, बेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा,

और सात प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण और छह प्राण, त्रीन्द्रियोंके सात प्राण और पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके छह प्राण और चार प्राणः चारों संझाएं, चारों गतियां, द्वीन्द्रियज्ञातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरद्व योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छद्दों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं त्रसकायिक मिथ्यादाष्टि जीवोंके पर्याप्तकाळसंबन्धी आळाप कहने पर---एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, होन्द्रिय, त्रोन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संझी और असंझी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, संझी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, असंझी पंचेन्द्रिय और विकले न्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां, संझी पंचेन्द्रियसे लेकर हीन्द्रिय जीवों तक क्रमसे दद्दा प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, और छह प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अन्नान, असंयम, चक्षु

### नं. २३८

त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी	ष. ।	<u>त्राः</u> सं-	ग.) इ	.∣ का.	यो.	वे.	ቒ.	्रज्ञा.	संय.	द-	<u>. ले. </u> म.	स.	संक्षि.	आ.	ਤ.
१	કર્દ્વો.વ∙	Ę	80:8	8 8	8	20	3	۲	३	<b>२</b>	્ર	द्र. ६ २	2	२	2	्र
मि.	সী.,,	ંપ	8	द्वी	त्रस.	म.४	i		अज्ञा.	असं.	चे सु.	मा ६ स.	मि.	सं.	आहा.	साकाः
	च.,,		2	গ		व,४					अच.	अ.		अस.	•	अना.
	असं. ,,		19 <sup>1</sup>	च		औ. १	2			i i		j	ĺ		'	
	. सं. ,,		ε	Ч.	I	वे. र		l		(			Í			

२, २. ]

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, पंच जविसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, बेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तिणि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ ठेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, होन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिद्रिय, असंझी पंचेन्द्रिय और संझी पंचेन्द्रिय संबन्धी पांच अपर्याप्त जीवसमास, संझी पंचेन्द्रियोंके छहाँ अपर्याप्तियां, असंझी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंके पांच अपर्याप्तियां; संझी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रिय जीवोंतक क्रमसे सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण और चार प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, द्वीन्द्रिय-जातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अझान, असंयम, चक्षु और अचश्च ये दो दर्शन, द्रव्यसे कारपोत और शुद्ध लेक्यापं, भावसे छहों लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अना-हारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २३९ 👘

त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

ो. वि.क. ज्ञा. संय. द. ले. भ. स. सज्जि. आ. उ.
मि. कुम. असं. चश्च का. म. मि. सं. आहा. साका.
मि. कुम. असं. चश्च का. म. मि. सं. आहा. साका. मि. कुश्च. अच. इ. अ. असं. अना. अना.
मे.   मा.६
: . fî

१, १.]

सासणसम्माइट्टिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति मूलोघ-भंगो ।

अकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि अदीदगुणद्धाणाणि, अदीदजीवसमासा, अदीद-पञ्जत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, चदुगदिमदीदो, अणिंदिओ, अकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो, केवलदंसण, दव्व-भावेहि अलेस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होंति<sup>340</sup>।

एवं तसकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तस्स मिच्छाइट्टिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि ति मूलोध-भंगो ।

तसकाइय-लद्धि-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणडाणं, पंच जीवसमासा, छ अपजत्तीओ पंच अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण,

.....

त्रसकायिक सासादनसम्यग्दाष्टि जीवॉसे ठेकर अयोगिकेवली जिन तकके आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए।

अकायिक जीवोंके आलाप कहने पर-अतीत गुणस्थान, अतीत जीवसमास, अतीत पर्याप्ति, अतीत प्राण, क्षीणसंज्ञा, अतीत चतुर्गति, अतीन्द्रिय, अकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, संयम, असंयम और संयमासंयम इन तीनों विकर्ल्पोंसे विमुक्त, केवलदर्शन, द्रव्य और भावसे अलेश्य, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकर्ल्पोंसे रहित, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकर्ल्पोंसे अतीत, अनाहारक, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

इसीप्रकार त्रसकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके मिथ्यादाष्ट गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप मूल ओघालापोंके समान जानना चाहिए ।

त्रसकायिक लष्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीस्ट्रिय, चतुरिन्द्रिय, संंक्षी और असंक्षी पंचेन्द्रिय संबन्धी पांच अपर्याप्त जीव-समास, संक्षी पंचेन्द्रियोंके छद्दों अपर्याप्तियां, असंक्षी पंचेन्द्रिय और विकलेम्द्रियोंके पांच अपर्याप्तियां, संक्षी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रियतक क्रमसे सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण,

	74.	-								 								
अतौतगु. 📖			ਅਰੀਰਸਾ,   ਸ਼	क्षींणसं.   म	अतीतग. । म	अतीन्दिय. 🛺	अकाय. <mark>अ</mark>	यो- मा क्रि	लतन क		अत्रीतसं अत्रीतसं	द. के.द.	<u> অ</u> लेरय.   .	H H H	 Hi	<u>आ.</u> अना.	<u>ु</u> २ साका. अना.	
			12					1	ľ					अतीत	अतीत		यु. च.	ł

अकायिक जीवोंके आलाप.

ੜੇ ੨੪੦

[ १, १.

चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, बीइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ</sup>।

एवं कायमगणा समत्ता ।

जोगाणुवादेण अणुवादो मूलोध-भंगो। णवरि विसेसो तेरह गुणडाणाणि, अजोगि-गुणहाणं अदीदगुणहाणं च णत्थि, तदो जाणिऊण मूलोघालावा वत्तव्या।

मणजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुण्डाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण । केई वचि-कायपाणे अवर्णेति, तण्ण घडदे; तेसिं सत्ति-संभवादो ।

पांच प्राण और चार प्राण; चारों संक्राएं, तिर्यंच और मनुष्य ये दो गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग नपुंसकबेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दे दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं।

इसप्रकार कायमार्गणा समाप्त हुई।

योगमार्गणके अनुवादसे आलापोंका कथन मूल ओघ आलापोंके समान जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि यहां पर तेरह ही गुणस्थान होते हैं, अयोगिगुणस्थान और अतीतगुणस्थान नहीं होता है सो आगमाविरोधसे जानकर मूल ओघालाप कहना चाहिए।

मनोयोगी जीवोंके आछाप कहने पर-आदिके तेरह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण होते हैं। कितने दी आचार्य मनोयोगियोंके दश प्राणॉमेंसे वचन और काय प्राण कम करते हैं, किन्तु उनका वैसा करना घटित नहीं होता है, क्योंकि, मनोयोगी जीवोंके वचनबल और काथबल इन दो प्राणोंकी शक्ति पाई जाती है,

### नं. २४१

त्रसकायिक ळब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

<b>[</b> IJ.	जी.	ष. ।	<u>।</u> श	[ <del>स</del> ं. <sup>€</sup> ग.	ं इं.'का	योग	'वे∙ <sup>⊥</sup> व	ः ज्ञा	संय.	ेद.	ਡੇ.	∣ म.	. स.	संशि.		ਰ.
1 र	4	Ę	8	४ २	8 8	र	2 8	( <del>र</del>	1 2	२	द्र, २	2	१	र	२	ર
मि.	द्वी. अ,	अ.	ט	<b>∂</b> .	द्वी त्रा	ओ.मि.	ارتور	ुकुम.	असे.	चक्षु.	का.	भ.	मि∙	सं.	आहा.	साका
	त्री.,,	4	Ę	म.	ৰা, লি	कार्म.	<u>ודן</u>	कु थु.	:		शु.				अन।	अनाः
	चतु. ,,	अ.	4	1	'च.∣	1		ı i		Ì	भा. ३			1		
	असं .,,		8	ĺ	İq.∣	:			· ·		अगु.	İ		l		
	' सं-	6		1	· · ·	:	i i		l	1		ļ		l _	ļ '	

६२८]

वचि-कायबलणिमित्त-पुग्मल-खंधस्त अत्थित्तं पेक्खिअ पऊर्त्ताओ होंति ति सरीर-वचि-पज्जत्तीओ अत्थि । चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अड णाण, रूत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सामार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा<sup>भर</sup>।

मणजोगि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण,

इसलिये ये दो प्राण उनके बन जाते हैं। उसीप्रकार वचनबल और कायबल प्राणके निमित्तभूत पुद्रलस्कन्धका अस्तित्व देखा जानेसे उनके उक्त दोनों पर्याप्तियां भी पाई जाती हैं इसीलिये उक्त दोनों पर्याप्तियां भी उनके बन जाती हैं। प्राण आलापके आगे चारों संझाए तथा क्षीणसंझास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्यमनो-योग, असत्यमनोयोग, उत्यमनोयोग और अनुभयमनोयोग ये चार मनोयोग, तीनों बेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रध्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संझिक तथा संक्षिक और असंझिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। आहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपल् उपयुक्त भी होते हैं।

मनोयोगी मिथ्यादांधे जीवोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्याद्दांध गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, द्शों प्राण, चारों संबाप, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, जसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो

मं.	282
	- er

मनोयोगी जीवोंके आलाप.

<u>। ग</u> ु. १३	जी. <u> </u> प	. प्रा. <del>र्</del> स. १०४	ग. इ. ४ १	[ <u>का</u> यो. १ ४	 ३   ४	्रज्ञा. ८	संग द ७४	ले. स. स. इ.६ २ ६	संज्ञि. आ. १ १	<u>उ.</u> २
अयो. विना	सं. प. । ।	क्षीणस.	म	: मने हि	अपग अस्त्रा			मा ६ स. अ	सं आहा. अनु	साका, अना,
						Į	:		. : 1	यु. उ.

₹, ₹.]

दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रभ</sup>।

मणजोगि-सासणसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, (तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

मणजोगि-सम्मामिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो,

दर्शन, द्रब्य और भावले छहों छेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनोयोगी सासादनसम्यग्दधि जीवोंके आलाप कहने पर-पक सासादन गुणस्थान, एक संग्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संग्रापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अन्नान, असंयम, आदिके दें। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्स्व, संन्निक, आह्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान,

नं. २४३

मनोयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप

री.ंप-	प्रा_्स.	ंग] ई.	∣का ∈यो.	∃वे₊ंक	. ज्ञा.	सय ⊨द	छे. म. स	सिन्नि आ	ड.
१ ६	20 8	8 2	8 8	হ ४	ર્	₹ ! <b>२</b>	द.६२१	8 8	ર
. <b>q</b> .		पंचे.	∦त्रसः मनो.	• +	अज्ञा.	असं चक्षु	ः <b>मा</b> • ६¦ म∘ मि.	सं आहा	साका,
İ		ł	1 1	:	:			1 - E	अनाः
I		4	1		!			i i	
			Į į		i	1	1 I I	!	
		2 8 20 8	2 8 80 8 8 2	2 6 50 8 8 5 5 8	2 2 20 8 8 2 2 8 8 3 8	2 2 20 8 8 2 2 8 3 3 8 8	१६१०४४१११४४३४३४३२४ प. पंचे. त्रस. मनो. अज्ञा असं. चध्रु.	१ ६ १०४४ १ १ १ ४ ३ ४ ३ १ २ द.६२ १ प. पंचे. त्रस.मनो. अज्ञा असं. चक्षु. सा.६ स.मि.	

### નં. ૨૪૪

## मनोयोगो सासादनसम्यग्टाप्टि जीवॉके आलाप.

] गु. जी. प. प्रा. सं. ग. इ. क यो. वे. क. इ. संय. द. ले. म. स.	ধায় পাঁত
<b>१ १ ६ २० ४ ४ १ १ ४ ३ ४ ३ ४ ३ १ २ उ. ६ १</b> १	१ १ २
मिने सनो. अज्ञा. असंग्वश्च, भा. ६.म. सासा. मिने मिने कि	a 1 i
मि मि प्रिया प्राप्त प्रमान प्राप्त प्रमान प्राप्त प्रमान प्राप्त प्रमान प्रमान प्राप्त प्रमान प्रमान प्रमान प् मि मि मि मि मि मि मि अचिन	अना.

छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, ) तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दुव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>क्ष्य</sup> ।

<sup>\*\*\*</sup>मणजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझानोंसे मिश्रित आदिके तीन झान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेरयाएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दष्टि गुण-स्थान, एक संक्री पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्राएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन क्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक; औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-

१ कोधकान्तर्गतपाठः प्रतिषु नास्ति ।

नं. २४५

### मनोयोगी सम्याभिथ्यादाई जीवींके आछाप.

<u>। ग</u>	•	जी∙	प	प्राः सं	्र		<b>(</b> \$\$).	यो.		一书.	, ज्ञा-	संय.	द.	छे.	म.		संझि.	अ।.	। ਤ.	I
्र		و	Ę	803	5   8	9	3	8	, <b>२</b>	8	₹	१	२	द्र.६	8	१	१	8	ર	Ĩ
HE		नः प.				युः	जन	मनो.	1		क्षान-	असं.	चझु.	भा₊ ६	म•	सम्य	सं.	आहा.	साका.	
Ē	1				[	1.6-	71		Ι.		२	i	•	1			ļ		अना	L
	ļ				İ		Ι.				अझा-	1			l		i			
			J	ĻI		ļ		1	) (		मिश्र.	i	l	1	: 1					

### નં. ૨૪૬

## मनोयोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप

<u>गु. जी. प. प्र</u> . सं. ग. २ २ ६ १०४४४		<u>. ले. स. स. संझि. आ. उ.</u>
अवि.सं.प.	🔐 🚽 मनो. माते. असं. के.य	ं भा. ६ म. औ. सं आहा साका,
	<sup>'छे</sup> <sup>गरे</sup>   श्रुत.   विन   अवग्	ा. क्षा. अना. क्षायो.
	i k k j k j k k	j j j l l l l

छक्खंडागमे जीवहाणं

[ १, १.

होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणजोगि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्त्रेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भा</sup>।

मणजोगि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवासिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

पयोगी होते हैं।

मनोयोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर-पक देशविरत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तिर्थंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्श्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्शाएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, झायिक और झायोपशमिक ये तीन सम्यक्त, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगो प्रमत्तसंयत जीवोंके आछाप कहने पर-पक प्रमत्तविरत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगाती, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिद्वारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क छेश्यापं, भन्यसिद्धिक, औपद्यामिक, क्षायिक और झायोपश्तमिक

#### નં ૨૪૭

मनोयोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

	मु.[	जी	व.	प्रा.	सं.	[ ग.	इं.	का.	यो.	वि.	क.	ं ज्ञा.	संय	(द,	ਲੇ.	(भ-	् स.	सांझे.	্ জা	उ.	
-	र १	₹	Ę	20	•	2	\$	१	×	३		· •	<u></u> १	3	द्र. ६	1 2	्र -्री	<b>۶</b>	۶ ۲۳۳۰	<b>२</b>	
	- 	÷				1 H L	रचे -	त्रस.	मनो.			मति-				¦H∎	) औप   क्षा	ै <b>सं.</b>	आहा	साका. अना.	
1	٣	Ħ				म.		ļ				अत अव	1	विनाः	શુન		्र क्षायो₋			जना.	
ł								:		1	ĺ	્યત્ર				ļ	પ્રાપ્ય -				

६३२ ]

**१**, १**:**]

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

मणजोगि-अप्पमत्तसंजदप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि ति ताव मूलेघ-भंगो। णवरि चत्तारि मणजोगा वत्तव्वा । सजोगिकेवलिस्स सचमणजोगो असचमोसमणजोगो इदि दो मणजोगा वत्तव्वा । सचमणजोगीणं मिच्छाइद्विप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ताव मूलोघ-भंगो। णवरि सचमणजोगो एको चेव वत्तव्वे। एवमसचमोसमणजोगीणं पि, णवरि असचमे।समणजोगो एको चेव वत्तव्वो ।

मोसमणजोगीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, मोसमणजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि

ये तीन सम्यकत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अप्रमत्तसंयत गुणस्थानसे ळेकर सयोगिकेवली गुणस्थानतक मनोयोगी जीवोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान ही हैं, विशेष बात यह है कि योग आलाप कष्टते समय बारहवें गुणस्थानतक चारों ही मनोयोग कहना चाहिए । किन्तु सयोगिकेवलीके सत्यमनो योग और असत्यमृषा अर्थात् अनुभय मनोयोग ये दो ही मनोयोग कहना चाहिए ।

सत्यमनोयोगियोंके आलाप मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थानतक मूल ओघालापोंके समान हैं। विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक सत्यमनो-योग आलाप ही कहना चाहिए। इसीप्रकारसे असत्यमृषा अर्थात् अनुभय मनोयोगियोंके भी आलाप होते हैं। विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक असत्यमृषा मनोयोग आलाप ही कहना चाहिए।

म्रुषामनोयोगी जीवोंके आछाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं तथा क्षीणसंझास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, मुषामनोयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है।

. नं. व्	રપ્રટ
----------	-------

मनोयोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आछाप.

गु. जी. प. त्रा. सं. ग. ई. का. यो. वे. १ १ ६ १०४ १ १ ४ ३ सं. प. म. म. म. म. म. म. म. म.		
--	--	--

मोसमणजोगीणं मिच्छाइद्विप्पहुडि जाव खीणसण्णाओ त्ति ताव मणजोगि-भंगो। णवरि एको चेव मोसमणजोगो वत्तव्वो । एवं सचमोसमणजोगीणं पि वत्तव्वं ।

वचिजोगीणं मण्णमाणे अस्थि तेरह गुणद्वाणाणि, पंच जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण, मण-सरीर-पज्जत्तीहिंतो उप्पण्णसत्तीओ सरीर-मणबल्लपाणा उच्चंति । ताओ वि उप्पण्णसमयदो जाव जीविदचरिमसमओ त्ति ताव ण विणस्तंति । जेण मण-वचि-कायजोगा पाणेसु ण गहिदा

चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है । केवल्रज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, इव्य और भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व. संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मुषामनोयोगी जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके आलाप मनोयोगी जीवोंके आलापोंके समान हैं। विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक मृषामनोयोग आलाप ही कहना चाहिए। इस्रीप्रकार सत्यमृषामनोयोगियोंके भी आलाप कहना चाहिए।

वचनयोगी जीवोंके आलाप कहने पर--आदिके तेरह गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंझी और संझी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, संझी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रिय जीवोंतक कमशः दर्शो प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण और छह प्राण होते हैं। मनःपर्याप्ति और शरीरपर्याप्तिसे उत्पन्न हुई शक्तियोंको मनोबलप्राण और कायबल्प्राण कहते हैं। वे शक्तियां भी उनके उत्पन्न होनेके प्रथम समयसे लेकर जीवनके अन्तिम समयतक नष्ट नहीं होती हैं। और जिसकारणसे मनोयोग, वचनयोग और काययोग प्राणोंमें नहीं प्रदर्ण किये गये हैं, इसलिये, वचनयोगियोंके वचतयोगसे निरुद्ध अर्थात् युक्त अवस्थाके होने पर भी दर्शो

नं. २४९

म्हवामनोयोगी जीवोंके आलाप.

तेण वचिजोग-णिरुद्धे वि दस पाणा हवंति । चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, चचारि वचिजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अस्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, अद्ध णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सामार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा<sup>२७०</sup>।

वचिजोगि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, पंच जीवसमासा, छ पछत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, बेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, चत्तारि वचिजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्व-

प्राण होते हैं। प्राण आलापके आगे चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है। चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, जसकाय, चारों वचनयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रच्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है; आद्यारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वचनयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, इोन्द्रिय जीवोंसे लगाकर संझी पंचेन्द्रिय तकके जीवोंकी अपेक्षा पांच पर्याप्त जीवसमास; छद्दों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण और छद्द प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, हीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, धारों वचनयोग, तीनों बेद, चारों कथाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रस्य

र्न.	२५०
------	-----

2. 2. ]

# वचनयोगी जीवोंके आलाप.

] गु.	जी. `	' <b>प.</b> ्प्रा.; सं.	ग,इ.का	यो.	वे., क.	ज्ञा. संय. द.	છે.	म.ं स.	संज्ञि.	आ.	ਤ.
23	4	\$ 20 8	8 8 8	8	<u>३</u> ¥	۲ ۵ ۲	<b>द.</b> ६	२ ६	ર	2	્ર
अयो	र्द्धा प	4 8 HE	द्वी म्ट	वच.	E E		्भा. ६	भ.	ं सं.	आहा.	साका-
विनाः	त्री.प.	क्षीयाः सीयाः	সী, দি		अपग अकृषा,		;	अ.	अस.		अमा.
	चतु.प.	່ ອ 🔤	च.		61				अनु,	1	यु. उ.
	असं.प.	<b>ह</b>	पं.				-				
	सि.प.					, i		i	١		1 <b>1</b>

६३६]

भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ध्य</sup> ।

सासणसम्माइट्टिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि ति ताव मणजोगीणं भंगो । णवरि चत्तारि वचिजोगा वत्तव्वा । सजोगिकेवलिस्स सचवचिजोगो असचमोसवचिजोगो च भवदि । सचवचिजोगस्स सचमणजोग-मंगो । णवरि जत्थ सचमणजोगो तत्थ तं अवणेऊण सचवचिजोगो वत्तव्वो । मोसवचिजोगस्स वि मोसमणजोग-भंगो । णवरि मोसवचिजोगो वत्तव्वो । एवं सचमोसवचिजोगस्स वि वत्तव्वं । असचमोसवचिजोगस्स वचिजोग-भंगो । णवरि असचमोसवचिजोगो एक्को चेव वत्तव्वो ।

और भावसे छहाँ लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तकके वचनयोगी जीवॉके आलाप मनोयोगी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। विरोष घात यह है कि वचनयोग आलाप कहते समय चार वचनयोग कहना चाहिए। सयोगिकेवली जिनके सत्यवचनयोग और असत्यमृषायचनयोग ये दो ही वचनयोग होते हैं। सत्यवचनयोगके आलाप सत्यमनो-योगके आलापोंके समान होते हैं। विरोष बात यह है कि आलाप कहते समय जहां पहले सत्यमनोयोग कहा गया है वहां उसे निकाल करके उसके स्थानमें सत्यवचनयोग कहना चाहिए। मुषावचनयोगके आलाप भी मुषामनोयोगके आलापोंके समान होते हैं। विरोषता यह है कि मुषामनोयोगके स्थान पर मुषावचनयोग कहना चाहिए। इसीप्रकारसे सत्यमृषावचनयोगके भी आलाप कहना चाहिये, अर्थात् उभयचचनयोगके आलाप सत्यमृषा-मनोयोगके आलापोंके समान जानना चाहिये। असत्यमृषावचनयोगके आलाप वचनयोग-सामान्यके आलापोंके समान होते हैं। विरोषता यह है कि असत्यमृषावचनयोग कहना साला कालाप कहते समय एक असत्यमृषावचनयोग ही कहना चाहिए।

## ≢. રબર્

वचनयोगी मिथ्याद्दछि जीवोंके आलाप.

<u>।</u> गु.	্ৰ জ	f.	<b>9</b> .	त्री.	सं.	्ग.)	ई.	কা.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय	्द.	हे.	ं भ	स.	संद्रि.	आ•	ु उ.
1	48	<u>).</u> 4	Ę	१०	8	8	8	१	x	३	8	३	१	्रि	द्र.६	२	१	২	2	र
मि		ì.,	4	8	:		द्वी.	त्रस	वच		l İ	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा ६	भ-	मि.	सं.	आहा.	साका.
	ः च	.,	>	2			त्री.	1						अच		अ-	i	अस.		अनाः
	अ	<b>.,</b>	5	9			च・	Ì		1			[	ŀ			1			
1	सं	, ,	,	Ę	l		पं.	1	l		<u> </u>	l 	ί.		ļ			1		]

# संत-पह्त्वणाणुयोगहारे जोग-आठाववण्णणं [ ६३७

कायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणद्वाणाणि, चेाइस जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ वत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, सत्त कायजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवासिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवद्ववज्जत्ता वा

काययोगी जीवोंके आलाप कहने पर-आदिके तेरह गुणस्थान, चौद्दों जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां छहाँ अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां चार अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छद्द प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण तीन प्राण; चार प्राण और दो प्राण; चारों संझापं तथा क्षीणसंझ स्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजातिको आदि लेकर पांचों जातियां, पृथिवी-कायको आदि लेकर छहां काय, सातों कः ययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संझिक, असंझिक तथा संझी और असंझी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

#### ર્થ, ૨५૨

2, 2.]

काययोगी जीवोंके आलाप.

। <u>.</u> .	জী	प.	<u></u>	<b>₫</b> ,	ग.	इं.	का.	यो.	à.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	<u>ਲ</u> ੇ.	म.	स.	साज्ञे	<u>_ आ</u> .	ੁ ਤ.	ł
22	28	६प	20,0	8	8	4	वि	છ	ર	8	۵	9	8	द्र ६	R	Ę	२	হ ঁ	२	L
अयो	!	६ अ.	8,0	<u>.</u>				कार्य.	÷	ا <sub>ہ</sub> ا				भग-६	.स	l	सं	आहा.	साका.	
विना.		५प	८,६	क्षाणसं.					अपन	[∓षा							असं	अना.	अना	ł
1	1	५अ.	હ,પ	ক্ষ	i				Ĩ.	厉					i		अमु.		यू उ.	
		४प.	ξ <b>,</b> γ					[			i i								-	ł
		४अ.	8,3	i												l I	1	<b>i</b> i		
	]		4.2													!	1			

Jain Education International

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं मण्णमाणे अस्थि तेरह गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियादी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, वेउव्वियमिस्सेण विणा छ जोग तिण्णि वा, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अस्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, अद्व णाण, सत्त संजम,चत्तारि दंसण, दव्त्र-भावेहि छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो आहारिणो चेव वा, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा

उन्हीं काययोगी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके तेरह गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, छहों पर्याप्तियां पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण और चार प्राण; चारों संझापं तथा क्षीणसंझास्थान भी है। चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, वैकियिकमिश्रकाययोगके विना छह काययोग अथवा औदारिक-काययोग, वैकियिककाययोग और आहारककाययोग ये तीन काययोग; तीनों वेद तथा अप-गतचेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकपायस्थान भी है। आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेस्यापं, मन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक; असंज्ञिक तथा संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है; आहारक, अनाहारक अथवा आहारक ही होते हैं। साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार-अनाकार उप-योगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

#### નં. ૨૫૧

काययोगी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। गु.	जी-	्ष.	∤ সা∙	। सं.	ग.	ţ.	का	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	_संय.	्द.	ਰੇ.	भ.	स.	संक्षि	, পা.	ਤ.
12	6	Ę	20	8	¥	ų	Ę	Ę	३	8	<	ভ	8	<b>द.</b> ६	્ર	<b>ह</b>	ર	1 २	२
अयो.	पर्याः	4	3			í i		वे.मि.		E.		i		भा ६	म.	1	. स	आहा.	साका.
विना.		8	<	हीपसं				विना	ल्ल	अकृष।,					अ.		असं.	अ <b>न</b> ।	अना.
1			9	<b>3</b> 5				अथ.		5			Ì	]			अनु,	अ <b>थ</b> .	यु.उ.
			Ę					ર				ļ			'		1	2	-
			* *					İ.						<u> </u>	İ			आहा.	

**446**]

2, 2-]

े तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच' गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छण्णाण, चत्तारि संजम,

छी जाती है तब उसकी अपेक्षा पर्याप्त अवस्थामें भी छहों योग बन जाते हैं और जब अपर्या-प्तता मान छी जाती है तब पर्याप्त अवस्थामें औदारिक, आहारक और वैक्रियिक ये तीन योग ही बनते हैं। इसीप्रकार आहारमार्गणाके कथनमें पहछे आहारक और अनाहारक ये दो आछाप बतलाये हैं अनन्तर एक आहारक आलाप ही बतलाया है। इसका भी कारण यह है कि तेरहवें गुणस्थानमें केवलिसमुद्धातके समय भी पर्याप्तताके स्वीकार कर लेनेसे आहारक और अनाहारक दोनों आलाप बन जाते है। परंतु कपाट, प्रतर और लोकपूरण अवस्थामें केवल अपर्याप्तताके स्वीकार कर लेने पर अनाहारक आलाप काययोगियोंकी पर्याप्त अवस्थामें केवल अपर्याप्तताके इसका यह तात्पर्य हुआ कि जब काययोगियोंके पर्याप्त अवस्थामें छह योग कहे जावें, तब आहारक और अनाहारक ये दोनों ही आलाप कहना चाहिए और जब केवल तीन योग ही कहे जावें तब एक आहारक आलाप ही कहना चाहिए। सातों संयमोंके संबन्धमें भी यही विवक्षा भेद जान लेना चाहिये।

उन्हों काययोगी जीवोंके अपर्याप्त कालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्याद्दाष्टि, सासा-दनसम्यग्दष्टि अविरतसम्यग्दष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान; सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण और दो प्राण: चारों संझाएं तथा झीण संझास्थान भी है; चारों गतियां, पकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाथ आदि छहों काथ, औदारिकमिश्रकाययोग चैकिथिकमिश्रकाययोग, आद्वारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाय-योग ये चार योग: तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है; चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगाचाभ और मनःपर्ययझानके विना छह झान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और

१ प्रतिधु ' चर्त्वारे ' इति पाठः । म. २५४ काययोग

काययोगी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>गु. जी.</u>	ष.	<u> পা</u>	र्स-	ग.	·	_!	व.	<u>क,</u>	হ্যা.	संय.	्र.	[	<b>H</b> .	. स	संझि.	জা.	<u> </u>
4 9	६अ.	6	8	8	13	হ্ 🖌	₹.	8	६	8	8	इ. २	२	4	्र	ि	२
मि अपर्या.	14 ,,	19	-			ગો મિ.	-	÷	विमं.	असं •				सम्य.			स का.
सा.	۷,,	Ę	ei juri			वे.मि.	अपम.	अकृष्ण		सामा		য়.	ञ.	विना.	असं.	अना.	अना.
अ.		4	30-		ļ	आ.मि			विनाः	છેદ્યો.	ł	मा.६		[	अनु.		यु. उ.
я. [	ł	×				कार्म.		1	}	यथा.	1				ļ		
स.	ĺ	3 3	<u>}</u>		1	1		1	1					<u>{</u>	}		4

चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, संागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा ।

कायजोगि-मिच्छाइडीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, पंच काय-जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवासिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

यथाख्यात ये चार संयमः चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्याग्मिथ्यात्वके विना रोष पांच सम्यक्त्व, संक्रिक, असंक्रिक तथा अनुभयरथान भी है; आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा दोनों उपयोगोंसे युगपुत् उपयुक्त भी होते हैं।

काययोगी मिथ्यादाष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण और तीन प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना पांच काययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ર્વ. રષ્ય

काययोगी मिथ्याद्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

। ग्र	जीम	प.	प्रा.	सं, ग	्र.	का	यो	•	वे.!	क.	झा.	ं संय.	द.	ੇ.	् स	. स.	संहि	आ.	<u></u> [
2	18	प.	20,0	8 8	ं ५	६	ંપ	- :	3	8	ેર્	۶ :	. २	ंद्र ६	्रि	\$	. २	ર	ર
मि.	६	अ.	९,७		· :				-		अল্ञা				६्भ.	मि	स	आहा.	साका.
	ંધ્	Ч.	_ ८,६	:			ेवे.	२					अच.		्ञ.		अस.		अ <b>ना.</b>
i		-	يەر ق		ļ		का.	3 :			: I	1				:	İ		यु. उ.
	্	Ч,	i کرک	:				:			1			:		:			
1	ાંજ	अ.	્ ૪,૨	i i		l.	1	÷	4			·						: ;	I

६४०]

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पजत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवासिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता या<sup>स्त्</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया

उन्हों काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, और चार प्राण; चारों संक्षाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्तक जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकिथिकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत,

નં. રષદ્

.....

काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवांके पर्याप्त आछाप.

। गु., जी. हे प. (प्रा. ' स ) ग., ई.)	का   यो   वे   क.  ज्ञा	संय.] द. हे.	भ. स. संज्ञि. आ.	ਤ.
	६ २ ३ ४ ३	१ २ द्र.६	२ १ २ १	ँ२
मि वर्याः ५ ९	औ. १ अज्ञाः			
Y <	वि र 🗄 🗌	अच.	ઝ. ઝર્સ.	अना_
				1
¦ຊະ⊀				

अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा " ।

कायजोगि-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ. दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ. पंचिंदियजादी, तसकाओ, पंच जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सातणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो. सामारुवजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा<sup>86</sup>।

और शुक्त लेक्यापं, भावसे छहाँ लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्षिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी सासादनसम्यग्दाष्ट्र जीवांके सामान्य आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, संश्री-पर्याप्त और संश्री-अपर्याप्त ये दो जीवसमासः छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संक्षाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना पांच काययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ৰ্ব, ২'১৩

काययोगी मिथ्याद्दष्टि जीवींके अपर्याप्त आलाप.

<u>ग</u>	जी.	ч.	)मा.	सं.	ग.	¥.	का.	यो.	वे.	ক.	ज्ञा.	∫ संय ∙	ζ.	ले.	भ.	. स.	संझि.	সা.	उ.
१	৩	६अ.	6	8	¥	Ŀ,	ह	२	3	¥	ર	2		द्र. २			२	ર	्र
मि.	अपर्या.	<b>५</b> अ.	9				ļ	ओ मि			कुम.	असं.	चक्षु	का.	म∙	मि .	सि.	आहा. ।	साका.
		' পঞ	ह			1		त्रे मि			कुश्रु.		अच.	য়-	ज.	ĺ	असं -	अना.	अना.
	1		4				Ì	कार्म.			Ĩ	Į .		'मा⊦६	ŗ	ļ		i i	i l
		!	8				Ì				1	· ·		1	[	Í	I	İ	ł
			₹												ļ		i	į .	. }
1	1			1	i	ĺ		l				.		l	i		I 		

#### काययोगी सासाइनसम्यग्दाष्टे जीवोंके सामान्य आलाप. नं. २५८

गु जी प प्रा संग, इ.) का. यो, वे. क. हा. संय. द. ले. स. स. संहि. आ. 2 8 20 8 8 8 2 ५ ३४ ३ १ २ इ.६ १ १ ંશ R अक्षा. असं चश्च, मा ६ स. सासा, सं. आहा. साका. ⊉ त्रस∙ ओ.२ सा. सं. प. प. 9 सं. अ. ६ अच -अ**ना**-अना. वे २ ञ. का १

**482**]

१, १.]

तेसिं चेव पजजाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजजीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>%</sup>।

ें तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासे।, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

उन्हीं काययोगी सासादनसम्यग्दाप्ट जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्श्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी सासादनसम्यग्दाष्टि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, वारों संझापं, नरकगतिके विना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग,

# नं. २५९ काययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>ग</u> ु. २	जी. १	ष.। ६ १	ग.¦सं ∘¦४	8	2	र	્ર	•_  	वे. २	क   ४	<u>)</u> झा. ३	संय. १	<b>द.</b> २	ले. द्र	5	Π.	स. १	सांझि. १	आ <b>.</b> १	<u>उ.</u> २	1
सा.	सं.प				पंचे.	-	ओ. वै.	१		1	कुम. कुथ्र	<b>अ</b> सं •	चक्षु अच	मा.	६¦म ∣	•	सा.	सं.	आहा.	साका. अना,	ŀ
	]		Ì			1				( ,	विस.			(	ļ	1					ł

# नं. २६० काययोगी सासादनसम्यग्टछि जीवोंके अपर्याप्त आळाप.

7.	জী-	ष. त्र	। सं	ग.	इ	কা.	यो।	वे.'क.	লা.	संय.	द.	ਡੇ.	म.	स.	संझि.	্ঞা.	ੁ ਚ.	ł
2	१	Ę	ช่ช	R	. t	۲.	्र	3 8	२	٤.	২	द्र र	2	१	2	२	२	l
सा	सं अ	अ.	ļ	ति.	417	त्रस	औ।मि.		कुम.	अस	चक्षु,	: का	भ -	सा.	सं .	आहा.	साका-	l
				म	-Br	I	्व.म.		∦ સું સું ∙	i	अच	! য়ু-			-	अना.	अना.	
			i	द.	ļ	ļ	कामे.		I	:		भा ६	ł	 				L
				ĺ			<u></u>		ı	1 1	· ·	{			i ,	Į	Ļ	ł

छक्खंडागमे जीवहाणं

तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुफ्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्ता; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजोगि-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एगे। जीवसमासो, छ पज़त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंज्ञमो, दो दुंसण, दच्व-मॉर्थेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा हेंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्त</sup>।

कायजोगि-असंजदसम्माइद्वीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ,

वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अक्कान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्याएं, भावसे छहों लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी सम्याग्मिथ्यादपि जीवोंके आलाप कहने पर-एक सम्याग्मिथ्यादपि गुजस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझानोंसे मिश्रित आदिके तीन झान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं. भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी असंयतसम्यग्दधि जीवोंके सामान्य आळाप कहने पर—एक अविरतसम्य-ग्टष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दे जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; द्शों प्राण, सात प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

ર્ન. ૨૬૧

काययोगी सम्यग्मिथ्यादाष्टि जीवोंके आलाप.

गु .	3	<b>n.</b> ;	٩.	<b>)</b> मा.	सं.	ग.	; इं.	का.	ं यो	वे.	ेक.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	ं म.	. स	. संझि	) आ	ं उ. ∣
٦		2	Ę	20	8	R	१	१	्र	३	8	३	2	ર	द्र, ६	1 3	१	1 2	2	२
1	;   <sub> </sub>	خط						-	છોં. શ	:		ज्ञान.	असं •	चक्षु.	भा. ६	॑भ₁	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
ļ		÷					4	नस	वे. १		!	२		अच	İ				]	अना.
ļ											İ	अज्ञा.	1	İ						1
	ł			) į	]						 /	मिश्र.				]			;	

£88]

पंचिंदियजादी, तसकाओ, पंच जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्त</sup> ।

"तैसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेदि

त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकियिककाययोग, वैकियिकमिश्र-काययोग और कार्मणकाययोग ये पांच योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, मब्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी असंयतसम्यग्दाप्ट जोबोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---पक अविरतसम्यग्दाप्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औद्यारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये देत्योग; तीनों बेद, चारों कथाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके

#### ર્ન. રદ્દર

## काययोगी असंयतसम्यग्दाष्ट्रे जीवोंके सामान्य आलाप.

] गु	जी.	[प.	<b>न्ना</b> ,	] सं	ग.	; इ.	কা,	यो.	∣ वे.	) क.	<b>श</b> ः	∫ संय	द.	छे.	(भ	स.	संज्ञि.	- সা	ਤ.	Í
1 2	ર	<b>ξ</b>	80	8	8	R	_ع ا	4	] ३	¥	3	2	्रि	द्र. ६	· ·	3	2	ર	२	ŀ
10	सं. प. सं. अ.	<b>́Ч</b> .	৩			면	1 87 .	আঁ,	٤	ļ		असं	किद	)मा ६	भ.	आषः	1		साका.	ŀ
ল				ļ	:	- 12-	না	वे. २	1	1	श्रुत.		विनाः	ļ		क्षा.	ł	अन≀	अना.	
		अ.			i		. 	का. १	i i		अव.	ł				क्षायोः	1			
	ļ	ļ		i		i	Į				l	Į –		ļ	ł	1	1	1		ŀ

# नं. २६३ काययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

र	जी. १ सं.प.	Ę	সা- ২০	 8	٤	2	ેર ઓો.	-, ۱	३	8	३	t	्२ क. <b>द</b> .	द. भा	६ १	् स. ३	1 2	1	2
			; .  j ]		प में	74	<b>वे.</b>	<b>و</b>   			श्रुत अव-		विना	     		क्षा. क्षायोः	! ! ]		अनाः

2, 2.]

## छन्खंडागमे जीवहाणं

छ लेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपञत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>राण</sup>।

कायजोगि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एय गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजनीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरा-लियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याप, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यवत्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धो आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकि यिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेडयापं, भावसे छहों लेइवाएं; भव्यतिद्धिक, औपरामिक, क्षायिक और क्षायोपर्शमिक ये तीन सम्यक्त्व; संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी संयतासंयत जीवोंके आठाप कहने पर-पक देशसंयत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति और मजुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे

#### नं. २६४

काययोगी असंयतसम्यग्दघि जीधोंके अपर्याप्त आलाप.

2	जी पः २ इ सं. अ, अ	8 8	X 2 8	. यो. वे. क <u>३</u> २४ औ.सि.पु. बे.मि. न. कार्म.	ુર શ	३ द.२  के.द. का. विना. इ.	१ ३ १	२   २
l								

**8**88]

दव्वेण छ लेस्ताओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागाहवजुत्ता वा<sup>हर</sup> ।

कायजोगि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणड्ढाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिं-दियजादी, तसकाओ, ओरालिय-आहार-आहारमिस्सा इदि तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि' णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवासिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र्क्ष</sup>।

तेज, पद्म और शुक्क लेख्याएं; भध्यसिद्धिक, औपदामिक, क्षायिक और क्षायोपदामिक ये तीन सम्यवत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

काययोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आछाप कहने पर----एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त थे दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्झों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिककाययोग आहारककाययोग और आहारकामिश्रकाययोग इसप्रकार तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आहारककाययोग और आहारकामिश्रकाययोग इसप्रकार तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदेापस्थापना और परिदारयिद्युद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों ठेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और गुक्क ठेक्याएं; भव्यसिद्धिक, औपदामिक, झायिक और क्षायोपदामिक ये तीन सम्यवत्व, संज्ञिक आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

र प्रतिपु ' तिण्णि ' इति पाठः **।** 

नं २६५

काययोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

ग्र	ुजी,	, <b>ч</b> .	) त्रा	स	- <b>1</b> 7	<b>इ</b> .	का	यो.	् वे	. क.	হ্বা	. संय	्द.	ਲੇ.	. भ	, स.	संझि.	आ.	ਤ.	I
1		ંદ્	20.	-	-	2	ં ર	٤.	ં સ	. ¥	े <b>२</b>	<u>ر</u> ۶	্র	द्र, ६			१	2	ર	ĺ
<u>.</u>	д	· .			ात.	पच.	त्रस.	ुआ.	į,	i						औप	स.	आहा	साका.	
10	F				•+ •		i	i.	1	1	श्रुत. अव.		विनाः	્શુમ•		्क्षां क्षायो			¦ अना•	ĺ
	ļ	1	! 1		; · .	:		i	÷	!	:	I	:	! i		फ्साथ। ⊨	]			

#### નં. રદ્દદ્

# काययोगी प्रमत्तसंयत जीवांके आसाप.

1 गु	-	জী,	q.	স।.	सं.	ग.	<b>§</b> .		यो.	वे.	ेक.	হ্বা-	संय.	द,	े. स	. स.	संज्ञि	30.	ਰ.	1
1.5	4	. <b>R</b>	1	- •	u	٤	8	<u>ا</u>	<b>a</b>	३	8	8		, .	द्र. ६ १	24	2	2	ર	
Ē		स.प. स.अ	પ. 	৩		म.	_ 1	त्रस.	्र औ. १ आहा.र			कव. जिन्ह	सामा.	क.द. विना	भा ३ म.		स.	आहा.		! •
<b>[</b> ]	ľ		्र अ.			: 		{	आहा.२			11991) 	। छद्।. पत्ती	1999). 	_	क्षा क्षायो	1	[	अना.	
	İ	i				i i							1116	ļ		प्राप्त्राः 	ļ			

कायजोगि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>%</sup>।

अपुच्चयरणप्पहुडि जाव खीणकसाओ त्ति ताव कायजोगीणं मूलोघ-भंगो। गवरि ओरालियकायजोगो चेव सब्वत्थ वत्तव्वो।

कायजोगि-केवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो दो वा, छ पञ्जत्तीओ, चत्तारि पाण दो पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालिय-ओरालियमिस्स-कम्मइयकायजोगो इदि तिण्णि जोग, अवगदवेदो,

काययोगी अप्रमत्तसंयत जीवेंकि आरुंगि कहने पर-एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, आद्वारसंक्राके विना शेष तीन संक्रापं. मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार क्रान, सामायिक, छेदोपस्थ,पना और परिद्वारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छद्दों लेक्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेक्यापं, भव्यसिद्धिक; संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्धकरण गुणस्थानसे लेकर झीणकषाय गुणस्थानतक काययोगी जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान हैं । विशेष बात यह है कि काययोग आलाप कहते समय सर्वत्र केवल एक औदारिककाययोग ही कहना चाहिए ।

काययोगी केवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, अथवा समुद्धातकी अपेक्षा पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, ज्ञार प्राण और केवलिसमुद्धातकी अपर्याप्त भवस्थाकी अपेक्षा दो प्राण; क्षीणसंज्ञास्थान, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाय-

## નં. રદ્દ છ

# काययोगी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

 _ 2	जी- १	प. ६	সা १०	<u>सं.</u> २	ग. १	<u>इ</u> . २	`का.' ∣ १	ે શ	₹	i۲	8	ं ३	<u>द.</u> ३	द्र.६	2	হ	१	<u>आ</u> . र	ਤ. ਕ	
	 <b>й.</b> ч.			आहा.	म.	पचे ।	<del>.</del>	औं।					के द			औप.	सं.	आहा.'	साका.	
5	सं.प∙			विना.			3				श्रुत.	छेदे।.	विना.	જીમ.	İ	क्षा.	İ		अना.	
		i	1				! :			1	अंब.	परि-				क्षायो.				
			.			ļ			;	ļ .	मन.	1		 						

योग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवलज्ञान, यथाख्याताविद्वारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहौं लेक्याप, भावसे शुक्ललेक्या; भव्य-सिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित, आहारक, अनाहारक; साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

औदारिककाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर-आदिके तेरह गुणस्थान, पर्याप्तक जीवोंके सात पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, चार प्राण और चार प्राण; चारों संझापं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिककाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्स्याएं, भव्यसिद्धिक, अभध्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संझिक, असंझिक तथा संझी और असंझी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है;

ર્ન. ૨૬૮
----------

\_\_\_\_\_

काययोगी केवली जिनके आलाप.

<u>गु.</u>	র্জী,	प.	<u>त्रा.</u>	.सं.	्ग.	<u>₹.</u>	को.	<u>यो.</u>	वे.	<b>क.</b>	<u>ज्ञा</u> .	<u>संय</u>	द.	ले.	भ.	<u>सं.</u>	संहि.	<u>आ.</u>	<u>उ.</u>
१	শ	इ	४		१	1	१	३	०	०	१	१	१	द्र. ६	१	१	०	२	२
सयो.	प २ प.अ.		2	क्षींण सं.	म.	पंचे.		औ. २ कार्म.	अपग.	अकृषा.	के.	यथा,	के.द.	मा. १ ग्रुङ्ग.	भ	क्षा.	-	अना.	

अकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिगो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो. सागार-अणागारेहि जुगवदवजुत्ता वा होति<sup>%4</sup>।

पड्जत्तीओ पंच पड्जत्तीओ चत्तारि पड्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्रंपाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ

ओरालियकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्टाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ

छक्खंडागमे जीवद्वाणं

होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुमवदुवजुत्ता वा"ं।

ओरालियकायजोगि मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीव-समासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अड पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दघ्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवासिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सामास्त्रजुत्ता होंति अणागास्त्रजुत्ता वा<sup>'8°</sup>।

आहारक, साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

औदारिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवॉके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण और चार प्राण; चारों संझाएं, तिर्यंच और मनुष्य ये दो गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिक-काययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २६९

औदारिक काययोगी जीवोंके आलाप.

] गु ⊦	जी.	प.	সান	सं	ग -	S.	का	यो.	े वे.	क_	ज्ञा.	संय.	द,	ਲੇ,	म.	ਚ,	सं ।ज्ञि	. આ	उ.	l
१३	e,	ह	20	8	2	4	६ ।	8	- ३	8	6	6	` <b>۲</b>	द.६	ર	Ę	ંર	् १	ર	L
अयो.	पर्या.	ч.	<u> </u>	4	ति.			औ.	च	<u>-</u> '		ļ	!	मा ६	म.		सं.	आहा.	' साका -	ł
विना	1	8	6	Ē	म.		!		<u>अ</u> त्	अकष				:	अ.		अस		এলা,	ľ
	ļ	.	9	<u>'</u> क्र-		į				নি				:	!		અનુ.		यु. उ.	l
	]		<b>ξ γ</b>				i		i			1		:	. :		-	:	-	Į

#### नं, २७०

औदारिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

Į	गुः¦ जीः	। ব সা	सं.	ग ं	इ.   र	का. :	यो.	वे. '	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ळे.	ं स.	स.	संज्ञि	आ.	ਚ.	1
	وأنع	ह १०	r -	•	4	Ę	٤	3	8	٦.	٤	२	द्र. ६	<b>२</b>	रं	ર	2	ર	
Î	∙, पर्या	ષ ૬	1	ति.	1	:	ओं.			अज्ञा-	असं.	च क्षु.	भा ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
	i	8 6		म.								अच.	•	अ.		असं.		<b>अन</b> ाः	1
		e				ł		ĺ				i	l	i					L
		ાદ ૪		:	;	ļ		 . i							i				

ओरालियकायजोगि-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा अणामारुवजुत्ता वा<sup>\*01</sup>।

<sup>\*\*</sup>ओरालियकायजोगि-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि

औदारिककाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवेंकि आलाप कहने पर----एक सासादन गुणस्थान, एक संत्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तियंचगाति और मनुष्यगति ये दें। गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कथाय, तीनों अज्ञान, असंयमः आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेड्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

औदारिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादाष्टि जीवोंके आलाप कहने पर---पक सम्यग्मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, दद्यों प्राण, चारों संक्रापं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीर्नो वेद,

नं. २७१ औदारिककाययोगी सासादनसम्यग्टाष्टि जीवोंके आळाप.

<u>ग</u> ु. २ सा.	2	प. ६	ेत्रा १०		्र	\$	\$	\$ fre	<b>R</b> 1	٢.	ર	হ	ર	हे. द्र.इ. भा ६	2	2	र	२	उ. २ साका,	
	प.		:	i	म.	6	नस.				:		अच.				:		अना.	

# नं. २७२ औदारिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवींके आलाप.

सम्प. ~ हिंग	जी १ सं. प.	प. इ	प्रा. २०	8	2	म् । म	٩	यो. १ ओ.	वे. २	<u>क</u> ४	<b>झा</b> - २ झान. २	2	२	द. ६	१	स. संहि २ १ सम्य. सं.	2	उ. २ साका. अना.
}	ļ	Ì						-	:		अझा. मिश्र	}						<u> </u>

अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, देा दंसण, दच्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

ओरालियकायजोगि-असंजदसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ्य</sup>।

संजदासंजदप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ताव कायजोगि-भंगो। णवरि सव्वत्थ ओरालियकायजोगो एको चैव वत्तव्वो । सजोगिकेवली च पजत्ता आहारि ति भणिदव्वा ।

चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छद्दों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आद्दारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं।

औदारिककाययोगी असंयतसम्यग्दाधि जीवोंके आछाप कहने पर----एक अविरतसम्य-ग्दुष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेक्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

औदारिककाययोगी जीवोंके संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप काययोगी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। विरोष बात यह है कि सर्वत्र योग आलाप कहते समय एक औदारिककाययोग ही कहना चाहिए। और सयोगिकेवलीके जीवसमास कहते समय पर्याप्तक जीवसमास, तथा आहार आलाप कहते समय आहारक, इसप्रकार कहना चाहिए।

નં. ૨૭૨

# औदारिककाययोगी असंयतसम्यम्दष्टि जीवोंके आलाप.

$ \begin{array}{c ccccccccccccccccccccccccccccccccccc$		<u>ड.</u> २ राका. अनाः
--	--	---------------------------------

ओरालियमिस्सकायजोगीणं मण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणद्दाणाणि, सत्त जीव-समासा, साण्णि-असण्णीहिंतो सजोगिकेवली वदिरित्तो ति अदीदजीवसमासेण सजोगिणा होदच्वं ? ण, दव्वमणस्स अस्थित्तं भावगद-पुव्वगइं च अस्सिऊण तस्स सण्णित्तब्धुवगमादो। पुढवी-आउ-तेउ-वाउ-पत्तेय साहारणसरीर-तस-पञ्जत्तापज्जत्त-चोद्दस-जीवसमासाणं सत्त-अपज्जत्तजीवसमासेसु सजोगि-सत्तब्धुवगमादो वा । एसो अत्थो सव्वस्थ वत्तव्वो । छ अपज्जत्तजीवसमासेसु सजोगि-सत्तब्धुवगमादो वा । एसो अत्थो सव्वस्थ वत्तव्वो । छ अपज्जत्तजीवसमासेसु सजोगि-सत्तब्धुवगमादो वा । एसो अत्थो सव्वस्थ वत्तव्वो । छ अपज्जत्तजीवसमासेसु सजोगि-सत्तब्धुवगमादो वा । एसो अत्त्यो सव्वस्थ वत्तव्वो । छ अपज्जत्तजीवसमासेसु सजोगि-सत्तब्धुवगमादो वा । एसो अत्त्यो सव्त्वस्थ वत्तव्वो । छ अपज्जत्तजीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्त्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दोण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, ओरालियमिस्स-कायजोगो, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, विमंग-मणपज्जवणाणेहि विणा छ णाणाणि, जद्दाक्त्याद्धुद्धित्तिमो असंजमो चेदि दो संजम, चत्तारि दंसण, दच्वेण काउलेस्सा । कि कारणं ? मिच्छाइद्वि-सासण-असंजद-

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर-मिथ्याद्दष्टि, सासादनसम्यग्दष्टि, अविरतसम्यग्दष्टि और सयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा सात अपर्याप्त जीवसमास होते हैं।

र्शका—जव कि सयोगिकेवली जिनेन्द्र संबी और असंबी इन दोनों ही व्यपदेशोंसे रहित हैं, इसलिए सयोगी जिनको अतीत जीवसमासवाला होना चाहिए?

समाधान — नहीं; क्योंकि, इच्यमनके अस्तित्व और भावमनोगत पूर्वगति अर्थात् भूतपूर्व न्यायके आश्रयसे सयोगिकेवलीके संझीपना माना गया है। अथवा, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, प्रत्येकदारीरवनस्पतिकायिक, साधारणदारीर-वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्तसंबन्धी चौदह जीवसमासोंमेंसे सात अपर्याप्त जीवसमासोंमें कपाट, प्रतर और लेकपूरणसमुद्धातगत सयोगिकेवलीका सत्त्व माना जानेसे उन्हें अतीत जीवसमासवाला नहीं कहा जा सकता है। यही अर्थ सर्वत्न कहना चाहिए।

जीवसमास आलापके आगे छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण और सयोगिकेवलीके कपाटसमुद्धातके कालमें दो प्राण होते हैं। चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, तिर्यंच-गति और मनुष्यगति ये दो गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। विभंगावाधि और मनःपर्यय झानके विना शेष छह झान, यथाख्यात-विद्दारह्यदिसंयम और असंयम ये दो संयम, चारों दर्शन और द्रव्यसे कापोतलेहरया होती है।

र्श्वका---द्रब्यसे एक कापोतलेझ्या ही होनेका क्या कारण है ?

[ १, १.

## छ**न्खंडा**गमे जीवहाणं

**Ę48**]

सम्माइद्वीणं ओरालियमिस्सकायजोगे वद्वंताणं सरीरस्स काउलेस्सा चेव हवदि; छव्वण्णोरा-लियपरमाणूणं धवल-विस्ससोपचथ सहिद-छव्वण्णकम्मपरमाणूहि सह मिलिदाणं कावोद-वण्णुप्वत्तीदो | कवाडगद-सजोगिकेवलिस्स वि सरीरस्त काउलेस्सा चेव हवदि | एत्थ वि कारणं पुच्वं व वत्तच्वं | सजोगिकेवलिस्स पुव्विल्ल-सरीरं छव्वण्णं जदि वि हवदि तो वि तण्ण धेप्पदि; कवाडगद-केवलिस्स अपज्जत्तजोगे वट्टमाणस्त्र पुव्विल्ल-सरीरेण सह संबंधाभावादो | अहवा पुव्विल्ल-छव्वण्ण-सरीरमस्तिऊण उवयारेण दव्वदो सजोगि-केवलिस्स छ लेस्साओ हवंति | | मावेण छ लेस्साओ | किं कारणं ? मिच्छाइद्वि-सासण-सम्माइद्वीणं ओरालियमिस्सकायजोगे वट्टमाणाणं किण्ह-णील-काउलेस्सा चेव हवंति, कवाडगद-सजोगिकेवलिस्स सुक्कलेस्सा चेव भवदि, किंतु देव-णेरइयसम्माइद्वीणं मणुसगदीए उप्पण्णाणं ओरालियमिस्सकायजोगे वट्टमाणाणं अविगट्ट-पुव्विल्ल-भाव-लेस्साणं मावेण छ लेस्साओ लब्भंति त्ति | भवसिद्विया अभवसिद्विया, उवसमसम्मत्त-

कपाटसमुद्धातगत सयोगिकेवलीके दारीरकी भी कापोतलेक्या ही होती है। यहां पर भी पूर्वके समान ही कारण कहना चाहिए। यद्यपि सयोगिकेवलीके पहलेका दारीर छहों वर्णींवाला होता है, तथापि वह यहां नहीं प्रहण किया गया हैः क्योंकि अपर्याप्तयोगमें वर्तमान कपाट-समुद्धात-गत सयोगिकेवलीका पहलेके दारीरके साथ सम्बन्ध नहीं रहता है। अथवा, पहलेके षड्वर्णचाले दारीरका आश्रय लेकर उपचारसे द्रव्यकी अपेक्षा सयोगिकेवलीके छहों लेक्याएं होती हैं।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंके भावसे छहाँ लेक्याएँ होती हैं।

रांका - औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके भावसे छहाँ छेक्याएं होनेका क्या कारण है?

समाधान औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके भावसे रूष्ण, नील और कापोतलेश्याएं ही होती हैं । और कपाटसमुद्धातगत औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके एक शुक्ललेश्या ही होती है । किन्तु जो देव और नारकी मनुष्यगतिमें उत्पन्न हुए हैं, औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान हैं और जिनकी पूर्वभव-सम्बन्धी भावलेश्याएं अभीतक नष्ट नहीं हुई हैं, पेसे जीवोंके भावसे छहों लेश्याएं पाई जातीं हैं, इसलिए औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके छहों लेश्याएं कहीं गई हैं ।

लेइया आलापके आगे भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः उपदामसम्यक्तव और सम्य-

8, 2.]

सम्मामिच्छत्तेहि विणा चत्तारि सम्मत्ताणि, सण्गिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup> ।

"ओरालियमिस्सकायजोगि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, ओरालियमिस्सकायजोगो, तिण्गि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउलेस्सा,

गिण्यात्वका विगा राव यार सम्पन्तव, सारान, असारान तथा संका जार असता रन दाना विकल्पोंसे राईत भी स्थान है। आहारक, साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

औदारिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, तिर्थंचगति और मनुष्यगति ये दे। गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचें। जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों बेद, चारों कपाय, आदिके दे। अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रब्यसे कापोतलेड्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्य-

नंः २७४

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप.

<u>.</u> यु.]	जी।	Ч.	সা.	सं .		τ.	តរ.	यो.	वे.	क.	् ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	. स.	संज्ञि.	<b>आ</b> .	उ.
8	9	<b>६</b> अ.	છ	8	२	الرا	ξ	શ	३	8	६	; २	8	द्र. १	२	X	ર	2	२
मि.	अप-	۰ <b>۲</b> , ,,	وي	. <del>.</del>	ति			ओं मि	<b>.</b> :		विभं.	असं •	ĺ	का.	स.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा,		۷.,	६	E	म	ļ			अपग	<u>श्</u> रक्ष	मनः	यथा.		म।.€	अ.	सा.	असं.	-	अना.
अ.			ષ	־		. !				13	विना-		l			क्षा	अनु.		
स.			8										1			क्षायो.			
			३ २	ļ						į									

औदारिकामिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

<u>J</u> .	जी.	प	,त्रा.	. सं	ग.	ई.	का-	यो.	वे.	क.	হা-	संय.	<u>द</u>	हे.	<b></b> .	स	संझि.	আ,	ੁਤ.
2	ون	६ अ.	9	8	ર	ય	<b>६</b>	\$		8	२	\$	<b>` R</b>	द्र. १			২	१	2
मि.	अप.	પઝ.	9		ति		!	औ मि.			कुम.	असंग	चक्षु	का.	स.	मि.	सं.	आहा.	साका
		४अ	ह		म.		: ] ·			ļ	कुश्रु.		अच	मा₊३	ञ.	Į	असं.		अना-
			4	.			1	:		[				अગ্ર.	ļ	f ,	ĺ		,
1			X				1		ļ			]				1			
			ì۹					:		ļ		:							
						)				6	t i					Í	ļ	:	

छक्खंडागमे जीवडाणं

भावेण किण्ह-फील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

ओरालियमिस्सकायजोगि-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिं-दियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुत्रज्जत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>रू</sup>।

ओरालियमिस्सकायजोगि-असंजदसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिं-दियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगो, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, जहा देव-मिच्छाइहि-

सिद्धिकः मिथ्यात्व, संश्विक, असंश्विकः आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्टाष्टे जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमासः छहों अपर्याप्तियांः सात प्राणः चारों संझाएं, तिर्यंचगाति और मनुष्यगाति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, मावसे रूष्ण, नील और कापोतलेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

औदारिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्हाष्टि जीवेंकि आलाप कहने पर---अविरतसम्य-ग्दष्टि गुणस्थान; एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहौं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेक्ष्या और भावसे छहों लेक्ष्यापं होती हैं। यहां पर भावसे छहों लेक्ष्या-

નં. ૨૭૬

## औदारिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके आळाप.

गु, जी प, प्रा, सं, ग, इ.) का, यो, वि, व. ज्ञा, संय, द. ले. म, स. संहि, आ, ਤ. 2 2 8 E 9 8 2 8 2 < <u>द</u>. २:२ १ १ 8 8 ર **१** १ 8 २ ति. हे त्रस औ.मि. कुम. असे चक्क, का. भ सासा सं. आहा. साका. સા. તં. અ. અ. म. अच-मा-३ ਭੂ ਲੂ অনা, अগ্ন.

६५६ ]

सासणसम्मादिद्विणो तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सासु वद्टमाणा णष्ट-लेस्सा होऊण तिरिक्ख-मणुस्सेसुप्पज्जमाणा उप्पण्ण-पढम-समए चेव किण्ह-णील-काउलेस्साहि सह परिणमंति सम्माइद्विणो तहा ण परिणमंति, अंतोमुहुत्तं पुव्विल्ल-लेस्साहि सह अच्छिय अण्णलेस्सं गच्छंति । किं कारणं १ सम्माइद्वीणं बुद्धि-द्विय-परमेद्वीणं मिच्छाइद्वीणं मरणकाले संकिलेसाभावादो । णेरइय-सम्माइद्विणो पुण चिराण-लेस्साहि सह मणुस्सेसुप्पज्जंति ।

ओंके होनेका कारण यह है कि जिसप्रकार तेज, पद्म और शुक्क लेश्याओंमें वर्तमान मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि देव तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होते समय नष्टलेश्या होकरके अर्थात् अपनी अपनी पूर्व शुभ लेश्याओंको छोड़कर (तिर्यंच और मनुष्योंमें) उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही रूष्ण, नील और कापोत लेश्यारूपसे परिणत हो जाते हैं, उसप्रकारसे सम्यग्दृष्टि देव अशुभ लेश्यारूपसे नहीं परिणत होते हैं. किन्तु तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेके प्रथमसमयसे लगाकर अन्तर्मुहूर्ततक पूर्व भवकी लेश्याओंके साथ रह कर पीछे अन्य लेश्याओंको प्राप्त होते हैं, अतएव यहांपर छहों लेश्याएं बन जाती हैं।

शंका---तियंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले सम्यग्टाष्ट देव अन्तर्मुहूर्ततक अपनी पहली लेक्याओंको नहीं छोड़ते हैं, इसका क्या कारण है ?

समाधान—इसका कारण यह है कि बुद्धिमें स्थित है परमेष्ठी जिनके अर्थात् परमेष्ठीके स्वरूप चिन्तवनमें जिनकी बुद्धि लगी हुई है ऐसे सम्यग्दष्टि देवोंके मरणकालमें मिथ्यादप्टि देवोंके समान संक्लेश नहीं पाया जाता है; इसलिये अपर्याप्तकालमें उनकी पहलेकी शुभ-लेक्यापं ज्योंकी त्यों बनीं रहतीं हैं।

विशेषार्थ — ' सम्माइईाणं तुद्धि हिय परमेट्रांणं मिच्छाइट्रांणं मरणकाले संकिलेसा भावादो ' इस वाक्यके दो अर्थ संभव हैं। एक तो यह कि मरणके समय मिथ्यादृष्टियोंको जिसमकार संक्लेश होता है उसन्नकार जिनकी बुद्धिमें परमेष्ठी स्थित हैं पेसे सम्यदृष्टि देवोंको मरणके समय संक्लेश नहीं होता है। तथा दूसरा अर्थ इसन्नकारसे होता है कि सम्यदृष्टि देवोंको मरणके समय संक्लेश नहीं होता है। तथा दूसरा अर्थ इसन्नकारसे होता है कि सम्यदृष्टि देवोंको मरणके समय संक्लेश नहीं होता है। तथा दूसरा अर्थ इसन्नकारसे होता है कि सम्यदृष्टि देवोंके और जिनकी बुद्धिमें परमेष्ठी स्थित हैं पेसे मिथ्यादृष्टि देवोंके मरणके समय संक्लेश नहीं पाया जाता है। प्रथम अर्थ करते समय ' मिच्छाइईाणं ' पदके आगे ' इव ' पदकी अपेक्षा है और दूसरा अर्थ करते समय ' च ' पदकी। परंतु ' मिच्छाइईाणं ' इस पदके आगे इन दोनों पदोंमेंसे कोई भी पद नहीं पाया जाता है और प्रकरणको देखते हुए पहला अर्थ संगत प्रतीत होता है, इसलिये ऊपर अर्थमें पहले अर्थका ही प्रहण किया है।

किन्तु नारकी सम्थग्डांधे तो अपनी पुरानी चिरंतन छेइयाओंके साथ ही मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं। 8461

कारणं, जादिविसेसेण संकिलेसाहियादो। भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रण</sup>।

ओरालियमिस्सकायजोगि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्राणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, आयु-कालबलपाणा दो चेव होंति, पंचिंदियपाणा णत्थि; खीणावरणे खओवसमाभावादो खओवसम लक्खण-भाविदियाभावादो । ण च दव्विदिएण इह पओजणमत्थि, अपज्जत्तकाले पंचिंदियपाणाणमत्थित्त-पदप्पायण-संतसूत्तै-दंसणादो । मण-वचि-उस्सासपाणा वि तत्थ णत्थि, मण-वचि-उस्सासपज्जत्ती-सण्णिद-पोग्गलखंध-

र्शका- नारकी सम्यग्दधि जीव मरते समय अपनी पुरानी कृष्णादि अशुभ लेश्याओंको क्यों नहीं छोड़ते हैं?

समाधान-- इसका कारण यह है कि नारकी जीवोंके जातिविशेषसे ही अर्थात स्वभा-वत संक्रेशकी अधिकता होती है. इसकारण मरणकालमें भी वे उन्हें नहीं छोड़ सकते हैं।

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक. औपशामिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवळी जिनके आछाप कहने पर---एक सयोगिकेवळी गुणस्थान, एक अपर्याप्तक जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, आयु और कायबल ये दो प्राण होते हैं। किन्त पांच इन्ट्रिय प्राण नहीं होते हैं, क्योंकि, जिनके झानावरणादि कर्म नष्ट हो गये हैं ऐसे सीणावरण सयोगिकेवलीमें आवरण कर्मोंका क्षयोपशम नहीं पाया जाता है, और इसलिये उनके क्षयोपशम लक्षण भावेन्द्रियां भी नहीं पाई जाती हैं। तथा इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंसे प्रयोजन है नहीं; क्योंकि, अपर्याप्तकालमें पांचों इन्द्रिय प्राणोंके आस्ति-त्यका प्रतिपादन करनेवाला सत्प्ररूपणाका सूत्र देखा जाता है। मनोबलप्राण, वचनबलप्राण, और स्वासोच्छवासप्राण भी औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके नहीं होते हैं; क्योंकि, मनः पर्याप्ति, वचन पर्याप्ति और आनापान पर्याप्ति संत्रिक पौट्टलिक स्कंन्धोंसे निर्मित

१ सं. सू. ३७, ६१, ७६.

#### औदारिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्द्राष्ट्र जीवांके आलाप नं. २७७

[गु. जी. प. प्रा.	सं. ग,	इ. का. यो	वे क	ज्ञा.ंसंय <b>ंद</b>	ੁੱਲੇ. ਂ ਮ	स. संशि.	ंआ ⊷ ड. [
2 2 2 9	४२	१ २ १	. १४		द. १ : १		१ २
अवि. सं. अ. 🔄 अ.	ीत, त	में सि सि	म	ति. असं के.द	্কা ম		. 1
:	મ. ા	JT   10*		त विना व	ं भा. ६	क्षायोः	अना.
	. i .		, v	M • .			1

· •,

र, १- ]

णिव्वत्तिद-सपाणसण्णा-संजुत्तसत्तीणं कवाडगद-केवलिम्हि अभावादो । अहवा तेसिं कारणभूद-पज्जत्तीओ अत्थित्ति पुणे। उवरिम-छट्ठसमयप्पहुर्डिं वचि-उस्सासपाणाणं समणा भवदि चत्तारि वि पाणा हवंति । खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

स्वप्राण संबाओंसे अर्थात् मन, वचन और इवासोच्छ्वास प्राणोंसे संयुक्त शक्तियोंका कपाट समुद्धात-गत केवलीमें अभाव पाया जाता है। अथवा, समुद्धातगत-केवलीके वचनवल और श्वासोच्छ्वास प्राणोंकी कारणभूत वचन और आनापान पर्याप्तियां पाई जाती हैं, इसलिये लोकपूरणसमुद्धातके अनन्तर होनेवाले प्रतरसमुद्धातके पश्चात् उपरिम छठे समयसे लेकर आगे वचनबल और श्वासोच्छ्वास प्राणोंका सद्भाव हो जाता है, इसलिये सयोगिकेवलीके आहारमिश्रकाययोगमें चार प्राण भी होते हैं।

विशेषार्थ — समुद्धातगत केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें आयु और काय ये दो प्राण होते हैं शेष आठ प्राण नहीं होते हैं। उनमेंसे पांचों इन्द्रिय प्राण तो इसलिये नहीं होते हैं कि उनके ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपराम नहीं पाया जाता है। कदाचित यह कहा जा सकता है कि केवळीके पांचों दुव्येन्द्रियां पाई जाती हैं इसलिये दुव्येन्द्रियोंकी अपेक्षा उनके पांच प्राण मान लेना चाहिये। परंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका उपचारसे ही ग्रहण किया है, मुख्यतासे नहीं। यदि इन्द्रिय प्राणोंमें दुव्येन्द्रियोंका मुख्यतासे ग्रहण करना स्वीकार किया जावे ते। अपर्याप्तकालमें पांच इन्द्रिय प्राणोंका सद्भाव नहीं बन सकता है। परंतु अपर्याप्तकालमें पांचों इन्द्रियप्राण होते हैं ऐसा आगमवचन है, इसलिये यह सिद्ध हुआ कि इन्द्रिय प्राणोंमें मुख्यतासे पांच भावेन्द्रियोंका ही ग्रहण किया गया है और वे भावेन्द्रियां केवलीके होती नहीं है, इसलिये उनके पांचों इन्द्रिय प्राण नहीं होते हैं। उसीप्रकार केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें मनोबल, वचनबल और इवासोच्छवास ये तीन प्राण भी नहीं होते हैं, क्योंकि, इन तीनों प्राणोंकी कारणभूत मन, वचन और आनापान ये तीन पर्याण्तियां है। परंत अपर्याप्त अवस्थामें ये तीनों पर्याण्तियां होती नहीं हैं, इसलिये पर्याप्तियोंके अभावमें उनके उक्त तीनों प्राण भी नहीं पाये जाते हैं। इसप्रकार इन आठ प्राणोंके अतिरिक्त केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें होष दो प्राण पाये जाते हैं। अथवा, केवलीके विद्यमान शरीरकी अपेक्षा प्रवोक्त प्राणोंकी कारणभूत पर्याण्तियां रहती ही हैं, इसलिये छठे समयसे वचनबल और इवासोच्छ्वास ये दो प्राण और माने जा सकते है। इसप्रकार पूर्वोक्त दोनों प्राणोंमें इन दोनों प्राणोंके मिला देने पर केवलीके औदारिकमिश्रकाययोगमें चार प्राण भी कहे जा सकते हैं। मनःपर्याप्तिके रहने पर भी केवळीके मनःप्राण नहीं माना है, इसका कारण यह है कि मनःप्राणमें आवमन और मनःपर्याप्ति ये दोनों कारण हैं, इस-लिये इनमेंसे जहां केवल एक कारण होता है वहां मनःप्राण नहीं कहा गया है। केवलीके भावमन नहीं पाया जाता है, इसलिये मनःपर्याप्तिके रहने पर भी मनःप्राण नहीं कहा गया है और रोष संझी जीवोंके अपर्याप्त अवस्थामें भावमनका अस्तित्व होते हुए भी मनःपर्याप्ति ओरालियमिस्सयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धि-संजमो, केवलदंसणं, दच्वेण काउलेस्सा, मूलसरीरस्स छ लेस्साओ संति ताओ किण्ण उच्चंति त्ति भणिदे ण, चोद्दस-रज्जु-आयामेण सत्त-रज्जु-वित्थारेण एक-रज्जुमादि कादूण बङ्घिद-वित्थारेण बारिद-जीव पदेसाणं पुच्वसरीरेण संखेज्जंगुलोगाहणेण संबंधाभावादो । भावे वा जीवपदेस-परिमाणं सरीरं होज । ण च एवं, वंधहरस्स' सरीरस्स तेत्तियमेत्तद्धाण-पसरण-सत्ति-अभावादो, ओरालियमिस्सकायजोगण्णहाणुववत्तीदो वा। ण चिराण-सरीरेण कवाडगद-केवलिस्स संबंधो अत्थि । भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव नहीं पाई जाती है, इसलिये मनःप्राण नहीं माना गया है ।

प्राण आलापके आगे क्षीणसंह्रास्थान, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदा-रिकमिश्रकाययोग, अपगतवेदस्थान, अक्तषायस्थान, केवल्ह्यान, यथाख्यातविद्वारशुद्धिसंयम, केवल्दर्शन, और द्रव्यसे कापोत लेक्या होती है।

र्शका — सयोगिकेवलीके मूलदारीरकी तो छहों लेदयाएं होती हैं, फिर उन्हें यहां क्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान — नहीं, क्योंकि, कपार्टसमुद्धातके समय चौदह राजु आयाम ( लम्बाई ) से और सात राजु विस्तारसे अथवा चौदह राजु आयामसे और एक राजुको आदि लेकर बढ़े हुए विस्तारसे व्याप्त जीवके प्रदेशोंका संख्यात अंगुलकी अवगाहनावाले पूर्व शरीरके साथ संबन्ध नहीं हो सकता है। यदि संबन्ध माना जायगा, तो जीवके प्रदेशोंके परिमाणवाला ही औदारिक शरीरको होना पड़ेगा। किन्तु ऐसा हो नहीं सकता; क्योंकि, विशिप्ट बंधको धारण करनेवाले शरीरके पूर्वोक्त प्रमाणरूपसे पसरने (फैलने) की शक्तिता अभाव है। अथवा, यदि मूलशरीरके कपाटसमुद्धात प्रमाण प्रसरणशक्ति मानी जाय तो फिर उनकी औदारिकमिश्रकाययोगता नहीं बन सकती है। तथा कपाटलमुद्धातगत केवलीका पुराने मूलशरीरके साथ संबन्ध है नहीं, अत्तपव यही निष्कर्ष निकलता है कि सयोगिकेवलीके मूलशरीरकी छहों लेश्याएं होनेपर भी कपाटसमुद्धातके समय उनका ग्रहण नहीं किया जा सकता है। किन्तु औदारिकमिश्रकाययोग होनेके कारण एक कापोतलेश्वया ही कही गई है।

विग्नेषार्थ-पूर्वाभिमुख केवलीके समुद्धात करने पर कपाटसमुद्धातमें जीवके प्रदेश उत्पर और नीचे चौदद्द राजुप्रमाण होते हैं और उत्तर दक्षिण सात राजु फैल जाते हैं। तथा उत्तराभिमुख केवलीके कपाटसमुद्धातके समय ऊपर और नीचे चौदद्द राजुप्रमाण होते है और पूर्व पश्चिम एक राजुको आदि लेकर बड़े हुए विस्तारके अनुसार फैल जाते हैं, परंतु मूलज्ञारीर संख्यात अंगुलकी अवगाद्दना प्रमाण ही होता है, इसलिये मूलज्ञारीरक्त लेक्या औदारिकमिश्रकाययोगमें नहीं ली जा सकती है। किन्तु उस समय जो नोकर्मवर्गणाएं आती है उन्हींकी लेक्या ली जायगी। अतः केवलीके औदारिकमिश्रकाययोगकी अवस्थामें द्रव्यसे कापोतलेक्या कही है।

१ प्रतिष्ठ ' ए बंधहरस्स ' इति पाठः ।

### संत-पत्कवणाणुयोगहारे जोग-आलाववण्णणं

सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो,सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा<sup>321</sup>।

वेडच्वियकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी देवगदि त्ति दो गदीओ, पंचिं-दियजादी, तसकाओ, वेडव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ ठेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>314</sup> ।

द्रव्यलेश्या आलापके आगे भावसे शुक्ललेश्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, आहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

वैकिथिककाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगाते ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक; अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनःकारोपयोगी होते हैं।

#### ર્વ. ૨૭૮

१. १. ]

# औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवळीके आछाप.

	गु. ¦जी,	( प.)	ЯТ.	े सं.	्ग.	इ.	्का.	्यो.	वे.	क.	<b>ज्ञा</b> •	[ संय	द.	ਲੇ,	भ	सं.	संझि.	) आ.	े उ.
į	9 9	Ę	२.	0	1	٩	1 4	1	0	0	9	٩	3	द. १	٩	٩	0	9	२
ĺ	सयोः अप.	अ	÷	ंच	म.		H.	ओ मि	i 📑	<u>-</u>	केव	यथा,	के द	<b>ቆ</b> ፤	ं स.	क्षा	अनु.	आहा.	साका.
ł	•		भव	Ъ	ļ	Б	3	ओ.मि. '	24			ĺ		द. १ का. मा. १		[	i ]		अना.
ł	,		র ১	<del>ري</del> .				1		ন্ত		ļ		যুষ্ণ-			¦ .		
1	j –	) i	8			)		 		t		<b>,</b> ,		Į	ļį		1		

#### નં. ૨૭૧

# वैकिथिककाययोगी जीवोंके सामान्य आछाप.

<u>.</u>	জী.	ष.	आ.	.स	ग-	े इ	का.	योग	à.	क.	्रज्ञा.	. संय.	द.	ਲੇ	स,	स.	<b>सं</b> ।ज्ञि	- জা-	े उ. ।
X	2	Ę	20				21	2	₹	8	६	१		द्र. ६		Ę	۶.	र	२
मि.	÷		i I		न	व	नुस	व.	i i		ज्ञान-३ अझा.३		क.द. विना		भ अ.		<b>सं</b> .	आहा.	साका.
सा. सम्य.	ੱਸ'				194. • 	1.00			:   		- जन्म 	:   1	րու				1	: i	अना.
अवि				:		I	ÌÌ	i		) {	ĺ					ſ	ļ	1	ļ
		}	l i		İ	i				.		i	i i						
	Į			ļ	[	ι				1				l ;			l		1

For Private & Personal Use Only

छक्खंडागमे जीवडाण

वेउच्वियकायजोगि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउच्वियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>14</sup> ।

"वेउच्वियकायजोगि-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी,

वैक्रियिककाययोगी मिथ्यादाप्टे जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादाप्टे गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशौँ प्राण, चारों संझाएं, नरकगति और देवगाति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दें। दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेझ्याएं, मब्यसिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

चैक्रियिककाययोगी सासादनसम्यग्दप्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संबापं, नरकगाति और देवगाति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनौ

नं. २८० वैकियिककाययोगी मिथ्यादाप्टे जीवोंके आलाप.

						·									র. আ. ড.
			•	-					-	-	1 7				१ २
¶₽	। सं	प-	:			-		. तस	्व.						आहाः साका.
		ļ	ļ			दे.	1	1				अ <b>च</b> . '	अ		अना.
			i			i		i	1			1	:	1 1	
			1			1	1	!	:		1	: .			
L					1	·			-					. :	

नं. २८१ वैकियिककाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवेंकि आलाप.

<u>। य</u> १	. जी. १	<u>प</u> इ	¦प्रा.  १०	सं.   ४	<u>ग.</u> २	रू. २	्का. ∣ र	<u>यो</u> . १	वे. ३	क   ४	का. ३	संय. १	<u>द</u> . २	हे. इ. इ	<u>भ</u> , र	स.   १	संझि. १	<u>अ</u> ।. १	<u>उ</u> . २
सा	.{संप		ł	ļ	न.	पंचे.	त्रस.	वे.		I	अज्ञा.	अस .	चक्षु.	भा. ६	भ.	सा.	सं.	आहा.	साका.
	1				द.				ļ	ļ			) अच-						अना.

# १, १. ] संत-परूवणाणुयोगदारे जोग-आलाववण्णणं [६६३

तसकाओ, वेउच्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

वेउव्वियकायजोगि-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा, भवासिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>14</sup>।

वेउव्वियकायजोगि-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउच्वियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो,

वेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावले छहीं लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आह्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैक्रियिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादाधि जीवोंके आठाप कहने पर-एक सम्यग्मिथ्या-हाधि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों बेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके देा दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेक्याएं, भन्यासिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं

वैक्रियिककाययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवींके आळाप कहने पर—एक अविरतसम्य-ग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनेंा बेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भाषसे छहों

# गं. २८२ वैक्रियिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवींके आलाप.

IJ	. 1	<b>א</b>	प	់ភ	।.¦ सं	्य	. <b>.</b>	का	यो •	े वे.	क.	- <b>F</b> I.	संय.	्र.	ਲੇ.	ंस,	्स	संगि.	্ঞা.	ड.
	<b>۲</b> (	2	Ę	Ì۶	0 X 10	िर	\$	8	१	2	8	' ३	۶	२	द्र, ६	1	۶	2	1	ર
	-	÷		I.	I.	न.	Ι.	÷.	वे.	:	i	অল্পা.	अस	चक्षु.	भा. ६	भ ।	<b>स</b> म्य •	. सं.	'आहा.	साका ।
		÷.	 ;	1	i	đ,	리)	1			}	र	ļ	अच.		ì		!	i i	অনা,
	4				1	1	1			İ		. शान.	i	ļ				: I	ļ	
	ľ		i I			i		-		1	 	मिश्र.		1		Ì			j l	

तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>823</sup>।

वेउच्त्रियमिस्सकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एगो जीव-समासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गर्दीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउच्त्रियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्त्रेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>668</sup>।

लेरयापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यवत्व, संंड्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैकिथिकमिश्रकाययोगी जीवोंके सामान्य आछाप कहने पर—मिथ्यादाष्ट, सासादन-सम्यग्दाष्टि, और अविरतसम्यग्दाप्टि ये तीन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, वैकिथिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिज्ञानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और आनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २८३

# वैक्रियिककाययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आछाप.

1	जो. २ सं. प.		१० ४	ર		্	३	<u>'</u> צ'	३	१ असं.	द्र. ६ भा. ६	१ भ.अ ।	<b>3</b>	 आ. १ आहा.	<u>उ.</u> २ साका. अना.
		1	-	l į	:					;			:		

#### ने. २८४

# वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप.

] गु.	) जी.	<b>q</b> .	<b>त्रा.</b>	स.	ग.	इ	का.	यो.	वे.	क.	ন্থা.	. संय	्द.	. ले	्म.	. स.	संज्ञि.	) आ.	उ
1	2	Ę	9	8	<b>२</b>	۶		<b>?</b>							٩	4	۶ س	2	2
सा.	<b>सं.अ</b>	ઝ.		:	न. दे	4.	ੂ ਸ	त्रै∙मि. <sub>'</sub>	:	: i	ઝુમ. कु×ુ.			का. भा. ६				आहा.	लाका अना.
अवि.			;			1	! .				मति.		:			ઝૌ.∣			
			!	ļ		i		;			श्रुत. अव•	j			ļ	क्षा. क्षायो.			

६६४ ]

१, १.]

वेउन्त्रियमिस्सकायजोगि-मिच्छाइद्वीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउन्त्रियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दन्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आद्दारिणो, सागास्त्रजुत्ता होंति अणागास्त्रजुत्ता वा<sup>348</sup>।

<sup>\*\*</sup>वेउव्वियमिस्सकायजोगि-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासेा, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी', पंचिंदियजादी,

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादप्टि जीवोंके आळाप कहने पर—एक मिथ्यादप्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अञ्चान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रब्यसे कापोत-लेक्या, भावसे छहों लेक्याएं; भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्टप्टि जीवोंके आछाप कहने पर-पक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगति,

१ ण सासणो णारयापुण्णे । गी. जी. १२८.

न. २८५ वैक्रियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आळाप

यु जी	। प. मा	सं	ग इ	ं का.	यो	वैग	ंक.	ज्ञा.	संय	ु द.	ਰੇ.	म.	स.	संज्ञि.	জ্য.	ड.	Ŀ
११ मि.सं अ			२ र 		30	३	8	२ ——	۶	े <b>२</b>	द १	2	<u>, </u>	<u>و</u>	: <b>?</b>	ર	ļ
14. 4.9	ા ગા		. प. हे.	ગત.	ેવ.[સ.	•		ુક્રમ કુરુશ્વર	ુ અસા-	্যাঞ্জু. এখন	का. सा. ६	सः	ाम.	स.	आहा.	साका. अना	
	I	1		i				3.3.	:	ંગગ	¶(• ₹	ΨĮ.				অশান	
	i ,		i		1	ŀ	i	i	i		:		]				

# नं. २८६ वैकिथिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दप्ति जीवोंके आलाप.

<u>गु</u>जी, प.प्रा. सं. ग. इं. का. यो. वे.क. झा. संय. द. ले. भ. स. संझि. आ. उ. २ १ ६ ७ ४ १ १ १ १ २ ४ २ १ २ इ.१ १ १ १ २ २ सा. सं. अ. अ. दे. प. त्रस. वे.मि. स्ती कुम. असं. चक्षु, का. भ. सा. सं. आहा. साका. पु. कुश्रु. अच. भा.६ अच. भा.६ तसकाओ, बेउच्चियमिस्सकायजोगो, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दुच्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो. सागारुवजत्ता होति अणागारुवजत्ता वा ।

वेउच्चियमिस्सकायजोगि-असंजदसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, वे गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, वेअच्चियमिस्सकायजोगो, पुरिस-णचुंसयवेदा त्ति दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>४८९</sup>।

पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेक्या, भावसे छहों लेक्याएं; भन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैकियिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दाष्टि जीवोंके आछाप कहने पर---एक आविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संद्वापं, नरकगति और देवगति ये दें। गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग, पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत छेदया, भावसे जघन्य कापोत छेदया और तेज, पद्म तथा शुरू छेद्रयापं; भब्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; संक्षिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

# नं. २८७ वैक्रियिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप.

सं.अ. अ. न. पंचे. वे.मि. पु. मति. असं. के.द का. म. औप. क्र	.   सांझे आ .   १   १	उ. २
1.75 (. "' 4' 2011, 1971, 11 0 91.		साका. अना
अन- का.ते. क्षायो. प.ग्र-	- I I	

आहारकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, आहार-कायजोगो, पुरिसवेदो, इत्थि-णउंसयवेदा णत्थि । किं कारणं ? अप्पसत्थवेदेहि सहा-हारिद्धी ण उप्पज्जदि त्ति । चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, मणपज्जवणाणं णत्थि । कारणं, आहार-मणपज्जवणाण्वाणं सहाणवट्ठाणलक्खणविरोहादो । दो संजम, परिहारसुद्धिसंजमो णत्थि; एदेण वि सह आहारसरीरस्स विरोहादो । तिण्णि दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, उवसमसम्मत्तं णत्थि; एदेण वि सह विरोधादो' । सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup> ।

आहारककाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर--एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोग, एक पुरुषवेद होता है तथा स्त्री और नपुंसकवेद नहीं होते हैं।

र्शका— आहारककाययोगी जीवोंके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके नहीं होनेका क्या कारण है ?

समाधान — क्योंकि, अप्रशस्त वेदोंके साथ आहारकऋादि नहीं उत्पन्न होती है ।

वेद आलापके आगे चारों कषाय, आदिके तीन झान होते हैं। मनःपर्ययझानके नहीं होनेका यह कारण है कि आहारकऋदि और मनःपर्ययझानका सहानवस्थानलक्षण विरोध है अर्थात् ये दोनों एक साथ एक जीवमें नहीं रहते हैं। झान आलापके आगे सामायिक और छेवोपस्थापना ये दो संयम होते हैं परंतु परिद्वारविद्युद्धिसंयम नहीं होता है। क्योंकि, इसके साथ भी आहारकशारीरका विरोध है। संयम आलापके आगे आदिके तीनों दर्शन, द्रव्यसे शुक्ललेक्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्यापंः भव्यसिद्धिक, झायिक और झायोपशामिक ये दो सम्यक्त्व होते हैं, परंतु उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है। क्योंकि, इसके साथ भी आहारकशरीरका विरोध है। सम्यक्त्व आलापके आगे आदिके तीनों दर्शन, झायोपशामिक ये दो सम्यक्त्व होते हैं, परंतु उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है। क्योंकि, इसके साथ भी आहारकशरीरका विरोध है। सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ मणपज्जवपरिहारो पदमुवसम्मत्त दोण्णि आहारा । एदेसु एकपगदे णत्थि ति असेसयं जाणे ॥

गो.जी. ७२८.

# आहारककाययोगी जीयोंके आलाप.

. भ म	 	20 8	2	2	হ	<u>्यो</u> १ आहा.	5	8	३ माते•	२ सामा.	३ के.द.	द्र. १ ज्ञु. मा. ३	२ म₊	स. २ क्षा क्षायो	\$	आहा र आहा	स. २ साका, अना,	
1				}		ļ		 	अव.	]		शुभ•			]			

१, १.]

आहारमिस्तकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, आहारमिस्सकायजोगो, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजमा, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा', भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>86</sup>।

कम्मइयकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्टाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सजोगिकेवलिं पडुच दो पाण, सेसाणं सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण; चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि

आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर--एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संग्री-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं. मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारकामिश्रकाययोग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेझ्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेझ्याएं, भव्यसिद्धिक; क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, माद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कार्मणकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादाष्टि, सासादनसम्यग्दाष्टि, अविरतसम्यग्दाष्टि और सयोगिकेवली ये चार गुणस्थान, संझी-पंचेन्द्रिय जीवोंसे लेकर पंकोन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा अपर्याप्तकालमावी सात अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, प्रतर और लोकपूरण समुद्धातगत सयोगिकेवलीकी अपेक्षा आखु और कायबल ये दो प्राण होते हैं तथा शेष जीवोंके कमशः सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण होते हैं। चारों संझापं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, कार्मणकाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी

१ प्रतिष्ठ ' काउ-सुक्कलेस्सा ' इति पाठः ।

नं, २८९

आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप.

ł	<b>ग्र</b> .)	जी.	Ч.	मा.∤	सं -]	ग.	<b>z</b> .	का.	यो.	वे .	क.	झा.	संय.	द	_ ਲੇ,	भ	स.	संदि .	आ.	ਰ.	l
Ĩ	2	2	Ę	ง	× 1	9	R		9	2	لا	₹ T	२ सामा.	२ के.द.	द्र. १ इन्ह	र	२	१ सं.	१ आश	२ स(का.	
R		શં.અ.	শ,			म	चुः	ત્રસ.	आ.मि.	y.				कःदः विनाः			क्षा- क्षायो	1	পার্ছ।	अना.	l
												अव.		i	श्चम.						ļ

2, 2.]

कसाय अकसाओ वि अत्थि, मणपज्जव-विभंगणाणेहि विणा छ णाणाणि, जहाक्खाद-विहारसुद्धितंजमो असंजमो चेदि दो संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, अहवा छहि पजत्तीहि पजत्त-पुव्वसरीरं पेक्सिऊणुवयारेण दव्वेण छ लेस्साओ हवंति । मावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, साण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, णोकम्मग्गहणाभावादो । कम्मग्गहणमस्थित्तं पडुच आहारित्तं किण्ण उच्चदि त्ति मणिदे ण उच्चदि; आहारस्स तिण्णि-समय-विरहकालोव-लद्धीदो । सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सामार-अणामारेहि जुगवदु-वजुत्ता वा<sup>338</sup>।

है, मनःपर्ययद्यान और विभंगावधिझानके विना छढ झान, यथाख्यात विद्वारशुद्धिसंयम और असंयम ये दो संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेश्या होती है। अथवा, केवलीके छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त पूर्व द्वारीरको देखकर उपचारसे द्रव्यकी अपेक्षा छहों लेश्यापं होती हैं। भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संझिक, असंझिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। अनाहारक होते हैं। आहारक नहीं होनेका कारण यह है कि कार्मणकाययोगी जीव नोकर्मचर्गणाओंको प्रहण नहीं करते हैं।

र्शका-कार्मणकाययोगकी अवस्थामें भी कर्मवर्गणाओंके प्रहणका अस्तित्व पाया जाता है, इस अपेक्षा कार्मणकाययोगी जीवोंको आहारक क्यों नहीं कहा जाता ?

समाधान-पेसा रांकाकारके कहने पर आचार्य उत्तर देते हैं कि उन्हें आहारक नहीं कहा जाता है, क्योंकि, कार्मणकाययोगके समय नोकर्मणाओंके आहारका अधिक से अधिक तीन समयतक विरहकाल पाया जाता है।

आहार आलापके आगे साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी हेाते हैं।

ર્ન, ૨૧૦

कार्मणकाययोगी जीवांके समान्य आलाप.

मु.	जी-	प.	प्रा-	सं.	म.	Ę.	का.	यो	वे.	क.	ज्ञा.	संय :	द.	છે.	भ.	स.	संक्रि.	া জা.	। उ.
×	ও	<b>६</b> अ.	9	8	¥	4	६	٤.	ર	8	Ę	ર	۲	द. १	२	4	२	१	२
1	अप.	٤ ,,	1	ц.				कामें .	Ē	41.	मनः	असं.		য়-	भ⊷	ामे.		अना	साका-
सासा	i	Υ,,	1	સ્વીળ					्रापन	<u>त</u> ्रभ	विमं.	यथा.		अथ.	अ.	सा.	अस.	 	अना.
अवि.	l		4	-	i			l f	•		विना			६		•	अतु.		यु.उ.
सयो.	l		¥							ł				भाः ६		क्षायो.			Í
	1		३,२	1			i	ł	١.		l _				1	औप.	1. 1	۱ I	

कम्मइयकायजोग-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>राग</sup>

कम्मइयकायजोग-सासणसम्माइहीणं भण्णमाणे अस्थि एगं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया,

कार्मणकाययोगी मिथ्यादपि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादपि गुणस्थान, अपर्याप्तकालभावी सात अपर्याप्त जीवसमास; छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचेंग जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, कार्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे शुक्ठलेश्या, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कार्मणकाययोगी सासादनसम्यग्टाष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-प्क सासादन गुण-स्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमासः छहों अपर्याप्तियांः सात प्राणः चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना द्येष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, कार्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्द्यन, द्रव्यसे शुक्ठलेदया, भावसे छहों

#### नं. २९१

# कार्मणकाययोगी मिथ्याद्दष्टि जीवॉके आलाप.

. गु.	जी.	ष.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का-	यो.	वे.	ক.	) สา.	{ संय∙	द.	हे.	म,	(स.	संझि.	आ,	े .
2	9	६अ.	9	8	۲	ų	Ę	2	३	8	<b>२</b>	१	) <b>२</b>	द्र. १	२	2	२	१	ि २
मि.	अप.	<b>લ્</b> ઝા.	60		ļ		:	कार्म			कुम.	असं.	चक्षु	য়.	स•			अना.	साका.
1		४अ	। इ							]	લુક્ષ.		अच-	भा ६	अ.	1	असं.		अना.
			4			_	1			1				1		1		, ,	
		1	8			'	1			l	l								
		1	12							]	1	į .		]				1	
	Į	1														· ·		i i	

सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिषो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा 🐃 🛌

कम्मइयकायजोग-असंजदसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, दो वेद, इत्थिवेदो णत्थिः चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओः भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup>।

लेझ्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, अनादारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं।

कार्मणकाययोगी असंयतसम्यग्दाष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कार्मणकाययोग, पुरुष और नपुंसक ये दो वेद होते हैं, स्त्रीवेद नहीं होता है। चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेश्या, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशामिक, झायिक और धायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व, संझिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

# नं, २९२ कार्मणकाययोगी सासादनसम्यग्दाष्टि जीवींके आळाप.

<u>ग</u> ु.	जी.	प•	সা.	सं	ग.	Ŧ.	का.	यो	वे	ক	ज्ञा-	संय.	द.	ਲੇ.	म	स.	साझे -	आ.	उ.
18	१	• ` ·	ט	-	्	۶	2	2	Ę.	8	२	8	1	द्र. १	-	· ·	2	१	२
स।	स. अ	अ.			tà.	मुः	त्रस.	कामे.				1				सासा-	. सं	अना.	साका-
1	1	1						1	ļ		કશુ.	;	अच.	भा• ६	i		!		अना.)
	]				à.				)	1	:				-			1	
1				' I			I	1	1	1	:	<u>.</u>	]		i	[	ί {	l	

### नं. २९३ कार्मणकाययोगी असंयतसम्यग्दाष्टे जीवोंके आछाप

<u>।</u> गु.	जी-	<b>q.</b>	प्राः ।	<b>सं</b> •∣ः	ग. <u>ं र</u>	ं का	यो.	वि.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	<u>ल</u> े.	्रं स	r. {	स.	संचि.	ঞা.	ਰ.	
1 2	्र	হ	່່ຍ	<b>ង</b> ់ ។	ઽંર	2	হ	12	8	₹	٤.	₹	द्र.	2 2		R	2	2	२	
आंग्	व.सं. अ.	. अ.	1	i		· •	कार्म.	न.	( i	मति.	असं.	के.ट.	য়.	¦¥	r. i s	औप.	. सं.	अना,	२ साका, अन्ना,	
	1					- <b>-</b> -	i	g.		श्रुत.		विना.	भा.	εĽ		क्षा.			अना.	
	Ì	: !		;		}	ļ		i	अव.				Ì	i i		!		-1-11	
1	i			l	Ì	}	]	j	İ			}								l

कम्मइयकायजोग-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ अपञ्चत्तीओ, दो पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहक्खादसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दण्वेण सुक्कलेस्सा छ लेस्साओ वा, मावेण सुक्कलेस्सा चेव; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागोरहि जुगवदुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup>।

सुगममजोगीणं ।

एवं जोगमगगणा समत्ता ।

वेदाणुवादेण अणुवादो जहा मूलोघो णीदो तहा णेदच्त्रो'। णत्ररि णव गुणद्वाणाणि त्ति वत्तच्वं; वेदे णिरुद्धे उवरिमगुणद्वाणामावादो । अत्थि खीणसण्णा, अवगदजोगो,

कार्मणकाययोगी सयोगिकेचलियोंके आलाप कहने पर---एक सयोगिकेचली गुणस्थान, एक अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, आधु और कायबल ये दो प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कार्मणकाययोग, अपगतवेद, अकषाय, केवल्हान, यथाख्यातविद्वारद्युद्धिसंयम. केवल्ड्वर्शन, द्रव्यसे द्युक्ललेस्या, अथवा औदारिकशरीरकी अपेक्षा छहों लेस्यापं होती हैं, किन्तु भावसे द्युक्ललेस्या ही होती है। भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

अयोगी जीवॉके आलाप सुगम ही हैं।

### इसप्रकार योगमार्गणा समाप्त हुई ।

घेदमार्गणाके अनुवादसे कथन करने पर आलापोंका कथन जैसा मूल ओघालापमें लिया गया द्वै वैक्षा यहां पर भी लेना चाहिये। विशेष बात यह है कि यहां आदिके नौ गुणस्थान होते हैं पैसा कहना चाहिए, क्योंकि वेदनिरुद्ध अवस्थामें अर्थात् वेदोंसे युक्त रहने पर ऊपरके गुणस्थानोंका अभाष है। तथा यहां पर क्षीणसंद्वा, अपगतयोग, अपगतवेद, अकषाय, अलेक्ष्य,

१ अ प्रती ' तं जहा णेषव्वा ' क प्रती ' जं जहा णेषव्या ' आ प्रती ' तम्हा णेवव्या ' इति पाठः ।

र्न. २९४

### कार्मणकाययोगी सयोगिकेवळी जिनके आळाप.

<u>य</u>	जी₊_	<u>q</u> .	সা	सं.	ग.	Ş.	का	यो.	वे.	क.	ज्ञा,	े संय	ड.	ले.	म.	ं स,	संगि	अग.	उ.
	2	Ę	२	•	8	R	1	্ १	0	•	र	ं र	12	द्र.१	۶.	१	0	१	२
सयो.	अप.	÷	आयु.	t	स.	Ф.	त्र.	कार्म-	<b>.</b>	Ŀ.	केव.	यथा	के.	য়ু-	म.	क्षा.	अनु.	अना₊	साका.
		5	काय,	L.			ĺ	कार्म.	अपग	अकषा	:	1		अથ.૬			Į		अना.
		!		80-			•	i		<b>P</b>				मा.र	ļ		İ	İ	यु. उ.
		ί.						ĺ	ļ		r			য়.	ŀ		Į		

अवगदवेदो, अकसाओ, अलेस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होति ति एदे आलावा ण वत्तच्वा। केवलणाणं, केवलदंसणं, सुहुमसांपराइयसुद्धिमंजमो जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो च अवणेदव्वा। अणिदिया वि अत्थि, अकाइया वि अत्थि, एदे वि आलावा ण वत्तव्वा।

ें इत्थिवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण पव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, आहार-आहारमिस्सकायजोगेहि विणा तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, मणपज्जव केवलणाणेहि विणा छ णाण, परिहार-सुहुमसांपराइय-जहाक्खादविहारसुद्धि-संजमेहि विणा चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभव-

भव्यसिदिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, संश्विक और असंश्विक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त स्थान, इतने आलाप नहीं कहना चाहिए। तथा केवलज्ञान, केवलदर्शन, सूक्ष्मसाम्परायशुद्धिसंयम, और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम इतने अलाप भी निकाल देना चाहिए। और अनिन्द्रिय भी होते हैं, अकायिक भी होते हैं, ये आलाप भी नहीं कहना चाहिए।

स्त्रीवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, संत्री-पर्याप्त, संत्री-अपर्याप्त, असंत्री-पर्याप्त और असंत्री-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संत्रीके छहौं पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंत्रीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, संत्रीके दर्शो प्राण, सात प्राण, असंत्रीके नौ प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना रोष तेरह योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, मनःपर्यय और केवलज्ञानके विना रोष छ ज्ञान, परिहारविद्युद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातविद्वारशुद्धिसंयमके विना शेष चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्स्त,

**न. २९**५

स्रीवेदी जीवोंके सामान्य आछाप.

। गु.	जी.	प.	। प्रा.	सं.	ग.	इ.	কা.	यो.	वे.	क.	<b>मा</b> .	[सय -	द.	<u>ਰ</u> ੇ.	) म.	_₹.	संगि.	- জ্বান	ੁਤ.	ŀ
९	8	εq.	20	8	Ę	٩	٩	१३	१	8	६	×	₹	द्र. ६	२	Ę	ર	ર	२	ľ
16	सं. प.	६ अ	19		ति. म.	air.	÷	आ श, २	स्री.		मनः.			भा. ६	स.		सं.	आहा.	<b>8</b> 141.	l
Ne la	स.प. सं.अ.	4 <b>T</b> .	8		म.	Ъ	11	विचा.			के र	ইয়	विनाः		े अ.		असं.	अना.	অলা-	l
175	असं.प.	<u>এ</u> জ,	છ		<b></b> .							स`मा.								
	अस.ज	)		ŀ			1	ļ				केदो -	l /				Ĵ, i			l

For Private & Personal Use Only

**६**७४ ]

सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणे। अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ पंच यजत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, छ णाण, चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवज्जत्ता वा<sup>86</sup>।

इत्थिवेद-अपअत्ताणं भण्णमाणे अत्थि वे गुणद्वाणाणि, वे जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो,

संक्षिक, असंक्षिक; आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं ।

उन्हीं स्त्रीवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके नौ गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, नौ प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, मनःपर्यय और केवलझानके विना दोष छह झान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादाष्ट और सासादन-सम्यग्दाष्टि ये दो गुणस्थान, संझी-अपर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, नरकगतिके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकामिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; स्तीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके

ने.	२९६

स्त्रीवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु	জী	ष.	ं प्रा₊ सं	.] ग.	<u>₹</u> .	কা -	्यो.	वे.	<b>क</b> .	झा-	संय.	्र.	ਲੇ	भ.	स	संदि.	्ञा.	उ.	Į
٩	ર	Ę	80 8	₹	2	ং	१०	<u>ر</u>	8	Ę	8	ર	द्र, ६	ર	Ę	२	2	२	
	सं.प. असं.प	٩.	\$	ति -	ч.	त्र.	म. ४	स्त्री.		मन.			मा ६	) भ.		सं.	आहा	साका.	ł
Ř	असं.प			म.	i		ৰু ४				દેશ.	विनाः		अ.		असं -		अन।	l
চ	ļ	i .		दे.			औ. <b>१</b>			विनाः	सामा.			1		i I			ł
ļ	ļ			}	:		वे. १				छेदो ।			Į	ĺ	j l			Į

### संत-पह्नवणाणुयोगद्दारे वेद-आळाववण्णणं ( ६७५

दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तमिदि देा सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>२००</sup>।

िंहत्थिवेद-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारि जीवसमासा,छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पजत्तीओ पंच अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरद्द जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ

दो दर्शन, द्रब्यसे कापोत और गुक्क लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं; भन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संक्रिक, असंक्षिक; आद्वारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और आनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त, संझी-अपर्याप्त, असंझी-पर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां; दर्शो माण और सात माण, नौ प्राण और सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकामिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग, छीवेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रष्य और भावसे

नं. २९७

स्त्रीवेवी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>गु.</u> जी. २.२	·	⊓. सं. ७ ४	ग. २	2 2	३	2	क.] ४		<u>संथ.</u> १		<u>छे.</u> द्र. २	र	२	संझि. २	आ. २	<u>.</u> २
मि सं.अप. सा. असं. ,,			ति प म. दे.		औ.मि. वै.मि.	<del>ह्</del> यी।		कुम. कुभु,		अच.		अ.			आहा. अना.	साका. अना.
			۹.		काम.						শ अशुः					

#### नं. २९८

### स्रीवेवी मिथ्यादाध जीवोंके सामान्य आलाप.

] गु,	जी-	<b>q</b> .	प्रा <i>े</i>	र्स .	] ग,।	इं.	का.	यो ।	वे.	क.	झा.	संय	द.	ਲੇ.	] म∙	स.	संक्रि-	- আ-	ु छ-
1	*	६प.	१०	8	ą	1	2	१२	2	8	3	१	२	द्र. ६	२	२	ર	२	२
मि.	सं.प.	६अ.	19	ì	îđ.	<b>ч</b> .	त्रस.	आहा.२	स्री.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा∙ ६	भ∙	मि.	सं.	आहा.	साका-
	सं. अप.	49.	5		म.			विना		ī	-		अच •		अ⊪	1	असं.	अना.	अन्त.
	अस. प	પગ્ર.	9	i	दे.		İ					ĺ		[		ļ			
	अस.अप.		<b>,</b>		ĺ		!			]		i		<b>i</b> :		1	]		

2, 2.]

छक्खंडागमे जीवडाणं

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ पंच पजत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रा</sup>ं।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, वे जीवसमासा, छ अप-जत्तीओ पंच अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,

छद्दों छेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आद्दारक, अनाद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर----पक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, नौ प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्ट्रि-यजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्ष्यापं, मन्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं स्त्रीवेदी मिथ्यादाष्ट्र जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्याद्दाष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्या-प्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

#### नं. २९९

# स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>।</u> ग्रु.	जी.	प,	я.		्य.	<b>t.</b> (	কা. {	यो.	ļ	<b>वे</b> .;	क,	द्या.	. संय.	द.	ਲੇ,		<b>भ</b> ₊	स∎	संज्ञि.	: আ	उ.
12	. 2	Ę	20	8	R	र	१	१०	<u> </u>	8	8	Ę	१	ર	द्र, १	₹ .	રં	१	ર	2	२
			5			पंचे.				स्री		अ <b>शा</b> •							.सं. असं.	आहा	साका. अन्य
	अतं.प.				म. दे.			व. २ औ.			1		]	अच.		1	1.		બલ.		अना.
	:		1		<b>G</b> .		ļ	वे.					]	ĺ	ļ						
				ļ		j	1	["	•					ļ						<b> </b>	

**E 90** 

१, १.]

असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारु वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

इत्थिवेद-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणड्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>हरा</sup>।

दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे रुष्ण, नील और कापोतलेझ्यापं; भव्यसिद्धिकः अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संह्रिक, असंक्षिकः आह्वारक, अनाह्वारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्तविदी सासादनसम्यग्दाप्टे जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—पक सासादन गुणस्थान, संत्री पर्याप्त और संत्री अपर्याप्त ये वो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संत्रापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग; स्त्रविद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ प्रतिषु ' तेउ ' इस्राधिकः पाठः समस्ति ।

न. ३००

स्त्रविदी मिथ्याद्दष्टि जीवींके अपर्याप्त आरुाप.

	्रा १ ४ औ सि.स्रो., वे.सि.	२ <sub> </sub> १२२ कुम∺असं 'चक्षु.	इ.२.२.२ का. म. मि. इ. अ. उ	
<u>,</u> अ. दि.	कामे.		मा. ३ अग्रु.	

# नं. ३०१ स्त्रीवेवी सासादनसम्यग्दष्टि जीवेंकि सामान्य आलाप.

<u>गुः</u>	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	<u>यो</u> ∙	∣वे.	<b>क.</b>	<u>' झा.</u>	संय.	। <u>द.</u>	<u>ले.</u>	<u>  म</u> .		¦संझि,	<u>आ.</u>	<u>उ.</u>
२	२	इ	१०	४	३	२	र	≀ १३	∣र	४	३	१		व. इ	र	१	ं १	२	२
	सं अ	प. ६ अ.	U		ति म. द.	पंचे.	चस.	आहा. द्विक. विना.	स्री-		अझा.	असં.	चक्षु, अच	मा. ६	म.	सा.	सं.	आहा. अनाः	सोका. अना-

छक्खंडागमे जीवहाणं

[ ۲۰۶

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रू</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासे, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इस्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउंलेस्साओ; भवांसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दाष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहूने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संब्री पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संब्राएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, बसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग; औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग थे दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं; भव्यासिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दाष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना रोष तीन गतियां; पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औद्यारिक-मिश्रकाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रविद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संशिक, आहारक,

१ प्रतिषु ' तेउ ' इत्यधिकः पाठः समास्ति ।

# न. ३०२ स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आठाप.

ีย.	जी.	ч.	গা.	सं.	च,	े इ.	:কা,	। ये	r.	ं वे,	<b>4</b> 5.	ন্থা-	संय .	द	हे	भ	स.	संदि.	া আ	उ.
12	१	·	20		 		9	9	~	9	Ū.	2	9	2	ੇ ਰੁੱਛ		5 9	2	2	1 2 1
सा.	सं ∙			•	ति.	चि	مر ا	म.	8	দ্ধা		अल्ला.	असं.	चक्षु.	मा.	६¦म₊	सासा.	. सं.	आहा	साका. अना
1	Ч.	ĺ		i		i.ër I	त्रस	· · _	-			i :		अच.	1			1		ं अनाः [
			1	-	दे.			্থী	۰۶		1				ł				1	;
			İ.	! .				ं वै.	१	1	1	j	[ ]		ĺ	_	_			i

१, १.]

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>???</sup> ।

इत्थिवेद-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागास्रवजुत्ता होति अणागास्रवजुत्ता वा

इत्थिवेद-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो,

अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी सम्यग्मिथ्याद्दष्टि जीवोंके आछाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संत्री-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके देा दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेक्यापं, भव्यासीद्विक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दष्टि गुण-

नं, ३०३

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। गु. 🗟	ñ.∣∙	न. त्रा.	ं सं -	ग इं	. का.	यो.	वे.	<b>क</b> .	ল্বা-	संय.	द.	ੁੱਡੇ.	भ.	स.	संक्रि.	_ আ	<u>उ.</u>
2	१ ह	٤ ان	8	३ १	ا ا	્ર	1	8	ર	2	२	द्र.२	2	१	2	ર	૨
सा.सं	ઝા. ઝ	1.		ति.प.	त्रस	औ.मि	स्त्री		कुम₊	असं.	चक्षु.	का.शु.	भ.	सा.	सं.	आहा-	साका•
	i			म.	1	वै.मि.			કુઝુ,		अच-	मा.३				अ <b>न</b> ा.	अना.
	1	÷		<b>दे</b> .		कार्म.	ļ		_		!	ં अજ્ઞુ.			1		
	ĺ	:	1			i	;	1	 	:	)				1		

#### नं. ३०४

### ङीबिवी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीबॉके आलाप.

णु.	जी। प	प्रा. संग गग इं	का यो	वे. क.	्रहा. सं	य.ं द.	<b>ले</b> . ं भ.	स. संझि.	आ ड.
1	१६	20 813 2	8 80	1 8	३	१ २	द्र, ६ १	१ १	<u>१</u> २
1 H		ि ति.	क्त म. ४	स्त्री.	অক্সা অ	त चक्षु	भा. ६ म.	सम्य सं	आहा. साका.
		म ह	हिं व ४		३,	अच-		:	ં અના.
		दे,	্ জী ধ		ज्ञान.		i		
			वे. र		मिश्र.		L	ļ i	<u> </u>

गु. जी. प. ३ २ ६ ∰ सं∙ प. क	<u>मा सं. ग</u> २०४ ३ ति. म. दे.	ाष्ट्र में ४ जिल्ला व ४	स्री. मति. श्रुत.	संय. <u>द.</u> छे. १ ३ द्र. ६ अस. के.द. मा. ६ विना,	म. स. संझि. १ ३ १ म. औप. सं. क्षाग,	आ. उ. १ २ आहा. साका. अना.
--------------------------------------	--	----------------------------	----------------------	--	--	------------------------------------



छ पञ्जचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

ें इत्थिवेद-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्ठाणं, एओ जीवसमासे।, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनाकारोपयोगी होते हैं। स्त्रीवेदी संयतासंयत जीवींके आलाप कहने पर---एक देशसंयत गुण्स्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और

#### सं. ३०५

नं. ३०६

स्त्रींचेदी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप.

<u>गु.</u> जी. प. था. सं. ग. इं. का. यो. वे. क. झा. संय. द. छे. म. २ २ ६ २०४ २ २ १ ९ १ ४ ३ २ ३ इ. ६ २ 	<u>स</u> ् संक्रि ३ २ औष. सं क्षा. क्षायो.	१ २
--	--	-----

स्त्रीवेदी संयतासंचत जीवौंके आलाप.

**६८०**]

जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्ताओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

""इत्थिवेद-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, आहारदुगं णत्थि । इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, मणपजवणाणेण विणा तिण्णि णाण, परिहारसंजमेण विणा दा संजम, कारणं आहारदुग-मणपजवणाण-परिहारसंजमेहि वेददुगोदयस्स विरोहादो । तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औप-शमिक, क्षायिक और क्षायोपक्षमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर---पक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग होते हैं किन्तु आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होता है। योग आलापके आगे स्त्रीवेद, चारों कषाय, मनःपर्ययक्षानके विना आदिके तीन क्षान, परिहारविशुद्धिसंयमके विना आदिके दे। संयम होते हैं। यहांपर आहारकहिक मनःपर्ययक्षान और परिहारविशुद्धिसंयमके विद्तां होनेका कारण यह है कि आहारकहिक, मनःपर्ययक्षान और परिहारविशुद्धिसंयमके साथ स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उदय होनेका विरोध है। संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुद्ध लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, झायिक और झायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी

तं. इ	<i>0</i> 0
-------	------------

स्त्रीवेदी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	Ч.	<b>Я</b> Г.;	सं.	ग.	₹.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	े ले.	<u>म</u> .	. स.	संझि.	<u>आ.</u>	_ <del>ਤ</del> ।
2	2	ह	50			१				¥	₹	્ર	३	द्र. ६	!₹	्र	१	र	ર
श्रम.	सं.प∍		i		म.	<b>Ý</b> .	÷	म, ४	स्री ।		मति.	सामा-	के द	भा. ३	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
							च	ਕ, ਖ	-		श्रुत	डेदो.	विना.	ગ્રુમ		क्षा.		ſ	अना,
						ĺ		औ. १	1		অন	I		i	ļ	क्षायो.			{
1					ļ				.		•	1			1				
	1		l				,		1			]	]		1				

१, १.]

### अणागारुवजुत्ता वा।

इत्थिवेद-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णिं, णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवासिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सामारुवज्जत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>84</sup>।

इत्थिवेद-अबुव्वयरणाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पडजत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ; मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ

# और अनाकारे।पयोगी ढोते हैं।

स्त्रीवेदी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर---- एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संद्वी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंद्वाके विना शेष तीन संद्वाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्त लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, औपश्तमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक संझी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, आहारसंझाके विना रोष तीन संझाप, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन,

#### नं. ३०८

### स्त्रीवेदी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

[गु.	] जी,	q.	श्रा.		ग	<b>\$</b> .	का.	यो.	] वे.	ক.	রা.	संय-	द.	_ ਰੇ	म.	. सं.	संझि.	आ,	उ.	
3	<b>भ</b> सं.प.	Ę	30	२ आहा. त्रिना	े म.	पत्ने. व	त्रस	٩	<b>৭</b> স্থা.	8		२ सामा, छेदी.		द्र. ६ मा. ३ जुम.		र औप. क्षाग क्षायो	9 सं.	१ आहा.	२ साका. अना,	

§22]

लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा, भवसिद्धिया, वेदगेण त्रिणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*</sup>े ।

इत्थिवेद-अणियट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्त</sup>।

द्रव्यसे छहाँ लेक्याएं, भावसे शुक्ललेक्याः भव्यासिद्धिक, वेदकसम्यक्त्वके विमा औपश-मिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्वः संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी अनिवृत्तिकरण जीवोंके आठाप कहने पर-एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिप्रह ये दो संझाएं; मनुष्धगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदा-रिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेझ्याएं, भावसे शुक्तछेझ्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

न. ३०९

स्त्रीवेदी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप

गुः <u>जीः पः</u> १ १ ६ हि	20 2	2 2 2	S.	१४ स्री.	३ ⊨ २	द. हे. ३ द. ६ के.द. मा. १ विना. ग्रुह.	१ <b>२</b>	. <b>२   २</b>	. २
				i i		1	. i	• •	

#### नं ३१०

# स्तीवेदी अनिदृत्तिकरण जीमॉके आलाप.

छक्खंडागमे जीवद्वाणं

पुरिसवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्ज तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ हेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>314</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि णव गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णा, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-मावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

पुरुषवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-आदिके नौ गुणस्थान, संझी.पर्याप्त, संझी-अपर्याप्त, असंझी.पर्याप्त और असंझी.अपर्याप्त ये चार जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, केवल्ल्झानके विना शेष सात झान, स्टूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ हेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पुरुषवेदी जीवेंकि पर्याप्तकाळसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; द्वाों माण, नौ माण; चारों संझापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग और आहारक-काययोग ये ग्यारह योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, केवल्रज्ञानके विना शेष सात झान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य

न. ३११

पुरुषवेदी जीवोंके सामान्य आळाप.

। य	. वी.	٩.			] ग.	}इ.	का.	यो.	वे.	] क.	্রা.	ं संय-	द.	ਰੇ.	म.	.स.	संक्षि.	সান	ा ड.
٩	8	६प.		8	₹	1	9	24	8	8	्य	५ असं.		द्र, ६	२	Ę	<b>  २</b>	ર	२
	स प.	<b>६</b> अ.	৩	-	ति.	Ē	जस.		पु.		केर,			भा. ६	स.		सं.	आहा	साका.
ľĔ			1 1			-9-	न्त					सामा.	विनाः	1	. অ.		असं.	अना.	জনা.
ľ	असं.प.	<u></u> ধঞ্জ.	9		<b>₹</b> .				i i			छेदो.							
	'असं, अ	J	1		j		1	;	} (			परि.	<b>۱</b>					į į	

8, 8. ]

सण्णिणे। असण्णिणे, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

<sup>313</sup>तेसिं चेव अपजजताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता

और भावसे छहाँ लेखाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहाँ सम्यक्तव, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पुरुषवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्याद्दष्टि, सासा-दनसम्यग्दष्टि, अविरतसम्यग्दष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, संझी-अपर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संझापं, नरकगतिके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग, आद्वारकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन झान इसप्रकार पांच झान; असंयम, सामायिक और छेद्दोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यक्षे कापोत और शुद्ध लेक्यापं, भावसे छहों लेदयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक। सम्यग्मिथ्यास्वके विना रोष पांच सम्यक्त्व, संझिक, असंक्षिक; आद्वारक, अनाद्वारक;

નં. રૂશ્ર

पुरुषवेदी जीवोंके पर्याप्त आळाप

<u>ग</u>	्जी.	ष₁ प्रा.	ं सं ] ग	ا سبب این		वे क.	····	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	 हे.	म.	स	संक्रि.	্ৰা.	
٩	i -	द १० ५ २			११म.४   <b>व</b> . ४			५ असं. देश.	द्र. <b>६</b>		Ę	<b>२</b>	2	२
19 19	सं.प. असं.प.		ात म.		્ય ઔ. ર			दरा. सामा.		<b>।</b> अ.		स∙ असं.	आहा.	साका. अना,
ক	•	:	दे.		वै. र			छेदो.						
!	 _!		. )		आहा र	i i		परि•	Į					· ·

#### न. ३१३

### पुरुषचेदी जीयोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>ग</u> .	जी.	<b>4.</b>	भा	र्स.	<b>ग.</b> ]	इ	<u>का</u> .	] यो	ं वे	क.	হ্লা.	संय.	द.	<u>ल</u> े.	¦भ∙	∶ स∙	,साह्य	आ.	ੇ ਰ.
8	२	६ अ.	<u>່</u> ຍີ	۲	<b>२</b> .	₹	र	8	1	8	4	ं २	₹	द्र २	२	4	२	2	२
मि	सं. अ	५अ.	بوت ا		ति. म.	<b>.</b>		औ। मि वै.मि.	पु.		कुम	असं.	ते.द.	का.	म.	सम्य.	. स.	आहा.	साका.
सा.	असं.अ.				म.	4.	36	वै.मि.										अना.	अना.
জৰি -		}	!		दे.			आ.मि			मति.			भा ६					
प्रम.				i				कार्म.			श्रुत.	; <b>`</b>			! 	1			
			i							İ	अव.				İ	i			
1						i	1		!	ľ		l	l	i j					

[ 924

5**65**]

होति अणागारुवजुत्ता वा ।

पुरिसवेद-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे आस्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारे जीवसमासा, छ पुजत्तीओ छ अपजत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

तेसिं चेव पज़त्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज़त्तीओ पंच पज़त्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्माण,

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्ति ये चार जीवसमासः छद्दों पर्याप्तियां, छद्दों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राणः चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-जातिं, त्रसकाय, आद्वारककाययोग और आद्वारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योगः पुरुष-वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छद्दों लेदयाएं; भज्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्य, संज्ञिक, असंज्ञिकः आहारक, अनाद्वारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी दोते हैं।

उन्हों पुरुषवेदी मिथ्यादाप्टे जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादप्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और असंझी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां-पांच पर्याप्तियां: दर्शों प्राण, नौ प्राण; चारों संझाएं, नरकगतिके विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रि यिककाययोग ये दश योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो

नं. ३१४

### पुरुषवेदी मिथ्यादाष्ट्र जीवोंके सामान्य आलाप.

। <del>उ</del> .	जी•	ष∙	मा.	सं.	ंग.	<b>इ</b> .)	কা-	_ यो -	वे.	क.	. ज्ञा-	संय.	्र.	<u></u> ਲੇ.	्म,	स.	संग्री -	आ.	ਤ.
2	8	ह्य.	20			8	<b>`</b>			!	्	8	<u>२</u>	ι <u>κ</u> ε	• २	۶.	২	२	२
iĤ.	सं. प.	६अ.	19	 	ति.	1	÷	आहा.	पु•		সন্না.	अस .	चक्षु,	भा• ६	भ	मि.	सं.	आहा.	साकाः अनाः
ſ	सं. अ.	५प.	9		म.	4	K	द्विक.					अच.		अ.		असं.	अन्।	अना.]
	असं.प.			1	दे.			विना.	i Í	1			1						
1	असं.अ.		ļ	}						1			l .				:	!   ;	

१, १- ]

असंजमो, दो दंसण, दब्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>200</sup>।

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स</sup>।

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्रिक, असांक्रिक: आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पुरुषवेदी मिथ्याद्दष्टि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, संझी-अपर्याप्त और असंझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, लहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारें। संझापं, नरकगतिके विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शान, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेडयापं, भावसे छहों लेडयापं: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं।

नं. ३१५

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>, ग</u>	जी.	ष.	था.	सं.	ग.	इ.	का	यो	वे	荷.	<b>शा</b> -	( संय.	<u>द.</u>	हे.	स.	[स.	संझि.	_ आ,	े उ.
2	२।		20				१		1 2					द्र. ६			र	٤	२
	स. प.	r 1	९		ति₊	पंचे	त्रस.	म, भ	ઽાવુ.		अज्ञा,	असं.	चक्षु.			मि.	सं	आहा.	साका.
ł	असं.प				म.	ļ		ৰ্	<b>f</b> :	j.	i		अच.	•	अ.		असं.		अना•
					<del>दे</del> .	,	•	্র্যা.			1		ļ I				[		
		ļ					!	वे. ।	<b>L</b> ;		ļ		: I						
						}			•				ļ						
1_	<u> </u>								. 1	1		i							ا <u> </u>

#### ર્ન. ૨૧૬

पुरुषवेदी मिथ्यादाष्टे जीवेंकि अपर्याप्त आलाप.

. जी. २ १. स. अ. असं.अ.	9	8	ચ	इ. 9 पं.	9	<u>यो.</u> ३ औ.मि. बे.मि. कार्म.	9	8	२	१ असं.	अच.	द्र.२ का.	1 1	9 मि.	২	उ. २ साका: अना:	F
											ļ			l			

[ 8, 8.

### छक्खंडागमे जीवहाणं

पुरिसवेद-सासणसम्माइड्रिप्पहुडि जाव पढम-अणियट्टि त्ति ताव मूलोघ-भंगो । णवरि सव्वत्थ पुरिसवेदो चेव वत्तव्वो । सासण-सम्मामिच्छा-असंजदसम्माइट्टीणं तिणि गदीओ वत्तव्वाओ ।

"णवुंसयवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्धाणाणि, चोइस जीवसमासा, छ पज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पजत्तीओ पंच अपजत्तीओ चत्तारि पजत्तीओ चत्तारि अप-जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ देवगदी णत्थि, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, तेरह जोग, णवुंसयवेद,

पुरुषचेदी जीवोंके साखादनसम्यग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागतकके आलाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि वेद आलाप कहते समय सर्वत्र एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए। तथा सासादनसम्यग्टाप्टि, सम्य गिमध्यादाप्टि और असंयतसम्यग्दप्टि जीवोंके गति आलाप कहते समय नरकगतिके विना शेष तीन गतियां कहना चाहिए।

नपुंसकवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर आदिके नो गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संझी-पंचेन्द्रिय जीवोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंझी-पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; संझी-पंचेन्द्रिय जीवोंसे लगाकर एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्त अपर्याप्तकालमें दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण और तीन प्राण; चारों संझाएं, नरकगति, विर्यंचगाति और मनुष्यगति ये तीन गतियां होती हैं परंतु नपुंसकवेदी जीवोंके देवगति नहीं होती है। एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरह योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, मनःपर्ययन्नान

#### नं. ३१७

नपुंसकवेदी जीवोंके सामान्य आलाप.

<sub>।</sub> ग्र	जी.	प-	সা.	सं.	] ग.	Ę.	का	यो.	वे.	क.	झा.	संय.	द.	ð.	ेस.	स	संहि.	ঞা.	, उ <b>.</b>
9	28	इप.	20,0	8	3	પ	Ę	१३	2	8	Ę	8	₹	द. ६	12	Ę	२	्र	र
luc.		६अ.	۵,۶		न.	ļ	ļ	आराग		;	मनः	अलं.	के द	मा. ६	म.		. स.	आहा.	साका.
आदिके.		५प-	٤,٤		ति		i	द्विक.			केव.	देश.			ञ.		असे.	अना.	अना.
কি		પ્લ અ.	9,4		म.			विनाः	i I		विनाः	सामा∎		İ					
	ļ	¥9.	६,४					-				छेदो.	i		İ			:	
	Ì	খজ.	४,३											1					
		1		l	I		i	l				ĺ		İ	J				

चत्तारि कसाय, छण्णाण, चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहि छ लेस्साओ, मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागास्वजत्ता होति अणागास्वजत्ता वा।

तेसिं चेव पजात्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पजातीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, दस जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, द्व्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>344</sup>।

और केवलबानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छढों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; छढों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आद्दारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुण-स्थान, पर्याप्तकालमावी सात जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां। दर्शों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, और चार प्राण; चारों संझापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, वारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, नपुंसकयेद, चारों कषाय, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञानके विना छह झान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों ठेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संझिक, असंझिक; आहारक, साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३१८

नपुंसकवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

핏	जी.	<b>q</b> .	_মা.	सं.	ग.	<b>\$.</b> ]	का,		] वे.	क.	ञ्चा.	संय.	द.	. ले.	) भ	स.	संझि .		s.	L
9	9	Ę	१०	8	₹	4	Ę	80	2	8	६	8	3	द्र. ६	2	Ę	२	2	२	
1	पंर्या.	4	९	)	न.			म.४	न.	ļ	मनः.	असं.	के.द_	मा. ६	स.		सं.	आहा.	सका.	Ŀ
आदिके.		¥	¢		ति.			व.४		1 [	केव.	देश.	विना	-	अ.		असं.	.	अना.	£`.
ਲ			υĘ		म.			औ. १		į	विनाः	सामा.		ļ			ļ		-	
			x	[				वे. १				चेदो.		ļ		-				

2, 2.]

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्दाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपजत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासण-खइय-वेदगमिदि चत्तारि सम-त्राणि, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु वजत्ता वा<sup>रा</sup>।

णवुंसयवेद-मिच्छाइद्वीपं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ; दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छह पाण

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दाष्टि और अविरतसम्यग्दष्टि ये तीन गुणस्थान, अपर्याप्तकालभाषी सात जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण; चारों संझापं, देवगातिके विना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्भण ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान और आदिके तीन झान इसप्रकार पांच झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुद्धलेत्यापं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्स, सासा-दन, क्षायिक और वेदक इसप्रकार चार सम्यक्त्व, संक्रिक, असंक्रिक; आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टिजीवॉंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदह जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; इन्नों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठप्राण, छह प्राण;

नपुंसकवेदी जीवांके अपर्याप्त आलाप.

변.		प.	я.	सं.∣ग.∣	इ. का.	यो.	वे क	झा.	संय	द.	<u>ੁ</u> ਲੇ.	म.	स.	संहि-	ঙা,	उ.	
₹	9	६अ.	9	<u>४</u> २	५ इ	्र	8 8	५ कुम	,	્ર	द्र. २	२	8	२	२	२	
मि.	÷	५अ,	9	न.		औ.मि.		નુષ્ટુ.	असं.	के.द	কা					सांका.	
eït,		४अ,	ह	ाते ।	i	वि मि.		ं मति-		विना.	. શ	अ.		असं.	अनाः	अना.	l
अ.			4	म.		) कार्म.	į	ु शुत-			मा ३		क्षा.				ľ
ł.,	i l	İ.	٧, ૨				1	ं अव.		]	अशु.		क्षायोः			1	I

६९०]

### संत-परूवणाणुयोगदारे वेद-आन्नाववण्णणं

सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चतारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया तेरह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दुव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवासिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स</sup>े।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, देवगतिके विनां दोष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहाँ काय, आहारककाययोगद्विकके विना दोष तेरह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अहान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोंगी होते हैं।

उन्हीं नपुंसकवेदी मिथ्यादप्टि जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर----एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, लहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, बार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, लह प्राण और चार प्राण; धारौं संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिषीकाय आदि लहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; नपुंसकवेद; चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे लहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्य, संज्ञिक, असंत्रिक;

नं. ३२०

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामाम्य आलाप.

गु जी, प प्रा. १ १४ ६प. १०,७ मि. ६अ. ९,७ ५प. ८,६ ५अ. ७,५ ४प. ६,४ ४अ. ४,३	- ग. इं. का. यो. २ ३ ५ ६ १३ न. आहा. ति. द्विक. म. विना.		२ इ.६ २ १ चधु. सा.६ स. मि.	संहि. वा. उ. २ २ २ स. आहा. सफा. असं. अना. अना.
--	---	--	-------------------------------	---

8, 8. ]

मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वां !!

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, तिण्णि जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्ताओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-हेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रू</sup>।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छद्दों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां सात माण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण; चारों संझाएं, देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, एकेन्ट्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छद्दों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मण ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेश्याएं, भावसे रूष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आद्वारक, अनादारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

નં. રૂરર

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवॉके पर्याप्त आलाप.

12	जी-	٩.	मा	् सं.	ंग,	<b>Ť</b> .	কা.	! यो	-	वे,	क,	হ্যা_	संय	ंद.	ले.	। भ.	ं स.	संज्ञि.	- পা	ੁਤ]
2	ও	Ę	१०	۲	R	4	६	ं र	0	8	8	3	ং	२	द्र. ६	ેર	18	२	2	२
मि.	पर्या₌	4	S		न.		i	ं म.	۲	न	ļ	) अज्ञा,	असं -	च क्षु	भा. ६	'म.	'मि	. सं.	आहा	साका,
		¥	۲		ति.			व.	-				i :	अच.	:	ंग,	1	असं.		अना.
			৩	ĺ	म.	-	ļ	औ	, १	[	ļ	ļ	ł	ļ		ş I	ļ I			
			Ę		i			वे.	۲.	1	İ		ι ·				į	:   		
		[]	x	ļ	ļ	J	l			ļ		l	i		ļ	ļ	1	j	į I	

#### न. ३२२

नपुंसकवेदी मिथ्यादाप्टे जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>।</u> ग्र	ञी.	पन	সা_	सं ग	ह	का.	यो.	वे	क.	¦\$∏.	संय.	्र.	ਲੇ.	. भ	स.	संहि.	आ.	ਚ.	ł
2		६अ.	9	8 3	4	Ę	्र	2	8	१ २	٤	२	द्र २	२	Ł	ર	२ ·	२	
मि.	÷	५ <b>अ.</b> ४अ.	19	न.			औ.मि	न.		कुम-	असं	चक्षु	ं का.	भ	मि.	सं.	आहा.	साकान	I
	ন্দ	४अ.	ξ	์ สี.		i	वे.मि.		l	<b>কু</b> শ্ব •		अच्च.	য়.	अ•	1	असं 🗸	अनाः	अना-	
1			ંદ્ર	म.	1 1		कार्म.					l	मा₊ ३	[:		ļ			I
	ĺ	1	\४ ₹							[		Ì	' अशु.						l

णवुंसगवेद-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, सासणगुणेण जीवा णिरयगदीए ण उप्पज्जंति तेण वेउच्वियमिस्सकायजोगो णत्थि । णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup> ।

तेसिं चेव पजताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्व-

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दष्टि जीवेंकि सामान्य आठाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवलमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां। दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगातिके विना शेष तीन गतियां, पंचे-न्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विक, और वैकिधिकमिश्रकाययोगके विना शेष बारह योग होते हैं। यहां पर वैक्रियिकमिश्रके नहीं होनेका कारण यह है कि सासादन गुणस्थानसे मर कर जीव नरकगतिमें नहीं उत्पन्न होते हैं, इसलिए यहां पर वैकिधिकमिश्रकाययोग नहीं है। नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भाषसे छहों लेइयाएं, भन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्टाष्टे जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, देवगातेके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों चबनयोग, औदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अह्वान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक,

### नं. ३२३ नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्डाप्टे जीवोंके सामान्य आळाप.

<u>n</u> .	आ,	۳.	त्रा.	<u>स</u> .[	ग,	<b>Ş</b> .	का,	र	<u>ì</u> .	वे.	क.	ज्ञा-	संय.	्द.	<del>9</del>	•	म.	स.	संज्ञि.	୍ ଖୀ,	ਚ.	t i
	२ सं.प.	<b>.</b>	१ व ७		३ न• ≏	1	न्स <b>्</b> र	व.	¥	न	!	•	१ अस .	२ चक्षु,		- 1	१ भ.	र सःसा.	१ सं.	<b>२</b> आहा.	२ साका,	
	सं.अ 	६ अ.		Í	ते. म.		יזו <u> </u>	ुआ वै. का	, २ १ . १	   ]		1		अच.	l   					अना.	अना.	

१, १.]

सावेई छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्त। होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>श्य</sup> ।

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, देव-णिरयगदी णत्थि । पंचिं-दियजादी, तसकाओ, वे जोग, वेउव्वियमिस्सकायजोगो णत्थि । णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-बच्चजा होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रू</sup> ।

सासादनसम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, नारों संकापं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां होती हैं; किन्तु देवगाति और नरकगति नहीं होती है। पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग होते हैं; किन्तु यहां पर वैक्रियिकमिश्रकाययोग नहीं है। नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और द्युक्त कायापं, भावसे छष्ण, नील और कापोत लेदयापं, भव्यसिद्धिक सासादनसम्यक्स्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

મં. રૂરક

नपुंसकवेवी सासादनसम्यग्डाष्ट्रि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u><u>.</u></u>	<u>जी.</u>	<b>प.</b>	<u>।</u> जा	¦₫.	<u>ग.</u>	<b>₹.</b>		यो - १०म -		ज्ञा. 	संय.	<u>द</u> .	ਲੈ. ∉ દ	<u>  म</u> ,	) स. १	संहि	<u></u>	<u>उ.</u>
सा.	र सं.प.	<b>. .</b>	ζ."			पंचे.	त्रस. 🗸	व थ औ.	नपु.	अज्ञा-	असं.		भा. ६	म	सा.	सं.	आहा.	साका.
					ति. म.			वे १				अच.	!					ं अनाः

### नं. ३२५ नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

10.	्रजी-	Ч.	সা,	सं.	ग.	इ.	<b>का</b> .	यो.	वि	<u>क</u>	: হা	संय.	द.	<b>हे.</b> भ	. स.	संज्ञि	_ আ	उ.
1	१	ह्	و	8	<b>`</b>	र	ે ર	3	1	8	্র	٤.	ર	द्र.२¦ १		1	૨	२
स्रा,	सं.अ.	अ.		:	ſā.	Ч.	त्रस-	ुऔ मि	न.	:	ं कुम	अस	चक्षु.	না.সু. ম	. सा.	सं.	आहा.	साकाः
ì					म.			कार्म			ક્રુઝુ.		अच •	मा २			अन्।	अना.
										:		:		अशु.			İ	
	] ,							i		j					j	1		

**488**]

१, १.]

णचुंसयचेद-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्त</sup>।

णवुंसयवेद-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणड्ढाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णत्थि । णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ,

नषुंसकवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-एक सम्यमिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदा-रिककाययोग और वैकिथिककाथयोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिधित आदिके तीन झान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भब्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्टप्रि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-- एक अविरत-सम्यग्टप्रि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोथोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैकियिककाय-योग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये बारह योग होते हैं। किन्तु यहां पर औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये बारह योग होते हैं। किन्तु यहां पर आदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता। नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेड्याप, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक

#### नं. ३२६

## नपुंसकवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु. <b>उ</b>	ती परंप्र	।. सं	ग. इं	, কা	यो.	वे.	क.	<b>T</b> I.	संय.	α.	ਲੇ.	<b>म</b> ₊[		संझि.	- আ	उ.
₹.	१ ६ १	• 8	₹ : <b>१</b>	٤	१०	1	8	२	۶.		द्र, ६		۶	\$	र	2
	<b>6</b> -1		न.	0.2	म. ४	ंन ्		अग्रा.	असं -	च क्षु	मा. १	६ म. '	सम्यः	सं	आहा.	स्राका.
HT	H.		লি, প্লি	न	व,४	:		ষ্		अच-		.				अना.
	-		म - 🦢	, 1	জী	१		ज्ञान.	i			-				
	, I			I İ	वे. १		:	सिश्र.	<b>!</b>					j	1 1	

भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>हर</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>84</sup>।

और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व, संशिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दाप्टे जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दाप्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां; दशों प्राण, चारों संझाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योग; नपुंसक-वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, झायिक और झायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

### मं. ३२७ नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दाधि जीवोंके सामान्य आलाप.

यु.	) जी.	ष.	। সান্	ंसं,ं ग	. इं.	কা.	यो.	वे.	क	হা।	संय.	द्र.	ਲੇ.	भ स	ंसं ज्ञि	) आ.	্র.
1	२	६प,	20	83	. ?	। र	१२	ंश्		ર			द्र. ६		<u></u>	२	રા
	सं.प	६अ,	<b>b</b> 9	न	مار	a d	म. ४	ৰ.		मति.	अस.	के.द.	मा∎६	મ. ઝૌપ ક્ષા	स	आहा.	साका
त्र	<b>स</b> .अ.			ाति	Ð	না	व. ४			श्रुत.	į	विना		) क्षा-		अना.	अना.
				्म,	• 1	i	) औ. १	1	•	अव.	!	1		क्षायो	•		· •
						:	¦वै. २		i I I		ļ					<b>!</b>	
l			1	ĺ.			कामे १								<u> </u>		

### मं. ३२८ नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्टाष्टे जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ति. <sup>म</sup> स. म.	<u>१० १ ४ ३ १</u> म.४ न. मोते∙ असे.	द. हे. स. सं. संक्षि. आ. उ. ३ द. ६ १ ३ १ १ २ के.द. मा. ६ म. औप. सं. आहा साका बिना क्षा. अना. भाषो.
------------------------------	--	--

६९६ ]

१, १. ]

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-

सुक्कलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, कदकरणिज्जं पडुच वेदगसम्मत्तं लद्धं । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>हर</sup>े।

णउंसयवेद-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्धष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योगः नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे जघन्य कापोतलेक्याः भव्यसिद्धिक, शायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, होते हैं: यहां पर क्षायोपशमिक सम्यक्त्वके होनेका कारण यह है कि इतकृत्यवेदककी अपेक्षासे यहां पर क्षायोपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है। संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, तिर्यवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं, भव्यसिद्धिक,

नं. ३२९	नपुंसकवेदी	असंयतसम्यग्दष्टि	जीवोंके	अपर्याप्त आलाप.	,
					÷

१ १ ६ अ. ७ ४ १ १ १ २ १ ४ ३ १ ३ द.२ १ २ २ १ 	२ २ आहा. साका. अना. अना.		क्षा.	म.	का. शु. मा.१	के द. विना		मति. श्रुत.	1 .	न	1 .	<b>१</b> जन	र पं.	१ न.	1 * .	U		१ सं. अ.	अति. ~
--	--------------------------------	--	-------	----	--------------------	---------------	--	----------------	-----	---	-----	----------------	----------	---------	-------	---	--	-------------	--------

....

**٤**९८ ]

लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

णउंसयवेद-पमत्तसंजदप्पहुडि जाव पढम-अणियद्धि त्ति ताव इत्थिवेद-भंगो । णवरि सव्वत्थ णउंसयवेदो वत्तव्वा ।

अवगदवेदाणं भण्णमाणे अत्थि छ गुणद्वाणाणि अदीदगुणद्वाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासो वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अस्थि, दस पाण चत्तारि पाण दो पाण एग पाण अदीदपाणो वि अत्थि, परिग्गह-सण्णा खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिंदियजादी अणिंदियत्तं पि अत्थिं, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेदो,

औपरामिक, क्षायिक और क्षायोपरामिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी जीवोंके प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागतकके आलाप स्तीवेदी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि वेद आलाप कहते समय सर्वत्र एक नपुंसकवेद ही कहना चाहिए ।

अपगतवेदी जीवोंके आलाप कहने पर-आनिवृत्तिकरणके अवेद भागसे लेकर अन्तके छह गुणस्थान और अर्तातगुणस्थान भी होता है, संक्षा-पर्याप्त और अपर्याप्ति ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमास स्थान भी होता है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीत-पर्याप्तिस्थान भी होता है, दशों प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी होता है, परित्रहसंक्षा तथा क्षीणसंक्षास्थान भी होता है, मजुष्यगति तथा सिद्धगति भी होती है, पंचेन्द्रियजाति तथा क्षीणसंक्षास्थान भी होता है, प्रसकाय तथा अकायस्थान भी होती है, पंचेन्द्रियजाति तथा आतिन्द्रियस्थान भी होता है, प्रसकाय तथा अकायस्थान भी होता है, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग और अयोगस्थान भी होता है, अपगतवेद, चारों कचाय

१ प्रतिषु ' पंचिंदिय अणिट्रियत्तं अत्थि ' इति पाठः ।

नं. ३३०

### नपुंसकवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

1	गु.	जी.	q.	<b>प्रा</b> ,	सं.	ं ग.	ŧ.	का.	ये	Ì.	ं <b>वे</b> ∙	क.	ज्ञा.	∣ संय∙	द.	ले.	भ•	. स	सं ज्ञि.	आ.	ਤ.	l
	१	्र	Ę	१०	· •	२	१	२	S		į۲	8	3	2	्र	द्र. ६	्र	<i>w %</i>	र	2	ર	L
	÷	सं. प.				ति /	<b>म्</b>	म	म.	X	न	, 	मति.		के द			ओंप-	∣ सं-	आहाः	साका.	l
.	15	1				म.	<b>ч</b>	ন	व्	ጸ		ĺ	श्रुत.		विनाः	शुम.		क्षा.	Ì		अना.	l
		. 1						ĺ	औ	۶.	1	1	अव.			1	i	क्षायोः		+		l
											1	Í			ĺ	:	!		i			

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि,पंच णाण, चत्तारि संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दघ्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, दे। सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो,

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

विदिय-अणियट्टिप्पहुडि जाव सिद्धा त्ति ताव मुलोघ-मंगो।

एवं वेदमग्गणा समत्ता।

कसायाणुवादेण ओघालावा मूलोघ-भंगा । णवरि दस गुणहाणाणि वत्तव्वाणि । अदीदगुणहाणं, अदीदजीवसमासो, अदीदपज्जत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी,

तथा अकषायस्थान भी होता है, मतिज्ञान आदि पांचों ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात ये चार संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेज्यापं, भावसे शुक्रलेदया तथा अलेदयास्थान भी होता है; भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

अपगतवेदी जीर्घोके आनिवृत्तिकरणके द्वितीयभागले लेकर सिद्ध जीर्घोतकके प्रत्येक स्थानके आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए ।

इसप्रकार वेद्मार्गणा समाप्त हुई।

कषायमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापोंके समान हैं। विशेष बात यह है कि कषायमार्गणामें दश गुणस्थान कहना चाहिए। यहां पर अतीतगुणस्थान, अतीत-जीवसमास, अतीतपर्याप्ति, अतीतप्राण, क्षीणसंज्ञा, सिद्धगति, अनिन्द्रियत्व, अकायत्व,

<b>न.</b> ३३१
---------------

अपगतवेदी जीवोंके आछाप.

। য়.	) जी.	) प.	<u></u> त्रा.	( सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	្រគារ.	संय.	( द.	ं छे.	( भ.	. स.	∫सांबि.	े आ	े
हि	2	<b>₹9.</b>	१०,४	ł	8	8	१	२१	0	Y	4	8	8	द्र. ६	1 र	२	2	२	ર
अनि	सं.प.	<b>६</b> अ.	२,१	q.	म.	<b>q</b> .	<b>7</b> .	म.४	<b>_</b>	; 	मीतः	सा	 	भा. १	म.	औ.	सं.	आहा.	साका -
से	सं,अ	- -	÷.		<b>.</b>		1.	व. ४.	अपग	<b>भ</b> क्त्व।	श्रुत.	छे.	ĺ	. มู.	<b>H</b>	क्षा.	अनु-	अना.	अना.
अयो.	नें ।	<u>_</u>	1 .	<b>ा</b> णस	E	ल म	ଖ <b>ଅ</b>	ઔ ર		30	अन.	सू.		અજે.	लग				यु. उ.
अती.		<b>સ</b> તી	અતી.		<u>د</u>			कार्म. १			मनः	य.			1		į		
ग्र.	ਅਰੀ।	l		ļ	ļ	ļ	{	अयो.			केत्र,	अन्.	ļ				:		

**₹**, ₹- ]

छनखंडायमे जीवद्राणं

अपिंदियत्तं' अकायत्तं, अजोगो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसणं, दब्ब-भावेहि अलेस्साओ, णेव भवसिद्धिया, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, 'सागार-अणागोरेहि जुगवदुवजुत्ता वा त्ति णत्थि ।

कोधकसायाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्टाणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपजत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, पण्णारह जोग, तिण्णि बेद अवगदवेदी चि अत्थि, कोधकसाय, सत्त णाण, पंच संजम सुहुम-जहाक्खादसंजमा गरिय, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणे अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

अयोग, अकवाय, केवलकान, यथाख्यातविद्वारछुदिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्य और भावसे अमेरेस्यत्व, अव्यसिद्धिक विकल्पसे रद्दित, संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रद्दित, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त इतने स्थान नहीं होते हैं।

कोधकषायी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---आदिके नौ गुणस्थान, चौदह जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाए, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, कोधकषाय, केवल्जानके विना शेष सात झान, पांच संयम होते हैं, किन्तु यहां पर सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयम नही होते हैं; आदिके तीन दर्शन, द्रज्य और भावसे छहों छेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संविक, अर्क्षह्रक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ आ प्रतौ ' अणियहियत्तं पि अखिं ' इति पाठः । त. ३३२ कोधकषायी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	al	-)	ч.	) आ	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	छे.	म.	स.	सं ज्ञि.	आ .	<u>उ</u> .
15	28	Ę	ेष-	20,0	8	8	. 4	६	र५	₹	· ·	ভ	પ	્ર	द. ६	२	Ę	ર	ર	२
12	ļ	1.1	अ.	-	l I					Ē				के. द.					আৱা-	साका.
			<u>ч</u> .			ł				अत		विना.		विनाः	]	अ.		अस.	अना.	अना.
	1	1		6.4	1						İ	ļ	विना.							
			प.	६,४   ५		ł					ļ			1						
- I		18	া আন	¥,4	EI .	1					i. –	l .	Ι.	l	l	J	2	·		

तेसिं चेव पज़त्ताणं भण्णमाणे अस्थि णव गुणझणाणि, सन्त जीवसमासा, ज पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज़त्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण इत पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अस्थि, कोधकसाओ, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ,

उन्हीं कोधकषायी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर आदिके नौ गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां पांच पर्याप्तियां चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, पकेल्ट्रिय-जाति आदि पांचों जातियां: पृथिवीकाय आदि छहों काय, पर्याप्तकाल-भावी ग्यारह योग, तीनों वेद, तथा अपगतवेदस्थान भी है, कोधकषाय, केवलझानके विमा शेष सास झान, स्क्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्य.पं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्य, संझिक, असंझिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कोधकषायी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादाए, सासावनसम्यग्दाप्टि, अविरतसम्यग्दप्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीबसमास, छद्दों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात माण, सात माण, छिंद प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संक्षापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छद्दों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिक-

नं. ३३३			1	<u>কী</u> ধকণ
गु. जी.	<u>ष प्रा.</u>	सं. ग	इं.] क	. यो

कोधकषायी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

] गु.	जी.	प	<b>A</b> l.	संग ग	5.	का.	यों.	∣ वे.	] क.	<b>₹</b> 1-	संय.	) द	ਰੇ.	भ.	स.	संसि	জান	ਚ.	l
3	9	Ę	20	88	4	. इ. !	१ रम े	3	8		لع	२	द्र. ६	2	ह	२	१	२	
	पर्या.	ધ	\$				व. ¥	÷	को.	केव	सूच्या	के.द.	भा ६	म.			आहा.	सार्का •	k
3	पर्या.	¥	2				ગૌ. ર	5	!	विनाः	यथा.	त्रिना		. બ		अस .		अन्।	ļ
5	! ¦		૭ દ્	ļ 1			वै. १				तिना				ŀ	]			ĺ
1			8	<u>                                      </u>			আ. १			!	ļ	ļ	j	]	]	Į	1		l

100R ]

पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>३४</sup> ।

कोधकसाय-मिच्छाइईाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपअत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि बेद, कोधकसाओ, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्य भोषेहि छ लेम्साओ,

मिश्रकाययोग, आद्दारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग; तीनें वेद, कोधकषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन झान ये पांच झान; असंयम, सामायिक और छेद्दोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ठ लेश्यापं, भावसे छढों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आद्दारक, अनाद्दारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्रोधकषायी मिथ्याद्दष्टि जीयोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादष्टि गुण-स्थान, चोदहों जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संक्रापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग और आहारकामिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग; तीनों वेद, कोधकषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रन्य और भावसे छहों लेख्याएं,

નં. ૨૨૪

कोधकषायी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>ु</u> .			·				· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	यो.				<u>संय,</u> 3		<u>ल</u> े. द्र २			संहि	<u>आ</u> . े	<u>उ.</u>
। ४ मि	७ अप	६अ. ५अ. ४अ.	່ອ	ŀ	8	<b>%</b> 	2	४ औ.मि. वे,मि.			५ कुम, कुश्रु.	अस.	के.द.	কা	. म	सम्य.	सं. असं.	आहा. अहा. अना.	साका, अन्ता
सा. अवि- प्रम.		0 9.	4 4 4		ļ		1	आ.मि. कार्म			मति. अत			मा-६	1	} [			
			3	 					ļ	}	अं <b>व.</b>		· · · · ·						[

# १, १. ] संत-पर्ख्वणाणुयौगदारे कसाय-आलाधवण्णणं [७०३

मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>३३५</sup>।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भोवेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्त</sup>।

भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

તે. ૨૨૧

कोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवौंके सामान्य आलाप.

गु.	जी-।	q. '	प्रा.	र्स.	ग.	<b>ģ</b> ,	का	यो.	<b>व</b> .	<b>.</b>	्रज्ञ-	संय.	द.	છે.	( स.	स.	संझि-	आ	े उ.
			20,0	X	8	4	Ę	१३	1	र	३	8		द.६		र	2	২	ર
ांग.			1		}			આहા.ર	1	को	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा ६	म.	मि,	. सं.	आहा.	साका•
	ιI	५ <b>प</b> .	_	ł	]	1		विनाः		ļ			अच-		अ.	]	असं.	अना.	ગના.
1	1	ષ અ.	19,4			Į		ł		í	Į						1		ļ
ł	]	४प.	<b>६,</b> ४		]		1	1	İ	1	ĺ					Í	1		l
		૪૩૪.	٧,૨				1												
		1	Į	1	l						ļ _					Į	ļ .		]

નં. રૂર્૬

क्रेधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>] य</u> .	जी.	<b>q</b> .	[ <b>Я</b> ] -		·		का.		) वे	क.	हा.	संय-	<u>द.</u>	<del>ह</del> े.	<b>H</b> .	<u>स.</u>	संग्रि.	্ঞা.	<u>ਤ</u>	I
१ मि.	७ पर्या.	र्ष अ	१०	8	<b>8</b>	ւ Կ <u>է</u> 	8	१० स.४	ं <b>र</b> :	∣ १ ,को∙	<b>३</b> अझा.	र असं.	र चक्षु.	ह. ९ भा-६	्र म.	र मि.	सं.		<b>र</b> साका	
<b>I</b> "		¥	ć			l Į	Ì	वि ४ और	t į		4	ļ	ं अच.		अ.	!	असं.	}	अना.	
			9 4 3	1		l ŀ	ļ	जा. बे.		ĺ	۱			1	   		1	<u> </u>	I	ļ

#### 90¥ ]

क्रक्खंडागमे जीवहाण

तेसिं चेन अपछत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्टाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जचीओ पंच अपछत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्नेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>%</sup>

कोधकसाय-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज़त्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं कोधकषायी मिथ्याद्दष्टि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-- एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां पांच अपर्थाप्तियां चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, चारों गातियां, एकेन्द्रियजााति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, कोधकषाय, आदिके दे अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्याएं, भावसे छहों लेक्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संझिक, असंझिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कोधकषायी सासादनसम्यग्दपि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, संझी पर्याप्त और संझी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां। दशों प्राण, सात प्राणः चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योगः तीनों चेद, कोध-कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं,

#### ৰ, ২২৩

कोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

13.	जी-	प.	সা	. सं.	ग-	इं.)का	्यो	वे.	क.	. ज्ञा	् संय	। द-	ਲੇ.	म.	स∙	, संक्रि.	্র আ.	उ. ∣
1		হস.		8	x	५ ह		₹	9	<b>२</b>	٩	्र	<u>द्र</u> २	2	9	२	र	२
मि.	अप.						খী.দি.		को						ामि -	ſ	आहा.	साका.
		۲,,					वे मि.		.	ઝુઝુ.		अच.	Į.			असं.	अन्।.	अना-
	. 1	ĺ	د د				कार्म.		1		Į		मा १					
	i j	1	¥, Ę			J				İ.	<u>}</u>		<u>i</u>	j				

१, १.]

19.03

आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सद ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्गि वेद, कोधकसाओ, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ ठेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणड्ढाणं, एओ जीवसमासो, छ

भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्विक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कोधकषायी सासादनसम्यग्दाष्टे अधिकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, लहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग; औदा-रिककाययोग और चैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, कोधकषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन; द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कोधकषायी सासादनसम्यग्दाप्टे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात माण, चारों

नं. ३३८

१८ कोधकषायी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप

य.		·		·	কা.	यो	वे. क.	<b>氡</b> 1•	संय.	्र,	ð.	्भ-	स	संदि.	জা-	ज. ।
2			20 8		१	१३ आहा २	३ १	्र अलग	र	्र चल्र	द.६		2	१	े <b>२</b>	<u>२</u>
8181	सं.प. सं.अ	<b>1</b>		<b>**</b>	1.	विनाः	-1+[-	्यस्ताः	জন্ন•	चक्षु. अच.	141.4	4.	HI HI	सं.	•	∙साझा अमा.
{	1				i										1	

## नं. ३३९ कोधकवायी साासदनसम्यग्दाष्ट जीवॉके पर्याप्त आठाप.

2 2	<u>ष. त्रा.</u> सं ६ १० ४	• j · j ·	. ]का.   १	20	<b>२</b> १	Ę	8	· 2	द्र. ६	भ	<u>ک</u>	9	2	<i>ड.</i> २
. सं. प. !!!!!		ġ.	1 1 1	म.४ व.४ औ.१. वे.१	Ph [+	अझा.		चक्षु. अच.	मा∙ ६	म.   	सासा.	. स.	आहा.	साकाः अनाः

छक्खंडागमे जीवहाणं

908 ]

अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो. सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ°</sup>।

कोधकसाय-सम्मामिच्छाइहीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज़त्तीओ,, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दब्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागाह्रबजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>अग</sup>।

संझापं, नरकगतिको छोड़ कर शेष तीन गतियां; पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, कोधकषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रब्यसे कापोत और शुक्क छेझ्यापं, भावसे छहों छेझ्यापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कोधक पायी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर---एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों धचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रि-यिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, कोधकषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके देा दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आह्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३४० कोधकषायी सासादनसम्यग्दाष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु. १	· i —	. प. इ.अ	 सं. ग ४	<u>T. 1</u> 3	् श	। २ व	<u>n.</u> E	<b>वे.</b>   २	क, रः	<u>झ</u> . २	∣ संय∙ ∣ र	<u>द.</u> २	हे. इ. २	<u>म</u> . १	<u>स.</u> १	संग्रि   र	<u>आ</u> . २	<u>उ.</u> २	
सा.	म			ते. पं र.	चे. त्र		मि मि		ही.	ক্ত <b>म</b> . কৃপ্তৃ.	अस.	चेक्षु. अच.	का. शु.	म.	सासा.			साका. अना.	
			ŝ	<b>t</b> .		क	ાર્મ.		]				भा द						

#### नं. ३४१

कोधकषायी सम्यग्मिथ्याद्याष्ट्रे जीवोंके आलाप

ย.	[	जी-।	ч.	গা-	सं.	ं ग.	<b>(</b> ₹.	का.	यो.	वे,	क	्रज्ञा.	संय.	्द.	छे	•	म∙	स.	संक्रि.	आ.	ਰ.
2	ĺ	र	Ę	80	8	8	2	2	20	ર	1	₹	٤.	২	द्र.	Ę	٢.	१	2	2	२
	ġ.	. प.					<u>.</u>	÷	म. ४		को.	ञ्चान-	अस	चक्षु.	मा.	ξ	म.	सम्य.	सं.	আহ্বা	साका,
HH-	Í						1.22	ন	ਕ_	ļ		₹	ļ	अच.			:				अनाः
1							ļ		ઔ. શ	1		अझा.			İ		i				
	Į	j		]			.	j	वे. १	Ι	]	मिश्र.	}		}	J			1	۱ <u> </u>	

कोधकसाय-असंजदसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>ध्य</sup> ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति

कोधकषायी असंयतसम्यग्दाष्टि जीवोंके सामान्य आछाप कहने पर----पक अविरतसम्य-ग्दाष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना रोष तेरह योग, तीनों वेद, कोधकषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रक्य और भावसे छहों लेक्श्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, शायिक और झायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कोधकषायी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दद्दा योग, तीनों वेद, कोधकषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्द्दान, द्रव्य और भावसे छहों लेद्याएं, भग्य-सिद्धिक, औपदामिक, झायिक और झायोपद्यामिक ये तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक,

#### નં ૨૪૨

2. 2. ]

कोधकषायी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

R	I•}	जी,	ष.	<b>प्रा</b> .]	<b>स</b>	ग.	<b>\$</b> .	का.	यो.	वे.	क.	झा.	संय-	द.	ਡੇ.	भ.	_स.	संक्रि	্ঞা	ਫ.
	Ē			१०			- 1	٤	१३	3	2	3	र	्र	द्र. ६	٤	3	१	ર	ર
¢	Ē	तं.५. तं.अ.	६अ.	ט'	. 1		Ē	Η	आहा.२ विना.						मा. ६	म∎	औप.	स.	आहा.	
8	5	स.अ.				į	<b>D</b> -	16.2	विनाः	1	ļ	श्रुत अव		विनाः			क्षा. झायो.		अन।	्ञनाः
		i				ļ	1		ļ		ļ	ાં i i			ļ		પાયમાં			

अपनगरमजुत्ता दा<sup>रथ</sup> ।

तैसिं चेव अपछत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपछत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद इत्थिवेदो णत्थिः कोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दग्वेण काउ-सुक्कलेस्ताओ, भावेण छ लेस्साओः मवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup> ।

## साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कोधकषायी असंयतसम्यग्दाप्टे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दाप्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुष और नषुंसक ये दो वेद होले हैं, किन्तु यहां पर स्त्रीवेद नहीं होता है; कोधकषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, आदिको सीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं; भव्यसिद्धिक,

#### **# 3**83

कोधकषायी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

म.	जी,	<u>प</u> .	<u>त्रा</u> .	. सं	्ग.	<u>₹.</u>	কা.	यो.	] वे.	ক.	য়া.	. संय	<u>द.</u>	हे.		सं.	संक्रि.	आ,	ড.
12	٩	• 🛒	10	¥	8	9	9	90	₹.	9	्र	9	3	द्र. ६	9	्र	9	9	ર
شد	<b>•</b> .•.					<b>1</b>		म. ४	İ	को.	मति.	अंस.	के द	मा. ६	भ	औप.	सं.	आहा.	साका
त्त	<b>.</b>					1	권위	व. ४	ļ		श्रुत.		विनग.			क्षा.	Į		अना.
					1			औ.१			अव.					क्षायो.		ļi	
	ŀ.	ŀ,						वे. १			ĺ		ł				]		

#### नं. ३४४

कोधकषायी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

स्रोत. ~ (अ	 ६अ.	সা. ড	सं- ¥	8	इ. १ प.	१ त्र.	यो. ३ औ मि वै.मि. कार्म.	ર. પુ.	१ को.	₹	१ असं.	र के.द. विना.	द. २ का	२ भ	3	१ सं.	्र	उ. २ साका. अना.	
			ļ						l J		1					}			

### 00.61

कोधकसाय-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पजजीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेरसाओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेरसाओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>३84</sup>।

केधिकसाय-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, (मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ', ) चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउन्पम्म-सुक्कलेस्साओ; भव-

कोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आछाप कहने पर---- एक देशाधिरत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षाएं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंत्रेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोस, और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, कोधकषाय, आदिके तीन क्षान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेझ्याएं, भाव से तेज, पद्म और शुक्क छेझ्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारी-पयोगी होते हैं।

कोधकषायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, छहों अपर्यातियां, दर्घो प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग तीनों वेद, कोधकषाय, आदिके चार झान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविद्युदि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे छहों लेक्ष्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेक्ष्याएं;

१ प्रतिषु कोष्ठकान्तर्गतपाठे। नारित !

नं, ३४५

1. 2. 1

## फोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

Í	देस. ~   झ	<u>नी.</u> १ सं. प.	Ę	प्रा, १०	8	ग. इ २ १ ति म.	वस. ≻	९ म.४ व.४	३	2	ुश्रुत.	<u>द.</u> ३ के.द. विमा•		स. २ औप. क्षा.	संझि. २ सं.	मा. १ आहा.	<b>ह.</b> २ साका. अनग.	τ.
		J						औ. १			জন-		34.	था। श्रायो-				

Jain Education International

•१• ]

छक्खंडागमे जीवहाणं

सिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"।

कोधकसाय-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, मावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रूण</sup> !

भव्यसिद्धिक, औपदाभिक आदि तीन सम्यक्तव, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कोधकषायी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अग्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संझा-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंझाके विना शेष तीन संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औद्यारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, कोधकषाय, आदिके चार झान, सामायिक, छेद्योपस्थापना और परिहारविद्युद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुद्ध लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

તં. ૨૪૬

कोधकषायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

2	<u>.</u>	जी.	<u>q.</u>	<u>} —                                   </u>	<u> </u>	<u>ग</u> .	<u>Ę</u> .	কা.			·	হা.	संय.	द.		भ.	स	संज्ञि.	<u> </u>	<u> </u>
1	2	२	हप.	50	Χ.	٤.	्रः	1	११	3		8	ं द	; <b>₹</b>	द्र. ६	र	্ৰ	' <b>र</b>	१	ि २
L	-	सं∙प <b>.</b> सं.अ.	६अ.	່ ຢ		म.	10	च	ਸ. ਖ ਰ. ਖ	:	को.				भा. ३		औप.	सं	आहा.	साका.
	k	सं.अ.	ĺ	ļ	:		σ	142							য়ুম,	í	क्षा.			अना.
1			Į						) औ. १		:	अत्र.	वरि -	!		l	क्षायो.			{
									आ.२	1		मनः.		İ		i i	:			
1		ļ	l L						/	i	i ļ		1	+ :			•		1	l l

### નં. રૂ૪૭

कोधकषायी अप्रत्तसंयत जीवोंके आछाप

<u>अप्र</u>	ही. २ म	प ह्	१०	सं. ३ आहा. विना.	2	1 8	\$	९	् इ इ	१ को.	 माति -	1 ~ ~	३ के.व	द्र. ६ मा. २	१   म- 	िर	į	2	<u>ड.</u> २ साकाः अनाः	
-------------	---------------	---------	----	---------------------------	---	-----	----	---	-------------	----------	------------	-------	-----------	-----------------	---------------	----	---	---	---------------------------------	--

१, १. ] संत-यरूषणाणुयोगदारे कसाय-आळाववण्णणं [७११

कोधकसाय-अपुच्वयरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>346</sup>।

"'कोधकसाय-पढमअणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणडाणं, एगो जीवसमासे, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,

फ्रोधकषायी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप कहने पर---एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आद्दारसंक्राके विना शेष तीन संक्रापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व; संक्रिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कोधकषायी प्रथम भागवर्ती अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर--पक अनिवृ-त्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, तीनों

नं, ३४८ कोधकषायी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप.

12	l i	f).	ч.	<b>я</b> г,	सं.	ग	÷.	का.	ं यो	•	वे.∶क	<b>हा</b> .	संय.	द.	ੁ ਲੇ.	्भ,	. स	संशि.	ঙ্গ্য.	ਤ.	
	τļ	t	Ę	20	३	<u>ا</u> ۲	<u>۲</u>	्र	٩	- ب	३ १	x	्र	3	द्र, ६		২	र	2	ર	
ł,		÷	ļ	!	आहा विना	म.	_•		म.	¥	कि	मति.	सामा-	केद.	भा. १	म.		सं.	आहा.	साका.	
	זי	'IP	i İ	i.	विना	.	막	4	ंव्.	<b>x</b> [		श्रुंत.	ं छेदो.	विनाः	যুষ্ণ,		क्षाः	ĺ		अना.	
ł	-	1	i			÷	İ		আ	2	•	अन.	· .			'					
			ì	•	!		1	•	:	,		मनः.				<u> </u>		<u> </u>	<u>!</u>	j	ł

न. ३४९ कोधकषायी प्रथम भागवतीं अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप.

g.	जी.	Ч.	<b> 91</b> .	सं.	ग.	<b>ę</b> .	কা,	यो.	वे.	क,		संय.	द.	ð,	म.	स.	संज्ञि.	आ.	ड.
Į.	र	Ę	20	2	१	<b>र</b>	٤	٩	३	2	8	२	्र	द्र. ६	1	<b>२</b>	[ <b>२</b> ]	2	२
<u>ب</u>	सं.प.		ļ		म.	4	त्रस.	स. ४		को		सामा.			म.	औष.	स.	अहा.	
આતે.	{ {			q.			권	व. ४ औ. १			श्रुत. अन.	छेदो	विना.	38.	ļ	क्षा.			ं अनाः
ल			1		ļ			-41. J	i i i i		मनः.	l I	l	ł	Į	}			t

तिणिग वेद, कोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिणिग दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुककलेस्साः भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

कोधकसाय-विदियअणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, कोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ हेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-बजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>३००</sup>।

एवं माण-मायाकसायाणं पि मिच्छाइडिप्पहुडिं जाव अणियट्टि ति वत्तव्वं। णवरि जत्थ कोधकसाओ तत्थ माण-मायाकसाया वत्तव्वा। लोभकसायस्स कोधकसाय-भंगो। णवरि ओघालावे भण्णमाणे दस गुणट्ठाणाणि, छ संजम, लोभकसाओ च वत्तव्वे।

वेद, कोधकषाय, आदिके चार बान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दें। संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे छहों लेक्यापं, भावसे शुक्रलेक्या; भव्यसिद्धिक, औपर्शामक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कोधकवायी द्वितीय भागवतीं अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर--एक अनि-वृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिष्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, कोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसीप्रकारसे मानकषायी और मायाकषायी जीवोंके मिथ्यादप्टि गुणस्थानसे लेकर अनि-वृत्तिकरण गुणस्थानसकके आलाप कहना चाहिए। विरोष बात यह है कि कषाय आलाप कहते समय जहां ऊपर क्रोधकषाय कहा है, वहांपर मानकषाय और मायाकषाय कहना चाहिए। लोभ-कषायके आलाप क्रोधकषायके आलापोंके समान हैं। विरोष बात यह है कि लोभ कषायके ओबालाप कहने पर-आदिके दशा गुणस्थान, संयम आलाप कहते समय यथाख्यातसंयमके

नं. ३५०	ক্ষাঘকঘায়ী	द्वितीय भागवर्ती	अनिवृत्तिकरण	जीवॉंके	आलाप.
---------	-------------	------------------	--------------	---------	-------

<u>छ</u> . २	<u>জী.</u> হ	प. इ	प्रा. १०	सं.	<u>ग.</u> १	<u>इ</u> . १	का. २	<u>यो.</u> ९	वे. ०	2	४ मति.	<u>स</u> ंय. २	3	ले. द्र. ६	) <del>ग</del> . र	२	संझि. १	8	<u>उ.</u> २	
1.3	सं.प			۹.	म.	पं.	14.	म. ४		को			-		म∙ ∣		. सं.	आहा.	साका	ľ
ઑને. ડિ.						Ì	1	व्.४	5		अव.	જેવો.	त्रिनाः	যুক্ত,		ধ্যা.			अना.	
1			1	1			1	औ- र	<u> </u>	j	े मनः								ı	ļ

.....

१, १. ]

<sup>294</sup> अकसायाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि अदीदगुणहाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, दस चत्तारि दो एगं पाण अदीदपाणो वि अत्थि, खीणसण्णा, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिंदियजादी अणिंदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिंदियजादी अणिंदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच णाण, जहाक्खादविद्दार-सुद्धिसंजमो णेव संजमो णेव अत्तंत्रमो जेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवांसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आद्दारिणो

बिना छह संयम और कषाय आलाप कहते समय लोभकषाय कहना चाहिए।

अकषायी जीवोंके आलाप कहने पर-उपशान्तकषाय, सीणकषाय, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अप-र्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है; दशों प्राण, सयोगिकेवलीके संभवित चार प्राण और दो प्राण, अयोगिकेवलीके संभवित एक प्राण और सिद्ध जीवोंकी अपेक्षासे अतीतप्राणस्थान भी है; शीणसंक्षा, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी है, पंचेन्द्रियज्ञाति तथा अनिन्द्रियत्वस्थान भी है; शीणसंक्षा, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी है, पंचेन्द्रियज्ञाति तथा अनिन्द्रियत्वस्थान भी है, त्रसकाय तथा अकायत्वस्थान भी है, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाय-योग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, अपगतवेद, अकषाय, पांचों सम्यग्ज्ञान, यथाख्यातविद्वारशुद्धियम तथा संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान भी है, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएं, भावसे शुक्कलेइया तथा अलेइयास्थान भी है; भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकर्झ्योसे रहित भी स्थान है, औपशमिक और क्षायिक ये देश सम्यक्त्व, संक्षिक तथा

१ आ. प्रतौ '' एग १०-४--२-१ '' इति पाठः ।

નં. ૨५१

#### अकषायी आवांके आलाप.

] गु.	जी.	ष.	সা -	सं,	ग.	ţ.	क।	यो.	∣ वे.	ं क.	हा.	] संय.	द.	ले.	ं भ	. स.	संझि.	ঙ্গা,	ड. ।
X	<u>२</u>	६प.	20,8	•	2	1	1	1 22	0	0	્ય	१	8	<u>ج</u>	2	२	2	िर	२
अंत.	सं.प	६ अ.	۹,۹		म.	पं.	গ,	म ४	ا بيا		मति.	यथा,		भा. १	म.	औ	.स	आहा.	साका.
			अती	र्ष्वाणस.	सि.			व.४	આવે શ	अकषा.	श्रुत.	अनु.		যুক্ত,	يتبر	क्षा.	अनु.	अना.	अना.
			प्राण.	-22-	ļ	<u>स</u>	अका	औ.२		ন	अव.			अले	के		} -	i	पु. उ.
Ţ	जीव.	į –	Į					कार्म १			मन.				1		ļ	İ	<b>`</b>
				Į.		ł		अयो.			केव.				ſ				
	1	ĺ	· ·	l	1	Į	ļi			[		[			}		ļ		1

[ ₹, ₹.

हुक्खंडागमे जीवहाणं

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ( 'सागार-अणागारेहि जुगवदु-वजुत्ता वा । )

उवसंतकसायप्पहुडि जाव सिद्धा ति ओघ-भंगो ।

एवं कसायमग्गणा समत्ता।

णाणाणुवादेण ओघालावा मूलोघ-भंगा ।

ेंमदि-सुद्अण्णाणीणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वाणाणि, चोद्स जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अह पाण छ पाण सत्त

संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आद्वारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयक्त भी होते हैं।

अकषायी जीवोंके उपशान्तकषाय गुणस्थानले लगाकर सिद्ध जीवोंतकके प्रत्येक स्थानके आलाप ओघालापके समान जानना चाहिए।

इसप्रकार कषायमार्गणा समाप्त हुई ।

ज्ञानमार्गणाके अनुवाद्से ओघालाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए।

मति श्रुत अज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्याद्दष्टि और सासादन-सम्यग्दष्टि ये दो गुणस्थान, चौद्दें। जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दर्हों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण;

१ प्रतिषु कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

ને. ૨५૨

## मति श्रुत अज्ञानी जीवौंके सामान्य आलाप.

गु. जी. २ १४ मि: सा:	प. ६प. ६अ. ५प.	সা. ২০,৩ ९,৩ ८,६	सं. ४	 18. 18.	Ę	यो. १३ आ.दि. विना.	2	x	शा. २ कुम. कुथु.	१ असं.	2	द्र. ६ भा. ६	२ म•	२ मि,	<b>२</b> आहा.	<u>उ</u> . २ साका• अना•
	५.अ. ४ <b>प</b> • ४अ	٤,४	ļ													

983

पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुर्वीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंनण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजत्ता होति अणागारुवजत्ता वा ।

<sup>\*\*</sup>तेति चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि दे। गुणद्राणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पडजत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ. दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ. पुढवीकायादी छ काय. दस जोग. तिण्णि वेद. चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मर्च,

चार प्राण तीन प्राणः, चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां' पृथिवीकाय आदि छहें काय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाथयोगके विना तेरह योगः, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दें। अझान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावले छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व थे दे। सम्यक्त्व, संश्विक, असंश्विक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मति-ध्रत-अज्ञानी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके दो गुणस्थान, सात पर्योप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, वर्शों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां. एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहां काय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग, औवारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दरा योगः तीनों चेव, चारों कवाय. आहिके हो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेज्याएं, भव्यसिद्धिक. अभ्राव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संश्विक, असंश्विक।

ન. ૨૧૨	नं.	રૂપર
--------	-----	------

मति-श्वत-अज्ञानी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु २ मि सा.	<u>जी</u> . ७ पर्या.	प. इ. ५. ४	20	-	·		·	यो. २० म.४ व.४ औ.१ व.१	3	8	ર	१ असं•	२	द्र. ६ भा. ६	२ म.	२ मि	२		२	
----------------------	----------------------------	------------------	----	---	---	--	---	---------------------------------------	---	---	---	-----------	---	-----------------	---------	---------	---	--	---	--

[ ₹, ₹-

( # 8 e

सम्भिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाइवजुत्ता होंति अणागाहवजुत्ता वा<sup>रभ</sup>।

मदि-सुदअण्णाण-मिच्छाइहीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, चोद्दस जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपअत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अहु पाण

आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों मति-श्रुत-अझानी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके दो गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्या-प्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों कायः औदुररिकमिश्रकाययोग, वैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों येदू, चारों कषाय, आदि के दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेक्यापं, भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासा-बुनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संझिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादाष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक मिथ्यादष्टि गुणस्थान, चौदद्द जीवसमास; छहों पर्योप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्य प्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात

નં. રૂપ્ઇ

मति-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

12	∫ जी∙	<b>q</b> .		सं.	ग.]	ţ.	का	यो-	वि.	<u>क</u> .	ं ज्ञा-	संय.	द.	ਰੇ.	भ.	. स.	संझि.	্ঞা.	ਤ.	1
3	v	<b>૬</b> ઞ.	9	¥	8	ંપ	Ę	, <b>`</b>	₹	8	२	<b>.</b>	२	द्र २		ंर	२	्र	२	
- मि,	अप.	در ۲۹	ও			i	i	औ।मि.		1	कुम.	असं.	चक्षु.	ৰু ন	स.	मि.	.सं.	आहा	साका.	
्रसा.	.	۷.,	Ę					वै.मि			ক্তু স্তু .		अच•	য়.	अ.	सा.	असं-	अना-	अना.	
L			4					कार्म.			-			मा. ६	ĺ	Ì		1   1		
			8 3			1	;	I	ļ	j –							Į	· ·	1	

छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गर्दीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेम्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, भिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होति अणागाहवजुत्ता वा<sup>रभ</sup>।

<sup>396</sup>तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पजत्तीओ चत्तारि पजत्तीओ, दस पाण णव पाण अह पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच

भाणः आठ प्राण, छह प्राणः सात भाण, पांच भाणः छह भाण, चार प्राणः चार प्राण, तीन भाणः चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, एकेस्ट्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छद्दों काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावले छद्दों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंक्षिकः आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मति-श्रुत-अझानी मिथ्याद्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां चार पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों

**नं.** ३५५

मति-श्रुत-अझानी मिथ्यादाष्टे जीवोंके सामान्य आलाप.

1		 १०,७	R	 इ. प	Ę	योः १३ अल्दि. विनाः	वे. २	¥	२ क्रुम.	संय. १ असं.	<u>द.</u> २ चेक्षु. अच.	इ. ६ मा• ६	२ म•	र मि.	२ सं.	<u>आ.</u> २ आ <b>हा</b> .		
	4	७,५ ६,४				(441)			कुथु.∙		जि.		) अ. 		असं.	अना.	अना.	

#### नं. ३५६

## मति श्रुत-अन्नानी मिथ्याददि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>गु</u> २ मि	ড		·	सं. ग ४४	 ि	१० म.४ व ४	₹	¥	२	१ असं.	२	हि. म. स द. ६ २ १ भारद्माः मि अ.	-    <b>२</b>	<b>१</b> आहा.	- <u>-</u>
		Ì [	ও ই ই	Ì	1.	औ. १ वै. १	:	1	i						

2, 2.]

छक्खंडागमे जीवद्राणं

•۶۷ ]

जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, देा अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्विया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागाहवजुत्ता होति अणामाहवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपझत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्दाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपझत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>क्ष्य</sup>।

संझापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहां काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादाष्ट जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक मिथ्यादाष्ट गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियज्ञाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, चैकिथिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों बेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेइयाएं, भावसे छहों लेइयाएं, भव्यतिद्धिक, अभव्यतिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक; आदारक, अनाद्दारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ন, ২৭৩

मति-श्रुत अज्ञानी मिथ्याद्यप्रि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

肉.	। जी-	, प.	৸য়৽	∣ संं∙	<b>ar.</b>	Ŧ.	का.	_यो	वे.	,क.	<b>.</b>	. संय	द.	छे.	म.	् स.	, संक्रि.	জা.	उ.
1	9	इअ.	· · · · ·	8	8	4	Ę	२	3	8	२	3	२	द.२	2	9	२	२	ર
ांग	. अप.	4 ,,	9					औ.मि.		1		'असं		কা.				· ·	साका.
		¥ "	Ę	1	1			व मि.		1	જી શું.	ļ	अच.	-	ञ.		वस.	अना	अनाः
			4					कामे.					ļ	मा. ६					
	1		¥ ₹	1										1		ł	ļ		

## संत-परूवणाणुयोगदारे णाण-आळाववण्णणं

मदि सुदअण्णाण-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे आत्थि एयं गुणडाणं, दो जीव-समासा, छ पज़त्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्गि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>84</sup>।

ेतेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

मति-श्रुत-अझानां सासादनसम्यग्दष्टि जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, संग्री-पर्याप्त और संग्री-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, छहां अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संग्रापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावले छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संग्निक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं माति-श्रुत-अक्षानी सासादनसम्यग्दाप्टे जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर- एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग,

नं. ३५८ मति-श्रुत-अल्लानी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप-

) गु.	जी-	q.	(मा.	। स	ग_े इ	ुका.	∣ यो∙	वे.	) क	<b>झ</b> ा.	संय.	्र.	छ.	[म•	} स	संझि.	्ञा.	<u>उ</u> .
۶	२ सं.प.	६ <b>ए</b> ५अ.	१०	*	४ १ पं.	<u>र</u> त्र.	१३ आ दि	4	¥	्र कुम.	र असं.	२ चक्षु.	द.६ मा.६	१ भ	ب ۲	१ सं.	२ आहा	२ साका -
RIA	સં.અ.				1		विनाः			જી શુ		अच.	मा-६		सास		अना.	अना.
ļ	1			i.				İ	i		1	ļ	i					

नं. ३५९ माति-श्रुत-अञ्चानी साासदनसम्यग्दाष्ठि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

1	<b>ŋ</b> .]	जी-	<b>q.</b>	प्रा.∣	सं.	ग.	<b>.</b>	কা	्यो -	वे.	ক.	লা-	. संग	द.	े ले.	ं म	. स.	संझि.	आ.	3. 1
	2	<u>ر</u> ب	Ę	t o	۲	*	2	8	<b>१</b> ० <b>म भ</b>	३	*	२	् <b>१</b>	2	द्र. ६	्रि	र	१	्र	२ साका
1	सास?.	स•प.					प चे	त्रस	म.४ व्४			कुम. कुश्चु	1	पछ्. ¦अच.	i	٩.		। स• 	आहा.	अना.
									औ.१ ब.१			:	ļ		ļ	ļ				

१. १.]

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणड्ढाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचि दियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

विभंगणाणाणं भण्णमाणे अत्थि दे। गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

औदारिककाययोग और चैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्य और भावसे छद्दों लेश्यापं, भब्यसिदिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी द्वोते हैं।

उन्हीं मति-श्रुत-अझानी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---- एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, नरकगतिके विना द्येष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों बेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेद्याएं, भावसे छहां लेदयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्तव, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विभंगवानी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर--आदिके दो गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, व्हों प्राण, चारों संबाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

नं. ३६०	मति श्रुत-अन्नानी	सासाद्नसम्यग्दष्टि	जीयोंके	अपर्याप्त	आलाप.
---------	-------------------	--------------------	---------	-----------	-------

<b>17.</b>	जी	े प.	্যা -	सं	<b>n.</b> ji	<b>\$.</b>  ª	্ৰ ক	यो.	वे.	ক.	झा.	संय	द.	् हे	भ,	स.	। संदि	आ.	. उ.
र सा.		् इ.अ	6			र चि.	<b>२</b> जन्म	२ १ ो कि		· · ·	ेर कुम.	े १ अस	२ च श्र	द्र २ का	१ भ	<b>१</b> सामाः	र म.	<b>२</b> आहो	े <b>२</b> साका,
1	ल म	1			H.			ामे.			কুস্থু.		अच	-					अन्।
	1	Ì		T	<b>3.</b> [		्व	हार्म.	:			•		मा ६				:   	:

৩২০ ]

2, 2.]

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणं, असंजमो, दो दंसण, दव्व भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>श्य</sup> ।

विभंगणाणि मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेद्दि छ हेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, एक विभंगावधिक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रब्य और भाषते छहों लेड्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विमंगझानी मिथ्यादाष्ट जीवोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छढों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छढों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३६१

विभंगहानी जीवोंके सामान्य आलाप-

ਤ•
२
साका.
अनाः

#### ર્ન. રુદ્દર

## विभंगज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आछाप.

र	जी. २ सं.प.	प ६	प्रा. १०	<u>स</u> ं. ४	8	<u>इ.</u> १	का. १ त्रस	यो - १० म ४	वे.   ३	8	. झा १ विम.	संय. १ असं.	- २	ह. ६ मा. ६	2	2	संझि. १ सं.	१	र २ साका.
		i						व. ४ औ. १ वे. १					अच.		<b>अ</b> .			[       	अना.

छक्खंडागमे जीवद्वाणं

विभंगणाणि सासणसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-बजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup> ।

आभिणिबोहिय-सुदणाणाणं भण्णमाणे अत्थि पत्र गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज़त्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगद-वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, दो णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दघ्व-भाबेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो

विभंगन्नानी सासादनसम्यग्दाष्टि जीवेंकि आछाप कहने पर---पक सासादनसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, पक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझापं, चारों गतियां. पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त दश योग, तीनों वेद, चारों कवाय, विभंगावधिझान, असंयम, आदिके देा दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्स्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आभिनिषोधिक और श्रुतक्कानी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावते छहों लेइयाएं, भन्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्ययस्य, संज्ञिक, आद्दारक, अनाद्दारक; साकारो-

#### ર્ન. રૂદ્રર્

विभंगहानी सासादनसम्यग्टाई जीवांके आलाप.

<u>.</u>	जी.	प.	<u>अ</u> .	.सं	ग.	) <b>Ť</b>	কা.	यो	्वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ਲੇ	भ	. स.	साज्ञ	आ.	<u>.</u> उ.
१ सासा.	<u>۲</u>	Ę	१०	ዳ	x	8	१	१०	३	8	<u>ر</u>	<b>१</b>		द्र ६		2	<u>ع</u>	१	२
atar.	<b>ਜ. ਪ</b> .					<b>Ч.</b>	त्र.	म. ४ व. ४			ावस.	अस.	चक्षु. अच्	मान्द	म.	सा.	. स.	आह्य	स का. अना.
								औ. १											
								वै. १					İ		i				
															•		ļ		ľ

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिं-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, दो णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>रू</sup>।

## पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतक्षानी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान से क्षीणकषाय तकके नौ गुणस्थान, पक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, उन्हों पर्याप्तियां; दर्शों प्राण, चारों संक्षापं तथा क्षीणसंक्षास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, बारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे लहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्य, संत्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

#### નં. રૂદ્ધ

मति-श्रतज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप.

<u>यु.</u> जी. प. प्रा. सं. ग. इं ९ २ ६ प. १०४४ १ अवि. सं.प. ६अ. ७ , से सं.अ. हि झीण,	का. यो. वे. क. ज्ञा. संय. द. १ १५ ३ ४ २ ७ ३ द्र. त्र. हे. हे. मति. के.द. म हे. हे. हे. अत. विना.	
---	---	--

#### नं. ३६५

मति-श्रुतवानी जीवॉके पर्याप्त आखाप.

। यु.	जी.	प.	त्रा.	e.	ग.	ŧ.	কা,	यो	•	वि.	] क.	झा-	( संय.	द.	ਡੇ.	स.	स.	संझि.	्ञा.	<b>ë</b> ,
9	्र	Ę	१०	X	۲	\$	2		म.४	२	¥	२	و	्र	द्र. ६	2		2	१	२
अवि- से	स.प.			गसं.		a A	त्रस.	'व. औ.	* *	अपग.	अकवा	मति.		के.द. विनाः	भा-६	म.		स.	आहा.	। साका. अमा.
श्री.				क्षीणसं				्जा. वै.		ন	5	श्रुत.		(971)			क्षा. क्षायो	İ		অশা•
	ļ				,	'		आ	-	J	]		1		1			Į	ļ	

१, १- ]

छक्खंडागमे जीवडाणं

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि दो गुणट्टाणााण, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, ातीण्णी सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वज्रत्ता वा <sup>३९६</sup>।

आभिणिबोहिय-सुदणाण-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

उन्हीं आभिनिवोधिक और श्रुतक्षानी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-अबिरतसम्यग्हाप्टि और प्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षाएं, चारों गतियां, पंचेन्ट्रियजाति, जसकाय, औदारिकमिश्र, वैकिथिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग ये चार योग, स्त्रीवेदके विना रोष दो वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो झान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भष्यसिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आभिनिबोधिक और श्रुतक्कानी असंयतसम्यग्दाष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दार्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दशौं प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, जसकाय, आहारकद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो क्वान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेक्याएं,

न, ३६६

मति-श्रुतशानी जीवोंके अपर्याप्त आलाप

<u>गुः</u> २ अवि. म.	१	पः इ. अ.	সা. ৩	सं. ४	ग. ४	2	४ औ.मि वे, मि आ.मि	न.	1   Y		संय. ३ असं. सामा केंदो.	३ के.द. विनाः	१ भ	<u>स.</u> ३ औप. झा. झा.ग	! 	। - <u>-</u> २	<u>ु</u> २ साकाः अनाः	L
1			ll		l	i r	कार्म.	[	ł	l		l	ļ	1	} .		ł	l

₩₹₽]

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ""।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-मावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्त</sup>।

भन्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आह्वारक, अनाह्वारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आभिनिबोधिक और अुतक्षानी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकाळसंबन्धी आछाप कहने पर-एक आविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संक्षाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनेायोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों बेद, चारों कषाय, मांते और श्रुत ये दे ब्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीनों सम्यक्त्व, सांक्रिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं ३६७

मति श्वतज्ञानी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु-	জী.	4.	সা-	सं.	ग.	इ.	কা	यो ग	वे -	क.	झा.	संय.	्द.	<u>ह</u> े.	स.	्स.	संक्रि.	্ঞা.	₹.
2		<b>२प.</b> हःज्य			8	2	े १     	१३ आ हि	₹ ]	ጸ	्२ मनि.	१ अम्र	३ के.ट.	द्र. ६ भा. ६	१ स.	्र औप.	<b>१</b> सं.	<b>२</b> आहा.	२ सा <b>का</b> ,
आहे	सं∙अ∙	4.41			:	ਧ	3.4	आ. दि, विनाः	:		<b>अ</b> त-		विनाः			क्षा.		अनाः	अना.
		   							 		 ]	j	i i			क्षायाँ.	j		

## नं ३६८ मति-श्रुतबानी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। गु	जी,	<b>q</b> .	(त्रा.)	सं,	] ग.			यो.	) वे.	<b>क</b> .	झा.	( संय •	द.	े हे.	मः	सं.	संसि	आ	ਤ.
1	9	Ę	90	8	8	٩	٩	90	३	8	२	٩	3	द्र. <b>६</b>	٩	्रि	9	9	ર
सवि.	सं.प.					मा	H.	म. ४		]	मति	असं.		सा. ६	म∙	औप.	सि.	आहा.	
5						-9-	नस	व्. ४			श्रुत.		विना.			क्षा	!		अना.
i i								औ.1					ſ			क्षायो.	1		
1								<b>वॅ. १</b>	ļ	l	Į I	I	ł		!		L	L	

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो बेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा<sup>स्९</sup>।

संजदासंजदप्पहुर्डि जाव खीणकसाओ त्ति ताव मूलोघ-मंगो । णवरि आभिणि-बोहिय-सुदणाणाणि वत्तच्वाणि । एवमोहिणाणं पि वत्तच्वं । णवरि ओहिणाणं एकं चेव भाणिदव्वं । णाण-दंसणमग्गण्णाआ जेण खओवसममस्सिऊण द्विआओ तेण मदि-सुदणाणेसु णिरुद्वेसु दोहि तीहि चउहि वा ओहि-मणपज्जवणाणेसु णिरुद्वेसु तीहि

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दष्टि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलोप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकभिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययेगा ये तीन योगः पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कथाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संयतासंयत गुणस्थानसे छेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके आछाप मूळ ओघाळापोंके समान दोते हैं। विशेष बात यह है कि ज्ञान आळाप कहते समय आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान ही कहना चाहिए। इसीप्रकार अवधिज्ञानके आळाप जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि यहां पर पूर्वोक्त दो ज्ञानोंके स्थानमें एक अवधिज्ञान ही कहना चाहिए।

र्शका — ज़ब कि मतिक्रानादि क्षायोपरामिक क्रानमार्गणा और चक्षुदर्शनादि क्षायोप-धमिक दर्शनमार्गणापं अपने अपने आचरणीय कर्मों के क्षयोपरामके आश्रयसे स्थित हैं, तब मति-क्रान और श्रुतक्कान-निरुद्ध आलापोंके कहने पर दो, तीन अथवा चार क्वान, तथा अवधिक्वान

नं. ३६९ मति-श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्डाप्टे जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

अति, २ (ध	जी- १ सं. अ-	इ.अ.	<u>সা</u> ড	सं. ४	8	2	१ त्र.	यो. ३ औ.मि. वे.मि. कार्म.	२ पु.		१ असं.	३ के.द. विना,	<u>র</u> , ২ কা,	र स	्र	र सं.	आ २ आहा. अना.	<u>उ.</u> २ साका. अना.

₹, ₹-]

चउहि ना णाणेहि होदव्वमिदि सच्चमेदं, किंतु इयरेसु संतेसु वि ण विवक्खा कया, तेण विवक्खिय-णाण-वदिरित्त-णाणाणमवणयणं कयं ।

मणपज्जवणाणीणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणद्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, आहारदुगेण विणा णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, मणपज्जवणाणं, परिहारसंजमेण विणा चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, वेदगसम्मत्त-पच्छायद-उवसमतम्मत्तसम्माइद्विस्सं पढमसमए वि मणपज्जवणाणुवलंभादो। मिच्छत्त-

और मनःपर्ययक्वान-निरुद्ध आलापोंके कहने पर तीन अथवा चार झान होना चाहिए ?

विशेषार्थ — शंकाकारके कहने का यह भाव है कि जब मतिक्षान आदि चार बान शायोपशामिक होनेके कारण मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञानके साथ अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान हो सकते हैं; तब विवक्षित किसी भी झानमार्गणाके आलाप कहते समय अपने सिवाय शेष बानोंको भी कहना चाहिए। अर्थात् छद्मस्थ जीवोंके कमसे कम मतिज्ञान और श्रुतज्ञान ये दो बान तो होते ही हैं; तथा इनके साथ अवधिज्ञान, अथवा मनःपर्ययज्ञान अथवा दोनों ही बान तो होते ही हैं; तथा इनके साथ अवधिज्ञान, अथवा मनःपर्ययज्ञान अथवा दोनों ही बान हो सकते हैं, इसलिये मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके आलाप कहते समय मति और श्रुत ये दो अथवा मति, श्रुत और अवधि ये तीन अथवा, मति, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन अथवा, मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चार ज्ञान कहना चाहिए। इसीप्रकार अवधि-बानी और मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप कहते समय-क्रिकार अवधि-क्रानी और मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप कहना चाहिए। इसीप्रकार अवधि-क्रानी और मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप कहते समय-क्रिकार अवधि ये तीन तथा मति, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन ज्ञावा मति, श्रुत, आदे और मनःपर्यय ये तीन तथा मति, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन ज्ञावा मति, श्रुत, आदि आरे सनःपर्यय ये सार क्रान कहना चाहिए।

समाधान – अपका यह कहना सत्य है, किन्तु विवक्षित झानके साथ इतर झानोंके होने पर भी उनकी विवक्षा नहीं कि गई है। इसलिये विवक्षित झानसे आतिरिक्त अन्य झानोंको नहीं गिनाया गया है।

मनः पर्ययक्षानी जीवींके आलाप कहने पर---प्रमत्तसंयतले लेकर झीणकषाय तकके सात गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, खारों संझाएं तथा सीणसंझ स्थान भी है, मनुष्यगति, पंचोन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और माहारकमिश्रकाययोगके बिना नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मनः-पर्ययक्षान, परिद्वारविशुद्धिसंयमके बिना चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, तीन सम्यक्स्व होते हैं। मनःपर्ययक्षानीके भीपदामिकसम्यक्स्य कैसे होता है, इसका समाधान करते हुए आचार्य लिखते हैं कि जे।

१ उवसमचरियाहिमुहो वेदगसम्मो अणं विजोयित्ता । अंतोमुहुत्तकालं अधायमत्तो पमत्तो य ॥ तत्तो तिरयणविहिणा धंसणमोहं समं खु उबसमदि । छः क्ष. २०३, २०४.

छक्खंडागमे जीवहाणं

42C]

पच्छायद-उवसमसम्माइहिम्मि मणपज्जवणाणं ण उवलब्भदे; मिच्छत्तपच्छायदुकस्सुव-समसम्मत्तकालादो वि गहियसंजमपढमसमयादो सव्वजहण्णमणपज्जवणाणुप्पायण-संजमकालस्त बहुत्तुवलंभादेा। सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-

वेदकसम्यक्त्वसे पीछे द्वितीयोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है उस उपशपसम्यग्दाष्टिके प्रथम समयमें भी मनःपर्ययक्कान पाया जाता है। किन्तु मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दष्टि जीवमें मनःपर्ययक्कान नहीं पाया जाता है, क्योंकि, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दष्टि उत्कुष्ट उपशमसम्यक्त्वके कालसे भी ब्रहण किये गये संयमके प्रथम समयसे लगाकर सर्व जघन्य मनःपर्ययक्षानको उत्पन्न करनेवाला संयमकाल बहुत बड़ा है।

क्षायोपरामिकसम्यक्तवके साथ ते। मनःपर्ययन्नान इसलिये होता है कि मनःपर्ययन्नानकी उत्पत्तिमें जो विशेष संयम हेतु पड़ता है वह विशेष संयम इन दोनों सम्यक्त्वोंमें हो सकता है। अब रही औपश्मिकसम्यग्दर्शनकी बात, सो उसके प्रथमोपशमसम्यक्तव और द्वितीयो-पशमसम्यक्तव ऐसे दो भेद हैं । उनमें प्रथमोपशमसम्यक्तवको अनादि अथवा सादि मिथ्या-हाष्टि ही उत्पन्न करता है और उसके रहनेका जघन्य अथवा उत्क्रष्टकाल अन्तर्मुहूर्त ही है। यह अन्तर्मुहूर्तकाल, संयमको ब्रहण करनेके पञ्चात् मनःपर्ययत्रानको उत्पन्न करनेके योग्य संयममें विशेषता लानेके लिये जितना काल लगता है उससे छोटा है। इसलिये प्रथमोपशम-सम्यक्तवके कालमें मनःपर्ययहानकी उत्पत्ति न हो सकनेके कारण मनःपर्ययहानके साथ उसके होनेका निषेध किया गया है। द्वितीये।परामसम्यक्तव उपरामश्रेणीके आभिमुख विरोष संयमीके ही होता है, इसलिये यहांपर अलगसे मनःपर्ययन्नानके योग्य विशेष संयमको उत्पन्न करनेकी कोई आवश्यकता नहीं रद जाती है और यही कारण है कि दितीयोपशम-सम्यक्तवके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें भी मनःपर्ययज्ञानकी प्राप्ति हो सकती है। अथवा जिस संयमीने पहले वेदकसम्यक्त्वके कालमें ही मनःपर्ययक्षानको प्रहण कर लिया है उसके भी उपरामश्रेणीके आभिमुख होनेपर दितीयोपरामसम्यक्तवकी प्राप्ति हो जाती है, इसलिये भी दितीयोपशमसम्बत्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें मनःपर्ययज्ञान पाया जा सकता है। जपर दीकामें 'पढमसमए वि' में जो अपि शब्द आया है उससे यह भ्वनित होता है कि वितीयोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेके दितीयादिक समयमें वर्छमान चारित्र रहता है, रसलिये वहां तो मनःपर्ययक्षान उत्पन्न हो ही सकता है, किन्तु प्रथम समयमें भी संयममें इतनी विद्योषता पाई जाती है कि वह मनःपर्ययक्षानकी उत्पत्तिमें कारण हो सकता है। इस कथनका तात्पर्य यद्द हुआ कि प्रथमोपदामसम्यक्त्वके अनन्तर या उसके साथ संयमकी उत्पत्ति होती है, इसलिंचे उसमें तो मनःपर्धयक्षान नहीं उत्पन्न हो सकता है। परंतु द्वितीयो-पशमसम्यक्तव संयमीके ही होता है, इसलिये उसमें मनःपर्ययक्षानके उत्पन्न होनेमें कोई विरोध नहीं है। इलप्रकार मनःपर्ययझानके साथ तीनों सम्यक्स तो होते हैं, किन्तु औपश- वजुत्ता वा<sup>३०°</sup> ।

मणपज्जवणाण-पमत्तसंजदप्पहुडि जाव खीणकसाओ त्ति ताव मूलोघ-मंगो। णवरि मणपज्जवणाणं एकं चेव वत्तव्वं। परिहारसुद्धिसंजमो वि णत्थि त्ति भाणिदव्वं।

केवलणाणाणं भण्णमाणे अत्थि वे गुणद्वाणाणि अदीदगुणद्वाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा एगो वा अदीदजीवसमासो वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ अदीदपजत्तीओ वि अत्थि, चत्तारि पाण दो पाण एग पाण अदीदपाणा वि अत्थि, खीणसण्णाओ, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिंदियजादी अणिंदियं पि अत्थि, तसकाओ अकाओ वि अत्थि, सत्त जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेद, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादसुद्धिसंजमो णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि

मिकसम्यक्त्वमें द्वितीयोपञामका ही यहण करना चाहिए, प्रथमोदामका नहीं । सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनःपर्थयक्कानी जीवोंके प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर झीणकषाय गुणस्थान तक प्रत्येक गुणस्थानके आलाप मूल ओघालापके समान हैं। विशेष बात यह है कि क्कान आलाप कहते समय एक मनःपर्ययक्कान ही कहना चाहिए। तथा संयम आलाप कहते समय परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है, ऐसा कहना चाहिए।

केवल्रज्ञानी जीवोंके आलाप कहने पर—सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये दो गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दे अथवा एक पर्याप्त जीवसमास है तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी होता है, वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, अथवा समुद्धातगत अपर्याप्तकालमें आयु और कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, अथवा समुद्धातगत अपर्याप्तकालमें आयु और कायबल, या और अयोगिकेवलीके एक आयु प्राण तथा अतीतिप्राणस्थान भी है, झीणसंज्ञा, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी है, पंचे-निंद्रयज्ञाति तथा अतीन्द्रियस्थान भी है, जसकाय तथा अकषायस्थान भी है, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दोनों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये सात योग तथा अयोगस्थान भी है, अपगतवेद, अकषाय, केवल्ज्ञान, यथाख्यात-

#### नं. ३७०

मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप.

। रा	.  ज	ז. ∣ <b>י</b> ר	, )प्रा.	सं.	ंग.									्द.	·	म.		े साझे	ग.	ੱਤ.
		र ं	हरि०	8	হ	र	۶	٩		१	8	्र	¥	્ર	ंद्र₊६	2	३ औप. क्षा. क्षायो	¦ ₹	٤	ર
प्रम		.ч.	!	4	म.	च	, Let I	म•	8	<b>g.</b>	<u>ا</u>	मनः.	सामा.	के.द	मा₊ ३	म₊	আঁণ,	. स.	आहा.	
्रि.				क्षींणसं			1	व.्	¥			i l	केंद्र)	विना.	ञुम •		क्षा.			अनाः
र्झाण	τ.	İ	: 			i	!	औ	. १		(10) 			:		ļ	क्षाया	.		
	J	J		J,	j I	ļ	- (		ļ			i	यथा.	ί		ι	<b>j</b> ·	ļ d		·

[ **७**२९

छक्खंडागमे जीवहाणं

अत्थि, केवलदंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि, भव-सिद्धिया णेव मवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा" ।

## सजोगि-अजोगि-सिद्धाणमालावा मुलोघो व्व वत्तव्वा ।

एवं णाणमग्गणा समत्ता ।

संजमाणुवादेण संजदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जचीओ छ अपज्जत्तीओ, दस सत्त चत्तारि दो एक पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग अजोगो वि

विद्वारशुद्धिसंयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम इन तीनोंसे रद्दित भी स्थान है, केवल-दर्शन, द्रव्यसे छहों छेक्ष्यापं. भावसे शुक्कछेक्ष्या तथा अलेक्ष्यास्थान भी है; भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रद्दित भी स्थान है, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक और असंक्षिकसे रद्दित स्थान, आद्दारक, अनाद्दारक; साकारोपयोग और अनाकारो-पयोगसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

केवलज्ञानकी अपेक्षा भी सयोगिकेवली अयोगिकेवली और सिद्ध जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान कहना चाहिए।

इसप्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

संयममार्गणके अनुवादसे संयतोंके आछाप कहने पर—प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे छेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक नौ गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण; चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैक्रियिक-काययोग और वैक्रियिकमिश्रकाययोग इन दे। योगींके विना रोष तेरह योग तथा अयोग-

### તં. ૨૭૧

### केवलबानी जीवोंके आलाप.

13	Ţ.	जी,	, <b>q.</b>	সা-	सं.	ग.	ं इ.	का.	यो.	वे.	ক.	द्या.	संय.	्द.	े ले.	भ.	स.	संग्रि.	આ.	ব,
	२	२	हप,	8	•	2	12	2	9	0	0	২	2	i <b>t</b>	द.इ.	1	१	9	२	२
स	यो.	पर्या.	६अ.	२		म.	q.	त्र.	म २		÷	केव.	यथा.	के.	मा. १	भ.	क्षा.	<b>F</b> o	आहा.	साका.
ાંગ	यो.	अप		र	ोणसे	1	<u>ن</u> ے		व. २	अपग	अकषा		ter .	द.	33.	÷		અતુ.	अना.	अना.
	-7	÷	અતોત	H.	স্ক্র	1199	જુન	<u>अ</u> क	ઔ.ર		ro I		अनुमय		अले 🛛	ल अ	Ι.			यु. उ.
	અતોતશ	<b>અ</b> તોતનો	নি	अतौतमा	Ì	(P		1	कार्म. १				5	ĺ	 i					
	F.	લા	1	ক		ĺ	İ		अयो.					1	)		Į		İ	
		1	1	ļ		I I		Į				. 1			1	I.		]	1	' 1

\_\_\_\_\_

1. 2. ]

[ 12

अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, पंच संजम, चत्तारि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागोरीह जुगवदुवजुत्ता वा होति<sup>394</sup>।

पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि

स्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मतिझानादि पांचों सुझान, सामायिकादि पांचों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों छेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्ष्याएं तथा अलेक्ष्यास्थान भी है। भन्यसिदिक, औपद्यमि-कादि तीन सम्यक्स्व, संझिक तथा संझिक और असंझिक इन दोनों विकर्लोंसे रहित भी स्थान है, आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अमाकार उपयोगोंसे शुगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

संयममार्गणाकी अपेक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आठाप कद्दने पर-पक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, छद्दों अपर्याप्तियां। दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संद्वापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, द्रसकाय, चारों मनोयोग, बारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आद्दारककाययोग और आद्दारकमिश्रकाययोग ये ग्यारद्द योग, तीनों बेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिद्वारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छद्दों रुष्यापं, भाषसे तेज, पद्म और शुक्क छेद्दयापं, भब्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्स्ब, संद्विक, आद्दारक,

#### નં. ૨૭૨

### संयमी जीवोंके सामान्य मासाप.

¥•	जी.	प.	<b>त्रा</b> , <sup>!</sup>	ं सं.	ं ग,	ं इं.	কা	यो ।	à. '	<b>क</b> .	. सा.	संय.	द.	ਡੇ.	<b></b> .	स.	संहि.	वा.	ह.	f
19	२	६प.	20	8	१	2	2	१३	3	8	4	4	8	द्र. ६	१	3	2	्र	2	
प्रम.		६अ.	৩		म.	<del>त</del> े.	त्रस.	वै.दि. गिना.	E	<b>अ</b> क्ष.		सामा.		मा. ३	म.			आहा.	ৰাকা- নাকা-	
	सं.अ.		8	<b>ह</b> ीण	म.	T T	RV	ानना. अयो-	5	जे <b>न</b> जेन		क्रेदी. परि		श्चम . अठे.		का. क्षायो.	मनु.	। अन्। 	. जमा- यु. स.	l
अयो.			, v					जयाः				सुक्षम.		-104			1		-	
	) [		)		l					ļ		यथा.		Į		t				

હર્રર]

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा " ।

अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ आहारसण्णा णत्थि, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रभ</sup>।

अपुच्वयरणपहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति ताव मृलोध-भंगो।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर-एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याण्तियां, दशों प्राण, भय, मैथुन और परिग्रह ये तीन संझाएं होती हैं किन्तु यहां पर आहारसंझा नहीं है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वारों मनेायोग, चारों वच्चनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामायिकादि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और ग्रुझ लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्घकरण गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक संयमी जीवोंके आलाप मूल श्रोघालापोंके समान होते हैं।

નં. ૨૭૨

संयमकी अपेक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

<u>गु.</u> २	२	<b>प.</b> इ.प.	80	<u>सं.</u> ४	2	5 5	<u>या.</u> ११	<b>वे.</b> ३	8	8	3	३	द्र. ६	ع ا	হ	. र	1	<u>उ</u> . २ साका.
	सं. प. सं, अ.	६अ.	9		म. :		म. ४ व. ४ औ.१ आहा.२			श्रुत.	छेदो. परि.	विना.	मा. ३ ∣ ज्ञुम∙		आप क्षा. क्षायोः	ļ	আছ়্	स (क). अनाः

#### न. ३७४

संयमकी अपेक्षा अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

<u>ا</u> ت.	্র	1.	<b>q</b> .[	ЯІ.	सं.	( ग.	इं.	] का.	यो		à.	क.	झा.	संय.	र.	ं छे.	ं म.		संक्रि	્आ.	ਂ ਰ.	l
1	-	2	Ę	१०	ર	2	2	2	٩		`	8		3	3	द्र. ६	1	न्द्र - यो	<b>२</b>	*	२	l
ġ.	:   E	÷	į		आहा बिना		वं.	त्रस	म. व.	8		l	मात. अत.		क.द. बिना	∣मा. ३ ⊨ शुभ.	H.	আঁণ. ধ্যা	स	अहा.	साका. अमा.	
"	- <b>t</b>	2			। <b>वन्दा</b> ः				ज. औ	_ 1			अ <b>व</b> .	परि.				क्षायो.			]	
					Į		J	[				ļ	मनः.	ļ	{	Į		}				

सामाइयसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्धाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, सामाइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आद्यारिणो, सामारू-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>894</sup>।

पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अणियद्वि त्ति ताव मूलोघ-भंगो । एवं छेदोवटावण-संजमस्स वि वत्तव्वं ।

परिहारसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ

सामायिकशुद्धिसंयत जीवोंके आछाप कहने पर----प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्ध-करण और अनिवृत्तिकरण ये चार गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संक्राएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनेायोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग आहारक-काययोग और आहारकमिश्चकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय, आदिके चार क्षान, सामायिकशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेक्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क छेक्याएं; भव्यासिद्धिक, औपश्वामिकादि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती सामायिकग्रुद्धिसंयतोंके आलाप मूल ओघालापके समान हैं। विशेष बात यह है कि संयम आलाप कहते समय एक सामायिकग्रुद्धिसंयम ही कहना चाहिए। इसीप्रकार छेदोपस्थापना-संयमके भी आलाप जानना चाहिए; किन्तु संयम आलाप कहते समय एक छेदोपस्थापना-संयम ही कहना चाहिए।

परिद्वारविद्युद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर-प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत ये

सामायिकग्रुद्धिसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	ৰ্বা	<u>q</u> .	গা.	सं.	] ग.	इ	का.	∣यो∙	वे.	क.	; <b>इ</b> ।.	संय	ेद.	ਲੇ.	म.	स.	संदि,	(आ.	उ.
४ प्र.	ર	Ę	१०	8	2	१	2	११मन	4 3	8	४ मति.	२	ं ३	द्र. इ	12	३	2	2	2
अप्र.	सं.प.	प.	છ		म.	ά.	<del>य</del> .	व. ४	÷		अत.	सामा.	केद.	सा. ३	स.	औप.	सं.	आहा.	साका.
अपू.	सं.अ.	Ę					ম	औ. १	तुर्व	ļ	अव.	1	विनाः			क्षा.			अना.
अनि.		अ.						આ ર	1.	j	मनः.					क्षायो.			

નં. ૨૭५

•**૨**૪]

पर्बजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग आहाराद्दारमिस्सा णत्थि, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण मणपज्जवणाण णत्थि, कारणं आहारदुगं मणपजजवणाणं परिहारसुद्धिसंजमो एदे' जुगवदेव ण उप्पजंति। परिद्दारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता द्दोति अणागारुवज्जत्ता वा<sup>३५६</sup>।

पमत्त-अप्पमत्त-परिहारसुद्धिसंजदाणं पुध पुध भण्णमाणे ओघ-मंगो । णवरि आहारदुग-मणपञ्जवणाण-उवसमसम्मत्त-सामाइय-छेदोवट्ठावणसुद्धिसंजमा च णत्थि । परि-हारसुद्धिसंजमो एको चेव संजमडाणे । वेदट्ठाणे पुरिसवेदो चेव वत्तव्वो ।

दो गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहीं पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योग होते हैं, किन्तु यहांपर आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होते हैं। पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान होते हैं, किन्तु यहांपर मनःपर्ययझान नहीं है, क्योंकि, आहारकद्विक, मनःपर्ययझान और परिद्वारविशुद्धिसंयम ये तीनों युगपस् नहीं उत्पन्न होते हैं। झान आळापके आगे परिद्वारविशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेक्यापं, भावसे तेज, पध और शुक्ल छेक्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्य-क्लाके विना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्तव; संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रमत्तसंयत-परिहाराविशुद्धिसंयत और अप्रमत्तसंयत-परिहारविशुद्धिसंयत जीवेंकि आलाप पृथक् पृथक् कहने पर उनके आलाप ओघालापके समान हैं। विशेष बात यह है कि यहां पर आहारककाययोगदिक, मनःपर्ययक्षान, औपशामिकसम्यक्स्व, सामाधिकशुद्धिसंयम और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयम इतने आलाप नहीं होते हैं। संयमस्थान पर एक परिहार-बिशुद्धिसंयम ही होता है। तथा वेदस्थानपर एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए।

१ प्रतिष्ठु 'एदाओ' इति पाठः ।

મં. ૨૭૬

परिद्वारविद्युद्धिसंयत जीवोंके आखाप.

<u>] ग्र</u> -	ৰা.	ष.	्रत्रा.	सं.	] ग.	5.	কা.	्यो.	वे.	<b>.</b>	<b>.</b>	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संहि.	ঙ্গা.	. s.
2	1	Ę	50	8	2	2	२	٩	2	8	३	१	. ३	द्र. ६	\$	२	2	2	ર
त्र.	सं.प.				म.	ч <b>.</b>	त्रस.	म. ४	पु.	ŀ	मति		के. द.	भा २	म.	क्षा.	सं.	आहा.	स:का.
ব.	ŀ			ļ				व, ४			श्रुत.		विना.	ञ्चम.		क्षाये.			अना.
						İ		औ. ર			अव.		!!!		l				
										}					ļ	ŀ			

# सुहमसांपराइयसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे मृलोघ-भंगो ।

जहाक्खादसुद्धिसंजदाणं मण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जसीओ छ अपज्जत्तीओ, दस चत्तारि देा एक पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच णाण, जहाक्खाद-सुद्धिसंजमो, चत्तारि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा देा सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणे। अणाद्दारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा<sup>रण</sup> ।

उवसंतकसायप्पहुडि जाव अजेगिकेवलि चि म्लोघ-भंगो । संजदासंजदाण-

सूक्ष्मसाम्परायिकञुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर उनके आलाप मूल ओघाला-एके समान ही जानना चाहिए ।

यथाख्यातविद्दारघु।दिसंयत आंधोंके आछाप कहने पर--उपशान्तकषाय, झीणकषाय, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, छद्दों अपर्याप्तियां दशों प्राण, खार प्राण, दे। प्राण और एक प्राण; क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, खारों वचन-योग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारद्व योग; अपगतघेद, अकषाय, मतिज्ञानादि पांचों सुज्ञान, यथाख्यातविद्वारघुद्धिसंयम, चारों दर्शान, द्रव्यसे छद्दों लेक्याएं, भावसे गुक्ललेदया तथा अलेद्यास्थान भी है। भव्यसिद्धिक, वेदकस-म्यक्त्बके बिना दोष दो सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और आसंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

उपशाम्तकषाय गुणस्थानसे छेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतकके यथाख्याताविद्वार-

ż.	BIGIO

### यथास्यात शुद्धिसंयत जीवोंके आलाप.

। यु (जी	<b>प</b> •	त्रा.	Ŕ.	ग_	ई.∣व	จ.	यो	•		<b>.</b>		संय-	] द.	छे.	म.	. स.	सनि.	आ.	ব,
812	<b>Eq</b> .	20	0	2	2	2	٤.	ŧ.	•	0	५ मतिः	2	8	द्र,६	१	2	2	२	२
उ. स.प.	इ.अ.	¥		म. व	t. 🔻	τ.	म.	¥	<u>ن</u>	' ⊭	श्रत.	यथा.		मा-१				आहा-	सामा-
क्षी, अप		২	क्षीण्				व्.	¥	अपग	अकृषा.	•.व.			刻度・		क्षा-	अतु,	अना.	অনা_
स.		۶	- 80°	1;		- 1		२			. मनः -		ļ	अळे.			ļ		ਧੁ. ਰ.
अ.		ĺ	:	ļ		l	কা.	2	l		केव.		<u> </u>	) 			1		<u> </u>

ن ۶۶۹ ]

मोध-भंगो ।

असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्दाणाणि, चोइस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्ध पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि बेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवासिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>34</sup>।

तेसिं चेव पज़त्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा,

## शुद्धिसंयत जीवॉंके भालाप मूल ओधालापोंके समान होते हैं।

संयतासंयत जीवोंके आलाप ओघालापके समान होते हैं।

असंयत जीवोंके आछाप कहने पर--आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, छद्दों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, घार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; ने प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छद्द प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छद्द प्राण, चार प्राण; ने प्राण और तीन प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां. पकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग-दिकके बिना तेरद्द योग, तीनों बेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छद्द ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावले छढों लेड्याएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हें।

उन्हीं असंयत अधिोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके चार गुणस्थान,

### थसंयत जीवोंके आलाप.

3.	जी-	<b>q</b> .	_ সা.	तं.	¥.	耄.	₩.	] यो.	वे.	<b>\$</b> .	<b>11</b> .	संय.	ξ.	. ले.	( म.	स	संक्रि.	) সা.	ु उ.
8	ŧ۲	ξq.	20,0	8	8	4	Ę	१३	2	8	ह	र	्र	द्र. ६	२	ह	२	২	2
<b>सि</b>	:	६ अ.	\$,0					আ.ৱি.	1	ł	अम्रा,	असं.	के द	मा ६	म.		सं.	आहा.	साका-
<b>а</b> т.		५ <b>प</b> -	८,६	1			[	विना			२		बिना.		अ.	]	अस.	अना.	अना.
स.		দজ.	છ,વ			Į			Í	ĺ	ज्ञान.								
अ.		¥¶.	<b>4,</b> *			[					₹		İ.						
		४अ.	₹,8	ł															
		l ·	l	i	i						.								

नं. ३७९

१, १. ]

Jain Education International

छ पजत्तीओ पंच पजत्तीओ चत्तारि पजत्तीओ, दस पाण णव पाण अहु पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रू</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणड्ढाणाणि, सत्त जौवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपअत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, र्ए्रादियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि बेद, चत्तारि कसाय,

सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां चार पर्याप्तियां; द्शों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझाएं, चारों गसियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां. पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों; वचनयोग, औदा-रिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कवाय, तीनों भझान और आदिके तीन झान इस प्रकार छह झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिदिक, अभव्यसिदिक; छहों सम्यक्त्व, संदिक, असंदिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंयत जीवोंके अपर्याप्तकाळसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्याडष्टि, सासा-दनसम्यन्दाष्टि और अविरतसम्यन्दष्टि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छद्दों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाप, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छद्दों काय, औदारिकमिभकाययोग, बैकियिकमिभकाययोग, और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कघाय, कुमति, कुभूत और आदिके

<u>_</u>	. बी.	٩.	সা.	सं.	ग,	Ę.,	কা,	यो.	वे.	]₩,	je i	संय.	इ.	े.	म.	स.	े संसि.	) आ.	ਰ.	r
8	9	Ę	१०	۲	۲	4	Ę	50	R	8	Ę	2	₹	इ. <del>६</del>	२	Ę	२	र	२	
मि.	पर्या.	4	3	·				म. ४			सान-	असं.	के द	मा. ६	म.		चं.	आहा.	साका.	l
<b>9</b> 1		¥	٢	i				ब. ४			3		बिना.		ज,	1	असं.		अना.	ł
<b>9.</b>			৩		i			औ. १	Í		अझा.		İ		1					l
अ.			Ę	Ì				वे २			३				i i					ł
		.	Y		j.	 r	ļ	L,												ł

पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिंद्रिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>४०</sup>।

मिच्छाइड्रिप्पहुर्डि जाव असंजदसम्माइड्रि चि मूलोध-मंगा।

एवं संजममग्गणा समत्ता ।

दंसणाणुवादेण ओघालावा मूलोघ-भंगो।

चक्खुदंसणीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वाणाणि, छ जीवसमासा, छ पज-चीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पजत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अह पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ,

तीन झान ये पांच झान; असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे कापोत और शुक्क लेक्यापं, भावसे छहीं लेक्यापं; भव्यसिदिक, अभव्यसिदिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संद्विक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मिथ्याद्दाष्टि गुणस्थानसे लेकर असंयतसम्यग्दष्ठि गुणस्थान तकके असंयत जीघोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान जानना चाहिए।

## इसप्रकार संयममार्गणा समाप्त हुई ।

दर्शनमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं।

चक्षुदर्शनी जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर--आदिके बारह गुणस्थान, चतुरि-न्द्रिय-पर्याप्त, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त, संज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संज्ञीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त ये छह जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्यीप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, साप्त प्राण; आढ प्राण, छह प्राण; वारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है चारों गरियां,

#### नं. ३८०

.....

## असंयत जीवोंके अपर्याप्त आळाप.

र ।	जी.	<u>q.</u>	त्रा.	सं.	ग.	इं.का	यो.	वे.	क.	হ্যা-	संय.	द.	हे.	म.	. स.	संबि.	्ञा.	ਤ.
₹		इ.अ.		×	8	લ દ્	्र	₹	8	५ कुम.		ষ্	द्र २	2	4	२	ર	2
मि.	अप.	۹,,	6	j			औ.मि			જીસ.	असं	के, द.	কা.	भ.	सम्य.	सं.	आहा	साका.
सा.		٧,,	Ę				वै.मि.			मति-	l t i	विना.	रा.	अ.	विना.	असं.	अना.	अमा.
স.			ંખ				काम .			श्रत.	ĺ		मा.६	[		ł	ł	
	ון		¥₹	.			Ì	f i		स्व.						1		Į

Jain Education International

#### संत-परूवणाणुयोगहारे दंसण-आकाववण्णणं 2, 2. ]

चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कताय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, चक्खुदंसण, दब्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा 347 ।

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्राणाणि, तिण्णि जीवसमासा, छ पजनीओं पंच पज्जनीओ, दस पाण णव पाण अह पाण, चत्तारि सण्णाओ खीण-सण्णा वि अरिथ. चत्तारि गदीओ. चउरिंदियजादि-आदी दो जादीओ, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, चक्खुदंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभव-सिद्रिया. छ सम्मत्तं. सण्णिणो असण्णिणो. आहारिणो. सागारुवज्रत्ता होति अणागारू-

चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, पन्द्रह्यें योग, तीनों वेद तथा अपगतवेद्स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवलज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, चक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाइरिक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं चश्चदर्शनी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके बारह गुण-स्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त, असंझीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संझीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त ये तीन जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण; चारों संबापं तथा क्षीणसंबास्थान भी है, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, पर्याप्तकालमावी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारौं कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवलज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, चक्षदर्शन, हन्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संधिक,

न. ३८१

### चक्षवर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप.

	रे स्री.	Ę	ષગ્ર.	१०,७ ९,७ ८,६		<u>हे</u> २ म	का. १ त.	यो. १५	ਕਧਜ, ~	8	ज्ञा. ७ केत्र. विना.		र	ऌे. इ.६ भा∙६	2	Ę	•	२ आहा.	ुर २ साका. अमा.	
--	-------------	---	-------	--------------------	--	---------------------	----------------	-----------	--------	---	-------------------------------	--	---	--------------------	---	---	---	-----------	--------------------------	--

बजुत्ता वा<sup>भ्य</sup>ा

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, तिण्णि जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, चक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, बावेष छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आद्यारिणो अणाहारिणो, सागाह्रवजुत्ता होंति अणागाह्रवजुत्ता वा<sup>44</sup>।

असंबिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— मिथ्यादाष्टि, सासा-दनसम्यग्दाष्टि, अविरतसम्यग्दाप्ट और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, ससंक्रीप्रंचेन्द्रिय-अपर्याप्त और संक्रीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त ये तीन जीवसमास; छहों अपर्या-क्रियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राणः चारों संक्रापं, चारों गतियां, बहुरिन्द्रियज्ञाति आदि दें जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालभावी चार योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन क्रान ये पांच क्रान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, चक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुकु लेक्याएं, भावसे छहों लेक्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सभ्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्रिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ર્ન. ૨૮૨

चश्चदर्शनी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	_जी•	ष.	प्रा.	सं.	η.	<b>₹</b> .	का	यो •	वे.	<b>क</b> , i	<b>शा</b> •	संय	्द.	ल.	्स.	.स.	संज्ञि .	জ্য.	ड. ,	•
१२ क्रि	३ च.प.	ર મ	१० २	•	-	२ च.		११म.४ व-४	11	· ·	ु केव.	ও	१ चक्षु.	द्र. ६ मा. ६	्र ्र	् इ	्र ग	् १	२ साका.	
से	असं.प.	•	د .	क्षीणतं.		٩.	त्रस	औ. १	अपन	अ क थ।	केव. विनाः	i	<b>୯୫୫</b> ∎ 	<b>u</b> i, 4	्ञ.	1	असं.	, আত্তা- 	साकाः अनाः	
क्षाः	सं• प.							वं १ आः <b>१</b>				i							: :	

# नं. ३८३

चश्चदर्शनी जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

य.	जी.	प.	प्रा∙	संग.	¥.	ৰ্কা	यो.	वे,	े क	្តុ	<b>T</b> I.	ं संय	द.	¦ ਲੇ.	ं म.	स.	! संज्ञि	आ.	उ.
¥				818					8	े <b>भ</b> ुड्	कुम्.	३	্ হ_	द्र. २	२	4	ર	<b>२</b>	ेर
	च,अ.		৩		'च∙	त्र.	औ.मि.		ļ	ক্	શ્રુ.	असं.	चक्षु.						साका.
	अस.अ.	 i	Ę		<u>,</u> ч́.		वे.मि.			ं मां	त.	सामा		য়ু.	अ.	थिना.	अस.	अनाः	अना.
अ.	सं. अ.			ļ		i	आ मि !			ঞ্জ	त.	केदो.		मा ६				ļ i	
ज.	ł	\$				İ	कार्म.		i	) অব	व •	:	İ	]	l		ļ		i 丨

चक्खुदंसण-मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहुाणं, छ जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अहु पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, चउरिंदि्यजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

असंजमो, चक्खुदंसण, दव्य-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रत्</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, तिण्मि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अड पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, चर्डारेंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, दस जोग, तिण्मि वेद, चत्तारि

चधुदर्शनी मिध्यादाष्टे जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---पक मिथ्यादष्टि गुण-स्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त और अपर्याप्त, असंझीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और अपर्याप्त, संझी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्त और अपर्याप्त ये छद्द जीवसमास; छद्दों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; इशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छद्द प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियज्ञाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरद योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, बक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक: आहारक, अनादारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवेंकि पर्याप्तकाल्ठसंबन्धी आलाप कहने पर-प्यक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त, असंझीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संशीपंचेन्द्रिय पर्याप्त ये तीन जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; दर्शों प्राण, नौ प्राण, बास प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियज्ञाति आदि दें। जातियां, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों बेद,

र्न. ३८४

# चश्चदर्शनी मिथ्यादांधे जीवोंके सामान्य आलाप.

<u>ग</u>	জী.	q.	- গা	सं ।ग	इ.	का.	्यो.	वे.	क,	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	[भ.	स.	संबि.	্ आ.	उ.
2	६ च.प.	६ प.	१०,७	8 8	:   R	रि	1 হ হ	₹		३	2	2	द.६	२	2	२	2	ર
मि.	च अ.	६ अ-	9,9		च.	त्र	आ दि.			अज्ञा.	असं.	चन्न.	मा ६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	अંસ પ.	4 <b>.</b> .	2.5		<b>ч</b> .		विना.	ł				• ••		अ.	1	ſ .		अमा.
	असं.अ.										!							
	सं. प.	• ••					1			Ì	İ							
	स. अ.					Ì	;											

www.jainelibrary.org

छक्खंडागमे जीवद्वाणं

कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, चक्खुदंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा<sup>रत्त</sup>।

<sup>26</sup>तेसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, तिण्णि जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, चर्डारंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, चक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो

चारों कषाय, तीनों अक्कान, असंयम, चक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्विक, असंश्विक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चञ्चदर्शनी मिथ्यादाप्टे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, असंत्रीपंचेन्द्रिय-अपर्यंक्ष और संत्रीपंचेन्द्रिय-अपर्यांत्र ये तीन जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण; चारों संत्राणं, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, औदारिक-मिश्रेकाययोग, चैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, चश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्क लेक्ष्याणं, भावसे छहों

ત્રં. ૨૮५

चश्चदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

1.3.	जी.	ণ সা	संग.	Ę. (	का यो देवे	ুক, রা	संय.	द.	े छे. म. स	। संज्ञि	্ঞা.	3.
2	× 1	६ १०	1		१ १० ३		१		द. ६.२	ર ર	2	2
E C	च. प.	4 9			त्र, म.४	अज्ञा,	अस -	चक्षु.	साद म- वि	र सं.	आहा.	साका
	असं.प	ح .	1	पंचे.	व ४				: স.	अस		अना-
	सं. प.		ı ı i		औ. १ बे. १		l i			ļ		Í
<u>ا_</u> ا			<u> </u>	· 1	ष∙ र ;	<u> </u>	· ·		1 : !	1		1

# नं. ३८६ चक्षुदर्शनी मिथ्यादाष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

|पा. सं. ग. इं. का. यो. वे. क. झा. संय. द. हे. म. | स. | संझि.| आ. | उ. ि इ.अ. ७ ४ ४ २ १ <u>२</u> १ १ इ.२ २ १ 3 8 २ ર R ₹. मि.च. अ. ५अ. ७ च.त. आ.मि. कुम अस वक्षु का. म. मि. सं. आहा. ন্ত্ৰকো. असं.अ. वै.मि. **q**. Ę ক্লপ্ল. য়, अ. असं अना. अना। सं. अ. कार्म. मा. ६

७४२ ]

Jain	Education	International	

ने. ३८७

# संत-पद्धवणाणुयोगहारे दंसण-आळाववण्णणं

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

चक्खदंसण-सासणसम्माइद्रिप्पहुडि जाव खीणकसाओ ।ति मूलोघ-भंगो, णवरि चक्खुद्सणं ति भाणिदव्वं ।

<sup>20</sup>अचक्खदंसणाणं मण्णमाणे अस्थि बारह गुणद्राणाणि, चोदस जीवसमासा, छ पजनीओ छ अपजनीओं पंच पज्जनीओं पंच अपज्जनीओं चन्तारि पज्जनीओं चनारि अवज्जत्तीओ. दस पाण सत्त पाण गव पाण सत्त पाण अट्र पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण. चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, पण्णा-रह जोग. तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अस्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, अचक्खुदंसण, दुव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक; आहारक, अनहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

चश्चदर्शनी सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं। विद्येष बात यह है कि दर्शन आलापमें ' चक्षदर्शन ' ऐसा कहना चाहिए।

अचछुदर्शनी जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर-आदिके बारह गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छद्दों पर्याक्तियां, छहों अपर्याक्तियां: पांच पर्याक्तियां, पांच अपर्यात्रियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: उन्नों प्राण, सात प्राण: नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राणः सात प्राण, पांच प्राणः छह प्राण, चार प्राणः चार प्राण, तीन प्राणः चारों संश्रापं तथा क्षीणसंबारधान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकषायस्थान भी है, केवल्हानके विना सात हान, सातों संयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहाँ लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहाँ सम्यक्त्व, संक्रिक, असंक्रिक;

# अण्वश्वर्वर्शनी जीवोंके सामान्य आछाप.

<u>ग</u> ु.	जी.	प.	সা.	: <b>सं</b> .∤	ग.	इ. का.	यो.	वे.	क.	झा.	सेय.	्र.	े ले.	म.	. स	संजि	। आ	ਤ
९	28	६ प.	१०,७	8	8	4 8	- 14	3	Y	9	U	1 8	ेव्र. इ	ર	Ę	२	२	2
मि.		इ.अ.	8,0			, I		<u>م ا</u>	<b>.</b>	केव.	1	अच-	भा. ६	भ.		. सं	आहा.	साका-
सि	1	५प.	ও,ও ২,হ	E I		i i		अपन	100	त्रिना	ļ	1		. अ.		असं.	अना.	अमा.
र्झीण.	ļ	५अ.	ુ છ,પ	<b>`₩</b>					ক	•	1	1	I					
1	l	84.	₹,¥	ļ						ł	i					ł		ļ
ł		'ধজ.	₹,8		ĺ				1		ļ		ł			1		ļ

2. 2. ]

छक्खंडागमे जीवहाणं

6880

छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणट्टाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णत्र पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंइदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओं वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, अचनखुदंसण, दव्व-भावेहि छ छेरसाओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सामाह्रवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>844</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओं पंच अपज्जत्तीओं चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अचश्चदर्शनी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझाए तथा क्षीण-संझास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि रांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग, तीनों वेद, तथा अपगतधेदस्थान भी है, चारों कषाय अकषायस्थान भी है, केवलज्जानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, अचश्चदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं; भध्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंग्लिक: आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अचधुद्दर्शनी जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-मिथ्यादाए, सासादनसम्यग्दष्टि, अविरतसम्यग्दष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छद्दों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण,

# नं. ३८८

# अचधुदर्शनी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

1 .		. <u> </u> ч.	[ प्रा.	सं.	ग इ.	का.	( यो.	¦à.	] क.		संय		ਲੇ.	. म.	स.	सं ज्ञि	आ.	ਭ.
रः  मि	U 19	ĮĘ	<b>१</b> 0	\$	8 4	Ę	११म.४ व.४	२	Y	७ केव	છ	१	द्र. ६ मा.६	1 1	ह	२   सं.	<b>१</b>	२ साका.
े से.		8	Z	तिणसं			औ, १	अपग		क्ष. विनाः		ંગપ્≞		अ.		स.	আর্চ	अना
<b>क्</b> री	•		ف لاع	<b>.</b> 10	;		वै. १ आ. १							Ì				

पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ', एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ, भवासिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो,

सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा221

अचक्खुदंसण-मिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज़त्तीओ छ अपज्जत्तीओ, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्व-भावेहि छ

छइ प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्र.ण; चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहें काय, अपर्याप्तकालभावी चार योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन झान ये पांच झान, असंयम, सामायिक और छेदोप-स्थापना ये तीन संयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण: सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संक्षाएं, चारों गतियां, एकोन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोगहिकके विना तेरह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान,

भत्रतिषु ' चत्तारि गदीओ ' इति पाठो नास्ति ।

न. ३८९

# अचक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

			संग.													। ज.
¥	હ ફ	अ. ७	88	ч	q X	्र	8	५ कुम	₹ ।	۶ (	ंद्र २	ંર	પ	২	े २	ર
मि	अ. ५	अ. ७	1	i I	ા ગો. વિ	<b>i</b> .	1	કુ.સુ.	असं.	अच.	का.	ुभ-	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
. सा.		জ হ			वे. वि	ने.	i	मति.	सामा.	i	IJ.	.अ.	विना.	असं.	अना.	अना.
आवि .		<u>'</u> ዓ	i l	i I	આ વિ	<b>t</b> .	İ	श्रुत.	છેવો.	i	मा ६					
प्रम.	:	8	8. j		ं कार्म	•		ॲव.					ļ	j		

लेस्ताओ, मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागाह्रवज्जत्ता होंति अणागाह्रवज्जत्ता वा<sup>हर्ष</sup> ।

<sup>20</sup>तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच-जादीओ, पुढविकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, अचकखुदंसण, दच्व-मावेहिं छ लेस्साओ, मवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

असंयम, अचधुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्षाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्याख, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं ।

उन्हीं अचश्चदर्शनी मिथ्यादाप्ट जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्यादाप्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहौं पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों माण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं,

नं ३९०

अचक्षदर्शनी मिथ्यादाष्टे जीवोंके सामान्य आलाप.

। गु.	जी, प	সা	सं.	ग.	<b>\$</b> .	का	यो.	वे.	ं क,	<b>គ</b> ]	ं संय.	द,	ਲੇ	भ.	स.	सांब्रे.	- আ.	उ.
12	१४ ६प.	20,0	¥	¥	4	Ę	१३	₹	8	3	÷ ۲	\$	द, ६	ંર	१	२	ર	ે ર
मि.	्र अ.	९,७		ſ			आ दि		!	अक्षा.	अस.	अच.	ंमा, ६	भ.	∣मि	.स	आहा.	साका.
	५ <b>ए.</b>	८,६	I .		i	ļ	विना,				ļ	•	:	ञ.		असे.	: সনা-	अना.
	५.अ.	છ,૬	ì			; ;	1		į						[	ļ	:	
1	४प.	٤,४			į		: I		2		:	i				l		
	¥अ,	8,3	1						1	•		!		•	[			1
1	1		ł	1	l	ļ	1		[	۱ 	1	•		•	)		1	

# नं, ३९१ अचश्रुद्रीनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। य	ुजी,	<b>q</b> .	<b>श्रा</b> .	सं.	ग.	इ.)	का.	यो.	वे.	<b>क</b> .	হ্যা-	संय.	द.	े ले.	भ.	सं •	संक्रि.	आ.	3.
9	9	Ę	٩٩	¥	8	4	ह	90	३	۲	ર	٩	٩	द्र, ६	ર	٩	२	1	२
मि	. वर्या.	4	٩					म. ४		1	अला.	अस.	अच.	मा- ६	म∙	मि∙	1 .	आहाः	साका.
	1	¥	C					<b>व.</b> ४	ĺ	1	 		-	!	अ.		असे.	]	अना.
1			ভ					औ.9	l		i 1		Į.		•		1		
			হ ४		[	ļ		वै. १	Į	Į	ί		į.	: l	Ļ	Į	[	{	<u>ا</u>

2, 2.]

मिच्छत्तं सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपअत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; मर्वासिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामाइवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रा</sup>।

सासणसम्माइहिप्पहुडि जाव खीणकसाओ त्ति ताव मूलोघ-मंगो। णवरि अचक्खुदंसणं ति भाणिदव्वं।

भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अचश्चदर्शनी मिथ्याद्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--- धक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; बारों संझाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः तीनों वेद, बारों काय, आदिके दें। अक्षान, असंयम, अचश्चदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्याएं, भावसे छहों लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, संक्रिक, असंक्रिक; आहारक, मना-दारक; साकारोपयोगी और अन्तकारोपयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्ददि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके अखक्षुदर्धनी जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान दोते हैं। विरोष बात यह है कि दर्शन आलाप कहते समय ' अचक्षुदर्शन, ही कहना चाहिए।

नं. ३९२

अचश्चदर्शनी मिथ्यादाष्टि जीवोंके अपर्याप्त मालाप.

1	्छ . अप-	<b>६ अ</b> .	9 9			ा <u>यो।</u> ३ औ.सि. वे.सि. कार्म.	3 8	· /	•	2	द्र-२ 'का	२ म. अ.	२	२ सं.	<u>२</u> साका- अना-	
			્ય ૪३	1	i	યગામ∙ '		i i		:	1113	] .		{		

छक्खंडागमे जीवहाणं

ओहिदंसणीणं भण्णमाणे अस्थि णव गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अस्थि, च्रत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, चत्तारि णाण, सत्त संजम, ओहिदंसण, दब्व-भोवेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, साथारुवजत्ता होति अणागारुवजत्ता वा<sup>88</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणहाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, सत्त संजम, ओहिदंसण, दब्ब-भावेहि छ रेस्साओ, मवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होंति

अवधिदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-अविरतसम्यग्टाष्टे गुणस्थानसे लेकर शीणकषाय गुणस्थान तकके नौ गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, छह्वों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आदिके चार झान, सातें। संयम, अवधिदर्शन, दृष्य और भावसे छद्दों लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संझिक, आद्दारक, अनाद्दारक; साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं।

#### નં. રૂલર

.....

अवधिदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप.

7.	(जी-	<u>q.</u>	त्रा.	स	ग,	Ę.	का	यो-	े वे.	क.	হা.	संय.	द.	ð.	स	. स.	संक्रि.	ঞা,	ੁ ਤ.
٩	२	Ęq.			-	2	१	रूष	₹	8	8	9	2	द्र.६	8	3	\$	२	२
अवि-	सं.प.	<b>इ</b> .अ.	U	4	i	٩,	त्र.		-	÷	मति.	 	अ <b>ग.</b>	मा•६	મ.	औप.	. स.	आहा	साका.
े से	सं अ	7 :		क्षीण					अपरा	अकषा.	श्रुत.				ŧ.	क्षा		अना.	अना,
ধ্বীপ-	4	1	ĺ	30					1	ີ <b>ຕ</b> ັ	্ৰৰ,				ŀ	क्षायोग		1	į <b>1</b>
<u> </u>		J							<u>.</u>	i l	मनः.			l			ĺ		

485]

Jain Education International

www.jainelibrary.org

# संत-परूषणाणुयोगद्दोरे दंसण-आलाववण्णणं

१, १- ]

अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup> ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि दो गुणद्ढाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, तिण्णि संजम, ओहिदंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>35</sup>।

# आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अवधिद्र्झनी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---अविरतसम्य-ग्दप्टि और प्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैकि-यिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग ये चार योग, स्त्रांवेदके विना पुरुषवेद और नषुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, सामायिक और छेदोप-स्थापना ये तीन संयम, अवधिद्र्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्यापं, भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, औपद्यमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संश्विक, आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

न. ३९४

# अवधिदर्शनी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

[ गु. ∣	জী.	प.	त्रा∴ सं.	ग इ.	কা	यो.	वे ।	क. इ	ता.∣सं	यः द	ं छे.	_  भ.	. स	संग्रि	পা,	ਤ.
9	2		80 8	8 : 2	۶	११म.भ	্র	8	<b>X</b> (	, र	द्र,	€ं १	R	2	٤	२
अवि.	सं.प.	į	a.	म		ंव, ४	म	के	a. :	अব.	स।	६'म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
से.		Ì	र्क्षांणस.		1	વે ૪ ્ગી ૧	ल	वि वि	नि		:		क्षा.		•	अना.
क्षीण-		' 1			: '	वि. १	;	: 69 , : :			:	:	क्षायो -			ľ
		i	, i			ं आ. १	:		. i	l	į.			Ĺ		

### ત્રં, રૂ९५

# अवधिद्रीनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ि
---

असंजदसम्माइहिप्पहुडि जाव खीणकसाओ त्ति ताव ओहिणाण-भंगो । णवरि ओहिदंसणं ति भाणिदव्वं ।

केवलद्ंसणस्स केवलणाण-भंगो ।

एवं दंसणमग्गणा समत्ता ।

लेस्साणुवादेण ओघालानो मूलोघ-भंगो । णवरि अजोगिगुणद्वाणेण विणा तेरह गुणद्वाणाणि अत्थि, तेण अजोगिजिण सिद्धे च पडुच जे आलावा ते ण भाणिदच्वा।

"किण्हलेस्सालाने भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, चोदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ खत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ,

अवधिदर्शनी जीवोंके असंयतसम्यग्टाष्टि गुणस्थानसे लेकर झांणकषाय गुणस्थानतकके आलाप अवधिज्ञानके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि दर्शन आलाप कहते समय अवधिज्ञानके स्थान पर अवधिदर्शन कहना चाहिए।

केवलदर्शनके आलाप केवलकानके समान होते हैं।

इसप्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई।

लेक्यामार्गणाके अनुयाद से ओघालाप मूल ओघालापके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि अयोगिकेवली गुणस्थानके विना तेरह गुणस्थान ही होते हैं, इसलिये अयोगि-केवलीजिन और सिद्धभगवान्की अपेक्षासे जो आलाप होते हैं। वे नहीं कहना चाहिए।

रुष्णलेत्र्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझापं,

**नं.** ३९६

रुणलेत्र्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

<u>.</u>	जी.	<b>ч</b> .	) त्रा,	सै-	ग.	۱ <b>इ</b> .	का.	यो.	वि.	ক	) ज्ञा	संय	्र.	, ਲੇ.	भ	.∣ स.	संक्रि	) आ.	਼ ਤ.
X	24	६प.	20,0	8	8	4	ह	१३	2	8	Ę	2	्र	द्र. ६	२	Ę	र	२	2
मि.		ફ ઝર.	8,0		)			आ दि-			अमा,	असं.	के द.	मा. १	म.	1	. सं.	आहा.	लाका-
सा.		५प.	८,६			-		विनाः	1		₹	 	विना.	Hora	अ.	1 1	अस.	अना.	অলা.
<b>a</b> .	1	<u></u> લ ગ્ર.	19,4							ſ	शान				l				:
व.	ļ	¥4.	₹,¥								<b>२</b>		1		ł		1		
		४अ.	¥,₹														· .		1
<u> </u>		l		1						i j					ļ				

# संत-परूवणाणुयोगदारे छेस्सा-आलाबवण्णणं

चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवासिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागास्वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

"तैसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणद्भाषाणि, सत्त जीवसमासा छ पजत्तीओ पंच पजत्तीओ चत्तारि पजत्तीओ, दस पाण णव पाण अहु पाण सत्त षाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, देवगई णत्थि; देवाणं पज्जत्त-काले असुद्द-ति-लेस्साभावादो । पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्द-लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो,

चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन झान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेस्यापं, भावसे रूष्ण छेस्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं इष्णलेक्ष्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आछाप कहने पर-- आदिके चार गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छढ़ों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझापं, नरकगति तिर्वचगति और मनुष्यमति ये तीन गतियां, यहांपर देवगति नहीं हैं; क्योंकि, देषोंके पर्याप्तकालमें अशुभ तीन लेक्साओंका अभाव है। पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनो-योग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्षिधिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान और आदिके तीन झान ये छह झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रश्यसे छहों लेक्याएं, भावसे इष्णलेक्या; भग्धसिदिक, अभ्ज्यसिदिक; छहों

#### નં. રૂ९૭

कृष्णलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<b>ا ت</b> €	जी.	٩.	मा.	. सं.	्ग,	ŧ.	কা.	यो		वे.	<b>क</b> .	₹IJ.	. संय.	द.	ਲੇ.	¥ī.,	. स.	संकि	अ।.	। उ.
Y	U	Ę	१०	۲	ą	4	হ	2	0	. व	8	ą	ેર	₹	<b>द.</b> (	2	Ę	<b>ર</b>	Ł	ર
मि	पर्या.	4	5	l i	न.			म.	8		:	स(न.	असं•	के द.	मा. १	म.	l İ	. सं.	आहा	साका.
सा.		Y	4		<b>ति</b> .		I	व.	¥		:	R		चिना,	कुच्या .	37.	İ	असं.	1	अना.
स.			9	i	म.		ļ	औ	<b>.</b> ۲		i	খ্রা.		ĺ	:	i	1	!		
अ.	i	i	ε.	Ì	:		ı.	3	2		!	3	ļ			i	:	i	l i	
j		l	; <b>¥</b>	1	! .	ļ	i	ί		ļ			l .	<u> </u>	ĺ		i 1	<u> </u>		

**t**, **t**.]

सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा 🕛

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि अपण्यओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं वेदगसम्मत्तं च भवदि; छद्वीदो पुढवीदो किण्हलेस्सा-सम्माइद्विणो मणुसेसु जे आगच्छंति तेसिं वेदगसम्मत्तेण सह किण्हलेस्सा लब्भदि त्ति । साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>84</sup>।

सम्यवत्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं छुष्णलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---मिथ्यादष्टि, सासादनसम्यग्दष्टि और अविरतसम्यग्दष्टि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्यास्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छढ प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन झान ये पांच झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्यापं, भावसे हष्णलेक्ष्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और वेदकसम्यक्त्व ये तीन सम्यक्त्व होते हैं। रुष्णलेक्ष्याचाले जीवोंके अपर्याप्तकालमें वेदकसम्यक्त्व होनेका कारण यह है कि छठी पृथिवीसे जो रुष्णलेक्ष्याचाले अबिरतसम्यग्दष्टि जीव मनुष्योंमें आते हें, उनके अपर्याप्तकालमें वेदकसम्यक्त्व साथ रुष्णलेक्ष्या पाई जाती है। सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साक्षारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हें।

### **1.** 394

रुष्णलेख्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	ष.	সা.	<b>सं</b> .	ग.	₹.	<b>ቆ</b> ].	ंयो∙	वे.	क.	<b>हा</b> .	.संय	द.	ले.	भ.	: स.	संझि.	ঞা.	ड.
२ मि.	•	<b>६</b> अ. ५अ.			¥	4	ક્	्र औ.मि	्र	8	५ कम	े र असं.	्र के.द	द्र. २ का.		३ मि.	े २. सं.	२ आहा.	२ साका.
सासा.	5		1 3				:	वै मि.			କୃଥ୍ୟ.	İ		J.	अ.	सा-	अस -		अना.
अवि.			4 8					कामे.			मति. श्रुत			भा. १ कृष्ण.		क्षायो.	-		
	ļ		2	(			ĺ		:		अब.		1		1	I.	! !		

Jain Education International

संत-पह्तवणाणुयोगदारे लेस्सा-आलाववण्णणं

किण्हलेस्सा-मिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज़त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो: असण्णिणो, आहारिणे। अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>हरू</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंच जादीओ,

कृष्णलेश्यावाले मिध्यादृष्टि जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर---- एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संक्षापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेदयावाले मिथ्यादाष्टे जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---पक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दृशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझाएं, देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मने(योग, चारों बचनयोग,

#### नं. ३९९

रुष्णलेश्यावाले मिथ्यादछि जीवोंके सामान्य आलाप.

। गु.	জী.	पग	प्रा.	सं	ग.(	₹. <sup>3</sup>	ħT.	यो∙ ∣	वे.	<b>æ</b> .	झा.	संय.	ξ.	ਰੇ.	[ म-	. स.	संझि.	্ বা	ਫ.	I
2	18	<b>Eq.</b>	20,0	8	8	4	Ę	12	R	8	३	2	ર	द्र. ६	ર	2	২	२	२	1
मि	!	इ.अ.	٥, ٥	Í	Ì			આ હિ.		ĺ	अज्ञा,	असं.	चक्षु.	भा र	म.	मि.	सं.	आहा.	ताका.	ľ
		49.	८,६		i			विना.		1				Lead.			असं.	अनाः :	अना.	l
		પગ્ર.	10,4				ļ				ļ.			i I					ŀ	l
		४प.	€,४				ļ	Ì		F	1									l
		४ अ.	¥,₹	1	i	1	1			)	i .	3	l	1 1				<b> </b>	i	ł

२, २. ]

643

छक्खंडागमे जीवहागं

छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असंण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

"तेसिं चेव अपछत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अवज्जत्तीओ पंच अपजत्तीओ चत्तारि अपछत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण

औदारिककाययोग और बैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, खारों कषाय, तीनों अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रब्यसे छहों छेश्याएं, भावसे रूष्णलेश्या; भव्यसिदिक, अभ्रष्यसिदिक; मिश्र्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेइयावाले मिथ्यादाष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्याद्दाष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन माण; चारों संज्ञादं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों देव, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम,

नं, ४००

कृष्णलेत्र्यावले भिथ्याद्दष्टि जीवॅंकि पर्याप्त आलाप.

] गु	जौ.	<b>q</b> .]	म्रा.	सं.	े ग.	<b>\$</b> .]	কা.	यो.	वे.	靑.	झा-	संय.	द.	हे.	भ	स.	संहि	∭ আন	ਚ.
2	و ا	Ę	50	۲	۶	4	६	20	३	¥	3	१ असं.	२ चध्रु.	ंद्र,६ ¦भाश		१ चिर	२   सं.	्र आहा	२ सका
मि	पर्यं.	५ ४	९ ८		न । ति		I	म. ४ व. ४		ļ	अर्शा.	জন্ম•	पशु. अच				असं.	-11	अना
		_	<u>ب</u> ور م		म.			औ. १ वे. १							;	l İ			
		ļ	ξ¥					्व र		ļ.	1	!				1			<u>,</u>

नं. ४०१ हुष्णलेक्यायाले मिथ्याद्दाष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

यु.	जी	. <b>φ</b> .	मा.	<b>.</b>	ग.	<b>₹.</b>  ₹	हा./्यो.	वे. क.	झा.	संय.	द.	ਲੇ.	ं म.	स.	संहि.	ঙায়.	<u>ਚ</u>
₹	· · · · ·	६अ.	<u> </u>		8		ह् । द्	1 2 8	<b>२</b>	१	२	द्र, २		1	<b>२</b>	1 2	्र
मि	<u>क्ष</u>	५ अ.	৩	:	: (		्गी.मि		कुम.	असं,		i					साका-
	চ	े४अ.	Ę		•		वै.मि	•	- কন্তু		अच.		ंअ,		अस	अना-	अना.
	i I	-	4	:	: .		कास.				:	∣मा. १					
	l	1	¥ I	₹¦	; )	. :	:					कृष्ण.	1	<u> </u>			·

948

काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सणिणणो असणिणणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

किण्हलेस्सा-सासणसम्माइद्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओं, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्गि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो

आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क छेक्यापं, भावसे कृष्णछेक्याः अभ्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिकः आद्वारक, अनाद्वारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं।

कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दाधि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-पक सासा-दनसम्यग्दधि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, बसकाय, आहारककाययोगहिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसिदिक, सासादनसम्यक्ष्य, संशिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---- एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, वारों संज्ञापं, देवगातिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकिथिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय,

१ प्रतिषु ' चत्तारि गदीओ ' इति पाठा नास्ति ।

### न. ४०२ कृष्णलेक्यावाले सासादनसम्यग्हाष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

] गुः	্রী.	<u>q.</u>	_ Яा. सं	∣ग. । इ-	का यो	<b> वे</b> .	ক হা-	संय ्	द. ले.	म.	स. संक्रि.	. আ	उ.
1 2	ર	६ प-	20 8	8 8	१ १३	3	¥ 3	٤ -	२ दि.६	2	5 5	ર	र
सा	. सं. प	६ अ.	<u>ٰ</u> و	q.	त्र. अम्द्रिः		ं अज्ञा.	असं. च	।ध्रु.¦मा₊र	म.	सा. सं.	आहा.	साका-
	सं. अ.	1			विना.	i		્રા	(च. कृष्ण,			अना.	अना.
											i i		
	J		1 i		[								

For Private & Personal Use Only

१, १. ]

क्रक्खंडागमे जीवद्वाणं

**4**44 ]

**दंसण, दञ्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो,** आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ्य</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं मण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अवज्जतीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंर्चिदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, देा अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आद्दारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup> ।

तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्यापं, भावसे कृष्णछेश्याः सन्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संग्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी दोते हैं।

उन्हीं रूष्णलेइयावाले सासादनसम्यग्टाप्ट जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर पक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, बारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदा-रिकमिश्र, बैकिथिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो सज्जान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेश्यापं, भावसे रूष्ण-केष्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्स्थ, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी मौर अनाकारोपयोगी होते हें।

नं. ४०३ 🔹 रुष्णलेष्यावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>.</u>	्मी.			··			झा. संय	. द.	<i>छे.</i> म.	स. संगि	, আ	उ.
1	۲.	<b>E</b> 20			1 <b>1</b> -	[₹ <b>¥</b>	ંર્ શ	२	द्र.६१	[ <b>1</b> ] <b>1</b>	2	२
<b>R</b> 7.	सं. प.		न.	पंचे.   त्र.	-	:	ुअज्ञा, अस		मा १भ•	सा. स.		
			<b>H</b> .		व ४ औ.१	i .	1	अच-	कृष्ण.			अना-
			ति.			:		ł			1	
I!	l l		<u>  j</u>	<u>.                                     </u>	'वे. १	i	<u>i</u> l	•	1 :	÷ 1	ļ,	۱ I

#. ४०४ इष्णलेक्याबाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवॉके अपर्याप्त भालाप.

12	जी.	प.	मा.	सं.	ग-	Ţ.	<b>₽</b> 1•,	यो.	वे •	ፍ.	ज्ञा.	. संय	द.	ਰੇ.	म.	∣ स₊्	। संक्रि.	अन.	े उ.
3	1	६ अ.	છ	• I	•		٩	्र	३	8	২	٩	i <b>२</b>	द. २	9	3	۹	२	२
RUL -	स. अ.				ति.	q.		औ.मि.			कुम-		-		भ-	सासा-	सं.	आहा.	साका.
					म.	;	I	वै मि.			જી સુ	1	अच.	ন্থ-				अना.	अना.
1		1			दे.	l		कार्म.					•	¦मा∙ १					
					ļ	J						;		ক্তৰ্ন	j		<b>ا</b>	i į	

किण्हलेस्सा-सम्मामिच्छाइडीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ और-समासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए बिणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्ताणि, असंजमो, दो दंतण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>65</sup>।

किण्हलेस्सा-असंजदसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिणिण गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण

रुष्णलेइयावाले सम्यग्मिथ्यादष्टि जीवोंके आलाप कहने पर--- एक सम्यग्मिथ्यादष्टि गुणस्थान, एक संही-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संहाप, देवगतिके विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अहानोंसे मिश्रित आदिके तीन हाम, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यायं, माबसे हुष्णलेक्याः भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिध्यात्व, संह्रिक, आद्यारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

हुष्णलेइयावाले असंयतसम्यग्दाप्टे जीयोंके सामान्य आलाप कहनेपर---एक अविरत-सम्यग्दाप्टे गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारद्व योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,

1. 804

कृष्णलेक्य वाले सम्यग्मिथ्यादपि जीवोंके आलाप.

្រឡ	. जी-	q. ;	সা.	ं सं.	ग₊ (	Ę.	का	यो.	वे.	<b>क</b>	हा.	संय.	द.	<u> </u> ਲੇ.	म	∣ स.	सांग्रे	<u></u> ઝા.	. इ.
1	2	ą	20	¥	Ę	۶	8	१०	Ę	8	3	2	२	द्र. ६	8	र	2	र	٩
8 4 2 2	a. q.			:		ч <b>.</b>	त्र.	<b>₩.</b> ¥			अज्ञा.			1	भ-	सम्य.	स.		
				1	ति.	į		व.४			् इ.	١	अच.	ऋष्ण.	1			: 	<sub>।</sub> अन्।.
				ļ	म.			ओं. १ वे. १		1	झान निय	:	!	-	1				:
			i i			l İ		भ• ९		1	. I¶I%).∎	1	i					1	!
		ĺ		Ì			ļ			ł	į	ļ	ι ι	ļ	i I		}	Į	j

۲, ۲۰]

छक्खंडागमे जीवहाणं

किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वज्जत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाँं।

तेसिं चेव पछत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आद्दारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

द्रव्यसे छहों लेक्स्यापं, भावसे कृष्णलेक्स्याः भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यकत्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्राएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयेाग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रिश्विककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे हृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्य आदि तीन सम्यक्त्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

**N**. 80%

कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप

मु.	जी.	प.	; मा.	सं.	्ग,	<b>.</b>	का.	य	ì	ं वे.	क	ं झा.	. संय	द.	ਂ ਲੈ.	म	स.	संझि	. आ	उ.
र	. २				÷	-	1				8	ş T	۶ شت		ंद. ६			े १	े <b>२</b>   आग	२ साका,
अ.	सं.प. सं.अ.	६अ.	9		न. ति.	च	ਤ स.	ণ. औ.	४ २	;	i	.म.त श्रुत.			मा.र ऋष्ण.		्ञापः क्षाः			लाका. अनाः
			: :		म.			वे.	\$	i I		अव•	1				क्षायो	i		
	[				Į,		į.	का.	2								:	:	· .	·

नं. ४०७ कृष्णलेज्यावाले असंयतसम्यग्दाष्ट्र जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>यु</u> . १ अवि.	जी. १ सं.प.	प. ६	त्राः। सं. १०∣४	ग. २ न. ति	इं. १ पं.	का. २. स	यो। १०म४ व.४ औ.१	वि न्म	क. ४	3	संय. द. १   ३ असं. के. द. विना.	े छे. इ. ६ भा.१ कृष्ण	1	स. ३ औप. क्षा.	साज्ञे. १ सं.	१	<u>उ.</u> २ साका. अना.
				।त∎ म∙			जा.र वे. १			ञ्चत. अवा.	। विगाः	(9)-41. 		का. झायो.			জনা-

•46 ]

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासे, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>824</sup>।

णीललेस्साए भण्णमाणे ओवादेसालावा किण्हलेस्सा-भंगा। णवरि सव्यत्थ णीललेस्सा वत्तव्वा।

काउलेस्साणं भण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णत्र पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि

उन्हों रुष्णलेइयावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर----एक आविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे रुष्णलेक्याः भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नलिलेइयाके आलाप कहने पर—ओघ और आदेश आलाप कृष्णलेश्याके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि लेश्या आलाप कहते समय सर्वत्र नोललेश्या कहना चाहिए ।

कापोतलेइयावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौददों जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्यातियां, चार अपर्याप्तियां, दर्ज्ञों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; खारों संझाएं,

नं, ४०८

# कृष्णलेख्यावाले असंयतसयग्दाष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

]	<u>ग</u> ु. २ अ.	<u>जी.</u> १ सं. अ.	૬૩. ૭ ૪	י <u>ז צ</u> י-	त.े <u>यो.</u>  वे २   २   १ ८ 'औ.मि. <sub>  म</sub>  कार्म.	8 8	्र		् के.द. विनाः	द्र. २ का.	र	स. १ झायो.	२ आहा-	<u>उ.</u> २ साका, अना,	
						-	अब.	İ		भा• १ कृष्ण					ļ

٩, १. ]

छक्खेडागमे जीवहागं

गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्ताओ, सावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र्ण</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं मण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणद्दाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्द पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

चारों गतियां, पांचों जातियां, छहां काथ, आद्दारककाययोगदिकके विना तेरद्द योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान थे छद्द ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रम्यसे छहां लेदयापं, भावसे कापोतलेदयाः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहाँ सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिकः आद्वारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारो पयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेक्यावाले जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; इसों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझाएं, देवगतिके विना रोष तीन गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, मौदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अक्षान और आदिके तीन झान इस प्रकार छह झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे इसों लेक्याएं, भाषसे कापोतलेक्या: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: छहों सम्यक्त्व, संक्रिक,

#### 4. 802

## कापोतलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

<b>]</b> ⊈. ]	जी.]	<b>q.</b>	সা.	सं.	ग.	¥.	কা.	यो.	वे.	क.	्रज्ञा.	संय.	द.	हे.	ं म.	स.	संज्ञि.	. आ	<u>.</u>
×	2.8	<b>ξ</b> Ψ.	20,9	X	¥	4	Ę	१२	₹	¥	ि <b>द</b> े	Ł	<b>२</b>	支. 钅	र ।	<b>ह</b>	२	२	२
R.	[	६ अ.	\$,9		Ì		1	आ. द्वि			स्रात.	असं •	के.द.	मा. १	म.				सका.
सांस).	1	49.	ે ઽ,૬	ļ		i		विना.		l	₹		वि <b>न।.</b>	कार्गे.	<b>Ж</b> .	۰.	असं -	अना.	अमा.
सम्य.	1	ષગ્ર.	છ,ધ	l I							अझा.	1						Ì	
ज्ञवि	}	¥4.	¥,¥				ļ				াৰ								į !
		४ म.	¥,₹	•		l	1						!	t			l	{	{

**9**80 ]

٩, ٩. ]

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्दाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कताय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्ता, भावेण काउ-लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, चत्तारि सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>\*</sup> ।

मसंक्रिक। आहारक, साकारोपयोगी और अमाकारे(पयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले जीवींके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-सिथ्याहाष्टे, सासादनसम्यग्टाष्ट और अविरतसम्यग्टाष्टि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां. छहाँ काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन झान ये पांच झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग़ुक्क लेक्याएं, भावसे कापोतलेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिक और कार्योपशामिक ये चार सम्यक्त्व; संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४१०

कापोतलेइयावाले जीवांके पर्याप्त आलाप.

3.	ज्वी.	षग	्रमा,	सं.	) ग.	<b>*</b> .	<b>\$</b> 1.	यो.		- ] -		ज्ञा.	। संय.	द.	ਲੇ.	म.	स.	संक्रि-	_	ਰ,
¥	U	ह	१०	¥	३	4	Ę	र ०			¥	Ę	2	Ę	द्र. ६	ર	হ	२	<del>ر</del> المحمد المد. ال	2
मि ।	पर्योः	4	٩		न.		ĺ	म. ১	۲.	ļ		इ.म.	अस ।	के. द	भा १	म.		सं.	आहा.	सामा.
सास।		8	2		ति.		j	व. भ	≰ j –	i		ર્		विनाः	कापो.	গ.		असं.		अना.
सम्य.			6		म,			औ,	٤	ĺ.		अज्ञा.								1
अवि.			६ ४			ļ		वे. १	<b>.</b> .			₹							i	;

ने. ४११

कापोतलेक्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप

. य.	जी.	े प-	সা.	सं		•	কা	ं यो ।	वे.	क.	<b>₹</b> 1.	संय.	् द.	ਡੇ.	) भ.	<b>स</b> .	संहि.	জা.	. ह.
₹	e l	६ अ.	9	8	8	4	हि	7	3	¥	५ कुम.	र	3	द्र, २	<b>२</b>	<b>`</b> ¥	3	२	२
मि.	L -	५.अ.	9		i		ļ	औ मि			कुश्रु.	असं.			म.	मि.	सं.	आहा.	साका,
सा.		४अ.	Ę					वे.मि.			मति		विनाः	য়.	अ.	सा.	असं.	अना.	अना,
अवि.			4					कार्म.			श्रुत.			भा• १		क्षा.	ļ	1	
		•	8 3	[	1	ļ	j	Į			জনা-		Į ,	कापो-		शायो.	1	l	

काउलेस्सा-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपजत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्गि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>818</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण

कापोतलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर--- एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां: चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगदिकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कापोतलेश्वया; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संझिक, असंक्रिक: आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले मिथ्यादपि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छह्दों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दर्शो प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, चार प्राण; चारों

ને કરર

कार्योतलेइयावाले मिथ्याद्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

, गु.	जी.	q.	সা	सं.	]ग.	<b>ई</b> .	ক.	यो.	वे.	<b>ቚ</b>	শা.	संय.	ेद.	ੇ ਹੈ.	भ.	. स	साज्ञ.	આ.	ਤ.
12	28	६प.	20,9	8	8	٩				8	<b>ર</b>	2					2	ર	<b>२</b> ँ
मि	:	६ अ.	٥, ٩					आ हि			अज्ञा.								साका.
	:	५ <b>ए</b>	८,६	ĺ				विनाः			ļ	•	अच.	कापो-	. अ		असं.	অনা_	अमा.
ł	i	५ अ•	છ,પ	1	1		·	i j	1			i	1	!	:			 	
		४प.	₹,४	1			l				:	<u>.</u>	1					1	1
l	Ì	¥अ.	४,₹		ł							İ	1		. 1		;		Í
				l			. 1		l	. '	L	ļ	ł.	i	2		ļi		

2, 2.]

छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स्थ</sup>।

"तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण,

संक्षापं, देवगतिके विना रोष तीन गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कापोत-लेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आह्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कापोतलेक्यावाले मिथ्यादाष्ट्रे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक मिथ्यादाष्ट्रि गुणस्थान, सात अपर्यात जीवसमास; छद्दों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्यातियां; सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संक्षाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छद्दों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अक्षान, असंयम, आदिके

नं. ४१३ कापोतलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

1	.] जी. ]	q.	<b>সা</b> ∙	स )	ग.]	इं. व	i <b>1.</b>	यो-	ं वे.	क.	्रहा.	संय.	द.	ले.	्भ.	स.	सांज्ञि -	ঞ্জা.	ਚ.	ł
र	<u>ب</u>	Ę	-	8	3	4	· ·	१০	<b>3</b>	8		٢.	२	द्र, ६	<b>२</b>	2	<b>२</b>	٤	२	
मि	יויייןי	५ ४	5		न•   ति.	•		म. ४ व. ४		Į	अझा.	असं.		भाः १ कापोः			अस	આદ્ા.	साकाः अनाः	Į
	ì	• •	و		म.	í í	:	औ. १	ļ	i				100 <b>110</b>   						ļ
			६ ४			)		वे. र		]					1		•			l

# नं. ४१४ कापोतलेश्याचाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>ग</u> ु.	;जी	्र प्र	( प्रा.	सं.	ग.	s.	का.	यो.	वे.	क.	झा.	संय.	द.	ਰੇ.	ं स.	. स.	संक्रि.	आ.	ਚ.
_		इ.अ.			8		ଞ୍	₹	<b>R</b>	Y	ર	8	िर	द्र, २		2	ર	२	2
मि		ષ અ	: <b>o</b>	ļ	:			रो <b>.</b> मि.'					चक्षु.	কা.	म.				साका-
	ক্ষ	४अ.	⊢ <b>६</b>	l		!!		ौ.मि.		!	কুস্তু.		अच	য়.	अ.		असं.	अनाः	अगा.
	1	Į	4		I		ļ.	कार्म.		I.				भा. १	ł				
	1		ં૪ ર	.	l I	:	:			: I				(कापी)		i		ļ	

[ 988

दण्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

दण्वण काउ-सुक्कलरसाआ, भावण काउलस्साः भवासाद्ध्या अभवासाद्ध्या, भिच्छत्त, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा।

काउलेस्सा-सासणसम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स</sup>े।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी,

दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेखाएं, भावसे कापोतलेखा; भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

कापोतलेइयावाले सासादनसम्यग्दाष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर--एक सासादन गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दें। जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आह्वारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इन दो योगोंके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अह्वान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे कापोतलेक्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेक्यावाले सासादनसम्यग्दाप्ट जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संशी-पर्याप्त जीवसमास. छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, बारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,

नं. ४१५ कापोतलेक्याचाले सासादनसम्यग्दछि जीवोंके सामान्य आलाप.

2	२	प∙ ६प₊ ६अ.	٤.		8	इ. १ प.	१	यो १३ आ. द्वि.	₹	8	३	र अस.	२ चक्षु•	द्र. ६ मा १	१ भ.	<u>स.</u> १ सासा-	۶	्र	<u>उ.</u> २ साका.
	सं.अ.		,					विना.					अच	कापो.				अলা.	अना.
ł	l	Į			l	I					}	J	l			I			ļ

**64**8]

# १, १. ] संत-परूवणाणुयोगदारे लेस्सा-आलाववण्णणं

[ 484

तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, संण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>सर</sup>।

"तैसिं चेव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, ड अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, णिरयगई णत्थि । पंचि-दियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मचं,

चारों वचनयोग; औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों छेश्यापं; भावसे कापोत-छेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेइयावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संशी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संशापं, तिर्थच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां होती हैं; किन्तु नरकगति नहीं है। पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिकमिश्र, चैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्यापं, भावसे कापोतलेक्या; भव्यासिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संदिक,

नं. ४१६ कापोतलेक्यावाले सासादनसम्यग्दाष्टे जीवोंके पर्याप्त आलाप.

(3		जी,	प.	श्रा.	सं.	्ग.	] ई.	<b>का</b> .	यो	.	वे	ቆ.	झा.	संय.	ंद.	ਰੇ.	भ-	स.		জা.	उ.
٩	1	٩	Ę	٩٥	x	₹	٩	1	٩٩	,	३	8	ર્	٦	्र	ड़ <b>. ६</b>	2	٩	२	1	२
सा	ų.	<b>i.</b> 4					षं.	त्र,	म.	8			সন্না.			मा₊ र	भ.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	ļ			ĺ		ાતે.			ब.				:		अच-	कापो			ļ		अना.
	ļ					म.			ગો.	٩			İ		i				ļ		
	ļ						l,	í ļ	वे.	٩					ļ						

नं. ४१७ कापोतलेइयावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

ग्र.[ ३	जी.	Ч.	সা.	.स	ग.	} <b>₹</b> .	का.	यो.	वे	<u>'</u> क-	<b>ឡ</b> [-	∣ संय•	द.	ਰੇ.	म.	. स.	संहि	आ.	ਤ.
2	2	દ્સ.	<b>9</b>			र	2	્ય	R	ે૪ં	२	1	२	द्र.२	१	1	2	ર	ર
सा. सं	.अ.		!	I	ति.	Ч.	त्र₊	औ.मि			कुम.	असं.	चक्षु,	का.	भ-	सासा,	सं.	आहा	साका-
i i					म.			वै.मि			कुश्रु.		अच.	়য়.				अनाः	अना
					दे.		ļ	. कार्म•	l		:			मा १					
			)			i i	į			i				का.				ļ	

• ६६ ]

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

काउलेस्सा-सम्मामिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्टाणं, एमो जीवसमासे, छ पजात्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; मवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-बजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

काउलेस्सा-असंजदसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि

# आद्वारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कापोतलेस्यावाले सम्यग्मिथ्यादपि जीवेंकि आलाप कहने पर--एक सम्यग्मिथ्यादपि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और चैक्रियिककाययोग ये द्शा योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कापोतलेश्याः भव्यसिद्धिक, सम्याग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दप्रि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दाष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्ट्रिय-जाति, त्रसकाय, आह्वारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके

#### નં. કર્ટ

कापोतलेक्यावाले सम्यग्तिथ्यादपि जीवॉके आलाप.

ł	गु.	जी.	<u>q</u> .	। স্ব্য,	<u>स</u>	ग_!	इं.	का	्यो	•	वे	्क,	<b>ज्ञ</b> ा.	संय.	्द.	ਲੇ.	ं म	् स	संहित.	आ	। उ.
	2	२	ş	१०	ሄ	₹.	8	٤	2	•	₹	Y	1 2	<u>१</u>	ર	द्र, ६	્ટ	1 2	۶ ;	Ł	२
ł	तम्य.	सं. प.	! I	1 :		न ।	पंचे.	त्रस.	म्.	8	I		<sup>i</sup> अल्ला,	असं-	चधु.	मा. १	.म.	خرا	स.	आहा.	साका.
	1		Į	,	1	ति.		1	<b>व</b> .	κ.			<b>R</b>	i	अच	का.	i	141			अन्।
			ł	:		म.		İ	ओ.	१	/ : 		রান-	!			:				
1			l i	[ . !	1			t	वे.	ŧ	1	I	<sup>!</sup> मिश्र		;		1				
ł			: 		i				i		J	i	<b>i</b> .	i	(		!				

[ 2, 2.

**१, १**- ]

णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>86</sup>।

तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ छेइयाएं, भावसे कापोतलेझ्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्टाप्ट जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आछाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्टाप्ट गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना होष तीन गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, बसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कापोत-लेश्या; भव्यासिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४१९ कापोतछेझ्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवाँके सामान्य आलाप.

<u>गु.</u>		ष₁ प्रा.									द.	े.	भ		संज्ञि.	आ.	. इ.
१ आवि.		६प₊१० ६अ.७				ર ર આ દિ	₹	¥	F	۲	3	द्र.६			2	ર	२
	. सं अ			ा• ५. ति₊ ⊨	1.	जान्छ विना.			भात- श्रत-	ંબસ. ⊨	भ.द दिना	मा २ का	' <b>म</b> • 	्आप. क्षा	.स.	आहा. अना	साका. अना,
	1		1	ਸ. ਼		}			अब.				1	क्षायो-		-0.00	
·		i	. ]	<u> </u>		1		I	1			ļ					1 1

नं. ४२० कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

अवि. सं.प. न	ग.' इं. का. यो. ३ १ १ १० त. मूम् - म.४ ति. मि कि ब.४ म. वै.१	२४२ १	३ इ. ६ १ • के.द. मा• १ म. अ विना• का. ६	. संझि. <u>आ.</u> उ. २ २ २ प. सं. आहा. साका. ग. अग्हा. आहा. यो.
--------------	--	-------	---	---

तैसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इस्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेम्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रू</sup>।

तेउलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त पाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

उन्हीं काणेतलेइयाबाले असंयतसम्यग्हपि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक अविरतसम्यग्हपि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंत्रेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिक-ामिश्र, बैक्तियिकामिश्र, और कार्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेड्यापं, भावसे कापोतलेश्या; भन्यसिद्धिक, औपशभिक्रसम्यक्त्वके विना क्षायिक और क्षायोपशामिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेइयावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---आदिके सात गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना होष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, पम्द्रहों योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना होप सात ज्ञान, स्क्ष्म-साम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना होष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे तेजोलेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक,

# नं. ४२१ कापोतलेज्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	·		<u>त्रा</u> ,			ţ.	কা	यो.	I	·		संय.			भ <b>.</b>	स.	संझि.	आ.	3.
१ अवि.	१ सं. अ.	६अ.	9	x	२ न. ति.	१ पं.	१ त्र.	्र औ.मि वि.मि.	२ ए. सं	8	३ मति श्रुत-		-			र क्षा. क्षायोः		र आहा. अना.	र साका. अन्य.
		:			म्.  म्.			कार्स.			<u>अ</u> व.		1	सा. १ का.					

[ ७६९

१, १.]

छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा <sup>\*\*</sup>। तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि सत्त गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विशेषार्थ— गोमद्रसार जीवकाण्डके अन्तमें आलाप अधिकारके ऊपर पं. टोड़रमल्लजी ने जो संदर्षियां दी हैं उनमें इन्द्रियमार्गणाकी अपेक्षा असंक्री पंचेन्द्रियके पर्याप्त अवस्थामें चार लेक्याएं, तेजोलेक्याके आलाप बताते हुए तेजोलेक्यामें संझी-पर्याप्त और अपर्याप्तके अतिरिक्त असंझीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास और संझीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंक्षियोंके चार लेक्याएं बतलाई हैं। परंतु जिस आलाप अधिकारके अनुसार पंडितजीने ये संदृष्टियां संग्रहीत की हैं उसमें केवल संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए ही असंद्वियोंके चार लेश्याएं बतलाई हैं। किन्तु इन्द्रियमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंशियोंके तीन अशुभ लेइयाएं और तेजोलेइयाके आलाप बतलाते हुए संशी पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो ही जीवसमास बतलाये हैं। किन्तु धवलामें सर्वत्र असंक्रियोंके तेजोलेश्याका अभाव या तेजोलेश्यामें असंक्रीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमासका अभाव ही बतलाया है। इससे इतना तो निश्चित हो जाता है कि गोमटसार जीवकाण्डमें संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंज्ञियोंके जो चार लेक्याएं बतलाई हैं वह कथन धवलाकी मान्यताके विरुद्ध है। परंतु गोमद्रसार जीव-काण्डके मूल आलाप अधिकारमें ही जो दो मान्यताएं पाई जाती हैं उसका कारण क्या होगा, इसका ठीक निर्णय समझमें नहीं आता है। एक बात अवस्य है कि पंडित टोड़र-महाजीने सर्वत्र एक ही मान्यता अर्थात असंबियोंके तेजोलेस्या या तेजोलेस्यामें असंबीपंचे-।न्द्रिय-पर्याप्त जीवसमासको स्वीकार कर लिया है, इसलिये उनके सामने सर्वत्र उक्त मान्य-ताका पोषक ही पाठ रहा हो तो कोई आश्चर्य नहीं। यदि पंडितजीने मूलमें दिये गये संक्षीमार्गणाके निर्देशके अनुसार ही सर्वत सुधार किया होता तो कहीं न कहीं उन्होंने उसका संकेत अवश्य किया होता। जो कुछ भी हो, फिर भी यह प्रश्न विचारणीय है।

उन्हीं तेजोलेरयावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके सात

### 

तेजोलेरयावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

। ग्र.	जी	प.	प्रा.	. सं	ग.	<b>\$</b> .	का.	यो •	वि.	<b>क</b>	) ज्ञा-	∣ संय.	्र.	਼ ਲੇ.	[ म	स	,संझि.	आ,	ਂ ਤ.
ف	2	इप.	20	8	R	2	2	२५	Ę	8	9	પ	<u> </u>	द्र. ६	2	Ę	र	२	े २
मि.	सं. प.						त्र-					संदम.	के द.	मा. १	म.		सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.		l	!	म.									ते.				· ·	अना.
अप्र.	İ	1	ļ		<u>द</u> े.				1	ĺ		विना			l				
	ļ			i I		]			[			] .							
		1				]											ĺ		
	ł	1	I	}															

Jain Education International

छक्खंडागमे जीवहाणं

पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, रूत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागाह्रवजुत्ता होति अणागाह्रवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup> ।

""तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणड्ढाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि ति दो गदीओ, पंर्चि-दियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, पंच

गुणस्थान, एक संझी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, नरक गतिके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, पर्याप्तकालसम्बंधी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कथाय, केवल झानके विना रोष सात झान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात संयमके विना रोष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यासीदिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्तव, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेरयावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादाप्टे, सासादनसम्यग्दप्टि, अधिरतसम्यग्दप्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमासः छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, देवगति और मजुष्यगति ये दे। गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, नपुंसकवेदके विना रोष दो वेद, चारों कषाय, कुमति, कुधुत और आदिके तीन झान इसप्रकार पांच झान,

### नं. ४२३

तेजोलेइयावाले जीवॉके पर्याप्त आलाप.

] गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	<b></b> .	का.	∣ यो ∙	वे.	क	ज्ञा-	संय.	द.	' ਲ•	ं स	स.सं	ज्ञे .	आ.	. इ.
0	2	६	20	8	३	\$	1	११म.४	₹	8	v	५ असं.	3	द्र. ६	२	Ę	2	र २	ર
मि.	सं.प		ļ		ति -	ų.	त्र.	न ४	i			देश			भ	स	Ť۰	आहा	साका [
से					म.			औ. १			विना.	सामा	विनाः	ते.	अ.	і. і			ं अना.
अप्र.					दे.			वे. १	Í			छेदे।	1	1					
								आ. १				वरि.				<u>.</u>			1

### નં. કરક

तेजोलेइयावाले जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

गु∙	जी.	प.	গ।.	सं.	ग. इ	্কা,	यो.	वे.	क.	叡1.	संय	ξ.	ਲੇ.	े भ.	स.	संझि.	) আ.	3. 1
×	1	६ अ	9	8.	<b>২</b> হ	\$	X	२	8	પ્	3	३	द्र. २	२	ંધુ	2	સ	२
मि.	5			દે	. <b>ч</b> .	त्र	औ.मि	<b>T</b> .		कुम.	¦असं∙	के.द.	का.	ें स.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
सासा		1			<b>[.</b> ]		वे मि	म्रो.					ন্তু.	अ.	विनाः		अना.	अनाः
अवि	1	4	-	:	÷		आ.मि			मति.	छेदो.		भा. १	l.	:			i j
प्रस					:		कार्म.			श्रुत.		i '	ते.	1			(	. ļ
1		1			:	:	1	! :		अव.	į	!			!			

000 1

[ १, १.

णाण, तिण्णि संजम', तिण्णि दंसण, दच्वेण काउ सुक्कलेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णियो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारु-बजुत्ता होति अगामारुवजुत्ता वा।

तेउलेस्सा-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिश्यगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अर्सजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, मावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाद्दारिणो, सागाह्यजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रभ</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्र-

असंयम, सामायिक और छेद्रोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिश्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक अनाहारक; साकारोपयोगी और अनक्षारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेश्याचाले मिथ्यादपि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक मिथ्यादपि गुण-स्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त थे दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, द्शों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसंकाय, औदारिकामिश्र और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारह योग: तीनों वेद, बारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रज्यसे छहों लेख्याएं, भाषसे तेजोलेश्या: भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोहेश्यावाळे मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कश्ने पर--एक

१ प्रतिषु ' असजमो ' इति पाठः ।

મેં. કરપ

तेजोलेख्यावाले मिथ्यादाप्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

<u>।</u> रा	1_	र्ज	1.	q.	সা	सं.	ंग.	Ţ	क.	यो.	वे.	क.	នា,	संय.	द.	ले.	म.	स.	संहि.	आ,	. ਰ.	í
1	.   .	२	-	Ęq.	80	8	1 4	1	*	१२	R	8	२	2	૨	₫. Ę	२	2	1	ર	<b>२</b>	L
मि.	, A	t.	q.	६ अ.	9		ति	Ť	<b>त्र</b> .	म. ४			अक्षा.	अस.	चक्षु.	मा. १	भ.	मि	सं.	आ हा.	साका.	l
			अ.		ļ	9	म	1	i	व. ४							अ.			अना.	अना.	Į
				l			द			औ. १				İ				1				I
						1				वे २				İ			1	1				ł
1	1									का १		ł						ļ				ł
	ł			į	1		ł	1	į						Į		J	l I				Į

- **Serv** 

ज्जक्खंडागमे जीवहाणं

सीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गर्दाओ, णिरयगदी णत्थि; पंचिंदियजादी, तसमाओ, दस जोम, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, मावेण तेउलेस्सा; मवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

""तैसिं चेव अपञ्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जतीओं, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दे

मिथ्याद्दाष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्हों प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां हैं, किन्तु नरकगति नहीं है। पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दशा योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों ठेक्सापं. भावसे तेजोलेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आदारक, सक्कारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले मिथ्यादाष्टे जीवौंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, बार्री संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये

#### #: 59E

# तेजोछेष्यावाले मिथ्यादाष्टे जीवोंके पर्याप्त आलाप.

य.	जी.	य ।	Яι,	सं.	] ग₊∣ई.	ৰা.	्यो.	वे -	] क.	ज्ञा-	संय.	द.	<b>ले</b> .	) म-	स.	सं ज्ञि.	आ.	ਚ_
2	2	Ę	१०	¥	1	2	20	i 🏊	¥	r 7	5	২	द. ६		₹	8	1	२
ৰিচা ব	e 9				1 1	<u>त्र</u> .	मः ४		1	ज्ञान -	असं				मि	सं.	আর্।	साका,
					ਸ.		व ४				l .	अच	( ते •	স.				अन्।
1				ł	<b>दे</b>		औ. र	ļ		ļ			ļ	i				

# न. ४२७ तेजोलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

] य.	जी.	q.	<u>त्रा</u> ,	सं	ग.	ŧ	ক্য.	यो.	वे.	क.	झा.	संय.	ξ.	ੇ ਲੇ.	्भ	स.	संझि	) आ.	ਰ.
2	१	६ अ.	ف	8	2	2	2	२	२	8	२	2	ີຊີ	द्र २	2	\$	t	े २	२
मि.	स	1		-	देव.	<b>प</b> -	त्र.	वे. मि.			कु <b>म</b> -			1	1	i	स		ধাকা,
	<b>.</b>			) }				कार्म.	। स्री	į	કુ.સુ.		6	ञ्च. भा. १	अ.	:		्अ <b>ना</b> ः ।	अना.
			1	ļ						[ 			l	ते.		;	1	ľ	

**₹, ₹-**]

जोग, दो वेद, णचुंम्यवेदो णत्थिः चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण तेउलेस्साः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छ्र्मं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेउलेस्सा-सासणसम्माइहीणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणहाणं, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिणिग गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, लिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, मावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भद</sup>।

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पत-

दो योगः पुरुष और स्त्री ये दो वेद होते हैं, किन्तु नपुंसकवेद नहीं द्वोता है। चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्यापं, भावसे तेजोलेक्याः भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिकः मिथ्यात्व, संक्षिक, आद्वारक, अनाद्वारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी दोते हैं।

तेओलेघ्यावाले सासादनसम्यग्दाष्टे जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---एक सासा-इन गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगदिकके विना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे तेजोलेक्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेस्यावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने

ત્ર, કરડ

ł

तेओलेक्यावाले सासादनसम्यग्दाधि जीवोंके सामान्य आलाप.

<u>य.</u> ज	<u>n.</u> ¦									ंसंय	्र.	हे.	म.	स, संग्रि	. জা	ं ह.
१   सार्व		६ प. इ. अ								۶	२	1			२	२
	. अ. अ.	ય ગા		ति पं म			ंड २१		अझ <b>ा.</b> '		ंपक्षु. अच.		म स	ग,∶स-	आ <b>हा</b> . अना.	साका. अन्ता.
				दे	:	वे	ર							:		<b>'9973.1</b> +1 
			i ,		j	ं का	. Ł			i	:			ļ		

### छक्खंडागमे जीवहाणं

[ **१**, १-

चीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-षज्रवा होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>स</sup>े।

ितेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण्डाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो

पर--- एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, नरकगातिके विना शेष तीन गातियां, पंचेन्ट्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छढों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेरयावाले सासादनसम्यग्दापि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात माण, चारों संझापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चैकिथिकमिश्र और कार्मणकाययोग

# नं. ४२९ तेजे।लेइयावाले सासादनसम्यग्दाप्टे जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। मृ.	(जी.)	a.	זא		∣ इं.	का.	यो.	<b>ā.</b> !	<b>क</b> . ∣	हा.	संय.	द.	. ਹੈ. ਸ.	ास, संदि	. আ	3.
1	2			४ व	8	2	२०	1 3	¥	ŧ	8	ર	द्र. ६. र	1 2 2	٤ -	<b>२</b>
सा.	सं. प.			1 1	वंचे₊	<u>त्र</u>	म, ४		:	अज्ञ <b>।</b> .	असंग		भाग्र¦म- । ⇒	सा स	आहा	
				<b>म</b> .			व ४ औ. १			:		अच-	ति			अन।-
			Ì	द.	<b>1</b>		जे. र			1			i i			

### म. ४३० तेजोलेदयावाले सासादनसम्यग्टाप्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। गुः	∣ अती ग	य•	দ্য ন	सं.	ग-	ŧ.	का.	यो	वे ।	<b>क</b> .	<b>का</b> -	. संय	द.	ले.	भ	स.	संझि.	. जा	उ.
1	9	इ.अ.	9	8	1	٩	1	્ર	२	8	ર	9	२	इ. २	1	<b>)</b> ๆ :	٩	२	ર
le t	सं. अ.			ĺ	दे.	q.	त्र.	वे मि.			कुम				<b>म</b> -	सःसाः	.स.	आहा.	साका-
								कार्म.	स्री.		કુ, શ્રુ.	ļ	अचे.	য়-			1	અના.	अनाः
											-			AT. 9					
1		j	i					İ.			<u>_</u>			ं ते.	]				

942

जोग, णचुंमयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दघ्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-सम्मामिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासे, छ पज़त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, मावेण तेउलेस्सा; भासिद्विया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>ध्य</sup> ।

ये दो योग, नपुंसकवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध छेश्यापं, भावसे तेज्रोछेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी हे,ते हैं।

तेजोलेश्यावाले सम्यग्मिथ्याद्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-एक सम्यग्मिथ्याद्दप्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरक-गतिके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचनयोग, मौदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग थे दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों मज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, अलंयम, आदिके दे। दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्यापं, भाषसे तेज लेश्या; भव्यसिद्धिक, सम्यग्म्थ्यास्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं।

ન. કરૂર

### तेजोछेरयावाले सम्यग्मिथ्यादपि जीवॉके आलाप.

<u>। ग्र.</u>	_ जी-	<u></u>	<u> </u>	. सं	ग.	<u> </u>	a).	योः	्वे.	ক	. ज्ञा-	) <mark>संय.</mark>	्द.	ले.	म.	⊦स-	संक्षि	आ.	ં સ.
2	र	4	१०	8	₹	٤.	8	१०	Ę	8	3	1	<b>२</b>	द्र ६	2	र २	१	2	2
सम्य.	4. <b>4</b> .				নি	¢.	त्र.	मः ४			अझा.	असं.	चक्षु.	मा २	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका,
					f			ส. ช	]		Ę		अच.				1		अन।
	1			:	दे.			औ. १			झान.					1	1		
		l i		i				वे. १		1	मिश्र.		ĺ	[		i			
1											-								
				l							l		l		ļ		j	ļ	

१, १. ]

1918<u>8</u>]

तेउलेस्सा-असंजदसम्माइद्वीगं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजचीओ छ अपजचीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्गि वेद, चचारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागास्वजुत्ता होति अणागारु-वजत्ता वा<sup>भ्य</sup> ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, छ पज-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

तेजोलेस्यावाले असंयतसम्यग्दपि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---एक अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संक्षापं, नरकगातिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारककाययोगांधिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन क्षान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, ट्रव्यसे छहाँ लेश्यापं, भावसे तेजोलेश्या; भष्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोप्रयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेइयावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवेंकि पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, व्होां प्राण, चारों संक्राएं, नरकगतिके विना होष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयेाग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों बेद, चारों कवाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे तेजोलेक्ष्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक,

## नं. ४३२ तेजोलेस्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवॉके सामान्य आलाप

]ग्र.	(	जी.	Ч.	সা•	सं.	ं ग.	(₹.	का.	यो.	ं वे	<b>क</b>	( ज्ञा.	ु संय	् द.	ੁ ਲੇ	. म	स.	संहि.	; আন.	. उ.
1	-	२	हप,	२०	-		•		१३	•		3		ાર	-	६ १		2	২	2
. স	Ŕ	q,	ંદ્ર અ,	U		ति.	zt <del>e</del>		आ दि विना.	• .	:	मति					ं औष•	् सं	आहा.	साका,
		, अ				म.	-9-	4	विना.			श्रुत.		वना.	े ते		্ধা.		अनाः	अनाः
	Į –			!		<b>र</b> .	i					গ্ৰ <b>-</b>	•				कायो-			1
	ĺ			ļ	1	Į	]	i		I.	Ì	)	2	ì	;	:			. ر ز	

[ १, १-

**₹,** ₹. ]

[ 1615°

वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्करुरेसा, भावेण तेउरुरसा; भवसिद्धिया तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रभ</sup>।

तेउलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणड्ढाणं, एओ जीवसमासो, छ

आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले असंयतसभ्यग्दष्टि जीवींके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्याएं, भावसे तेजोलेक्या; भव्यसिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेत्र्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर---एक देशविरत गुणस्थान, एक

नं. ४३३ तेजोलेस्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>.</u>	जी.	ष₊∫ प्रा	! स	<u>1</u> 1.	<u>ş</u> .	¦का.¦	यो.	वे	क.	; রা.	संय.	द.	ले.	) म.	, स.	संहि.	জা,	ਤ.	l
1	<b>۲</b>	६ १	8	ِ ۽ َ	8	र	१०म.२	४ ३	8	३	8	L .	द इ		्र	२	१	२	Ē
আৰ.	सं.प.		j I		<b>ч</b> .	E.	व ४		i		असं.		मा. १	म-	औप.	. सं	आहा,	साका.	
				म.   →		ㅋ	औ. १			ઝુતૈ.		बिनाः	ते.		क्षा.			अने।	
	<u>}</u>			। द	1		व. १	1		अव			ļ		क्षायो.	1	.	l i	1

नं. ४३४ तेजोलेरयावाले असंयतसम्यग्दाधि जीवांके अपर्याप्त आलाप.

<u>म</u> .		जी.		ा श्रा .] सं							ज्ञा.	संय	द.	छे.	) भ.	्स.	संगि	् आ.	्छ
۶		१	६ अ	8 0							ર્	1 2	्र	ह. २	2	₹	र	2	2
) અ.	सं	. अ.			दे	ά.	স	औ.मि वै मि	107		मति.	असं.	के.द	का.	म.	औष.	. सं.	आंहा	साका
				:	म.	÷		वे मि	59		श्रुत.			່ ສູ.		क्षा.			अना.
	Т			:	i	i		कार्म.		į	अंब.	Ì	ĩ	भा १	1	क्षायो.			
	۱.		)		l	I	i	1		ļ		1		ते					

पज्जचीओ, दस पाण, चचारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णच जोग, तिण्णि वेद, चचारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, मावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा<sup>भभ</sup>।

"तेउलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्धाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिं-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि

संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्थवगति और मतुष्य-गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जलकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और और।रिज-काययोग वे नौ योग; तीनों वेद, चारों कवाय, आदिके तीन ज्ञान, संवमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेड्याएं, भावसे तेजोलेड्या: भव्यसिद्धिक, औपर्शामिक आदि तीन सम्यवस्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवींके आलाप कहने पर--एक प्रमत्तविरत गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझारं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये

### ત્ર. કર્વ્ય

तेजोलेज्याचाले संयतासंयत जीयोंके आलाप.

<u>गु</u> . २ देश.	र	( <u> </u>	भा.	8	2	<u>इ.</u> १ व.	का. १ त्र.	९	x	वे. २	¥	ं र्च	र देश	₹	द्र. ६ मा. १	2	स. २ औप. क्षा. क्षायी	2	र	<u>उ.</u> २ साकाः अना.
								]		ļ			Í					f	l	

### ≠. કર્દ્

### तेजोलेइयावाले प्रमत्तसंयत जीचोंके आलाप.

17.	जी.	q.	भा	ŧ.	ग.]	<b>Ŧ</b> .	কা_	यो.			ज्ञा-	संय.	द.	ने.	. म.	स	संख्रि	अत.	उ.
र	- 4	<b>6 T</b>	20	4	१	\$	\$	११	₹	8	8	3	1	<b>द.</b> ६		<b>1</b>	2	t	2
1 65	सं.प.		9		म.	म्	जस.	म.४					के.द. विना		म.		स.	आहा.	साका, अना
<b></b>	સં.અ.		İİ			μ-	71	व.४ औ.१			श्रुन. अब	છર વાર.	भवनाः ¦	i <b>a</b> •		क्षा क्षायो			পশা
			ļļ					খা, ২	ļ		मनः		ł						Į

Jain Education International

•••C ]

[ 1999

संजम, तिणिण दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिणिण सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

तेउलेस्सा-अप्पमत्तसंजदाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुनगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आद्दारिणो, सागाहवज्जत्ता होति अणागाहवजुत्ता वा<sup>भ्भ</sup> ।

पम्मलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पछत्तीओ छ अपछत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ,

तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे छहों छेक्याएं, भावले तेजे छेक्या। भव्यसिदिक, औपर्शामक आदि तीन सम्यक्तवः संदिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोछेश्यावाले अग्रमत्तसंयत जीवेंकि आलाप कहने पर-एक अप्रमत्तविरत गुण-स्थान, एक संझी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंझाके विना शेष तीन संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, आदिके तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, और योदामिक आदि तीन सम्यवस्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

पद्मलेइयावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये देः जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों

### नं- ४३७

तेजोलेइयावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आखाप.

1050 B

पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्साः भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-बजुत्ता वा<sup>र्र्द</sup> ।

"तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे आत्थि सत्त गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जसीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ हेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो,

योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलक्कातके विना शेष सात क्वान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात तंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे पग्नलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, एक संझी पर्याप्त जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संझापं, नरकगतिके विना रोब तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारद्व योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलझानके विना रोष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना रोष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे पंग्रलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और

ર્ત, ઇરૂ૮

पद्मलेइयावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

। ग्र.	जी.	<b>ι</b> α. Έ	प्रा.	स.	ग.	<b>\$</b> .	का.	यो.	वे.	<b>क</b> .	झा.	संय.	्र.	<u>.</u> छ.	म-	स.	संक्षि.	) आ•	ਤ.
.0	२	६प.	20	8	3	12	2	१५	₹	8	৩	4	i 3	द्र. ६	ર		2	२	. २
मि.	स. प.		9	ļ	R.	٩i	7.						के द.				सं.		साका-
से.	सं. अ.		ļ		म.				]	l	विनाः	देश.	विनाः	प.	अ.	i i		अन्।	अनाः
সস.	•		1	1	दे.					[	1	शुमा.					ĺ		
•	1		}	ĺ	ļ					1		छेदो.					 {		
1		ļ									ĺ	परि.					!		1
1	1	1	1	1	1	L	11			Í	1		l				ł,	, 	1

નં. કરૂર

पद्मेल्हर्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। य-	जी.	प•	[ प्रा. ]	सं.	ग.	₹.	কা.	∣ ये	ŧ.	वे.	ক	ज्ञा-	संय.	द.	<b>8</b>	म.	. स	संग्रि.	आ.	. उ.
	2	Ę	१०	۲	<b>.</b> .	٤		र र ब.		३	¥	े ७ केन	५ असं. देश		द्र. ६ भा इ		Ę	्र म.	रे आहा.	२ माका
मि. से.	सं.प.	1			म.	4.	7.	ઔ.	Ł				सामा.						-1121.	अना.
জস					दे.			वै. आ	२ २				छेदो. परि.	Ì	]				ĺ	: •

٩, ٩.]

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्धाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिं-दियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेरसाओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

पम्मलेस्सा-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

## अनाकारोपयोगी द्वोते हैं ।

उन्हीं पग्नलेइयावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-मिथ्याददि, सासादनसम्यग्दाप्टि, अविरतसम्यग्दाप्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, एक संज्ञी-अपयीप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगाति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, लसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योग, पुरुषवेद, चारों कथाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन झान ये पांच झान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्याएं, मायसे पद्मलेक्ष्या भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाद्दारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेक्याचाले मिथ्यादप्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादप्टि गुण-स्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, छद्दों अपर्याप्तियां, दर्शों प्राण, सात प्राण, चारों संझापं, नरकगतिके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, व्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगद्विकके विना रोष बारद्द योग,

#### न. ४४०

### पद्मछेइयावाले जीवींके अपर्याप्त आलाप.

<u>य</u> .	জী.	प.	সা.	सं.	ग.	5	কা,	_ यो•	वे.	<u>क</u> .	. हा.	संय.	द.	छे.	म.	स.	साह.	- সা,	<b>8</b> .
8	121	દ્ર અ.	9	8	२	2	2	¥	2	8	4	3	Ę	द्र. २	२	4	1	- ২	् २
मि.					दे.	d.	<b>1</b>	ओ.मि	· <b>T</b> .		कुम.	असं.	के.द	का.	म.	सम्य.	. सं.	आहा,	साका.
सासा					म.	•	Ì	वे.मि.	1 <b>*</b>	1	क्रथ.	सामा	विना.	ন্থ-	अ.	विनाः		अन्।	अना.
জৰি .	<b>1</b>					ı İ	ł	आ.मि	1 1.	l İ	मति.	छेदो.		भा. १		İ	i İ		
श्रम.			l i					कार्म.	! .	1	श्रत.			ч.					
[ <sup>1</sup>						ļ				ĺ	अव.			-		ļ			

कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, देा दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता ह्रोंति अणागारुवजुत्ता वा"

"तेसि चेव पज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, मावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो,

तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेरयापं, भावसे पद्मलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अन.हारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेदयावाले मिथ्यादपि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादपि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विवा दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, व्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कृषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे पद्मलेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-

નં. ૪૪૧

### 🔹 पद्मेळेज्ञ्याबाले मिथ्यादाधि जीवोंके सामान्य आलाप.

.गु.	) জী	<b>4</b> .	<b>)</b> त्रा.	सं .	य.	Ę.	কা	_यो		à.	क.	<b>ब्रा</b> . ।	संय.	द.	। हे.	भ.	स.	संझि.		ੱ.
2		ह्व.				१	१	হ :	د آ	<b>R</b>	8	२	1			2	2	1	२	२
	सं∙ प. ∸	६अ.	9			पं.	<u>त्</u> र.	म.				अज्ञा					मि-	स.	आहा.	1
	सं. अ.			ļ	म. दे.	]		व औ				ł		अच.	4.	<b>∣</b> 31.	Í		अना.	अन्।.
	1	ļ		]		ļ		्यः वि						1	ļ					
			ļ			1		কা		ļ	i i		ļ		i		•			

### નં, કપ્રર

पन्नलेश्याव.ले मिथ्यादाधे जीवोंके पर्याप्त आलाप.

] ग.	जी.	<b>q</b> .	प्र.	सं •	) ग.	<b>.</b>	<b>₩</b> .	यो.	वे.	क.	झा.	ं संय	द.	हे.	भ	स.	संझि	জা,	. ਚ.
1	٤	Ę	र ०	-		٤.	2	१०	3	x	२	<u>ر</u>	<b>२</b>	द्र. ६	२	2	8	8	ર
मि	सं.प.				ति. म.	ष.	त्र∙	म.४ ।व.४			अझा.		च <b>ञ्छ.</b> अस		મ. 		स.	आहा.	माका. अना.
				ļ	ल. दे			औ. १					अच.	4,	<b>9</b> 1.				St. 11.
	İ							वे. १			ļ				]				

2, 2. ]

सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासे, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कताय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेम्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागाहवजुत्ता होंति अणागाहवजुत्ता वा<sup>884</sup>।

पम्मलेस्सा-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणड्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

## पयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संद्वापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योगः पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत्त और शुक्त लेखाएं, भावसे पद्मलेखाः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पग्नलेइयावाले सासादनसम्यग्दाध आवोंके सामान्य आलाप कहने पर--- एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संग्री-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शो प्राण, सःत प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आदारककाययोगद्विकके विना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रष्यसे छहों लेज्यापं,

#### नं, ४४३

## पद्मलेइयाचाले मिथ्याहारि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

[गु. (जी.) प. (प्रा. सं. (ग) इं. का.) यो. विोक. (का. ) संय. (द. छि. (म. (स.	, .संज्ञि <u>आ</u> <u>ड.</u>
<b>1 1 2 3 3 7 7 7 7 7 7 7 7 7 7</b>	१२२
	। सं. आहा माका.
कार्म. कुश्रु, अच, शु, अ.	અના. <b>અમા</b> .

छक्खेडागमे जीवहाण

सण्णिणो, आहारिणे। अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आद्दारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा<sup>804</sup>।

भावसे पद्मछेइयाः भव्यसिद्धिकः सासादनसम्यवत्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेइयावाले सासादनसम्यग्दाष्ट जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्झों प्राण, बारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, बारों बचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे पद्म लेख्या; भय्यसिद्धिक, सासादनसम्यवस्व, संक्षिक, आद्दारक, साकारोपयोगी और अनाका-रोपयोगी होते हैं।

ર્સ, ૪૪૩

पुग्नेलेड्यावाले सासादनसम्यग्दाष्ट्रे जीर्थोंके सामान्य आलाप.

। ग्र-	জী.	ष- (	<u>त्रा</u> .	सं	ग.	इ.	का /	यो.	वे.	क.	হা.	. संय	द.	ਲੇ.	¥7-	. स.	संझि .	্ জা.	
	l	इप.		8	₹	2	2	१२		8	₹	1 2	२	द. ६	8	2	१	<b>२</b>	٦
	सं.प.		ও		ति.	पं.	7.	म. ४		i	अज्ञा,		1		भ.	सासा.	स.		नाका.
	सं.अ		1		म.	ļ		વ ૪ ઔ. ૧					अच-	प.			İ.	अनः	अना.
	l				दे.	ĺ	!	ઝા ર વૈ.ર		9	ţ	ļ			i				
						Ì		पः र का_ा			ţ				Į				

न, ४४५ पश्चलेक्यावाले सासादनसम्यग्दाष्टे जीवोंके पर्याप्त आलाप.

11	]जी.	ष.	গা.	<b>सं</b> ,	्य.	<b>₹</b> .	কা	्यो. ।	à.	ক.	झा.	संय.	द.	े.	भ.	स.	संक्रि.	ঙা.	3.
9	9	Ę	90	×.	३	9	9	90	3	8	२	٩	२	द्र. ६	٩	9	٩	1	२
सा	सं,प				เสิ.	ġ.	त्र.	म.४	ļ		अला-	अस.	च क्षु.	मा र	भ	सासा.	सं.	आहा.	साका.
				1	म.			व. ४		i	(		अच	ч.		Ì			अना.
	i i				<u> </u>			औ, १		ļ			1	1					1
						/		वे १		Į				l		[	l	ļ	

958 J

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहा-रिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>24</sup> ।

"पम्मलेस्सा-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि,

उन्हीं पद्मलेइयावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थान, एक संश्री-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संश्राएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दें। अश्रान, असंयम, आदिके दें। दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्क लेइयाएं, भावसे पद्मलेइयाः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्विक, आहारक, अनाढारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पन्नलेश्यावाले सम्यग्मिथ्याद्दष्टि जीवींके आलाप कहने पर-प्क सम्यग्मिथ्याद्दष्टि गुणस्थान, एक संत्री पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संत्रापं, नरकगातेके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

नं. ४४६ 👘 पद्मेलेइयावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

1 3	∫जी-	Ч.	प्रा₌	<b>.</b>	ग.	<b>इं</b> (का	यो.	वि.	₹•	ज्ञा.	संय.	_ द.	ले.	म.		संझि.	_ आ	ਤ.
2	1	६अ.	ف	8	१	2 2	્ર	2		२	2	२	ं द्र.२		1	र	ર	२.
स्रा,	सं.अ.	1		1	दे.	पं. त्र	वे.मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	কা-	स.	सासा	सं.	আहা-	साक <sup>1</sup>
	j	1	i	!		:	कार्म			ক্ৰস্থ্য	:	अच.	য়.			ļ	अना-	अमाः
	Ì		1	ļ		. :		· ·	ļ	-			मा १					
		Į	i			!	)	ر <b>ا</b>		I	ι <u>.</u>		्प•्		,	}		ļ

#### ર્ન. ક્ષ્ક્રેઝ

पग्नलेइयाचाले सम्यग्तिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

<sub>।</sub> गु.	जी.	प.	<b>प्रा</b> -	सं.	ंग,	ŧ.	का,	यो.	∣ वे.	ক,	<b>सा</b> .	संय.	ंद.	ਰੇ.	ं म.	. स.	संझि.	आ	ਤ.
2	2	Ę	20	8	₹	8	8	10	3	8	3	۶	२	द्र. ६	12	1	2	<b>t</b>	२
सम्य.	सं. प.				ति.	पंचे.	त्रस.	म.४	1		अज्ञा.	असं	च झु.	मा. १	म.	ন	. सं.	आहा	साका.
					म.		ļ	व. ४		!	₹			ष.		H.	!		अना.
1 :		İ	İ		दे.		!	औ. १	1		ज्ञान.		-	1	•				
			1		Ì		ļ	वि. १	!	1	ोंगे श्र		:			:			
1			]	 	}			<u>i</u>	ł	Ì	_ <u></u>	<u></u>	<u>}</u>	<u> </u>	]	1			

1.1.1

असंजमो, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

पम्मलेस्सा-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup> ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियज्ञादी, तसकाओ,

काययोग और वैकिथिककाययोग ये द्दा योग; तीनों घेद, चारों कषाय, तीनों अझानोंसे मिश्रित आदिके तीन झान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छद्दों लेड्यापं, भावसे पंग्रलेड्या; भज्यसिद्धिक, सम्याभ्मध्यात्व, संश्विक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाका-रोपयोगी द्वोते हैं।

पद्मलेश्यावाले असंयतसम्यग्दाष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---एक अविरत-सम्यग्दाष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरद्व योग; तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे छहों लेश्याएं, भावसे पद्मलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वोते हैं।

उन्हीं पद्मलेइयावाले असंयतसम्यग्ट) छे जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--- एक अविरतसम्यग्टाप्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,

नं. ४४८

पद्मलेश्यावाले असंयतसम्यग्द ष्टे जीवोंके सामान्य आलाप.

	. ६ १ २ २ २ - १ भ. औप. सं. आहा सा	
--	--------------------------------------	--

925 ]

2, 2.]

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिणि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्साः भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup>।

चांरों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ब्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छद्दों छेश्यापं, भावसे पद्म-छेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संश्विक, आद्वारक, साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पदालेइयावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहूने पर----एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगति और मनुष्यगाति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औद्दारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योगः पुरुषवेद, चार्रो कषाय, आद्दिके तीन ज्ञान, असंयम, आद्दिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्त लेड्याएं, भावसे पद्मलेड्याः भन्यसिद्धिक, औपदामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आह्वारक, अनाह्यारक,

नं, ४४९

पद्मलेक्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। गु. 🗎	जी.	ч.	সা-	सं.	ग.	<b>.</b>	<sub>[</sub> का,	योग	वे.	<b>क</b> .	. झा.	संय.	ेद.	हे.		म.	स.	संग्रि	জা.	ਰ.
1	2	Ę	20	8	३	2	2	१०म.४	3	۲	ર	र १	3	द्र.	Ę	2	्र	হ	१	R,
अवि.	सं.प.	ļ			ति.	<b>İ</b> .	ц÷.	ब.४			मति-	असं.	1 -		₹Į¥	र-	औष	सं.	আহ্বা,	सॉ¶ा-
					म-	1	না	্জী হ			श्रुत.		विना.	q.			क्षा.		· ·	अमा.
			)		दे.		1	वि. १		i	अव.		1				क्षायो.		]	

## नं, ४५० पद्मलेइयावाले असंयतसस्यग्दष्टि जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

<u>र</u> इ र १ अ. सं- २	દ્ર ગ	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·		: १	<u>हा.</u> यो. २ त. औ.मि वै.मि. कार्म.	8 8 	ર		३ के.द. विनाः	द्र, २ का.	२ म.	स. ३ औप. झा. झायो.	र सं.	· ·	ु उ. २ साका. अना.	
-------------------------------	-------	---------------------------------------	--	-----	--	---------	---	--	---------------------	---------------	---------	--------------------------------	----------	-----	----------------------------	--

पम्मलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजाचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; उत्तं च पिंडियाए<sup>?</sup>----

> ळेस्सा य दब्व-भावं कम्मं णोकम्मामिस्सयं दब्वं । जीवस्स भावळेस्सा परिणामो अप्पणो जो सो ॥ २२८॥

भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>४५१</sup>।

पम्मलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पद्मलेक्ष्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर-एक देशविरत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहां पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं, तिर्यचगति और मनुष्यगाति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रस काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, सयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे पद्मलेक्ष्या होती है। पिंडिका नामके प्रन्थमें कहा भी है:---

लेश्य। दो प्रकारकी है, द्रव्यलेश्या और भावलेश्या । नोकर्मवर्गणाओंसे मिश्रित कर्मवर्गणाओंको द्रव्यलेश्या कहते हैं । तथा जीवका कषाय और योगके निमित्तसे होनेवाला जो आत्मिक परिणाम है, वह भावलेश्या कहलाती है ॥ २२८ ॥

लेक्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्रिक, आद्या-रक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पद्मलेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर---एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छंदों पर्याप्तियां, छद्दों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण,

१ आ प्रतौ ' पिंटियाए ' इति पाठः ।

न. ४५१

पद्मलेश्याचाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

<u>य</u> .	जी.	٩.	प्रा.	सं.	ग.	Ę.	কা.	यो.	े वे	<b>क</b> .	्रज्ञा.	⊺ संय.	्द.	े छे.	<u>ं भ.</u>	. स	(संजि.	्ञा.	ਤ. ।
१	<b>R</b>	Ę	20	۲	২	2	1	8	३	¥		· •		ब्र. ६		<b>a</b> -	2	1	ર
देश.	सं. प		i l		เสิ.	पं.	ন.	ं म. ४	. :	ĺ	मति.				म.	औष	सं.	आहा.	साका-
					म.	-	1 1	व.४			श्रुत.		विना.	ч.		क्षा.			अमा.
			i			!		औ. र		į.	अव.	ļ				क्षायोः	Į		
1					ļ	ĺ							ĺ		i İ		1		
1		l I	1		1			j			1	J				,		1	

Jain Education International

#### संत-पद्स्वणाणुयोगदारे हेस्सा-आछाववण्णणं 8, 8, ]

1002

पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्साः भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

<sup>\*\*</sup>पम्मलेस्सा-अप्पमत्तर्तजदार्ण भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्राणं, एओ जीवसमासो, छ पज़त्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

सात प्राणः चारों संझाएं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग थे ग्यारह योग; तीनों **वेद, चारों कषाय, आ**दिके चार झान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिदारविशद्विसंयम ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे पद्मलेक्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्तव, संश्विक, आहारक, साकारोपयोगी और अनककारोपयोगी होते हैं।

पश्चलेत्रयावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंझाके विना शेष तीन संहाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औहा-

ર્ન, ઇપર

वर्वलेक्यावाले प्रमत्तसंयत जीवीके आलाप.

g.	जी.	प.	) भा . े	सं.¦ ग.	\$	কা.	यो.	∣वे.∣क.	ं ज्ञा.	संय.	द.	छे, ।	<u>र.)</u> स.	। संक्षि	_শা,	े उ.
1	२	ध्यः	20	8 2	1 2 1	<u>ک</u>	११	। <b>३</b> . ४	8	, ३	R ,	द्र, ६	1 2	2	र	२ [
L.	सं.प. मं.अ	६अ.	<b>ب</b> و ا	म.		!	म. ४						।. <sup>∣</sup> औप	सं.	आहा.	साका.
Į₹.	सं.अ,	: 		ļ	<u>ا</u> ط		ब, ¥		विना	छेदो.	विनाः	प.	क्षा-			अना.
ŀ			1	i		ļ	औ. ર			परि.		I	क्षायो	Í Í		
}	<b>j</b>		l j		ļ	1	આ ગા	! . . ·	ļ			ļ	 	ا : اب :		

### નં. ૪५३

पद्मलेक्यावाले अपमत्तंसयत जीवोंके आलाप.

<u>गु.</u> २ अप्र	<u>जी.</u> १ सं. प.	হ	20	३ भय मे.	<b>१</b>  म.	•	2	९ म. ४ व. ४	[वे. २	3	४ केव- विना-	छेदो.	३ के.द	द्र. ६ मा. १	l i	र औप. क्षा.	2	8	- <u></u>	
				परि•	1	ļ j		औ. १				परि.				क्षायो-				

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

सुक्कलेस्साणं भण्णमाणे अस्थि अजोगि विणा तेरह गुणद्दाणाणि, दो जीवसमासा, छ पऊंत्तीओ छ अपज्जत्तीआ, दस पाण सत्त पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि आत्थ, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्ता; भवसिद्धिया, अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अस्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवज्तता वा सागार-अणागोरहिं जुगवदु-वजुत्ता वा<sup>भ्भ</sup> ।

रिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिद्वारविद्युद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे पद्मलेक्या; भ्रव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

शुक्क छेझ्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-अयोगिकेवली गुणस्थानके विना आदिके तेरह गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण तथा सयोगिकेवलीकी अंपेक्षा चार प्राण और दो प्राण; चारों संझापं तथा क्षीणसंझास्थान भी होता है, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचे-निद्रयजाति, जसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी होता है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भायसे शुक्कलेक्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे शुगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

न. १	કપ્ક
------	------

शुक्ठलेक्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

) ग्र.	्रजी.	्र प.	) प्रा	.सं.	ग.	ंड्.	<b>`কা</b> ∙∩	यो.	वे.	(क.	হা।	( संय-	द.	ਲੇ.	) म.	स.	संबि.	আৰ.	ं उ.
	I 2	ε σ.	20	- x	3		ંશ્વાં	24	R.	×	ح	19	<u>x</u>	द्र,६	2	Ę	ષ્ટ	ર	२
आयो	.स. प	इ.अ.	6		ति ।	'n.	a.		-	-				मा•र	म∙		सं.	আ <b>হা</b> -	साका -
	.स. अ.		x	a H	म.	1	í I		अव	40		· ·		់ ភ្ញូ.	]अ.		अनु.	अनाः	े अनाः
<b></b>		l	3	<b>.</b> 2	दे.	İ				ক		ļ							तथा.
	1	4		ļ	ŀ	ļ						ł		}					यु. उ.

**₹, ₹-**)

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अद्व णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव अस-ण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सामास्त्रजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, देव-मणुसगदि ति दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेद अवगदवेदो वि अत्थि,

उन्हीं शुक्रलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-आदिके तेरह गुण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चार प्राणः चारों संझापं तथा क्षीणसंझास्थान भी होता है, नरकगतिके विना शोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योगः तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी होता है, चारों कषाय, तथा अकषायस्थान भी होता है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः छहों सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं शुक्कुलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादष्टि, सासादनसम्यग्दष्टि, अविरतसम्यग्दप्टि, प्रमत्तविरत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थानः एक संक्षी अपर्याप्त जीवसमासः छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण और दो प्राण, चारों संक्रापं तथा क्षीणसंक्रास्थान भी है। देवगति और मनुष्यगति ये दे। गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, पुरुषवेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं, चारों कषाय तथा

नं. ध	44
-------	----

शुक्कलेरयावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग्र.	जी	<b>प</b> •]	91.	सं.	ग.	ξ.	का.	्यो.	1	वे	<b>क</b> .	₹ा-	संय.	द.	हे.	ेम.	्स.	। संदि	্ঞা.	ु छ.
१३	2	Ę	१०	8	₹	१	8	११म.	x	₹	¥	٢	ų	8	द्र. ६	2	Ę	१	2	<b>२</b>
अयोग	सं. प.		¥	H	ति -	पंचे.	त्र.	व-४		ا <del>ن</del>	÷			i I	ंसा-१	भ.		सं.	आहा.	साका
विना		i		Б	स.			औ.	2		<u>किष</u>				ন্থ.	ंअ.		अनु.		अना.
				<b>.</b> 25'	दे.			वै. १	Ì	-	रू				{	i	í		I	तथा.
)	l	]	Ì		]]		1	l জা.	ર્			[		l 	]	Ì	]			यु. उ.

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्ताओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवज्जत्ता होंति अणामारुवज्जत्ता वा सामार-अणामारेहिं जुमवदुवजुत्ता वा<sup>86</sup>।

""सुक्कलेस्सा-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद,

अकषायस्थान भी है, विभंगावधि और मनःपर्ययक्षानके विना होष छह झान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात थे चार संयमः चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेक्यापं, भावसे शुक्कलेक्याः भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यग्मिथ्यात्वके विना होष पांच सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

शुक्कलेस्यावाले मिथ्यादाप्टे जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-पक मिथ्यादप्टि गुण-स्थान, संझी पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, औद्दारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारद्व योग, तीनों बेद,

ર્ન. કપ્દ

शुक्ठलेरयावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

] गु.	जी.	प.	সা-		ग-	₹.	का	्यो.	वे.	, क.	<b>₹</b> 11-	संय.	द.	છે.	भ.	स.	संक्रि	্ আ.	े उ.
५मि.	9	६अ.	છ	¥	२	٩	9	8	9	X	६	×	Å	ज्ञ २	13	4	9	२	र
	सं.अ.		२	· HE	दे.	पं.	त्र.	औ.मि.	पु.	सं	विस	्ञस.		का.		सम्य		आइा.	साका.
अबि-				ם	मं.	1		वें मि.		अब व	मनः.			ં શુ-	) अ	विना.	अनु.	अना.	अग.
त्रम.				<b>*8</b> 5-		:		आ . मि .	अपम	cu	विनाः	¦छेदो. '		(मा. १	;				तथा.
सयो.	/					ļ		कार्म.	)			यथा.		্যু,	!		1		यु. उ.

### **4. 8**40

शुक्ललेश्यावाले मिथ्यादाप्टे जीवांके सामान्य आलाप.

्य.							का-	यो.	वे.	ক.	্রা.	संय.	ेद.	ੇ ਲੇ.	_! भ.	स.	संगि.	े आ.	ਤ.
1		६प.					8				-					1	र	ર	२
	सं. प.	६अ.	U		ति.	॑पं∙	त्र.	म. ४	1		अझा.						सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.	1	İ	!	म.	ļ		व. ४				İ	अच	় হ্য•	. স			अना.	अना
		]		1	٢.	1		औ. र वे. २								•			
						:			1					ļ					
	ļ	1	l				!	क(. २			l	ļ		I	i				
				ĺ			 :	का. १			l				j				

હલેર ]

٩, १, ]

चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ञ-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>896</sup>।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासे, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्साओ, बारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेड्यापं, भावसे गुहल्लेड्या; भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिध्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं शुक्ललेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संझी पर्याप्त जीवसमास, छहौं पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं शुक्ललेक्यावाले मिथ्यादाप्टे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक मिथ्यादप्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास; छंहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संक्षापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, वैक्रियिकामिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके देा अक्षान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और

ने. ४५८

शुक्कलेक्याबाले मिथ्यादाष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>.</u>	नी.	<b>q</b> .	्रमा,	सं.	ग,	[₹.	কা.	्यो.	वे.	] क.	ज्ञ।-	<u>∫ संय</u>	द.	ਲੇ.	म.	. स.	संक्रि.	आ.	ਰ,
1	्र	Ę	१०	ሄ	3	[ <b>र</b>	1 8	१०	२	¥	ર	र	ર	द्र. ६	२	2	2	र	२
मि	सं. प.				ति.	<b>۹</b> .	त्र.	म.४		{	সল্লা-	अस ।	चक्षु.	1		ॉम	स.	आहा.	साका.
					म. दे.	i I		व.४ औ⊾१		Í			अच	য়.	अ.				अमा.
					<b>~.</b> •			जा. १ वै. १	ļ	ļ	F.								

ŧ

लक्खंडागमे जीवहाणं

भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहा-रिणो. सागाहवज्रत्ता होंति अणागाहवज्रुत्ता वा<sup>85</sup>।

सुक्कलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजजीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णत्थि । कारणं, देव-मिच्छाइद्वि-सासणसम्माइट्टीणं तिरिकख-मणुस्सेसुप्पज्जमाणाणं अमुणिय-परमत्थाणं तिव्व-लोहाणं संकिलेसेण तेउ-पग्म सुक्कलेस्साओ फिट्टिऊण किण्ह-णील-काउलेस्साणं एगदमा भवदि । सम्माइट्टीणं पुण मणुस्सेसु चेव उप्पज्जमाणाणं मंदलोहाणं समुणिदपरमत्थाणं अरहंतभयवंतम्हि छिण्ण-जाइ-जरा-मरणम्हि दिण्णबुद्धीणं' तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ चिरंत-

ग्रुह्ल लेघ्यापं, भावसे ग्रुक्ललेघ्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्रलेश्यावाले सासादनसम्यग्दप्ट जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संझी पर्याप्त और संझी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या-प्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोगदिकके विना शेष बारह योग होते हैं: किन्तु यहां पर औदारिकमिश्र और आहारककाययोगदिकके विना शेष बारह योग होते हैं: किन्तु यहां पर औदारिकमिश्र काययोग नहीं होता है। इसका कारण यह है कि, तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले, परमार्थके अजानकार और तीव्र लोभकषायवाले पेसे मिथ्यादप्टि और सासादनसम्यग्दप्टि देवोंके मरते समय संक्लेश उत्पन्न हो जानेसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्याएं नष्ट होकर कृष्ण, नील और कापति लेक्स्यामेंसे यथासंभव कोई एक लेक्स्या हो जाती है। किन्तु जो मजुष्योंमें ही उत्पन्न होनेवाले हैं, मंद लोभकषायवाले हैं, परमार्थके जानकार हैं, और जिन्होंने जन्म, जरा और मरणके नष्ट करनेवाले अरहंत भगवन्तमें अपनी बुद्धिको लगाया है पेसे सम्यग्दष्टि देवोंके चिरंतन (पुरानी) तेज, पद्म और शुक्क लेक्स्याएं मरण करनेके

9 प्रतिष्ठ ' किण्णबुद्धीणं ' इति पाठः

#### **#. 849**

शुक्तलेरयावाले मिथ्याद्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

L	गु.	'जी-	<b>q.</b>	मा.	ः सं	ग.	इ. व	តា	यो •	वे.	靑.	<b>इ</b> ं।	संय.	द,	ਲੇ.	ं भ.	स.	संक्रि	આ.	उ.
Γ	2	१	६ अ.	9	8		[ <b>२</b> ]	٤	्र	र	8	२	१	<b>२</b>	द्र, २	2	र	र	२	२
ļ	मि•	स्र		i		देव.	<b>q.</b> ∣₂	ſ.	वे.मि.	पु.		कुम-	असं.	चक्षु.	় কা	. म	मि.	. स	आहा	साका.
		٦,			i				कामें.		[   	કુષ્ટુ.		अच.	¦ शु.	. अ	i İ	1	) अला.	अना.
ł		1			ŀ									t	सा. १	!		1	!	1
		ļ		l	i		ļ				1 j			Į	য়,			-	i	

988 ]

**₹**; ₹.]

णाओ जाव अंतोम्रहुत्तं ताव ण णस्संति । तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जत्ता होति अणागारुवज्जत्ता वा" ।

"'तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजजीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्व्वेण छ

अनन्तर अन्तर्मुहूर्त तक नष्ट नहीं होती हैं, इसलिप शुक्ललेश्यावाले मिथ्यादाष्ट और सासाइन-सम्पग्दष्टि जीवोंके औदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता है। योग आलापके आगे तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेह्यापं, भावसे शुक्ललेश्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं शुक्रलेश्यावाले सासादनसम्यग्दपि जीघोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, दर्शों प्राणः वारों संक्रापं, नरकगातेके विना रोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, वारों वचनयोग, औद्यारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अक्कान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे शुक्कलेक्या;

नं. ४६० 👘 शुक्लेलेक्यावाले सासादनसम्यग्दाष्ट जीवॉके सामान्य आलाप.

<u>गु</u> . २	ર	प• इप. इअ.	<u>प्रा.</u> १० ७	8	ग. ३ ति.	2	1	<u>यो.</u> १२ म. ४	3	8	३	2		ייר	१	2	संक्रि २	२	ह. २	1
	સં.અ	-			स. दे	- -	<b> 7</b> .	न. ४ ओ. १ वे. २ का. १				1	प छु- अच-		<b>₩</b> •	सासा.	त.	आहा. अना.	थाका. अना.	Ð

## नं. ४६१ 👘 शुक्लेल्स्यावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवॉके पर्याप्त आलाप.

छ.     जी,     प.     शा.     सं.     ग.     शा.     शा.     शा.     सं.     शा.     शा.     शा.     सं.     शा.	ड. २ सा <del>वग</del> . अना.
--	---------------------------------------

लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साः मवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>धर</sup>।

सुक्कलेस्सा-सम्मामिच्छाइटीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया,

भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं गुक्ललेश्यावाले सासादनसम्यग्दाप्ट जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---पक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, बारों संझाएं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्ल लेश्याएं, भावसे गुक्ललेश्याः भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

शुक्ललेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादप्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादप्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझापं, नरक-गतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अक्कानोंसे मिश्रित आदिके तीन झान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे

#### નં. કદ્દર

### शुक्ललेक्यावाले सासादनसम्यग्दधि जीवेंकि अपर्याप्त आलाप.

्य.	्रजी-	<b>q</b> .	সা.	सि.	ग.	<b>इ</b> .	কা	`_यो∙_	∫ वे.	<b></b> ቀ.	্রা-	.संय	द.	ਲੇ.	भ•	स.	संझि.	आ.	∫ उ. ।
1	-	६अ.	ঁও	8	2	2	1	्र	2		ર	2	२	इ.२	2	2	1	२	र
सा.	<b>सं</b> .अ				दे.	વં.	त्र.	वै.मि.	<b>y</b> .		कुम.	असं.	च क्षु	কা.	मन्	सासा.	सं.	आहा	साका.
								कार्म			કુઝુ.	-	अच.	ย.				अना-	अना.
									1				ĺ	मा. १					
								l İ	)	]		j		ন্তু-			1 (		

•٩٤]

8, 8.]

सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

सुकलेस्सा-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणे। अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

शुक्ललेक्याः भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संक्रिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

शुक्रलेश्यावाले असंयतसम्यग्दाष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक अविरत-सम्यग्दाष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगहिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक। साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ત્ર. કદ્દર

### शुक्ललेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

J.	जी-	<b>प.</b>		्स.	ग.	ŧ	का.	यो.	वे.	<b>.</b>	হা:-	संय.	ं द.	<u>)</u> ले.	म.	∣ स∙	संग्रि	आ.	े उ.
12	2	5	१०	8	३	१	१	१० .	₹	8	ર	2	२	द्र, ६	8	2	2	2	र
सम्य.	सं.प				ति.	Ч <b>.</b>	त्र.	म. ४			अ <b>श्वा</b> _	अस.	चक्षु.	सा∙ १	ं भ	सम्य.	सं.	आहा.	ধাকা,
-	ļ				म.	Ì	j l	ब, ४			3	ŀ	अच.	રાજી.		1	i	ĺ	अना.
1		l i		!	हे.			औ. શ			ज्ञान.			ĺ			ł	Ĺ	
					1		Ì	वै. १		ſ	मिश्र.	1			1	Ì	]	].	
																		'	
				l									l		]		t i	l,	

### नं. ४६४ गुक्ललेश्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

्गु.	_ जी•	ष.	সা.।	<b>सं</b> .	ग.	<b>.</b>	का.	यो.	वे.	क.	चा.	संय.	द.	छ.	ं स.	स.	संबि.	,	् र,
र	ર	१प.			3	1	१	23	३	۲	३	१	्रि	ब्र.इ			2	२	२
3頃.	सं-प-	i	ى		1	ď.	স,	आ.दि.		İ		1			भ	औप.	सं.	•	
i i	सं.अ				म.		ļ	विना.		ļ	शुत.	4	<b>बिना</b> ः	যুক্ত.		क्षा-	1	अना-	সনা, {
					दे.	Ì	i				अव.	[	!	[		क्षायो			
		!			1				l					1			] i		

[ 696

तेसिं चेव पज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ हेस्साओ, मावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आद्दारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>864</sup>!

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेरसाओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

उन्हीं गुकललेक्यायाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--- एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे शुक्ललेक्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं गुक्छलेश्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---पक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छद्दों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चार्रो संझाएं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, मौदारिकामिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुक्र लेश्याएं, भावसे श्रुक्छलेश्या; भ्रव्यसिद्धिक, औषश्वमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक;

•	
Ħ.	ଞ୍ଚ୍ୟ

्युक्छलेक्यावाले असंयतसम्यग्दाष्टि जीवॉके पर्याप्त आलाप.

गु. <u>व</u> १ अवि. सं.	१ ६	-	8 3	ई.का. २ <b>२</b> प.त्र.		<u>व</u> .क. ३ ४	<u>शाः</u> ३ मति. अ श्रुतः अवः	संय. द. २ ३ ग्सं. के. द. विना.	छे. म. इ. ६ १ भा. १म. गुक्र-	स. ३ औप. क्षा. क्षायी.	8	आ. <u>उ</u> १ २ राहा. साक अमा	 1.
-------------------------------	-----	---	-----	-------------------------------	--	---------------------	--	---	---------------------------------------	------------------------------------	---	--	--------

**७९**२ ]

.....

**१**, **१**- ]

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

सुक्कलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजजीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुक्जुत्ता वा<sup>रू</sup>।

सुक्कलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, छ

## साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

गुक्ठलेश्यावाले संयतासंयत जीवेंकि आलाप कहने पर-पक देशसंयत गुणस्थान, एक संक्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्रापं, तिर्यवगति और मनुष्य-गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

<u>शु</u>क्ललेख्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—पक प्रमत्तसंयत गुण

## नं, ४६६ राक्ललेड्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवॉंके अपर्याप्त आलाप.

I	<b>y.</b> (	जी.	q. [s	n.) <b>सं</b>	. ग.	ŧ.	का./	यो ।	वे.व	Б. (	झ्.	संय.	ं द.	ले.	ं म₊	. स.	(संज्ञि	্ঞা.	े उ.
ŀ	<u>~</u>	2	· · · · ·	8 8	્ર	2	2	3	8	8	- २	2	3	द्र. २		्र	8	२	२
ķ	ala.	स.अ	. ज		दे.	ч.	<b>त</b> .	ઝો.મિ.	g.	i	मति.	असं.	के. द.	का,	्भ-	ओप.	सं.	आहा.	साका.
			ļ	ł	म.			वै.मि.		Ì	श्रुत.	1	विनाः	য়ু.		क्षा.		अना.	अना.
				ļ.	ŀ	ĺ		कार्म.		ł	অব	ţ.	į į	भा. र	t) –	क्षायो		ļ	
	I					ļ				ļ		ł		28.	}	]		)	J 1

#### ર્ન. ક્ષર્ણ

### ञ्चक्ललेड्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

। य	जी ग	٩.)	<b>प्रा</b> .	सं.	ं ग_	₹.	ক।	यो.	वे.	ক,	बा.	संय.	द.	ਰੇ.	) भ.	. स.	संहि.	्ञा.	उ.
1	२ सं. प		20			<b>१</b> प.	1 1	९ म.४ व.४ औ. ।		I İ	३ मति श्रुत. अव.				 	२ औप क्षा. क्षायो,	१ सं.	<b>र</b> आहा.	२ साका, अना.

पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दुव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुत्रजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

<sup>\*\*</sup>सुक्कलेस्सा-अपमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

स्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग. चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहार-विद्यदि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेश्याएं, भावसे शुक्ललेश्याः भव्य-सिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्तव, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी ढोते हैं।

शक्कलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर---एक अप्रमत्तसंयत गण-स्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहौं पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंझाके विना रोष तीन संझाएं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

#### નં. કદ્ર દ

## शुक्ललेइयावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

औ.१ अव. परि. क्षायो आ.२ मनः.
---------------------------------

### ર્શ્વ. કદર

## शुक्ललेक्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु. जी. प. प्रा. सं. ग. इं. का. १ १ ६ १० ३ १ १ ९ म्रे म. प. प. प. त. है म. म. प. प. त. म. परि.	ৎ ३ ४ ম.४ ब.४ औ.१	शा. संय. द. छे ४ २ २ इ. मति. सामा. के.द. भा श्रुत. छेदो. विना. शुह अव. परि. मनः.	६ १ २ .१ म. औप.	संक्षि. आ. उ. १ १ २ सं. आहा.साका. अना.
--	----------------------------	---	--------------------	---

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, मावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

अपुव्वयरणप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ओघ-मंगो; तेसु सुक्कलेस्सा-वदि-रित्तण्णलेस्सामावादो । अलेस्साणं अजोगि-सिद्धाणं ओघ-भंगो चेव ।

एवं लेस्सामग्गणा समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धियाणं भण्णमाणे मिच्छाइडिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि चि ओध-भंगो। णवरि भवसिद्धिया चि वत्तव्वं।

अभवसिद्धियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, चोइस जीवसमासा, छ पज्ज त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामा-यिक, छेदोपस्थापना और परिदारविञुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे छहों लेक्यापं, भावसे शुक्ललेक्या; भब्यासिद्धिक, औपर्शामक आदि तीन सभ्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तकके झुक्ललेझ्यावाले जीवोंके आलाप ओघ आलापके समान ही होते हैं, वयोंकि, इन गुणस्थानोंमें झुक्ललेझ्याको छोड़कर अन्य लेइयाओंका अभाव है।

लेश्यारहित अयोगिकेवली और सिद्ध जीवोंके आलाप ओघ आलापोंके ही समान होते हैं।

# इस प्रकार लेक्यामार्गणा समाप्त हुई।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिक जीवॉके आलाप कहने पर मिथ्याढाष्ट्र गुण-स्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप ओघ आलापोंके समान होते हैं । विद्रोष बात यह है कि भव्य आलाप कहते समय एक भव्यसिद्धिक आलाप ही कहना चाहिए ।

अभव्यसिद्धिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यार्दाष्ट गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छ प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छ प्राण, चार प्राण; चार प्राण और तीन प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह थोग, तीनों देव, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रच्य और भावसे

[ १, १,

202 ]

असंजमो, दो दंसण, दच्व-भावेहिं छ लेस्साओ, अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो अस-णिणणो. आहारिणो अणाहारिणो. सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चेव पडजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्राणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओं पंच पज्जत्तीओं चत्तारि पज्जत्तीओं, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद. चत्तारि कसाय. तिणिण अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दुव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वां '' ।

छहों लेश्याएं, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्विक, असंश्विक; आहारक, अनाहारक; साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अभव्यसिद्धिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमासः छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहां काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेरयाएं, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आह्वारक, लाकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ने. ४७०

अभव्यसिद्धिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	र्जा ।	<b>٩</b> .	সা.	सं.	ग.	<b>\$</b> .	কা.	यो.	वे.	<b>\$</b> .	झा.	संय.	द.	) ਲੇ.	(म.	स.	संक्षि-	ઝા.	े उ.
9	14	६प.	90,9	8	¥	4	ह	93	₹	8	3	9	२	द्र. ६	٩	9	२	২	२
मि.	ו	<b>ક</b> અ.	\$,0					आ दि	Í	ĺ	अज्ञाः	असं.	चक्षु.	मा ६	अ.	मि.	सं.	आहा.	साका-
1	} !	५प	८,६				!	विनाः				}	अच.	1				अना.	अना,
ļ	ĺ	५अ.	છ, પ							{	ļ					Í			
Į		४प.	६,४	[ [										-					i ·
	Í	४अ.	४,३	ÌÌ										i i			[		
	1					l													

नं. ४७१

अभग्यसिद्धिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

। गु	जी.	प-	प्रा.	सं.	ग.	₹.	का.	यो ।	वे.	क.	हा.	संय.	<u>द</u> .	ਂ ਹ.	म	स.	साहे	आ.	<u>ु उ.</u>
्र	. 6.	Ę	२०	8	۲	4	Ę	<b>ξ</b> .α	₹	8	₹	१	2	द्र. ६	1	1	े <b>२</b>	2	ं २
मि.	पर्याः	ષ	٩			•		म. ४			স <b>জা</b> .	अ <b>सं.</b> '	चझु,	भा ६	ं अ.	मि.	. सं.	आहा.	साका.
Ļ	l	¥	۲					व ४		ļ.		1	अच.		i i	1	असं.		) अना.
			છ				[	औ. १		i			1	1	İ				
	]		<b>६</b> ४				]	वे. १		I		l		J	İ				

तेसिं चेव अपऊत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

एवं भवियमगगणा समत्ता।

सम्मत्ताणुवादेण सम्माइहीणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणहाणाणि अदीद-गुणहाणं पि अत्थि, वे जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पजत्तीओ छ

उन्हीं अभव्यसिद्धिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्याहरि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्या-प्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैकियिकमिश्र, और कार्मणकाय-योग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्त लेरयापं, भावसे छहों लेरयापं; अभध्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संदिक, असंदिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक विकल्पोंसे रहित सिद्ध जीवोंके आलाप ओघ आला-पके समान जानना चाहिए।

इसप्रकार भन्यमार्गणा समाप्त हुई।

सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दघि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अधि-रतसम्यग्ददि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारद्द गुणस्थान तथा अतीत-गुणस्थान भी है, संझी पर्याप्त और संझी अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमास-

<u>य</u> ु	जी.	प.	श्रा. सं. ग.	ई, का,	यो.	वे. क.		∣संय•	ेद. '	रे.	म.	स.	संग्रि.	) आ.	्र <b>ड.</b> ।
۲.	0	६अ,	8 8 0		२	३ ४	२	2	२	द्र. २	१	2	२	2	2
म.	1.	५ <b>अ.</b> ४अ.	9		औ.मि	÷ .	कुम.	असं.	चक्ष.	কা,	अ.	<sup>!</sup> मि.	सं.	आहा.	साका.
	চ	४अ.	Ę		वे मि.		कुश्र,		अच					अना.	अना.
			<b>4</b> .		कार्म.		- 3			मा. इ		ŀ		}	
	:					;   ,							1		

अभव्यसिद्धिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

નં. ૪૭૨

э

अपज्जत्तीओ अदीदयज्जत्ती वि अस्थि, दस पाण सत्त पाण चत्तारि दो एक पाण अदीदपाणा वि अस्थि, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गदीओ सिद्ध-गदी वि अस्थि, पंचिंदियजादी अणिंदियत्तं पि अस्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अस्थि, पण्णारद्द जोग अजोगो वि अस्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अस्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, पंच णाण, सत्त संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमा-संजमो वि अस्थि, पंच णाण, सत्त संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमा-संजमो वि अस्थि, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेदि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अस्थि, भव-सिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अस्थि, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अस्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जत्ता होंति अणागारुवज्जत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा<sup>898</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणहाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस चत्तारि दो एक पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, स्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां और अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, दर्शो प्राण,

स्थान मो ह, छहा पयाप्तिया, छहा अपयाप्तिया आर अतीतपयाप्तिस्थान मी है, दर्शो प्राण, सात प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है; चारों संझाएं तथा सीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां तथा सिद्धगति भी है, पंचेन्द्रियजाति तथा अनिन्द्रियत्व-स्थान भी है, त्रसकाय तथा अकायत्वस्थान भी है, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, पांचों झान, सातों संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयमसे रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रष्य और भावसे छहाँ लेक्याएं तथा अलेक्यास्थान भी है, भव्यासिद्धिक तथा भव्यासिद्धिक और अभव्यासिद्धिक इन दोनों विकर्ल्योसे रहित भी स्थान है, औपरामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकर्ल्योसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं सम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--अचिरतसम्यग्दाष्टि गुण-स्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारह गुणस्थान, एक संझी पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, द्द्या, चार, दो और एक प्राण; चारों संझापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों

सम्यग्दारि जीवोंके सामान्य आलाप.

	जी-	<b>q</b> .	) प्रा	ŧ٠	ग.	इ.	কা.	ं यो.	<b>a</b> .	( क.		( संय -	<u>द</u>	ले.	म.	. स.	संकि.	্ঞা.	्ड.
<b>१</b> १ अबि-		६प.		۲	¥	2	2	24	₹	¥	4	৬	¥	ब्र.इ	१	3	\$	2	२
	सं. अ.	६ अ.	४ <sub>१</sub> २	<b>.</b>	ने	1 -	<b>त्र</b> .	÷.	÷.	Ŀ		• :		मा∙६	म.	औप.	सं.	आइाः	साका-
( <del>,</del>	मी.	Ъ,	ਸ਼	क्षीय	सिद्ध	15	ы.	भयो	आपग	अंकेषा.		<b>ਗ</b> ੁੱਸ		ज	Ħ.	क्षा-	अनु.	अना.	अन्।
T T	અતો.	અતી.		æ.	<u>'</u>	<u>अन्ति</u> .	अकाय,	19		e N		ক	:	अलेश्य	અનુમ	क्षायो.	1	İ	तथा.
<b></b> .	8	5	अती		]	চ	6							6		ļ	1		यु. च.

208]

ų

' चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियमिस्सेण विणा चोदद जोग अहवा एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-मावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, मवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, साण्णिणो णेव सण्णिणो पेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा<sup>\*\*</sup> ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि

गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकिथिकमिश्रकाययोग के विना चौदद योग अथवा तीनों मिश्र योग और कार्मणकाययोगके विना शेष ग्यारद योग तथा अयोगस्थान भी है; तीनों देद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, पांचों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेद्र्यापं तथा अछेद्र्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यत्रस्व, सीक्षक तथा संक्षिक और असंक्षिक रन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार रन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विश्वेषार्थ — छठवें गुणस्थानकी आदारकसमुद्धात अवस्थामें और तेरहवें गुणस्थानकी केवलिसमुद्धात अवस्थामें पर्याप्तताके स्वीकार कर लेनेपर आदारकमिश्र, औदारिकमिश्र और कार्मणकाय ये तीन योग पर्याप्त अवस्थामें भी बन जाते हैं। इसीप्रकार सयोगकेवलीके दो प्राणोंके संबन्धमें भी समझ लेना चाहिए ।

उन्हीं सम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-अविरतसम्यग्दष्टि प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये तीन गुणस्थान; एक संबी-अपर्याप्त जीवसमास, छद्दों अपर्या· प्तियां, सात प्राण दो प्राण; चारों संवापं तथा क्षीणसंबास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-

નં. ૪૭૪

2. 2. ]

सम्यग्ददि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

12.	जी.	٩.	मा ।	ŧ	ग.	<b>¥</b> .	का.	यो.	वे.	存.	ज्ञा.	संय.	द.	े.	<b> </b> ₩.	₹.	सांग.	ঞা,	र.
22	2	Ę	२०	¥	8	হ	8	<b>1</b> 8	Q.	¥	4	ও		द्र. ६		2	2	२	2
জৰি 🛛	सं. प.	ļ	¥	12		पंचे.	7.	1 _	अपग.	÷			ĺ	मा ६	म.	औq.		आहा	साका.
से.			2	<b>इ</b> रीण सं		l i		विनाः	अव	अक्षी.				અਲે રંચ.		-	-	अना.	अना.
अयो•			15	æ				अधवा		{				લે		क्षायो.			বখা.
		ĺ	ļ					११म.४	ł										यु. उ.
		Ļ	ļ			ļ		व ४ औ. १	{		1	}				. i			
		ſ		ļ		1		व.र	1		1	{ }					]		
	ļ	1			ļ	{			}	1	]						l		1
	•		1	Ι.	1			ં ગા. ર	·										

छक्खंडागमे जीवहाणं

मदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा<sup>ण्ण</sup> ।

उवरि असंजदसम्माइद्विप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि चि ताव मूलोघ-भंगो; तेसिं सञ्वेसिं सम्मत्तसंभवादो ।

जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैकिथिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग ये चार योग, स्त्रीवेदके विना रोष दो वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी है, मति, श्रुत, अवधि और केवल्रज्ञान ये चार ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोप-स्थापना और यथाख्यातविद्दारशुद्धिसंयम ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल छेड्याएं, भावसे छहों लेड्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विग्नेषार्थ — यद्दांपर सम्यक्त्वमार्गणाके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए भावसे छहों लेक्यापं बतलाई गई हैं, और गोमट्टसार जीवकाण्डके आलापाधिकारमें सम्यक्त्स्वमार्ग-णाके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए एक कापोत और तीन शुभ इसप्रकार चार लेक्याएं ही बतलाई हैं। परंतु गोमट्टसारमें ऐसा कथन क्यों किया यह कुछ समझमें नहीं आता. क्योंकि, आगे उसीमें वेदकसम्यक्त्वके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए छहों लेक्यापं कहीं गई हैं। संभव है यह लिपिकारकी भूल है जो बराबर यहां तक चली आई है। अस्तु, धवलाका कथन ठीक प्रतीत होता है।

ऊपर असंयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानसे ळेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक प्रत्येक गुण-स्थानवर्ती सम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं; क्योंकि, उन सभी गुणस्थानवर्ती जीवोंके सम्यक्त्व पाया जाता है।

•	र्न.	894

सम्यग्हहि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

्यु-	जी-	ष.	সা	. सं	ग.	इं.का	<u>, यो.</u>	वे.	<b>क</b> .	. सा	. संय.	द.	ਰੈ.	भ.	. स.	, संक्रि.	आ.	उ.
₹	9	<b>६</b> अ-	ט	8	¥	9 9	8	2	8	x	X	8	द्र.२	9	3	9	२	- ૨
'গৰি	सं.अ.		२	ъż.		षं. <sub> </sub> त्र.	औ.मि.	g.	lċ	मति -	असं		का,	॑स∙	औप	सं.	आहा.	साका.
त्रम.		ì		ર્ણાળત.			वें सि.	न.	अक्त	श्रुत.	सामा,		য়.		क्षा,	ઞનુ.	अना	अन्ना.
सयो •				89		:	आ।मि	E	10	अव.	छदो ।		भा ६		क्षायो.			तथा.
		) 				j	কার্ম.	딇		केव.	यथा.		j	]				यु. उ.

[ ₹, ₹-

**₹, ₹-**]

खद्रयसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणद्वाणाणि अदीदगुणद्वाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पअचीओ छ अपज्जचीओ अदीदपज्जची वि अत्थि, दस पाण सत्त पाण चत्तारि दो एक पाण अदीदपाणो वि अत्थि, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ सिद्धगई वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिंदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, सत्त संजम णेव संजमो णेव असंजमो गेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, मर्वासिद्धिया णेव भव-सिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, खड्यसम्मत्तं, सण्णिणो णेव साण्णिणो णेव अस-शिव्या गेव अत्त्व, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागोरहिं जुगवदुवजुत्ता वा<sup>85</sup>।

क्षायिकसम्यग्दधि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर--- अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारद्द गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी होता है, संजी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, संजी पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, दशों प्राण, सात प्राण, चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंग्रास्थान भी है, चारों गतियां तथा सिखगति भी है, पंचेन्द्रियज्ञाति तथा आनिन्द्रियस्थान भी है, अस काय तथा अकायस्थान भी है, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगत-वेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अक्षायस्थान भी है, पांचों ज्ञान, सातों संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयमसे रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रच्य और भावसे छहों लेक्यापं तथा अलेक्यास्थान भी है, भव्यासिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभवसिद्धिक इन दोनों विकल्योंसे रहित भी स्थान है, आयिकसम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और अम्बाकारो-पयोनी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त मी होते है।

#### નં. ૪૭૬

### क्षायिकसम्यग्दाष्टे जीवोंके सामान्य आलाप.

11	जी,	q.	সা-	đ.	ग-	<b>Ę</b> .	কা	यो	वे.	<b>.</b>	্ হা,	संय.	द,	ð.	म.	. स.	संग्रि.	না,	र.
र श्र अधिः स. अयो मि मि	त्र प. ज. म. ज. म. ज.		अती. मा. २ ६ २	क्षीणसं.	सिद्धग. ▲	અનોન્દ્રિ. ** . ~	अकीय. <b>भ</b>	असोग. ५	अपन	अकृष। रू	५ मति अतु. अव. मनः. केत्र.	अतु.	X	द. ६ मा. ६ अले.	१ म. म. हिल	२ झा.	१ <b>सं.</b> अतु.	ઞના.	र् साकाः अनाः रीथाः युः उः

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एगारह गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस चत्तारि एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अस्थि, तिण्णि वेद अवगद-वेदो वि अस्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, पंच णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ ठेस्साओ अलेस्सा वि अस्थि, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अस्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इस्थिवेदेण विणा देा वेद अवगदवेदो वि अस्थि,

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक ग्यारद्द गुणस्थान, एक संझी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चार प्राण और एक प्राणः चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, पांचों सम्यग्ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं तथा अलेषायस्थान भी है, पांचों सम्यग्ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं तथा अलेषायस्थान भी है, पांचों सम्यग्ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं तथा अलेदयास्थान भी है, भग्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहरकः साकारोपयोगी और अनाकारोप-योगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं झायिकसम्यग्दप्रि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरत सम्यग्दप्ति, प्रमत्तसंयत और सयोगिकवली ये तीन गुणस्थान, पक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं तथा झीणसंझास्थान भी है चारों गतियां, पंचे-स्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, खीवेदके विना होष दो वेद तथा

### **ন.** ১৩৩

क्षायिकसम्यग्दाष्टे जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>।</u> ग्र.	स्ती	ч.	म्रा.	<b>सं</b> .	) ग.			( ये	ì.	वि	• <b>†</b>		संय.	द.	। ले.	म	. स.	संक्रि-	্ঞা	ड.
<b>११</b> औव.	<u>ک</u>	Ę	१०	¥	x	۲ 4.	रे त्र.	११ व.	म २	·   ·	1.	५ मात. भव	9	*	द्र. ६ भा.६	र म.	र क्षा.	१   सं.	२ आहा.	२ साका,
स.				क्षीणत.		4.	1.	औ	. t	अपम	अकष	भुत अब.			अल.				अना.	অদা.
अयो.								बे. आ	-			मनः. कव					}	ļ		तथा. युः ड

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अस्थि, चत्तारि णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णकाउ-तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खद्दयसम्मत्तं, सण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा<sup>\*\*\*</sup>।

"'ख़इयसम्माइद्वीणं असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्बत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-

अपगतवेदस्थान भी है, चारों कवाय तथा अकवायस्थान भी है, मति,श्रुत, अवधि और केवल ज्ञान ये चार ज्ञान; असंयम, सामायिक छेदोपस्थापना और यथाख्यातविद्वारशुद्धिसंयम ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेक्यापं, भावसे ज्ञघन्य कापोत, तेज, एग्न और शुक्त लेक्यापं; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक तथा अनुभयस्थान, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आछाप कढने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दे। जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, छद्दों अप-र्यातियां; दर्द्दों प्राण, सात प्राण; च।रों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय,

#### ને. ૪૭૮

क्षायिकसम्यग्दष्टि जीवांके अपर्याप्त आलाप.

मु. ज	तीः पः	श्रा.	सं.	ग.	इं का	∣ यो∙	वे.	<b>क.</b>	ज्ञा.	संय.	द.	[	ਲੇ.	म.	. स	संग्रि	आ.	ਰ. ,
3	१ ६ अ.	છ	8	8	१ १	8	२	8	X	x	¥	द	২ কা	. t	र	2	2	2
अवि.	. । জ		÷	q	. <b>7</b> .		g		मति	असं.		ગ્રું.	मा ४	ं म.	क्षा-	. सं.	आहा.	साका,
प्रम.	•		ोप्स <u>,</u>			वै.मि.	न.	कृष्	श्रुत	सामा.		কা.	तेज.			अनु.		अना
सयो. 🗄	ਸ		`च्हर		i	आ.मि.		ন	अंत्र.	छेदो.		ſ	नझ,			<b>1</b>		तथा
	İ	ίl	.			कार्म.	अवन	۱ I	केव.	पोर.		ş	唐.	ĺ		ļ		q.s.

#### न. ४७९

क्षायिकसम्यग्ददि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

J. 1	जी.	ष.	Я <b>Т</b> .	् सं.	ग.	<b>Ŧ</b> .	কা.	यो.	<b>ब</b> .	<b>क</b> .	) मा.	् संय.	्र.	) ਲੇ.	म.	स.	(सं ) जि	) आ.	ਚ,
2	<b>२</b>	६प.			-	?	2	१३	३	¥		2	3	ब्र. ६	8	१	2	२	2
	सं. प सं. अ.		9			q.	त्र.	आ.द्वि विनाः		 	श्रुत.		के.द. विना.	सा. ६	म.	क्षा			साका अना.
							   				अव.						!		

लक्खेंडागमे जीवद्राणं

जमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, खहयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाहवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तैसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ त्रीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्य भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, खद्दयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>४८०</sup>।

आद्वारककाययोगद्विकके विना रोष तेरद योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्षत्व, संज्ञिक, आद्वारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं क्षायिकसम्यग्टाष्टे असंयत आंधोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्टाष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो भाण, चारों संझापं, चरों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, बसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रुव्य और भाधसे छहों लेक्यापं, भन्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संदिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४८०

आधिकसम्यग्हडि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	ч.	प्रा.	सं.	ग.	ŧ.	का.	यो	•	वे.	<u>क</u>	सा.	संय.	<u>द.</u>	ð.	<u>भ</u> .	. स	संगि.	ঞা.	. स.
१	२	Ę	१०	8	¥	٤.	२	१०३	۲.४	ş	8	F	<u>ع</u>	<b>_</b> ₹	द्र. इ	2	2	۲	8	٩
आव.	सं.प.					ष.	त्रस	व. औ.	४ १	.		मति- भूत-	अस.	के. द. विनाः		H.	લા.	सं.		साका. अना.
	ļ							बे.	2	J		अव.			<u> </u>	}				

## मं. ४८१ कायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। <b>ग</b> .	<b>3</b> 1.	ि प.	я.	सं	ग.	÷.	का.	यो.	वे.	क_	ज्ञा.	संय	्र.	ਲੇ	;	ं म.	स.	( संग्रि	્ આ	ਤ.
R	2	Ę	ড	8	*	2	2	3	ર	8	ર	٤	२		কা.	12	2	्र	2	् २
3 <b>7</b> .	<b>.</b>	34			ļ	٩.	ঙ্গ	औ.मि.				असं.	के द.	શુ. ક 	मा-४	भ.	क्षा.	1	1	साका.
	Ŧ	i			ł		1	वे.मि.	न.		श्रुत.	,	विनाः						अनाः	अना.
	2				1			कामे-	İ.		अव-			्यः	-				1	! [
	1	5			1	1				i i	j		)	া মুহ	<b>5</b> .					1

**१, १**- ] |

तेसिं चेव अपछत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहण्णकाउ-तेउ पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खह्यसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup> ।

खइयसम्माइहीणं संजदासंजदाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एगो जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मर्त्त,

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दधि असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकामिश्र, वैक्रियिकामिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन क्रान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेड्याएं, भावसे जघन्य कापोत, तेज, पद्म और शुद्ध लेड्याएं: भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्षायिकसम्यग्दाष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—पक देराविरत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संक्षापं, मनुष्यगाते, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कघाय, आदिके तीन क्वान, सयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे छद्दों ळेक्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्यापं; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्रिक, आद्वारक,

ન. ૪૮૧	आयिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त	। आळाप
--------	---	--------

ग्र.	जी.	<b>ч</b> .	म.	सं.	ग.	) इ.	का.	यो.	वे.	क.	ञ्चा.	संय.	द.	हे.	) स-	स.	संदि	•ैआ.	्र.
1 र	2	4	৩	8	8	१	2	२	२	8	Ę	र	३	द्र २	8	१	2	২	2
अवि.	सं. अ,	अ.	·	: I	ļ	́ч.	গ.	औ.मि			मति-			কা হু		क्षा.	सं.	आहा.	साका,
		Į				!		वे.मि.	न.		क्षत.		विनाः	भा⊷ ४				अना.	अना.
1		•		:				कार्म.			अव.			का-					
										i				तेज.					
														पद्म.					
				l					!	1			, J	যুক্ত,			1	l	

### [ १, १.

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

खइयसम्माइडीणं पमत्तसंजदप्पहुडि सिद्धावसाणाणं मूलोघ-भंगो। णवरि सव्वत्थ खइयसम्मत्तं चेव वत्तव्वं।

<sup>\*\*\*</sup>वेदगसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं,

### साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर सिद्ध जीवों तकके प्रत्येक स्थानवर्ती झायिकसम्यग्दाष्ट जीवोंके आलाप मूल ओघ आलापके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि सम्यक्त्व आलाप कहते समय सर्वत्र एक झायिकसम्यक्त्व ही कहना चाहिए।

वेदकसम्यग्दाष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थानतक चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये देो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिद्वारविद्युद्धि ये पांच संयम; आदिके

#### नं ४८२

### क्षायिकसम्यग्दार्धि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

<b>a</b> .	जी.	۹.	সা•	सं.	ग.	Ę.	का.	यो.	वे.	क.	হ্বা.	. संय	<u>द</u> .	<u>ਡੇ.</u>	म.	स.	संशि.	) आ.	उ.
13	9	ą	90	8	ी म.	भ पंग	9 त्र.	९ म. ४	3	8	् मति.	े १ देश.	् के.ट.	द्र ६ भा ३	9 भ	१ क्षा.	् सं.	<b>१</b> आहा.	्र साका.
2	<del>й</del> . Ч							व. ४		1	श्रुत.		विना.					-	अना-
							}	<b>आ</b> . १ ।			अव.								

#### नं. ४८३

वेदकसम्यन्दाष्टे जीवोंके सामान्य आलाप.

Į IJ.	ज्ञी-	<b>۹</b> ۰	সা	सं.	ग.	हं ।	কা -	यो	वे.	क,	इत.	संय.	द.	∣. ਲੇ.	भ.		संझि.	আ.	_ उ
¥	२	६प.	٤٥	8	8	१	٤.	24	₹	8	8	4	3	द्र. ६	2	2	2	২	२
জৰি,	सं. प.	६अ.	છ		}	ч.	त्र.				मति	असे	के.द	भा ६	म.	क्षायो	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.		ļ		l }				]	ļ	श्रुत.	देश.	विना.	]	ነ ]	1		अना-	अना.
अप्र.										1	अन.	ेलामा.			ļ	[	İ		
1		ľ							1		मनः	छेदो.		1				1	
		l		ļ				t	1	j		परि-				1	)		1

8, 8.7

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुत्रजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>४८४</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ; देवगदि-मणुसगदी। कद-करणिज्जं वेदगसम्माइडिं पडुच णिरय·तिरिक्खगईओ लब्मंति। पंचिंदियजादी, तसकाओ,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावले छहों छेइयाएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्तव, संक्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं वेदकसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कक्ष्ते पर---आविरतसम्य-ग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर अत्रमत्तसंयत गुणस्थान तकके चार गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालभावी ग्यारद्व योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, असंयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिद्वाराविशुद्धि ये पांच संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्याएं, भन्ध्यसिद्धिक, वेद्कसम्यक्त्व, संक्षिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं वेदकसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्य-ग्दष्टि और प्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीबसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, चारों गतियां होती हैं, क्योंकि, वेदकसम्यग्दष्टिके अपर्याप्तकालमें देवगाति और मनुष्यगति तो पाई ही जातीं हैं, किन्तु छतकत्य वेदकसम्यग्दष्टिकी अपेक्षासे नरकगति और तिर्यंचगाति भी पाई जातीं हैं। पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, अपर्याप्तकालभावी चार

तं.	858

वेद्कसम्यग्दाधि जीवांके पर्याप्त आलाप.

<u>. ग</u> ु	जी.	٩.	त्रा.	सं.	ग.	<b>\$</b> .	কা.	यो-	वे.	क.	: লা	संय.	्र.	<u>ð.</u>	[म	. स.	संक्रि.	आ.	ੇ ਰ•
४ अबि.	2	Ę	20	8		<b>१</b> प.	<b>२</b>	११ म• ¥	१	8	∣४ मति-	્ અસં.	्र क. द.	द. ६ जन्म ६	9	१	۶ ÷	8	२
जाप से	н Н Н				1	4.	ल.	व. ४		į	भावः श्रुतः		त्रिना.	 	स.	૬૧ાપ્યા∙ ∖	स.	আছ্য-	साका- अज्ञाः
अप्र.						ļ		औ. १ वै. २			' अव.   मनः.	सामा. छेदो.			ł				
								आ•१				परि.					(		
1		I	1			l	[			1,					l		İ		

٢, ٢.

चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, मावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदग-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>80</sup> ।

वेदगसम्माइहि-असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>864</sup>।

बोग, स्तीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, सामायिक और छेद्दोपस्थापना ये तीन संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और ग्रुक्क लेश्यापं, भावसे छद्दों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

चेदकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या-प्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारक-काययोगदिकके विना शेष तेरद्व योग, तीनों चेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४८५

वेदकसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>] गु.</u>	जी	ष.	সা,	सं.	ग.	<u>.</u>	কা	यो-	( वे <b>.</b>	क	্রা	संय	<u>द.</u>	<del>हे</del> .	<b>म</b> .	स.	संझि.	ঞা.	<u>ਤ</u>	
२ अवि.	र स.अ.	६अ.	ט	8	4	) र पं.	े र  त्र-	४ औ. मि.	२ पु	8			के द		र भ	क्षायो.	रं.		- साका-	
प्रम.			i				İ	वै.मि आ मि	न.	! 1 1		सामा, छेदो.	त्रिनाः	्रु. भा•६				अना-	अना.	ļ
			ļ				ļ	कार्म		]	 		۱ 	[		۱ 				ļ

### નં. ઇટદ્

# वेद्कसम्यग्दधि असंयत जीवांके सामान्य आळाप.

2	-	ह्व.	१०	8	8	2	2	योः २३ आ.द्वि विना.	वे. २	क. `४	3	` ₹	द्र.६ मा.६	भः १ भः	स. १ झायोग	संग्रि १ सं.	<u>ঞ্</u> যা २ आहा अना	उ. २ साका. अना.	
	Į	1	ļ	i I		i i	ł	1	: 		~1-14								l

**<१**४ ]

2, 2.]

संत-पह्रवणाणुयोगहारे सम्मत्त-आळाववण्णणं [ ८१५

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

""तैसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासे, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण

उन्हीं वेदकसम्यग्दाष्ट असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैकियिककाथयोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेखाएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं वेदकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर--एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुष और नपुंसक ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान,

नं. ४८७ वेदकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

] गु.	जगे.	Ч.	) प्रा.	सं.	ग.	1 इ.	<b>4</b> 1,	यो.		वे.	क.	ज्ञा-	संय.	द.	ੇ.	भ	् स.	संझि.	आ.	ਰ.
1 2	१	ह	20	8	8	2	8	१०	Ī	₹	8	્ર	र	३	द्र ६	Ì ₹	٤_	१	2	ર
अवि.	सं.प	, 			İ	ά.	त्र.	म. २	\$			मति.			भा, ६	म.	क्षायो.	सं.	आह्रा.	साका.
		ļ	ļ				ļ	ุ่ สุ. เ	•		1	श्रुत-	ļ	विना.						अना-
		1				l		औ.	2			अव.						ļ	[	
	<u> </u>	ľ						वे.	2		ļ	<u> </u>	J.			]		2		

# नं. ४८८ चेद्कसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आळाप.

<u>गु.</u> जी. प. प्रा. सं. ग. इ. का. यो. वे. क. झा. संय. द. छे. <u>म. स.</u> संक्रि. आ. <u>उ.</u> १ १ ६ ७ ४ ४ १ १ ३ २ ४ ३ १ ३ ३ <u>३</u> ३ ३ <u>इ</u>. २ १ १ १ २ २ अवि. सं. अ. अ. पं. त्र. औ. मि. पु. मति. असं. के. द. का. म. क्षायो सं. आहा. साका. वे. सि. न. अत. विना. छ. कार्म. अव. मा. ६ काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेम्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेदगसम्माइड्रि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पजजीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>844</sup>।

वेदगसम्माइडि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण,

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेरयापं, भावसे छद्दों लेरयापं: भष्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आद्वारक, अनाद्वारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी द्वोते हैं।

वेदकसम्यग्दाष्टि संयतासंयत जीवेंकि आलाप कहने पर-एक देशविरत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझाएं, तिर्यंचगति और मनुष्य गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

चेदकसम्यग्दाष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कढने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वद्यनयोग, औद्यारिककाययोग, आद्वारककाययोग और आद्वारकमिश्रकाययोग ये ग्यारद्व योग;

#### નં. ૪૮९

### बेद्कसम्यग्दष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

। गु.	জী-	प.	সা.	सं.	ं ग,	<b>.</b>	का.	्यो,	- (	<b>वे</b> .	क.	লা.	. संय	द.	਼ਲੇ.	भ.		संकि.	्आ.	ਤ.
र देश.	र सं.प.	· · ·	२०	-				९ म ब औ,	<b>x</b>   8	-	8				द्र. ६ मा. ३ शुम		िर ≋क्षायो⊷ ! 	े र सं.	ेर आहा-	२ साका. अना.
						   		1	 		ſ					ļ	 			

# १, १. ] संत-परूवणाणुयोगदारे सम्मत्त-आलाववण्णणं [८१७

तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणामारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

वेदगसम्माइड्रि-अप्पमत्ततंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागाह्रवजुत्ता होति अणागाह्रवजुत्ता वा<sup>%</sup> ।

तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, इव्यसे छहों लेइयाएं, भावसे तीन शुभ लेइयाएं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अन(कारोपयोगी होते हैं।

वेदकसम्यग्दष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर----एक अप्रमत्तसंयत गुण-स्थान, एक संशी-पयीप्त जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंझाके विना शेष तीन संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये ना योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ छेक्याएं, भावसे तीन शुभ लेक्याएं; भव्यासिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संश्विक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ર્ન. કર્વ

वेदकसम्यग्दष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

<b> g.</b>	जी.	! <b>प</b> .	সা.	. सं	ं ग.	<b>.</b>	¦का_	यो.	.	वे.	क.	啊.	ं संय	ंद.	छे.	भ.	स.	संग्रि	म.	ेड.
1,	1 2	'EU.	10	18	<u>ع</u>	2	2	2 8		- ~	8	8	ें ३	३	द्र, ६	1	2	2	र	२
	सं.प.	્ર અ	່ຍ	Ì	म.	ीय	و ا	म । व । १	¥ ¦								क्षायो-	सं.	आहा.	साका.
Ř	सं.अ		! !		i ! !	5	1							विना.	ગ્રુમ .		1		]	अना
								औ.	۶ ¦			अव.	परि.			1 l	1			
5		)	1				j	था.	२		l	मनः.			l	ί	ŧ	i l	ļ	

# नं. ४९१ वेदकसम्यद्दष्टि अप्रमत्तंतयत जीवोंके आलाप

<u>ग</u> ु.	जी-	<b>प.</b>	प्रा. सं.	ग.	ţ.	কা.	यो.	<u>्व</u> े.	!	झा.	संय.	ंद.	<u>हे.</u>	स.	स.	संक्रि.	_ আ.	ड.
र अग्र.	्र संग्र	ষ্	१० २ भग्र	<b>१</b> म.		2	ि ९ ∶ स. ४	1 ₹	8	भूति -	। इ. ∙सामाः	्र क.द.	. ५. ५ सा. ३	ेर ∣भ⊶	र क्षायो.	र सं.	्र आहा.	्र साका,
					चः	38	म.४ व.४	1		श्रुत -	चेदो.	विना.	जुभ-					अना.
1			परि		ļ	ļ	ું ઔ. શ		1		वरि.							
1				ł		J	4	1		मनः,	ļ	1	}	1	1		·	

उवसमसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि अट्ट गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पजचीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ उवसंतपरिग्गहसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्स-आहार-आहार-मिस्सेहि विणा बारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय उवसंत-मिस्सेहि विणा बारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय उवसंत-कसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, परिहारसंजमेण विणा छ संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>९९</sup>।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि अद्व गुणडाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ उवसंतपरिग्गहसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि

उपशमसम्यग्दाप्टे जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दप्टि गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकषाय गुणस्थानतक आठ गुणस्थान, संझी पर्याप्त और संझी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं तथा उपशान्तपरिव्रहसंझा भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, औदारिक मिश्रकाययोग आहारककाययोग और आहारक मिश्रकाययोग इन तीन योगोंके विना शेष बारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा उपशान्तकषायस्थान भी है, आदिके चार झान, परिहारविशुद्धिसंयमके विना शेष छह संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं उपशमसम्यग्दाष्टि जीवोंके पर्याप्तकाळसंबन्धो आलाप कहने पर—अवितसम्य-ग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकपाय गुणस्थानतक आठ गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षापं तथा उपशान्तपरित्रहसंज्ञा भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औद्दारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा

### 

उपशमसम्यग्दाष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु•	जी.	य-	प्रा-	सं.	ग.	ई.	का	यो.		वे.	क.	ज्ञा.	<u>संय</u> .	द.	हे.	[ स	्.	संग्रि.	्या.	े छ.
्ट अंबि.	<u>२</u>	इप.	१०	उप. सं. रू	۲	2	र त्र.	१२ म च औ बै.	- *	. w	۲ ط	४ मति.	विनाः	३ के. द. विना.	द्र. ६ मा.६	<b>१</b> स.	<u>१</u> औप.	2	ર	२ साका. अना.

**t**, **t**-]

कसाय उवसंतकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, छ संजम, तिण्णि दंसण, दघ्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>रप्</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपऊत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-ठेरसा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>९९</sup>।

उपज्ञान्तकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, परिद्वारविशुद्धिसंयमके विना रोष छद्द संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छद्दों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक; औपज्ञमिकसम्यक्स्य, संक्षिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी द्वेते हैं ।

उन्हीं उपदामसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर----एक अवि-रतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छद्दों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चार्रा संझाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये हो योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेइयाएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क ये तीन शुभ लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, औपद्म-मिकसम्यक्त्य, संक्षिक, आद्दारक, अनाद्दारक; साकारोपयोगी और जनाकारोपयोगी द्दोते हैं।

ર્ન. કરર

उपशामसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<b>ग्र</b> .	जी.	۹.	<b>शा</b> _	सं.	ंग.	ह.	কা,	यो-	वे	ं क.	् सा-	संय.	द.	ੁਲੇ.	म.	॑स.॒	संझि.	वा.	
2	12	Ę	20	8	x		<u> </u>	•		1.		Ę	₹	द्र. ६	\$	3	<b>1</b>	र	ર
अवि.						Ϋ.	ন.	म ४	`	غرا	मति.	¶रि∙	के द.	¦ सा. ६	.स.	औप.	सं.	आहा.	साका.
स.	<b>.</b>			4		ļ	 ;	व,४	अप,		श्रुत.	विना.	विनाः	i I				ļ	अना-
उप.	<b>*</b>			ह्य		Ì		औ. र	!	n,	अव-	•			1				
					ļ			वे. १	I		मनः.	ł			ſ				)
					ļ	L	ļ		Ì	ŧ i				i		{			

न. ४९४

उपश्चमसम्यग्दाष्टि जीवेंकि अपर्याप्त आलाप

1	गु•	जी।	ς.	प्रा.	सं.	] ग.			यो.	वि •	¦क∙	झा.	[ संय∙	<u>द</u> .	ਰੇ.	भ₊	स.	संगित.	- आ-	<b>.</b>	
ŀ	٩	•	হ্ জ	v	8	9	٩	1	२	9	8	R R	٩	्र	द्र. २	3	9	3	2	2	ŀ
1	भवि •	सं.अ.				दे.	Ч.	ेत्र.	वे.मि.	षु.				के <b>.द</b> विनाः		भ-	औप.		•	साका.	
ł			Į	ł				Ì	काम.	ł		श्र <u>ु</u> त. अव.			ुछ- भा. ३				अनाः	জন্য,	ľ
1			)					]				04.	ļ		ग्रुम.						

उवसमसम्माइट्टि-असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-जमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

"'तेसिं चेव पजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस

उपशमसम्यग्द्राष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दे। जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या-प्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संक्षाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये बारह योग: तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों ठेश्याएं, भन्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं उपशमसम्यग्दप्टि असंयत जीवोंके पर्याप्तकाळसंबन्धी आछाप कहने पर--एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, दशों प्राणः चारों संझापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

ર્ન. કર્પ્

उपशमसम्यग्दाष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

गु-	_ł.	र्ज	Ì.	Ч.	प्रा.	.सं.	ग.	इं. का	. यो	वे	.' क.	न्ता.	संय.	ंद.	ਰੇ.	<u>ं भ</u>	. स.	संझि	आ.	ਚ
1		२		६प.	१ ०	۲	<u>ک</u>	र   र	ं १२	₹	Y	₹	<b>ب</b> ا	3	ंद्र. ६	t	2	1	२	२
সা				६अ.	9		q	ं त्र-	म, ४	\$		मति.			भा. ६	म.	औণ.	् सं.	आहा.	साका ।
	सं	τ.	স.	į	 ,				्व. ४	•		श्रुत.	!	विना.			İ		अनाः	अना.
	i					•		i	ંગો. ૧		ļ	अव.	ļ	: .						
1				1			:		वै. २	. :	2								Ì	
	1		_	1	į	:	Ι,	I	्का १	2	1			•		ţ		! !		

#### નં. કરદ

# उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

] गु-	जी.	q.,	яı.	सं.	ग_	<b>Ş</b> .	का.	यो.	वे.	क.	ह्या.	संय.	द.	છે.	<u>) स</u>	. स.	संझि.	आ.	. ૩.
१	2	Ę	१०	8	8	8	र	१०म.४	३	8	३	१	3	द्र इ	1	१	१	१	२
अवि.	सं.प.	i				पं.	मं	ਕ. ਖ			मति-	असं.			म₊	औप.	सं.	आहा.	साका.
							त्रस	औ. १		ĺ	श्रुत.		विनाः	l	[				अना.
	l	1			lj			वे. २			अव.		i	l	Ι,				

१, १- ]

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपञ्चत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अवन्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण तिण्णि सुद्दलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आद्दारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"े।

उवसमसम्माइहि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी,

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औषशमिक-सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं उपशामसम्यग्दाप्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, देवगति. पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क ये तीन शुभ लेश्याएं, भव्य-सिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आद्दारक, अनाद्दारक; साकारोपयोगी और अना. कारोपयोगी होते हैं।

उपरामसम्यग्दष्टि संयतासंयत जीवोंके आछाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संब्राएं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दें। गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और

म. ४९७

उपशमसम्यग्दधि असंयत जीवॉके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	i <b>q</b> .	प्रा •	सं.	ग.	₹.	কা.	यो.	ं वे.	ंक₄	झा.	संय	द.	े ले.	म.	. स.	संक्षि	া:	ਤ.
12	2	· -	9	8	2	१	१	्२	12	8	₹	2	R	द्र.२	२	2	र	२	े २
10	ক	अ.	ļ	i	दे.	٩.	त्र.	वे.मि.	,g.		मति.	असं,			म.	औप.	सं.	आहा	साका.
र्थ व	÷		ļ		:	!	Ì	कार्म.		}	श्रुत.	1	विना-	: <b>u</b>	 !			अना-	अना.
	Ì	]		İ	i	ļ				1	अव •		ł	भा∙ ३			Į		i I
	Į	•		i.	!	Ì			ļ	[;			]	राम.	·		J		

[ 222

छक्खंडागमे जीवदाणं

तसकाओ, णन जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

उवसमसम्माइहि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, मणपञ्जवणाणेण सह उवसम-सेढीदो ओयरिय पमत्तगुणं पडिवण्णस्स उवसमसम्मत्तेण सह मणपञ्जवणाणं लब्भदि, ण मिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइहि-पमत्तसंजदस्स; तत्थुप्पत्ति-संभवाभावादो । दो संजम, परिहारसंजमो णत्थि । कारणं, ण ताव भिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइहि-संजदा

औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेदः चारों कषाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छद्दों लेख्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं; भच्यसिद्धिक, औपदामिकसम्यक्स्व, संह्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उपदामसम्यग्दाष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर---- एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग थे नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान होते हैं। उपश्तमसम्यग्दष्टिके मनःपर्ययझान होता है इसका कारण यह है कि मनःपर्ययज्ञानके साथ उपश्तमश्रेणीसे उतरकर प्रमत्तसंयत गुणस्था-नको प्राप्त हुए जीवके औषशमिकसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययझान पाया जाता है। किन्तु, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दष्टि प्रमत्तसंयत जीवके मनःपर्ययझान नहीं पाया जाता है। क्योंकि, प्रथमोशमसम्यग्दाप्टि प्रमत्तसंयत जीवके मनःपर्ययझान नहीं पाया जाता है। क्योंकि, प्रथमोशमसम्यग्दाप्टि प्रमत्तसंयत जीवके मनःपर्ययझान नहीं पाया जाता है। क्योंकि, प्रथमोशमसम्यग्दाप्टि प्रमत्तसंयतके मनःपर्ययक्षानकी उत्त्पत्ति संभव नहीं है। झान आलापके आगे सामायिक, और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं। किन्तु परिहारयि-गुद्धिसंयम नहीं होता है। इसका कारण यह है कि, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए प्रथमोपशम-सम्यग्दाप्टि संयत जीव तो परिद्वाराविग्रुद्धिसंयमको प्राप्त होते नहीं है; क्योंकि, सर्वोत्छप्ट भी

न. ४९८

उपशमसम्यग्दष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

ग्रु. <u>जी. प. प्रा</u> १ १ ६ १० देश. सं. प.	0 8 2 2 2	व. ४	३ १ ३	द्र. ६ १ १ मा.३ म. औप.	१ १ २
---	-----------	------	-------	---------------------------	-------

परिहारसंजमं पडिवज्जंति; अइट्ठ-उवसमसम्मत्तकालब्मंतरे तदुप्पत्तिणिमित्रगुणाणं संभवा-भावादो । णो उवसमसेढिं चढमाणा; तत्थ पुव्वमेवमंतोग्रहुत्तमत्थि त्ति उवसंहरिद-विहारादो । ण तत्ते। ओदिण्णाणं पि तस्स संभवो; णड्ठे उवसमसम्मत्तेण विहारस्सा-संभवादो । तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा"े ।

उवसमसम्माइडि-अप्यमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीव-समासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंर्चिदियजादी, तस-काओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, परिहारसंजमो

प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालके भीतर परिहारविशुद्धिसंयमकी उत्पत्तिके निमित्तभूत विशिष्टसंयम, तीर्थकर-चरणमूल-वसाते, प्रत्याख्यानपूर्व-महार्णवपठन आदि गुणोंके होनेकी संभावनाका अभाष है। और न उपशमश्रेणीपर चढ़नेवाले द्वितीयोपशमसम्यग्दाष्टि जीवोंके भी परिहारविशुद्धि-संयमकी संभावना हैं; क्योंकि, उपशमश्रेणिपर चढ़नेके पूर्व ही जब अन्तर्मुहूर्तकाल होष रहता है तभी परिहारविशुद्धिसंयमी अपने गमनागमनादि विद्वारको उपसंहरित अर्थात् संकुचित या बन्द कर लेता है। और उपशमश्रेणीसे उतरे हुए भी द्वितीयोपशमसम्यग्दाष्टि संयत जीवोंके परिहारविशुद्धिसंयमकी संभावना नहीं हैं; क्योंकि, श्रेणि चढ़नेके पूर्वमें ही परिहारविशुद्धिसंयमके नष्ट हो जानेपर उपशमसम्यक्त्वके साथ परिहारविशुद्धिसंयमीका विद्वार संभव नहीं है। संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेदयाएं, भावसे तीन शुभ लेक्याएं: भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उपरामसम्यग्दाष्टि अप्रमत्तसंयत जीवेंकि आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-स्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, आहारसंब्राके विभा शेष तीन संब्रापं, मनुष्यगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ब्रान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं। किन्तु, परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है।

### ર્વ. કરર

### उपशामसम्यग्दाष्टे प्रमत्तसंयत जीवोंके आखाप.

<u>य</u> .		٩.	<u>त्रा</u>	ग.	ग.	्र	কা	<u>यो.</u>	वे.	क.	্ ধা.	ा संय.	्द.	हे.	्म.	स₌	संग्रि.	आ.	, <del>3</del> ,
र	1	Ę	१०			•	: 8	•		8	<b>8</b>	ર	R	۹. ۹	१	2	2	2	2
प्रम.	सं.प•				म्.	िंगे	त्र.	म. ४			मति.	. सामा	के.द.	'मा. ३	₩.	औष.	सं.	आहा.	साका.
		1					i i	व. ४	İ		श्रुत.								अना,
					1	: I		औ. १		i i	अन			5.	:				
		1									सनः.	! [	l		1				
			İ			İ								1	:			f	· ·
	!				l										1				
I	]		1	i			<u> </u>	: 1		<u> </u>			Į		j				

णतिथ । उत्तं च---

मणपज्जवपरिहारा उवसमसम्मत्त दोण्णि आहारा । एदेसु एक्कपयदे णत्थि त्ति य सेसयं जाणे' ॥ २२९ ॥

तिषिण दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तिष्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सणिणणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup> ।

कहा भी है---

मनःपर्ययक्वान, परिद्वारविशुद्धिसंयम, प्रथमोपशमसम्यक्तव, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इनमेंसे किसी एकके प्रकृत होनेपर शेषके आलाप नहीं होते हैं; पेसा जानना चाहिए ॥ २२९ ॥

विश्रेषार्थ — गोमइसार जीवकाण्डमें भी यद्दी गाथा पाई जाती है; परंतु उसमें ' उवसमसम्मर ' के स्थानमें ' पढमुवसम्मर्स ' पाठ पाया जाता है जो संगत प्रतीत होता है; क्योंकि, प्रथमोपशमसम्यकःवके साथ मनःपर्ययक्षन, परिद्वारविद्युद्धिसंयम और आहारद्विक इन सबके होनेका विरोध है औपशमिकसम्यवत्वके साथ नहीं। यद्यपि औपशमिकसम्यवत्वके साथ परिद्वाराविद्युद्धिसंयम और आहारद्विक नहीं होते हैं फिर भी द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकी अपेक्षा औपशामिकसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययक्षानका होना संभव है, इसलिये गाथामें ' उवसम-सम्मत्त ' येसा सामान्य पद रखनेसे औपशामिकसम्यक्त्वके साथ क्यमा निषेध हो जाता है जो आगम विरुद्ध है। तो भी ' उवसमसम्मत्त ' पर्का अर्थ प्रथमोपशम-सम्यक्त्य कर छेने पर कोई दोष नहीं आता है यही समझकर पाठमें परिवर्तन नहीं किया है।

संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ लेक्याएं, भावसे तीन शुभ लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी द्वोते हैं।

र मणपञ्जन परिहारी पदमुवसम्मत्त दोणि आहारा । एदेस एकपगदे पश्चि ति असेसयं जाणे ॥ गो. जी. ७२९.

मं. ५००

### उपशमसम्यग्दष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आळाप.

1 ग्र.	जी.	ч.	) प्रा.	सं.	ग.	<b>.</b>	]का.	। यं	<b>h</b> -	वे.	क_	∦. झा+	संय	द.	್ ತ.	. म.	स.	संझि.	ঞা,	ਤ.
2	২	Ę	१०	₹	2	१	2	\$	_	₹	8	-	્ર		द्र.६		्र	2	र	े २
L.	सं.प.			आहा.	म.	Ŷ.	ন.	म.	8			मति.	् सामा.	के द	मा•३	.स.	औप.	. सं.	आहा	खाका.
अय				विनाः				व.	×			क्षत-	छेदो.	विना.	ग्रम.	į	!			अना.
i i						1		औ,	. १			अव-	1				}			
			<b> </b>					•	ł		]	मनः.	ι		ļ .	1	ļ		Į	<u>i</u> )

8, 8, ]

अपुच्वयरणप्पहुडि जाव उवसंतकसाओ त्ति ताव ओघ-भंगो । णवरि सव्वत्थ उवसमसम्मत्तं भाणियव्वं ।

मिच्छत्त-सासणसम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ओघ-मिच्छाइद्वि-सासणसम्माइद्वि-सम्मा-मिच्छाइद्वि-भंगो ।

एवं सम्मत्तमग्गणा समत्ता |

पाधण्णपदे अवलंबिज्जमाणे सव्वाणुवादाणं मूलोघ-भंगो होदि; तत्थ सव्व-वियप्प-संभवादो | गुणणामे अवलंबिज्जमाणे ण होदि | पाधण्णपदे अणवलंबिज्जमाणे असंजमादीणं कधं गहणं १ ण; वदिरेगमुहेण संजमादि-परूवणट्ठं तप्परूवणादो | तेण दोण्णि वि वक्खाणाणि अविरुद्धाणि | एसत्थे। सब्वत्थ वत्तव्वो |

सण्णियाणुवादेण सण्णीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणडाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि

उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकषाय गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप ओघ आलापके समान दोते हैं । विशेष बात यह है कि सम्यक्त्व आलाप कहते समय सर्वत्र उपशमसम्क्त्व ही कहना चाहिए ।

मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्याग्तिथ्यात्वके आलाप क्रमशः मिथ्यादष्टि, सासादनसम्यग्दष्टि और सम्याग्मथ्यादाष्टि गुणस्थानके आलापोंके समान जानना चाहिए।

# इसप्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई।

प्राधान्य पदके अवलंबन करनेपर सभी अनुवादोंके आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं; क्योंकि, मूल ओघालापमें विधि प्रतिषेधरूप सभी विकल्प संभव हैं। किन्तु गौणनाम-पदके अवलंबन करनेपर सभी विकल्प संभघ नहीं हैं; क्योंकि, इस नामपदकी दृष्टिसे गुण-नामोंके भंगोंके ही आलाप कहे जायेंगे, दूसरोंके नहीं।

शंका — तो फिर प्राधान्यपदके अवलंबन नहीं करनेपर संयमादिके प्रतिपक्षी असंय-मादिका ग्रहण कैसे किया जा सकता है ?

समाधान — नहीं; क्योंकि, ब्यतिरेकद्वारसे संयमादि विकल्पोंकी प्ररूपणाके लिए ही असंयमादि विपक्षी विकल्पोंकी प्ररूपणा की जाती है; तभी विवक्षित मार्गणाद्वारा समस्त जीवोंका मार्गण हो सकता है, अन्यथा नहीं ! इसलिए संयमादि अन्वयरूप और असंयमादि व्यतिरेकरूप दोनों ही व्याख्यान अविरुद्ध हैं । यही अर्थ सभी मार्गणाओंके विषयमें कहना चाहिए ।

संझी मार्गणके अनुचादसे संझी जीवोंके आछाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां। दर्शों प्राण, सात प्राण; चारों संझापं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, छक्खंडागमे जीवहाणं

अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दब्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागाह्रवजुत्ता होति अणागाह्रवजुत्ता वा

ैंतेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अबगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दब्व-भावेहिं छ

त्रसकाय, पन्द्रह्यें योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवल्रज्ञानके विना रोष सात ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छह्यें लेक्याएं, भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संझी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, चारों संझाएं तथा क्षीणसंझास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवलझानके विना शेष सात झान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक,

न. ५०१

संधी जीवोंके सामान्य आळाप.

<u>य</u> .	जी ।	प.	<u>त्रा</u> .	सं.	ग.	इ.	কা•	यो.	]वे.	<b>क</b>	ज्ञा.	संय	द.	े छे.	) म.	.स.	संक्षि.	- আ	ੁੱਤ
१२ कि		द्प. इ.भ			-		१ त्र.	· ·			७ केव.	U)	् ३ के.द∙	द.६ भार	1		्रि	२	२
स.	.सं.प सं. अ.	শ পা •		क्षीणस		4.	1.		आप रा		भूभ विनाः		विना.		ज. अ.			আছা <b>अ</b> ना	साका अना
क्षी.	ĺ		ĺ	-99-		i	:			100			1	) 			i I I		
	<b>)</b>	_	Ι.		),	ļ.,					<u> </u>	I		•	[ ·		<u> </u>		·

#### नं. ५०२

संझी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु. 🔤 जी-	प. त्रा. सं.)	ग. इं. का. यो.	<u>) वे 'क. ( झा. ( र</u>	संय. द. हे. भ.	स. संग्रि. आ. उ.
१२ १ मि. सं. प.	ह्र०४	४ १ १ १ १ १ भ.४	्र¥ ७ ≓ केव.	७ ३ द. ६ २ के.द. मा.६ म.	हि ११२२
मिः सं. प. से.	क्षीणसं	प. त्र. व.४ औ.१	मि किंव मि किंविनाः के किंक	क.द.मा.दम. विना अ.	सं. आहा.   साका   अना.
क्षरी.	<b>•</b> 35-	वे. १	1° 8		
		) आ. १			

### ٩, २.]

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि चत्तारि गुणहाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्ना, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ्य</sup>।

सण्णि मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

अम्ब्यसिद्धिक, छहाँ सम्यक्तव, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संज्ञी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--मिथ्यादाष्टे, सासादन-सम्यग्दप्टि, अविरतसम्यग्दीप्ट और प्रमत्तर्भयत ये चार गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त ज्ञीव-समास, छहीं अपर्याप्तियां, सात प्राण चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकल्वां चार योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत, और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान; असंयम, सामायिक और छेद्देापस्थापना ये तीन संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेड्याएं, भावसे छहों लेदयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिका सम्यन्भिध्यात्वके चिना दोष पांच सम्यक्त्व, संग्लिक, आहारक, अनादारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संझी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-प्क मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संझी पर्यप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छईों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, आहारककाययोग-

#### ন. ৭০২

संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

। ग <u>ु</u> .	जी ।	<b>q</b> . 1	, भा,	सं	्य:	ŧ	কা	यो.	वे.   व	<b>њ</b> .	का-	संय.	द.	ਲੋ.	<b>म</b> .	<u>स.</u>	स झि	आ.	ड.
1 V	2	इ.अ.	9	8	<u> </u>	2	2	8	<b>a</b>   3	8	५ कुम.	3	३	द्र, २	२	4	2	२	2
मि			ļ		ļ	q.	₹.	औ.।मि.			কুসু.		के,द.			सम्य.	सं.	आहा-	साका.
सासा	স						ļ	वे मि				वामा.	विनाः	ন্থ-	अ.	विना.		अना	अना,
अति.	1	1	i		i		}	आ.मि.			्रश्रत	छेदो.		मा• ६					
प्रम.			l	ł,	í	l	i	कार्म-	ł		अव.		( i						

[ ८२७

छर्क्खंडागमे जीवद्वाणं

असंजमो, दो दंसण, दय्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ्य</sup>।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा "े

द्विकके विना रोष तेरह येाग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रष्य और भावसे छहों छेरयाएँ, भव्यसिद्धिक; अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संद्विक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संज्ञी मिथ्याद्दाष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्झों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दहा योग; तीनों चेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रष्य और भावसे छहों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, माद्दारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

ने. ५०४

### संशी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

य.	_जी.	प.	<u> </u> त्रा.	<b>सं</b> -	ग.	Ľ.	का.	यो.	वे.	क.	ह्या.	संय.	α.	ਲੇ.	म.	स.	सि.	आ.	। उ.
2	२ सं.प.	हप. हव			1		2	१३ आ दि.		R	<b>२</b> अ <b>ज्ञा</b> .	१		ब. ६ मा २		<b>ب</b>	<b>२</b> ⇔	्र	२
	स. अ.					4.	1.	जानहरू विना.			<b>প</b> র।	শান	पञ्च₊ अ.च.		म अ.		લ.	आहा. अना	साका. अना.
	1		i									i i					1		

#### નં. ૧૦૧

# संज्ञी मिथ्याददि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>व</u> .	जी.	¶•	) त्रा.	सं.	ग.	Ę.	কা-	यो.	वि.	<b></b>	सा.	संय.	्र.	, ਲੇ.	( म.	स.	संक्रि-	े आ	े उ.
1	र	Ę	20	¥	¥	१	2	१०	R	×	३	2	्र	द्र. ६	3	2	2	2	2
मि	5					प.	त.	म⊷ ¥			अज्ञा.	असं.	चिक्षु.	मा ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका-
	da -							व.४	1	l r			अच.		अ.				अना.
					İ			आ.१			ĺ								j
								व. १					1				í		
			]							·									

222]

संत-पत्त्वणाणुयोगहारे सण्णि-आलाववण्णणं

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>56</sup>।

""( सण्गि'-) सासणसम्माइटीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

उन्हीं संसी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्यासकालसंबन्धी आलाप कहने पर----एक मिथ्या-इष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, घैकियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रस्यसे कापोत और शुक्र लेइयापं, भावसे छहों लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संबी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक सासादन गुण-स्थान, संबी-पर्याप्त और संबी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दंशों प्राण, सात प्राण; चारों संबाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग-

१ प्रतिष्वत्रान्यत्र कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्तीति झेयम् ।

શં. ૧૦૬

**t**, **t**, ]

### संबी मिध्यादिष्ठि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

#### **नं.** ५०७

# संह्री सासाद्नसम्यम्दष्टि जीवॉंके सामान्य आलाप.

<b>२</b> सा.	२	इ.प. इ.अ.	20	۲	8	2	2	<u>यो.</u> १३ आ.दि. बिना.	₹	8	३	2	२	द्र. ६	१		2	२	- <del>ধ</del> . ২ লাকা. জনা.
1	}	}	ł		li i	1	]		ļ	ļ	}	ļ	Į		1	[		ļ	

.

[ 279

असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेत्र पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्ताति गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-मोबेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भर</sup> ।

तेसिं चेव अपजत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, देा अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दृष्वेण

द्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्विक, आहारक, अन,हारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संज्ञी सासादनसम्यग्दष्टि जीवों के पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास. छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राणः चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकायः चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औद्दारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योगः तीनों घेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके देश दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्य स्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संश्री सासादनसम्यग्दष्टि जीवेंकि अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक सासादन गुणस्थान, एक संशी-अपर्याप्त जीवसमाल, छों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संशापं, नरकगतिके विना दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, चसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रि-यिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान,

#### न. ५०८

# संशी सासादनसम्यग्दाप्टे जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग्र.	) जी,		<u> त्र</u> ा.	सं.	ग.	<u>  ₹.</u>	]का	] यो.	वे	क.	इ।.	संय.	िद.	छ.	भ	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
9	3	Ę	90	¥	¥	1	٩	30	<b>₹</b>	8	्र	1	२	द्र ६	1	1	9	٩	२
सा.	सं.प					पं.	ন্	म.४			अज्ञा.	अस	चक्षु	मा. ६	भ	मासा.	सं.	भाहा.	साका.
								ৰ্ধ			[		अच.	t i			ļ		अना.
								ઔ.૧											
			Į	l		)		वे. १	l	Į			]						l I

काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>888</sup>।

( सण्णि-)सम्मामिच्छाइईणिं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासे, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंनण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, मवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागाहवज्जत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>र्थ</sup>।

असंयम, आदि ेत दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहाँ लेश्यापं; भव्य-सिदिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

संज्ञी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवेंकि आछाप कहने पर-एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमाल, छहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञार्थ, चार्गे गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-काययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावने छढों छेरयाएं भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

તં. ५૦૨

संज्ञी सासादनसम्यग्दधि जीवौंके अपर्याप्त आलांप.

] मु. ]	जी	<b>q</b> . •	भा.	म.	ग.	<b>3</b>	<u>का</u>	यो ।	<b>à</b> ,	क	हा.	संय.	द.	<u>ह</u> .	स.	. स.	संज्ञि	आ.	<u>.</u>
2	ર	۲	وي	8	÷.	18	2	3	३	8	સ્	1	२	<u>द्र</u> र	8	2	٤ ا	२	્ય 🕴
सा,	न अ,	স			ति	٩.	<b>.</b> 1	औ. मि			क्रम.	असं.	चक्षु.	का,	भ	सासा	सं.	আরেন	साका,
				\	म	Ì		वें मि.			कुथु.	i İ	अ च 🗤	হু.	İ	[	i	अनः	अना.
				]	<u>è</u>	ļ		काम,			- •	i	ĺ	भा ६		ĺ		}	
<u>ا</u>	l					1				, 1		i j	1	)	l	t		1	
1										Į									l
		Į	:	ļ	l					1 \$		i <sup>:</sup>	ł	1	j			l	

र्न. ५१०

संबी सभ्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

। गु	्रजी -	( <b>प</b> .)	प्रा.	स	ं ग,।	ਤੋਂ ਹ	ক 🖕	यो.	ţŧ	त्रे,¦क	्रह्ण.	संय.	<b>.</b> द.	( ले.	( म.	_ स.	संझि	आ.	ਤ.
2	2	Ę	20	8	8	\$	8	80		3 8	्र	\$	२	द. ६	2	१	5	2	२
सम्य	सं, प∘	ļ	1	l 1 1		ч.	স	म. १	۲Ì		ज्ञानः	असं	चक्षु.	भा. ६	भ.	सम्य.	ं सं.	अहा	साका,
			ļ		ļ			व. भ		ł	3	ļ	अच.	i İ			ļ	į	अना.
1				İ	Ì			) आ.	9	1	अझा.		1		-			1	
					ł	) f		<b>ā</b> .	٤		मिश्र	{	1	{	ļ		1	Į.	\ <b> </b>
	<u> </u>		}			]		ł	<u>}</u>			۱	]	[ 	) ]		<u>)</u>	]	<u> </u>

**१, १**- ]

( सण्णि-) असंजदसम्माइडीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणे। अणाहारिणो, सामाहवजुत्ता होति अणामाहवजुत्ता वा

"तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासाे, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

संझी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या-प्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, आहारक-काययोगद्विकके विना शेष तेरद्व योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संझी असंयतसम्यग्दष्टि जीधोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंत्रेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

### नं. ५११

### संज्ञी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

$\overline{v}_{\bullet}$ $\overline{s}_{\bullet}$ <th>२ साकाः</th>	२ साकाः
---	------------

# नं, ५१२ संग्री असंयतसम्यग्दीष्ट्र जीवोंके पर्याप्त आलाप.

<u>ग</u> ु.	afi.	٩·	<b>प्रा</b> .	सं.	ग.	Ę.	का,	यो	•	वे.	ক.	( झा-	संय.	द.	े ले.	म∙	स₁	संहि	ঞা.	_ ਰ.
1	2	\$	१०	8	8	१	8	20	•	₹	8	R	र	३	द्र.६	2	3	१	8	ર
अवि.	सं.प.					पे.	त्र.	म.	8	1		मति.			मा. ६	स.	औप-	सं.	आहा.	साका-
			!					व.				<b>अुत</b> .		विना.			क्षा-			अना.
	1							औ.	8		ł	अन.				[	क्षायो.			
	]		l					चे.	<u> </u>		<u> </u>					J				

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासे, छ अपअत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्ता, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आद्दारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>-१३</sup>।

संजदासंजदप्पहुडि जाव खीणकसाओ त्ति ताव मूलोघ-भंगो।

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छद्दों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संह्री असंयतसम्यग्दधि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संद्वापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन वान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्यापं, भावसे छहों लेक्यापं; भुष्यसिद्धिक, औपरामिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संयतासंयत गुणस्थानसे छेकर क्षीणकषाय गुणस्थानतकके संझी जीवोंके आलाप मूल मोघ आलापोंके समान होते हैं ।

# नं. ५१३ संग्री असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

	गु.	्रजी•	<b>q.</b>	ЯІ,	सं.	ग.	Ę.	का,	ं योे -	वे.	क.		संय.	्र.	ले.	भ.	. स.	संक्रि	्या.	े.
	र बकि	१ सं.अ.	্ছি ফা	U	¥	۲	2	2	्३ औ.मि.	२	¥	¥	8	<b>N</b>	द्र, २	2	2	<b>१</b>	२	<u>२</u>
Ĩ	919 • I	त.ज.	va.				4.	ेत∙	जानम वे.मि.			मति. अत.	अस.	के. द. वि <b>गा</b> ः	কা. য়.	भ	औप. क्षा.	f	1 1	साकाः अनाः
						1	l	İ	कार्म.			. अव.	ļ	1444	भा. ६		क्षायो			भग.
						<u> </u>	ļ	{	(	ļ	ļ	]	j	İ İ		ļ	]			

असण्णीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, बारह जीवसमासा, पंच पजत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्त'रि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंच जादीओ, छ काय, चत्तारि जोग अवचमोमवचि-जोगो ओरालिय-ओरालियमिस्सकायजोगा कम्मइयकायजागो चेदि, तिण्णि चेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्द-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>आ</sup>

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणडाणं, छ जीवसमासा, पंच पज्ज-त्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, णव पाण अड पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिस्किखगदी, पंच जादी, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

असंझी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-एक मिथ्यादष्टि गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्तके बिना दोष बारद्व जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझापं, तिर्धवगति, पांचों जातियां, छहों काय, असत्यमृषावचनयोग, औदारिकसाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये चार योग; तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिझानके विना दोष दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेड्यापं, भावसे रूप्ण, नील और काप्तेत लेड्यापं, भध्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंझिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंझी जीवोंके पर्योक्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसवासोंमें से एक संझी-पर्याप्तके विना दोष छढ पर्याप्त जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां: नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्र ण, छढ प्राण, चार प्राण; चारों संझाएं, तिर्थचगति, पांचों जातियां, छढों काय, अनुभयवचनयोग, और औदारिककाययोग ये

#### न. ५१४

असंझी जीवोंके सामान्य आलाप.

J.	्जी,	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	কা,	यो.	] वे,	] क.	<b>झा</b> .	संय	द.	ले ।	म.]	स.	संज्ञि.	आ,	उ.	
1	१२	<u>भष</u> ः	8,0	¥	8	4								द, ६			र	٩	ર	Į
मि.	सं.प.	५	८,६		ति ।			व.अनु. १		ĺ	कुम.	अस.	चक्षु.	भा २	<b>я.</b> !	मि.	. स.	आहा.	साका,	
	मं अ.	४प.	૭,૬					औ. २	1	1 1	कुश्रु.		अच.	अशु.	1	1	! 	अना,	अना-	
	विना	४अ.	६,४		1		`	कार्म, १			_				ì			l		
-	ļ	,	ં૪,૨ ં		j				ļ	 (	l	ļ	i .	! [	j				,	

१, १.]

कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दब्वेण छ लेस्मा, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्माओ; भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अप्तण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भभ</sup>।

तेमिं चेव अपऊत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, छ जीवसमासा, पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, पंचिंदियजादी, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा

दो येंगः तीनों चेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे रूण्ण, नील और कापोत लेक्याएं; भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं असंक्षी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्याद्दष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-अपर्याप्तके विना शेष छह अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्या-क्षियां; सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्धेचगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, छहों काय, औदारिकविञ्च और कार्यण कावयोग ये दो योग; तीर्तों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम. आदिके दे! दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्त लेडवार, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइपाएं; भव्यतिद्धिक, अभव्यतिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

AC 12.1	न.	484
---------	----	-----

.....

### असंझी जीवोंके पर्याप्त आलाप

<b></b> .	जी.	पर	য়া,	सं.	) ग.	<b>\$</b> .	কা.	यो.	{ <b>वे.</b>	क.	ह्रा.	सय.	द.	ਡੇ.	भ	स.	संक्रि.	্ আ	ੁਤ.
1	Ę	4	٩	¥	2	٩	ę	्र २	्र	8	२	٤	ર	લં દ્	<del>``</del>	2	1	ر <b>۲</b>	<b>*</b> -
मि	पयो∙ '	8	۵		ति.			व.अनु.	<b>₹</b> !		कुम	्ञस.	चक्षु	मा. ३	्भ-	ाम.	अस	आह्रा.	साका,
	संप.		ভ	ļ	i (			. औ. र	1		कुश्र.	1	अच.	সন্থ-	अ.	: 			अना.
	विना.	1	Ę		1				ł	1	1				i	]	]		
		ļļ	¥	;			)	!	!	l i		ļ	i		)		1	1	J

न. ५१६

### असंझी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

P	Į.	जी-	प.	সান্	सं.	ग.	<b>\$</b> _1	<b>តា</b> -រ	यो ।	वे -	। क.	्रहा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संकि.	आ.	ड.	I
F	٩	Ę	પ ઝૉ.	U	8	9	4	Ę	२	3	8	२	9	्र	द. २	२	9	٩	२	2	l
11	मे	अप	∉अ,	Ę		तिः	i i		औं मि.	ļ		कुम.	अस	चक्षु	का.	म.	ामे,	स.	आहा.	साक। े	l
		सं अ.		4	. i		1		कार्म.	ł		कु अ.		্ৰন্থ	, ज्ञ-	З,			अना.	সন।	l
		बिनाः		¥	i					!		-		1	भा ३				.	· • •	ł
		,	l	ą									J 	1	अग्र.	}				' 	

, definition for the second second

# णेव-सण्णि-णेव-असण्णीणं सजोगि-अजोगि-सिद्धाणं ओघ-भंगो । एवं सण्णिमग्गणा समत्ता ।

आहाराणुवादेण आहारीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्ठाणाणि, चोद्दस जीव-समासा, छ पजत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्ज-त्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण (णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण') पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, चोद्दस जोग कम्मइयकायजोगो णत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो शेव सण्णिणो गेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होत्ति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा

संग्निक और असंग्निक इन दोनों विकल्पोंसे रहित सयोगिकेवली, अयोगिकेवली और सिद्ध भगवानुके आलाप ओघ आलापोंके समान होते हैं।

इसप्रकार संज्ञी मार्गणा समाप्त हुई।

आहार मार्गणाके अनुवादसे आहारक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर-आदिके तेरह गुणस्थान, चौददों जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, छद्दों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दर्शों प्राण, सात प्राणः नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छद्द प्राणः सात प्राण, पांच प्राणः छद्द प्राण, चार प्राणः, चार प्राण, तीन प्राणः आठ प्राण, छद्द प्राणः सात प्राण, पांच प्राणः, छद्द प्राण, चार प्राणः, चार प्राण, तीन प्राणः स्रयोगिकेचलीके चार प्राण और दो प्राणः, चारों संझापं तथा क्षीणसंझःस्थान भी है, चारों गतियां, पांचों जातियां, छद्दों काय, चौदद योग होते हैं: क्योंकि, यद्दांपर कार्मणकाययोग नहीं होता है। तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छद्दों लेस्याएं, भव्यासिद्धिक, अभव्य-सिदिकः, छद्दों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षिक और असंक्रिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अना-कार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

**१ प्रतिषु कोष्ठकान्तर्गतपाठा नारित ।** 

न. ५१७

आहारक जीवोंके सामान्य आलाप.

] ग्र.	जी	<b>q</b> .	न्ना.	सं.	ग.	\$ <sup>†</sup> -	का-	यो∙	वे.	क.		<b>सं</b> य -	द.	छे.	भ.	स,	संहि	ঙা,	ਤ.
१३	<b>₹</b> ¥	६प.	20,0	8	۲	4	६	58	3	¥	٢	ون	8	द्र.६	२	হ	2	2	ર
मि.		६ अ.	8,0					कार्म	-					<b>भा</b> ∙६	भ.		सं.	आहा.	साका •
से.	i i	५प.	८,६	क्षीणसं				विनाः	ल्यु	अकृषा					अ.		असं.	-	अना.
सयो.	]	ધ.ગ	0,4	च	ļ			ļ		ਨ							अनु.		तथा
	ļ	४प.	8.¥		ļ	ļ													यु. उ.
l	1	४अ.			1			<u>i</u>		i									

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणहाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, एगारह जोग, ओरालिय-वेउन्विय-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगा णत्थि । तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सागाइवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा

तेसिं चेव अपञत्ताणं भण्णमाणे अस्थि पंच गुणद्दाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपञजीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाणदोण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अस्थि, चत्तारि

उन्हीं आहारक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--आदिके तेरह गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण; चारों संझापं तथा क्षीणसंझा-स्थान भी है, चारों गतियां, पांवों जातियां, छहों काय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग होते हैं; क्योंकि, यहांपर औदारिकमिश्र, यैकिथिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग नहीं होते हैं; क्योंकि, यहांपर औदारिकमिश्र, यैकिथिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग नहीं होते हैं । तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों झान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और मावसे छहों लेड्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त, संक्तिक, असंक्तिक तथा संक्तिक और असंक्तिक हन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन होनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं आदारक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-मिथ्याद्यष्टि, सासा-दनसम्यग्द्यष्टि, अविरतसम्यग्दप्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान; सात अप-र्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्यातियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण; चारों संक्षापं तथा क्षीणसंक्रास्थान भी

गु.	जी.	<u>. q.</u>	গা	सं	)ग. 📑	इं.¦का	े यो		वे	ሻ.	. ज्ञा-	संय.	द.	छ.	स.	.स.	संझि.	খা.	ड.
22	ও	Ę	२०	8	81	4 8	ે ૧શ	<b>₩</b> .¥	₹	¥	2	છ	8	द्र, ६	<b>, २</b>	Ę	<b>२</b>	2	२
मि	पर्या.	in,	\$				॑व⊦	8	-	<u>ت ا</u>				सा.६	म.		सं.	आहा.	साका.
से		8	2	पसि			औ	. *	E B	अक्तप				: :	अ.	ļ	असं.	ĺ	अना.
प्रयो-	1	1	9	୍ଟ୍ର 'ଫ୍ରି			वे.	٤.		ক				ļ		}	अनु,		तथा.
			×	×I			आ	È.		}	ļ	Į			ļ				यु. उ.

अ/हारक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

.....

12.2.

गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ( सागार-अणागारे.हि जुगवदुवजुत्ता वा ")।

आहारि-मिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण (णव पाण सत्त पाण अद्व पाण छ पाण सत्त पाण') पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, बारह जोग, कम्मइयकायजोगो णत्थि । तिण्णि

है, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहां काय, औदारिकमिश्र, वैकिथिकमिश्र और आहारकमिश्र-काययोग ये तीन योग, तीनों वेद तथा अपगतवेद स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी है, विभंगावधि और मसःपर्ययज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत हेदया, भावसे छहों लेक्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिध्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा अनुभयस्थान भी है; आहारक, साकारोपयोगी और अना-हिरियायोगी तथा साकार और अनाकार इन दानों उपयोगोंसे युगपत उपयक्त भी होते हैं।

आहारक मिथ्यादारि जीवेंकि सामान्य आलाप कडने पर-एक मिथ्यादाष्टि गुणस्थान, षोदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; षार पर्या प्तयां च र अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण: छह प्राण चार प्राण: चार प्राण, तीन प्राण: चारों सेझाएं चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाययोगहिक और वैक्रियिककाययोगहिक ये बारह योग होते हैं; किन्तु कार्मणकाययोग नहीं होता है। तीनों

१ कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

નં. ધર્વ

आद्दारक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

<u>य</u> .	जी.	प.	<u></u> त्रा.	ग.	ग.	इं.	का.	<u>यो.</u>	∣वे.	ক_	्रजा.	<u>ु संय</u> ∎	द,	ेले	, स.	स∎	सं <b>दि.</b>	317.	. उ. ।
8	ور	হ অ'	৩	X	X	ц.	Ę	्र	्र	8	হ	· ¥ ,	۲	<u>द</u> १	२	ધ્ય	२	र	2
मि.		<b>५</b> अ.	ও	-				औं मि.	÷	÷.	कु म	,असं ,		का.	.म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.		४अ.	Ę	क्षांगस.			ļ	वे मि	अप ग.	સક્રમી.		सामा.		ंभा. ६	अ.	सासा.	4	-	अना.
अवि.	l		4	জ		i		आ मि.		ক	मति.	छेदी ।		:	!	औंप-	अनु.		तथा.
प्रस.			8	ļ						ļ	श्रुत.	।यथा⊷		İ	:	क्षा-			यु. उ.
सयो.		1	3								अव.	' ; '				क्षायो			
l <u> </u>		1	اع	l	I		ļ				केव.	ļ			}		]	i	

C36]

# संत-परूवणाणुयोगहरे आहार-आलाववण्णण

[ 234

वेद, चत्तारि कसाय, तिणिण अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आद्दारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>333</sup>।

तेसिं चेव पड्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पड्जत्तीओ चत्तारि पड्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अद्व पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्गाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काप, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-मावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवनिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहा-रिणो, सागाहवजुत्ता होति अणागाहवजुत्ता वा

धेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, ुरूय और भायसे छद्दों लेक्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं आहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--पक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्यासियां, चार पर्या-प्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और बैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और सावसे छहों लेक्श्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संदिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं ५२०

सहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

13.	जी.	ч.	яі.	्सं.	ग.	इं.	का.	यो-	à.	े <b>क</b> .	्रहा.	संय.	ेद.	<u>ह</u> े.		स.	संदि.	- अा.	
	' — — ·		20,9				. — .			8	<b>₹</b>	१	2	ह.६	3	۲.	२	٤.	
मि.	}	६ अ.	8,9	:				म. ४	1	1	अज्ञा.	અસં -	चक्षु	भा द	म.	मि.	. सं.	आहा.	साका.
	1	५प.	८,६	! 	i		i !	व, ४	!	!		! 	अच.	1	अ.	}	असं.	1	अना.
	1	ય ઝા	19,4	ŀ				ઔ.ર	i			i	i	ł	1				1
1	ļ	४प.	<b>ξ,</b> γ	ł		1	1	वे. २	ł					:	}			1	
	1	<sup>1</sup> ४अ.	۲,۹	l L	ļ	l	ļ		1	Į			}		1			<u>i                                    </u>	

### नं. ५२१

# आहारक मिथ्यादाप्टि जीवॉके पर्याप्त आलाप.

<u>ग</u> ् १ मि	U	₽.  q. y.  X	प्रा. १० ९ ८	सं. ४	।, 'ई अ ।	- का र हि	्यो १ - म. व.		वे. २	8	<u>झा.</u> ३ अझा.	संय. १ अस.	द २ च झु अच.	 म. २ म. अ.	स. १ मि.	संक्रि. २ सं. अस.	च. २ साका. अना.
			७ ६ ४				ओ. वे. १	1	•	ļ		]		/	· · ·		

**t**, **t**-]

**68**0 ]

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्ढाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो अस-ण्णिणो, आहारिणो, सागाहवजुत्ता दोंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>88</sup>।

"'आहारि-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ,

उन्हीं आहारक मिथ्यादाष्टि जीधोंके अपर्यात्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्याद्दाष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र और वैक्रियिकमिश्रकाययोग वे दो योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दें। अझान, असंयम, आदिके दें। दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेक्या, भावसे छहों लेक्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असं-क्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संक्री·पर्याप्त और संक्री·अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहौं पर्याप्तियां, छहों अपर्या-प्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संक्राएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों

न. ५२२

आह्वारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

و ع	प. प्रा ६अ. ७ ५,, ७	»   ¥	 ५. ६	यो. २ औ. मि. वे.मि	₹ 'X	२		- २	द्र.' का	२ म⊦	संझि. २ सं. असं.	1 2	उ. २ साका- अमा-
	¥	र ३						-	i i				

#### न. ५२३

आहारक सासादनसम्यग्दाप्टे जीवॉके सामाग्य आळाप.

गु.	। जी.	ेप.	ЯІ.	(सं.)	ग.! इ.	কা.	्यो.	वे.	क.	्रज्ञा.	. संय	्र.	े ले.	म.	. स.	संग्रि.	- आ	उ.
2	२				8 3						۶.	् २	द्र. ६	\$	٤	الا ن	2	2
	1		ادت		<b>पं</b> .	त.	म्. ४ व. ४	ļ	Ì	अझा.	i	चक्षु. अच्र-		भ.	सासा-	स.	आहा.	साकाः अमा.
	સ. અ.	İ					ণ औ <b>.</b> २							1	(			
			]				वै. २		!	Ì	İ				Į	İ		
	1	l	Į	]	l l	[			l	İ .		1	į 		]			۱ 

[ ₹, ₹.

# १, १. ] संत-परूषणाणुयोगदारे आहार-आळाववण्णणं [८४१

पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता था।

तेसिं चेय पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजात्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेदि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भभ</sup>।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपजत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो

मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोगद्विक और वैक्रियिककाययोगद्विक ये बारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों रेड्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राणः चारों संझापं चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक. काययोग और वैकिधिककाययोग ये दश योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकामेश्र और

નં. ५२४

आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवॉंके पर्याप्त आलाप.

गु. ।	जी.	ष.	গা.	सं,	Π.	इं.	<mark>क</mark> ा.	यो	•	वे.	क.	. ज्ञा.	संय.	द.	ਰੇ.	म.	स.	संग्रि.	সা.	ੁਰ.
्र	2	Ę	20	¥	8	2	2	₹ o ₽	۲.۲	3	8	<b>ै</b> २	2	२,	द्र, इ	j K.	१	2	1	3
. सा.	सं.प.		ļ			ά.	त्रस.	<b>ā</b> .	A			এহা.	असं.	चक्षु-	मा ६	म.	साला.	सं.	आहा,	सा≢ा-
l		1					7	ઔ.	Ł					अच -						अना.
				_	1			वै.	٢.	ļ					1					

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसग, दव्वेण काउ-लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>\*\*\*</sup>।

आहारि-सम्मामिच्छाइईार्ण भण्णमाणे अन्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, मवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ्भ</sup>।

वैक्रियिकमिश्रकाययोग ये दो योग, तौनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अझान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत छेझ्या, भाषसे छहों छेइयाप, भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संद्विक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक सम्यग्मिथ्याद्दष्टि जीवोंके आछाप कहने पर---एक सम्यग्मिथ्याद्दष्टि गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-काययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, मसंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिश्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

નં. ધરધ

\*

### आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवांके अपर्याप्त आलाप.

र सा.	१	ह अ.	সা. ৩	8	३ ति. म.	2	१	यो. २ औ मि. वै.मि.	ર્	क. ४	शा. २ कुम. कुश्र.	संय १ असं.	२ चझु.	द. १	<u>र</u>   स.	स. १ सासा.	۲	1	<u>ु</u> २ साका, अना,
		}			<b>दे</b> .						ļ	,							

### મં. ધરદ

# आहारक सम्यग्मिथ्याद्याष्ट्रे जीवोंके आलाप.

, <b>ग</b> ∹	जी.	Ч.	) त्रा.	सं.	ंग.	ŧ.	क !.	यो.	वे.	<u>क</u> ,	शा.	संय.	[द.	ਲੇ.	भ.	् स	संग्रि.	्ञा.	ਤ.
	2	Ę	20	8	8	2	२	१०	₹	8	"ৰ	1 2	२	द्र. ६	8	8	2	*	ર
सम्य.	सं. प.					ġ.	ব	म. ४			ज्ञान-	असं-	चक्षु.	भा. ६	म.	सम्य.	. सं.	आहा	साका.
				1		ļ	1	a. ¥		!	3		अच.			!	1	: 1	अना,
					!		1	) औ. १	!		अला.	!		!			-		
				1	1		ļ	विं. १			मिश्र		:				İ	1	
		l	]		ļ	]		l	j	ļ		l	ļ	ļ	ļ		]		

आहारि-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-जमो, तिण्णि दंसण, दव्य-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ</sup>।

<sup>\*\*</sup>तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—पक अविरतसम्य-ग्दाप्ट गुणस्थान, संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दर्श्तो प्राण, सात प्राण; चारों संझाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोगद्विक और वैकियिककाययोगद्विक ये बारद योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, औपर्शामक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आद्वारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर---पक अविरतसम्यग्दांष्टे गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छद्दों पर्याप्तियां, द्**रों माण,** 

ત્રં ५२७

आहारक असंयतसम्यग्दपि जीवोंके सामान्य आलाप.

। ग्र-	जी.	प.	Я[•	सं.	ग.	Ę.,	কা,	यो.	वे.	क.	श्चा.	संय-	द.	छे.	म.	<b>स.</b>	संझि.	था.	਼_ਬ
2	२	६प.	20	8	8	2	१	१२	३	8		2	्र	<b>द.</b> ६		३	2	र	ર
अवि.	सं.प.	६अ.	ا ون ا	1	્ય	i j	<b>7</b> .	म. ४	:		मति.	अस.	के,द,	सा. ६	भ.	'औप.	ु सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.		Ι.		)	,	!	व. ४	i 1		श्रुत-		विना-	ĺ		क्षा.	į		अना.
				ĺ	}			औ.२			अव.					क्षायो.			
1	1	ļ		ļ	ļ	i		वै. २									Ì		
1		Ì	۱ ۱		ĺ			; , I		. 1 		[	ĺ			Į,			

### नं. ५२८

### आहारक असंयतसम्यग्टाप्टे जीवींके पर्याप्त आछाप.

गु. जी.	<b>प</b> . (प्रा.)	सं ग	इं. 'का	∣ यो ∶ंवे	•   क.	श्चा.	र्सय•	द. । छे.	म.	. स.	संशि,	अन-	ड. ।
9 9	Q 90	8 8	9 9	90 3	8	₹	٦	३ द्र.इ	9	३	9	9	२
आवि. 👝		i i	<b>น้</b> . ∣ร.	म, ४		मति.			म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
. The			.	व. ४		શ્રુત.		विनाः	1	्रक्षा.			অলা-
	1		1	ગા. ૧		अव.			i	क्षायी-			
		! !		्व. १		J	1		i	!			

१, १, ]

### छक्खंडागमे जीवद्वाणं

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्धाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इस्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा"े।

आहारि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदा-रिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान; असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्य और भावसे छहों लेक्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक-सम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक असंयतसम्यग्दाष्टे जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-पक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संब्री-अपर्याप्त जीवसमास, लहों अपर्याप्तियां, सात माण, चारों संक्षापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और वैकियिक-मिश्रकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेक्या, भावसे लहों लेक्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आद्दारक संयतासंयत जीवोंके आछाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक सं**ग्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों** प्राण, चार्रों संज्ञापं, तिर्यंचगति और मनुष्य-

#### न. ५२९

आहारक असंयतसम्यग्डष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

য	•	्जी•	्व.	) त्रा.	सं.	ग.	ŧ,	কা.	्यो.	्वे.	<b>क</b> .	ह्या.	संय.	्र.	ਡੇ.	म.	स.	संज्ञि	ं आ.	उ,
	१	2	Ę	3	8	۲	१	۶.	ર	<b>२</b>	8	ર	۶.	३	इ. १	<sup>'</sup> ۲	₹	8	े र	२
aif	वे.	सं.अ	अ.				पंग	त्र.	औ.मि.	g.	!	मति.	अस.	के द	কা,	, स	औप	सं.	आहा.	साका.
								į –	वै.मि.	न.	Ì	अत.	:	विनाः	्मा. ६		क्षा.	ŀ		अना.
		ł		i i						ļ		अंब.	i i		ļ		क्षायो			
		1	}										]			ļ.			j	

# १, १. ] संत-पद्वणाणुयोगदारे आहार-आळाववण्णणं [

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण,संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>अ</sup>ँ।

"आहारि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पजत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया,

गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेड्यापं, भावसे तेज, पद्म और गुक्क लेड्यापं; भव्यसिद्धिक, औपदामिक-सम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियज्ञाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और आहारककाययोगढिक ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कथाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिद्वारविशुद्धि थे तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्र लेक्याएं; भव्यसिद्धिक,

नं. '	५३०
-------	-----

आहारक संयतासंयत जीवौंके आछाप.

<u>.</u>	I			_			1	्यो.	वे.	क.	<b>हा</b> .	संय.	द.	ले.	स.	्स.	(संक्रि	ଖ୍ମ.	ਰ.
र	१ सं. प.	Ę	१०					९ म. ४	्र	Y	1 ~	2		द्र. ६		<u>२</u>	3	8	ર
<b>५</b> र। -	લ. ૧,		ļ		त. म.	ч.	1.	म. ठ ब.४		Í	मति. अत		क द. त्रिना.	भाः इ राम	े स.		ं स.	आहा.	साका.
		Í			•••	j		औ. र	 		्रुत. अव.	1	1/1-11.	(छन-	2	क्षा. क्षायो.			अनाः
	j j			ĺ	;				 		- ,	ļ 					ĺ		

### ન. પરશ

### आहारक प्रमत्तसंयत जीयोंके आळाप.

g.	जी,	Ч.	आ .	स.	ग.	) <b>ş</b> .	'কা,	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ਫ਼ੇ.	म.	स.	. संदि	आ,	) ਤ.
2	२	६प.	१०	۲	ं २	۶	ং	११	₹	8	8	ર		द्र, ६			2	2	2
H.	सं.प.	६अ.	່ຍ່		म.	प.	त्र.	म. ¥			मेति.	सामा.	के द.	मा₊३	स.	औष	सं.	आहा.	साका,
P.	ब.अ.					i I		व.४				छेदो.		जुम.	 !	क्षा.	!		व्यनाः
	· ·	ĺ	, ' ; i					আঁ. ২			अव.	परि.	ļ	l	i i	क्षायोग			
	1.		) (			<u> </u>		आ, २			मनः.	i .	ι	ĺ	ĺ	, ,			

तिणि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

एत्थ पज्जत्तापज्जत्ता आलावा वत्तव्वा । एवं सव्वत्थ ।

आहारि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्गि सम्मत्तं, सण्गिणो, आहा-रिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ्य</sup>।

आहारि-अपुच्चयरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ

औपशमिकसम्यक्त्य आदि तीन सम्यकत्व, संक्षिक, आद्दारक, साकारोपयोगी और अनाकारोप-योगी होते हैं।

इस आहारक प्रमत्तसंयत गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप भी कहना चाहिये। इसीमकार जहां पर संझी-पर्याप्त और संझी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास होवें वहां भी सामान्य आलापके अतिरिक्त दोनों प्रकारके आलाप और कहना चाहिए।

आह्वारक अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर-एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंझाके विना शेष तीन संझाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग: तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्क लेश्याएं: भव्यसिद्धिक, औपशामिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो पयोगी होते हैं।

आहारक अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवेंकि आलाप कहने पर---एक अपूर्वकरण गुण-

आहारक अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

1	<u>जी.</u> १ सं.प.	E.	२०	<u>सं.</u> ३ आहा. विना.	2	१	१	\$ ۲ ۲	३	क.   ४	झा. ४ मति. श्रुत. अव.	्र	३ के.द.	द्र.६ मा∍३	१ भ	स. ३ औप. क्षार क्षायो	१ संग	र	ु . २ साका. अना,	
ļ										ا اا	मनः.			j	1		l	ί	<u> </u>	l

282 ]

मं. ५३२

# संत-पत्त्वणाणयोगदारे आहार-आलाववण्णणं

पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा, भावेण सक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-बजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा "

"'आहारि-पढम-अणियद्दीणं मण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्दाणं, एओ जीवसमासो. छ पज्जत्तीओ. दस पाण, दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्सा,

स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संक्राएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औता-रिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामायिक आदि हो संयम. आदिके तीन दर्शन. द्रव्यसे छहाँ लेक्याएं, भावसे शक्कलेक्या; भन्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यवत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवतीं जीवोंके आलाप कहने पर---पक अनिव्रत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवलमास, छहाँ पर्याप्तियां, दशाँ प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संक्षापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों बचन-योग और औवारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार झान, सामा-यिक आदि दो संयमः आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहाँ छेरयाएं, भावसे राक्छछेरयाः भष्य-

નં પરર

आहारक अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप.

गु.	_  जी•	प.	प्रा,	सं.	ग,	av		यो.			ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	. स.	सहि	ঙ্গা.	उ.
् १	٤ (	٩	१०		٤.	<u>۲</u>	१		३	X	8	२		<b>द.</b> ६		्र	<u>۲</u>	१	3
अपू	. स.प	• j				<b>ф</b> .	₩.	म. ४	ĺ	Í						ओप.	सं.	आहा.	साका.
				विना.	 	ļ	ł	व. ४		l	श्रुत.	છેરો.	विना.	ন্থক্ত.	1 [	क्षा.	1	-	अना.
			ļ		1			ઝો. ૧			अव.		ļ			[			
	1			ļ			-		l		मनः.		1		ļ				
				ļ							ļ	l	ļ				ļ		(

#### आहारक अनिवात्तकरणके प्रथम भागवर्ती जीवोंके आलाप. ન, પુરુષ

ग्र.	जी ।	ष	प्रा.	सं.	ग.	इ	কা	यो.	वे.	क.	हा.	ं संय-	<u>द.</u>	ੇ.	म.	स.	संग्रि.	জা.	
<b>?</b>	2	Ę	१०	2	٤	્ર	<b>१</b>	8	3	8	४ माने	२	ं ३	द्र. ६ भा-१	2	2	<b>१</b>	2	2
अनि . प्रम	30			मे. परि	<b>H</b> •	<b>4</b> • 	ेत्र. 	म. ४ व. ४			भात. श्रुत.	सामा. छेदो.	क. ६. विनाः	मा-र ग्रुङ्ग.	<b>स</b> ∙	ુ સાપ-	¦ <b>€</b> ∙		साका. अना,
	Ŧ		]					ઔ. શ			अव.	-••-					1		
L		ļ			ι L	[		<u>}</u>			मनः.	]	i L				[		

2. 2. ]

भावेण सुक्कलेस्साः भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

सेस-चदुण्हमणियडीणं ओघ-भंगो ।

आहारि-सुहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोहकसाओ, चत्तारि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भभ</sup>।

आहारि-उवसंतकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जचीओ, दस पाण, उवसंतपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदि्यजादी, तसकाओ, णव

सिद्धिक, औपद्यमिक और झायिक ये दो सम्यवत्व, संझिक, आहारक, साकारोपयोगी और भनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके शेष चार भागोंके आलाप ओघालापके समान होते हैं।

आद्वारक सूक्ष्मलाम्परायी जीवोंके आलाप कद्दने पर—एक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान, एक संब्री-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, सूक्ष्म परिग्रद्दसंबा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, जसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; भपगतवेद, सूक्ष्म लोभकषाय; आदिके चार ब्रान, सूक्ष्म साम्परायिकशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रष्यसे छहों लेक्याएं, भावसे शुद्धलेक्या; भव्यसिद्धिक, औपज्ञामिक और क्षायिक येदे। सम्यक्त्व, संब्रिक, आद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आद्वारक उपशान्तक्षपत्री जीवोंके आलाप कहने पर--एक उपशान्तकषाय गुणस्थान, एक संझी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तपरिव्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग,

#### #, લર્ધ

आहारक सूक्ष्मसाम्परायी जीवोंके आलाप.

<u>।</u> ग्र.	नी.	q.	<u>त्रा</u> .	सं -	ग.	<b>ŧ</b> .	কা-	यो.	<b> </b> वे.	₿.	₹.	संय.	ंद.	8.	∫ म∍	स.	संक्रि	ঞা.	ર.
२ सूक्ष्म		Ę	20	ł	2	8	१ त.	९ म• ४ व• ४ औ. १	ч •	12	४ मति- अत-	१ सूक्ष्म.	े द के. द विना	द. ६ मा•१	₹ ¥.	२ औप. क्षा	2	ş	२ साकाः अनाः

· [ ₹, ₹,

जोग, अवगदवेदो, उवसंतलोहकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, तिणिण दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वाभ्या।

आहारि-खीणकसायाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजम, तिण्णि दंसण, दब्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भभ</sup>।

अपगतवेद, उपशान्तलोभकषाय, आदिके चार झान, यथाख्यातविद्दारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छह्रों लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और झायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आहारक क्षीणकषायी जीवोंके आलाप कहने पर-एक क्षीणकषाय गुणस्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, क्षीणसंबा, मनुष्यगाती, पंचेन्द्रियजाति, वसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, अकषाय, आदिके चार ब्रान; यथाख्यातविद्वारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएं; भावसे शुक्ललेक्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यन्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

न. ५३६

आहारक उपशान्तकषायी जीवोंके आलाप.

9			90	ग. १ स.	9	<mark>৭</mark> স.	यो. ९ म.४ व.४ औ.१	अपना. ० वि	0	४ माते -	संय. १ यथा.	द. ३ के.द विना	छे. द. ६ मा. १ ग्रुह.	भ. १ भ.	स. २ औप, क्षा	संग्रि. १ संग	आ. १ आहा.	उ. २ साका. अना.
	}	1	ļ	l		<i>i</i>		į		मनः.	)	ļ		Ϊ	i	ł		1

#### ৰ, ৭३৩

#### आहारक क्षीणकषायी जीवोंके आलाप.

<u>गु.</u> १ क्षीण.	जी. १ सं.प.	<b>4.</b> 6	80	0	१	इं. १ पं.	<b>१</b> त्र.	<u>योः</u> ९ म.४ ब.४ औ.१	0	0	¥ मति श्रुत- अव-	३ केद.	द्र.६ सा∙ १	१ म.	2	2	<b>२</b> आहा.	ड. २ साका, अना.
				8				औ. र		क   	-							

[ 689

आहारि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण दो पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदि-यजादी, तसकाओ, छ जोग, कम्मइयकायजोगो णत्थि; अवगदवेदो, खीणकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक-लेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव साण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा<sup>386</sup>।

एवं पज्जत्तापञत्तालावा वत्तव्वा । एवं सव्वत्थ वत्तव्वं ।

अणाहारीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणहाणाणि अदीदगुणहाणं पि अत्थि, अह

आहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर--- एक सयोगिकेवली गुणस्थान, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहाँ पर्याप्तियां, छहाँ अपर्याप्तियां; वचनबल, काय-बल, आयु और स्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, तथा कायबल और आयु ये दो प्राण; क्षीणसंक्षा, मलुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दो वचनयोग, औदारिककाययोग और औदारिकमिश्रकाययोग ये छह योग होते हैं; किन्तु कार्मणकाययोग नहीं होता है। अपगतवेद, क्षीणकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविद्वारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्यापं, भावसे शुक्ललेक्या; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकर्लोंसे मुक्त, आहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

रसीप्रकारसे सयोगिकेवळीके पर्याप्त और अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए। इसी-प्रकार सर्वत्र कहना चाहिए।

अनाद्वारक जीवेंकि सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादष्टि, सासादनसम्यग्दष्टि, अविरतसम्यग्दष्टि, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, सात अपर्याप्त और अयोगिकेवली गुणस्थानसंबन्धी एक पर्याप्त इसप्रकार आठ जीव-

#### नं. ५३८

आहारक सयोगिकेवली जिनके आळाप.

$     \begin{array}{c cccccccccccccccccccccccccccccccc$	<u>र १ र</u>	<u>छे. म.</u> स. द. <b>१ १</b> भा. १ म. क्षा. श्रुक्र,	संक्रि. आ. छ. २ २ अन्तु. आहा. साका- अना- यु. उ.
---	--------------	---	---

जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपजत्तीओ पंच अपज्ज तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दो पाण एग पाण अदीदपाण वि अत्थि, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ सिद्धगई वि अत्थि, पंच जादीओ अदीदजादी वि अत्थि, छ काय अकाओ वि अत्थि, कम्मइयकायजोगो अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ णाणाणि, दो संजम णेव संजमो णेव असंजमो गेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया णेव भवासिद्धिया णेव अभवासिद्धिया वि अत्थि, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सणिणणो णेव असण्णागो वि अत्थि, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदु-वजुत्ता वा

समास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है; चारों संक्षापे तथा श्रीणसंक्षास्थान भी है, चारों गतियां तथा सिद्धगति भी है, पांचों जातियां तथा अतीतजातिस्थान भी है, छहों काय तथा अकायस्थान भी है, कार्मणकाययोग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावधि तथा मनःपर्ययक्षानके विना रोष छह झान, असंयम और यथाख्यातसंयम ये दो संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम इन तीनों से रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों छेश्यापं तथा अछेश्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

न. '	ওইৎ
------	-----

अनाहारक जीवॉंके सामान्य आळाप.

<u>.</u>	जी.	प.	प्रा	.  सं	. ग	<b> </b> ₹.	का.	यो.	वे.	क.	. शा≖_	संय.	द.	हे.	म.	. स.	सील.	্ আ.	ड.
५ मि.	८ अप.	६प.	S)		8 8	4	Ę	र्	R	8	६	२	8	द्र,६	२		२	5	ર
सा.	9	६अ.	ও	. j.,		¦≓	न	कार्म.	÷	12	विभंग	अस		भा-६					साका-
अबि.	अयोग	۹,,	হ	of herein	स) भार मिन्द्रमा	-	अकाय.	÷	2		मनः.			अले.	अ.	विना.	असं.		ৰনা.
		۷,,		10	¢  ≤≃	त्र	1	अयोग.	! `   .	19	विनाः	अनु.		{	<u>ख</u> ु. सं	1	ચતુ.		तथा.
अयो.	अती-	अती.	¥	3		ļ		iD.							RD.				यु. उ.
अ. गु,	जीत्र.	प.	२	<u> </u>		1			ł				i	i		] •			

2, 2. ]

अणाहारि-मिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपआत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, अणाहारिणो, सामारुवज्जत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा<sup>अभ</sup>।

"अणाहारि-सासणसम्माइडीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एगाे जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, णिरयगदी णत्थि; पंचिंदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दा अण्णाण,

अनाहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छद्द प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संझाप, चारों गतियां, पांचों जातियां, छद्दों काय, कार्मणकाययोग, तीनों चेद, चारों कषाय, आदिके देा अज्ञान, असंयम, आदिके देा दर्शन, द्रव्यसे ग्रुक्कलेस्या, भावसे छहों लेस्याप्र, भव्यसिद्धिक; अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनाद्वारक सासादनसम्यग्टाप्टि जीवोंके आलाप कहने पर---एक सासादन गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संझापं, तिर्थंच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां होती हैं; किन्तु यहांपर नरकगति नहीं है। पंचेन्द्रियजाति, जसकाय,

नं, ५४०

अनाहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके आछाप.

Į ي.	) जी-	٩.	সা₌	सं.	ग.	ţ.	কা	यो •	( वे.	क.	হা-	संय.	द.	ð.	भ.	स.	संक्रि.	आ.	ਤ.
2	७ अप.	<b>६अ</b> .	2	8	*	4	Ę	१ कार्भ.	३	8	२ कुम.	१ असं.	२ चक्षु.	द्र.१ शु-	२ म.	र मि.	२ सं.	१ अना-	२ सार्का-
[ <sup>64</sup> .		۰ <i>۳</i>	ξ					41 (41.	ĺ	! İ	ক্লুপ্তু.		अच.				अस.		अनाः
	}		्र ४ ३							! ; ;		   		• •					

#. 482

अनाहारक सासादनसम्यग्दाष्टे जीवोंके आलाप.

र सा.	१	प. इ अ.	प्रा. ७	8	₹	१	१	<u>यो.</u> १ कार्म.	₹	क. ४	शा. २ कुम, कुश्रु.	संय - १ असं.	२ चक्षु,	े छे. इ. १ इ. मा. ६	र स.	स. १ सासा.	ि र	_۲_	ु उ. २ साका. अना.	
----------	---	---------------	------------	---	---	---	---	---------------------------	---	---------	-----------------------------	--------------------	-------------	------------------------------	---------	------------------	-----	-----	----------------------------	--

असंजमेा, दो दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा।

अणाहारि-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तस-काओ, कम्मइयकायजोगो, इत्थिवेदेण विणा दोण्णि वेदा, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा<sup>भ्य</sup>।

अणाहारि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्धाणं, एगे। जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, दोण्णि पाण, मण-वचि-उस्सासपाणा णत्थि; खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं,

फार्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके **दो दर्शन,** द्रब्यसे शुक्कलेच्या, भावसे छहों लेदयापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, अनाद्वारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनाहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर----एक अविरतसम्यग्दाद्वि गुणस्थान, एक संझी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, छात प्राण, चारों संझापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कार्मणकाययोग, स्त्रीवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन झान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रब्यसे शुक्रलेश्या, भावसे छहों लेश्यापं, भष्यसिद्धिक, औपशामिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संझिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अताहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर--एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपर्याप्त जीवसमास, छहाँ अपर्याप्तियां, आयु और कायबल ये दें। प्राण होते हैं; किंतु यहांपर मनोबल, वचनबल और दवासोच्छ्वास प्राण नहीं हैं। क्षीणसंबा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रि-यजाति, जसकाय, कार्मणकाययोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलबान, यथाख्यातविहारशुद्धि-

#### ને, લઘર

### अनाहारक असंयतसम्यग्दष्ठि जीवोंके आलाप.

ľ	<u>गु.</u> १ अवि.	<u>م</u> . د	प. इ.अ.	<u>'</u>	<b>গ</b> . ১	8	2	र	2	वे. २ पु. न.	8	३ मतिः श्रुतः	व के.द.	े छे. इ. १ ज्ञु. मा. ६	१ म.	३ औष• क्षा्.	सं <b>हि.</b> २ सं.	आ. २ अना.	उ. २ साका. धना.
		H.				]	   					अन.			1	क्षायो.			

जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्त्रेण सुक्कलेस्ता छ लेस्साओ वा'. भावेण सुककलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, सरीरणिष्पाय-णत्थं णोकम्मपोग्मलामावादो अणाहारिणे, सागार-अणागारेहिं जुगबदुवजुत्ता वा होति "।

"अणाहारि-अजोमिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणडाणं, एगो जीवसमासे, छ पज्जत्तीओ, एक पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाकखादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्वेण

संयम. केवलदर्शन, द्रव्यसे शुक्ल अथवा छहाँ लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्याः भव्यसिद्धिक. आधिकसम्यकत्व, संश्विक और असंश्विक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, शरीर निष्पादनके लिये आने वाली नोकर्म पुद्रलवर्गणाओंके अभाव हो जानेसे अनाहारक. साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

विश्वेषार्थ- ऊपर अनाहारक सयोगिकेवलियोंके लेश्या आलापका कथन करते समय सभी प्रतियोंमें ' दब्वेण छ लेस्साओ ' इतना ही पाठ पाया जाता है परंतु पूर्वमें कार्मण-काययोगी सयोगिकेवलीके आलाप बतलाते समय द्रव्यसे राक्कलेश्या अथवा छहाँ लेश्याएं कहीं गई हैं, इसलिये यहांपर भी उसीके अनुसार सुधार कर दिया गया है।

अनाहारक अयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर-एक अयोगिकेवली गणस्थान. एक पर्याप्त जीवसमास. छहाँ पर्याप्तियां, एक आयु प्राणः क्षीणसंहा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविद्वारशद्धिसंयम, केवलद्धीन.

१ प्रतिघ ' दब्वेण छ लेस्साओं ' इति पाठः ।

ર્મ. ૧૪૨

अनाहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप.

्य.	। জী	<b>q</b> .	গা-	(सं.)ग	इं.	का	यो.	] वे	ক.	; হ্লা-	( संय.	द.	ੇ.	<b>स.</b> ∣ र	न, संज्ञि	, आ.	ੁਚ.
2	1 8	ह	२	0	1	۲	2	0	်	্হ	ँर	्र	द्र, र	2	१०	۶.	े २
सयो,	ु अप.			म	्ष.	'ৰ.	कार्म.	Ē.	खा.	कंत्र.	्यथाः	के द,	शु.	म• क्ष	ा अतु.	अना.	् साका
		107		सीज		· ·		हि	स्र				अ.६ <sub>।</sub>	ł		अना.	अना
				i <b>10</b> 0		.				]	Ì		भा १		ļ		यु. उ.
	1			1 }	ł			ł			1		; <b>I</b> . ;		ł		. 1

ર્ન. પ્લપ્લ

#### अनाहारक अयोगिकेवली जिनके आलाप.

<u>गु</u> .	जी. प.	्रा. (र	<u>सं.  ग</u> .	इं. का	्यो.	वे. व	<b>क.</b> ज्ञा	. संय द.	. हे. म.	स. संहि	ो, आ	े .
2	२ ६			<b>१</b> १ 					द्र, ६ १		र	ર
अयो.	4-	ાયુ. હ	ד   <del>ד</del>	ч. э.	योग	अप्र अप्र	<u>•</u> ৭১ন• হ স	પંચા ૧૧.૬	भा. ॰ म. अल्रे.	ধান্পন্ত,	्ञन।.	साका- अना-
		ן ו	J.		க		5	1	!		ļ	यु. ख.
						:   	i I		.			

#### १, १. ј संत-परूवणाणुयोगदारे आहार-आळाववण्णणं

छ लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा।

अणाहारि-सिद्धाणं भण्णमाणे अत्थि अदीदगुणद्वाणाणि, अदीदजीवसमासा, अदीदपजत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी, अदीदजादी, अकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो, केवल-दंसण, दब्व-भावेहि अलेस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होति<sup>अभ</sup>।

एवं आहारमग्गणा समत्ता।

तहेव च

संत-परूवणा समत्ता।

द्रव्यसे छद्दों लेक्याएं, भावसे अलेक्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक और असंक्रिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

अनाहारी सिद्ध जीवोंके आरूप कहने पर--अतीतगुणस्थान, अतीत जीवसमास, अतीतपर्याप्ति, अतीतप्राण, क्षीणसंज्ञा, सिद्धगति, अतीतजाति, अकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, संयम, असंयम और संयमासंयम विकल्पोंसे विमुक्त, केवलदर्शन, द्रव्य और भावसे अलेह्य, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक विकल्पोंसे रहित, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंग्रिक विकल्पोंसे अतीत, अनाहारक, साकार और अनाकार रन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

## इसप्रकार आहारमार्गणा समाप्त हुई । और इसीप्रकार उसके साथ सत्प्ररूपणा भी समाप्त हुई ।

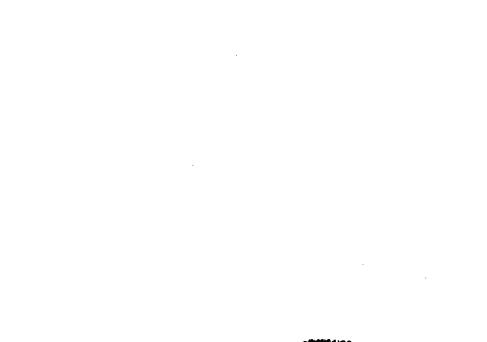
#### ર્ન, ૧૪૧

अनाहारी सिद्ध जीवोंके आलाप.

-0-

! प <b>,</b> ' प्रा₊∣ सं	. ग.) इं. व	ा.ं यो.	वे क. झा.	संय, द.	ੁਲੇ.   ਸ	. स.	संक्रि. आ	ਰ.
0.00			002	0 2		۶	• 2	12
je je i⊵	. जा दि	e e	ह ह केव.	के.द	छेरेय अस	्र क्षा-	ुष्ट्रं अनाः	साका.
		ल त	ल ल		5			अना.
ד איז אין ווי	8	ł						यु. उ.
						!		
			या <b>क</b>	\$         \$	र ० २ ० ० ० ० ० ० ० ० २ इ.के थ्रा मान्स साम्य मान्स साम्य मान्स	5         5         6         6         6         6         6         7         1 <th1< th=""> <th1< th=""> <th1< th=""> <th1< th=""></th1<></th1<></th1<></th1<>	र ० १ ० २ ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ०	० ० ० ० ० ० ० ० १ ० १ ० ० १ ० १ में में में में में में में में केर. हो के द. हो सी. हो अना.

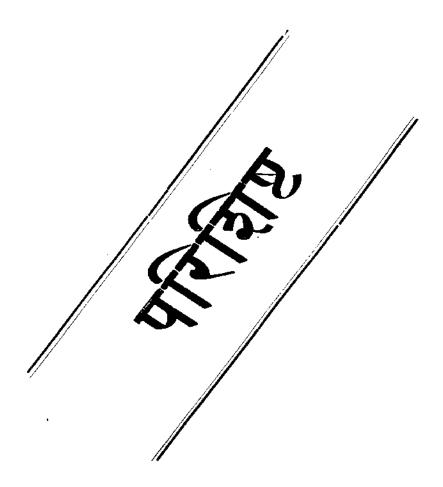
[ 294



**N** 

,

÷ •,



· •,

.

•

•

.

.

www.jainelibrary.org

.

## (यहां उन्हीं शन्दोंका संप्रह किया गया है जिनकी निर्दिष्ठ पृष्ठपर परिभाषा पाई जाती है।)

## १ पारिभाषिक-शब्द-सूची

शब्द	দূষ	शब्द	មួ
অ		अयोगकेवली	રુ- <b>શ્</b> લ્સ્
<b>स</b> क्षाय	<b>૨</b> ५ <b>૪</b>	अयोगी	२८०
अकायिक	२६६,२७७	अरतिबाकु	११७
अग्रायणीय	<b>ફ</b> રૂપ	अरिहंत	કર,કરૂ
अच्च सुर्वर्शन	<b>૨૮</b> ૨	अर्द्धत्	88
मचित्रमंगल	24	अलेक्य	३९०
अज्ञान	રુદ્દર,રદ્દઇ	अस्पबहुत्व (अनुयोग)	<b>શ્</b> લ્ટ
व्यतीतपर्याप्ति	889	अवग्रह	<b>રૂ</b> પછ,રૂ <b>છ</b> દ
मतीतप्राण	કરવ	अवधि	<b>રૂ</b> બ્લ્
मन्तरुद्द्या	१०२	अवधिशान	૧રૂ,રૂષ૮
मन्तरात्मा	१२०	अवधिदर्शन	રૂટર
स्वर्धनय	65	अवयवपद्	99
अर्थावप्रह	ર્ષક	अवाय	ર્શ્વષ્ઠ
अधिराज	419	असत्यम्न	<b>૨૮</b> १
अध्रवायप्रह	2419	असत्यमोषमनोयोग	ર૮१
मधँमण्डलीक	مربى	असद्भाषस्थापना	20
सनाहार	१५३	असंयत	<b>EUE</b>
अनादिसिद्धान्तपद्	৩হ	असंयतसम्यग्द्रष्टि	१७१
अनिन्द्रिय	રદ્દષ્ઠ	अस्तिनास्तिप्रवाद	<b>૧</b> ૧૫
अनिवृत्ति	१८४	आ	
अनिवृत्तिबादरसाम्पराय	<b>દ્ર</b> દ્રષ્ટ	आकाशगता	११३
अनुसरौपपादि <b>कद्</b> शा	१०३	आक्षेपणी	१०५
अपगतचेद्	રૂષ્ઠર	आगमद्रव्यमंगल	22
अपर्याप्त	ર૬७,୫୫୫	आचारांग	ود
अपर्याप्ति	રષદ,રષ૭	आचार्य	<b>૪૮,૪</b> ૧
अपूर्वकरण	१८०,१८१,१८४	आत्मप्रवाद्	<u>१</u> १८
अप्कायिक	২৩২	अत्मा	१४८
অপ্রতারিষাক্	११७	आदानपद	194
अप्रमत्तसंयत	१७८	आनापानपर्याप्ति	રષ્ષ
अप्रवीचार	<b>સ્ટર</b>	आभिनिषोधिकज्ञान	<b>લ્</b> ર,રૂપ્ <b>લ્</b>
अवज्रप्रखाप	११७	आभ्यन्तर निर्वृत्ति	રરૂર
અમધ્ય	ર૬૪	आहार	<b>શ્પર,ર</b> ષર
<b>अ</b> भ्या <b>ख्या</b> न	११६	आहारक	ર૬ષ્ઠ
अयीग	રેલર	आद्वारककाययोग	રઙર

.

.

201212 17:070-			~~
आहारमिश्रकाययोग आहारमिश्रकाययोग		कल्पव्यवहार	९८
आहारसंक्ष	કરક	कल्प्याकल्प्य	९८
	इ	कल्याणनामधेय	१२१
शन्द्रिय	१३६,१३७,२३२,२६०	कषाय	શ્કર
इन्द्रियपर्याप्ति		कापोतलेत्र्या	૨૮૧ ે
रषुगति	२५५	काय	१३८,३०८
र्धगनीमरण	२९९	काययोग	२७९, ३०८
	२४	कार्मण	२९५
•	, Mice	कार्मणकाय	२९९
ईद्या	રૂપછ	कार्मणकाययोग	રશ્પ
		कालमंगल	ર૬
	उ	कालानुयोग	१५८
বক্ষাৰসূহ	<u> </u>	क्रिया	१८
उत्तराध्ययन	९७	कियाविद्याल	રેસ્સ
उत्पादपूर्व	११४	क्रतिकर्भ	9.0
उत्पाद्।नुच्छेत्	[परिशिष्ट भा. १] २८	रुष्णलेक्या	322
उदीरणोद्य	[પरिशिष्ट भा. २] १६		
उपकरण	રરૂદ્	केवल <b>दर्शन</b>	<b>ડલ, ૧૧૧, ૨</b> ૬૮, ૨૬૦, ૨૮૬
उपकम	७२	कोध	362
उपधिवाक्	११७		₹40
उपयोग	રરૂદ, કર્ર	कोधकषाय	રુષ્ઠ
उपशम	રશ્	क्षपण	<b>૨૧</b> ૬
उपशमसम्यग्दर्शन	ર્વલ	क्षायिक 	१६१,१७२
उपशमसम्यग्दष्टि	१७१	क्षायिकसम्य <del>क्त्व</del>	३९५
उपशान्तकषाय	<b>१८८,१८</b> ९	क्षायिकसम्यग्दष्टि	<i>হ</i> ওহ
उपाध्याय	40	क्षयोपशमिक	१६१,१७२
उपासकाध्ययन	१०२	क्षीणकषाय	१८९
~ 11/1111-44/41		क्षीणकषायवीतराग	
->	ए	क्षीणसंशा	<b>ક</b> ર્ષ્
पकेन्द्रिय	રકટ,રદ્દક	क्षेत्रमंगल	સ્ટ
प्वंभूत	९०	क्षेत्रझ	१२०
	औ	क्षेत्रानुयोग	१५८
औदयिक	१६१		T
औदारिककाययोग	૨૮૬,३१६		१७४
औदारिकमिश्रकाय	योग २९०,३१६	गुण गणवाग	
औपशमिक	१६१,१७२	गुणनाम गोप <del>शिकायनि</del>	55 · · ·
	-	गोमूत्रिकागति गौण्यपद्	200
	ক		¥2/
कर्ता	११९	ŧ	र

248

| कर्ममंगल

રદ્દ

.

. \_

आहारपर्याप्ति

कर्मप्रवाद

•

**झाणनिर्द्यात्ति** 

१२१

www.jainelibrary.org

રર્સ્

	च	दर्शन	<b>શ્કલ,શ્ક</b> ર,શ્ક૭.શ્કટ
चक्षुर्वर्शन	૨૭૧,૨૮૨		<b>૧</b> ૪૬, ૨૮૨, ૨૮૪, ૨૮५
चश्चीरान्द्रिय	288	दृष्टिवाद	१०९
चतुरिन्द्रिय		देव	203
	રક્ષક,રષ્ઠ૮	देवगति	२०३
<b>चतुर्विंशतिस्तव</b>	<i>२,</i> ६	देशसत्य	११८
चन्द्रप्रक्षति	१०९	द्रव्य	८३,३८६
चयनलब्धि	१२४	द्रध्यमन	24.9
च्यावित	રર	द्रव्यमल	રર
च्युत	રર	द्रव्यमंगल	૨૦,૨૨
चितन्य	<b>૧</b> ૪५	द्रव्यार्थिक	<য
	3	द्रव्यानुयोग	२५८ १५८
	_	द्रव्येन्द्रिय	રવર
<b>छग्रस्थ</b> जेन्द्र	१८८,१९०	द्वान्द्रिय द्वान्द्रिय	
छेदोपस्थापक	<b>३</b> ७२		રકર,રઇ૮,રદ્દક
छेदोपस्थापन <b>शुद्धि</b>	संयम ३७०	द्वीपसागर <b>प्रह्वदित</b>	११०
	অ		घ
जनपद्सत्य	११८	धारणा	રૂપ્ષ
जन्तु	१२०	धुवावग्रह	<b>२</b> ५७
जन्तु जम्बुद्वीपप्रक्षप्ति	११०	-	न
जलगता	११३	नपुंसक	૨૪૧,૨૪૨
जलगता जाति		नय	२३२,२७२ ८३
जीव	<i>2</i> /3	नरकगति	
जीवसमास	११९	नारकगति	२०१,३०२
	१३१	नाथधर्मकथा	२०१
जीवस्थान 	৬৫		१०१
হ্বান	३५३,३६३,३८४	नामपद्	୧୧
झानप्रवाद १	<b>४२,१४३,१४</b> ६,१४७,३६४	नाममंगल	१७,१९
	त्त	नामसत्य	११७
तदुभयवक्तव्यता	८२	निकृतिवाक्	१२७
तिर्थग्गति	202	निक्षेप	१०
तीर्थकर	46	निरतगाति	२०१
तेजोलेश्या	્રે <i>ડ</i> ૨૮૧	निर्चेदनी	<b>१०</b> ५
राजाल्डरपा तै <b>जस्काय</b>		निषिद्धिका	९८
	২৩২	नीललेश्या	<b>३</b> ८९
त्यक्त	२६	नैगमनय	<b>C</b> 8
त्रसकाय	રહષ્ઠ	नोगौण्यपद्	55
त्रिखण्डघरणीश	५८		4
श्रीस्ट्रिय	રક્ષર,રકટ,રદ્દક	पद्मलेख्या	३९०
	द	परसमयवक्तव्यता	۲,5 دع
द्रावैकालिक	<b>৫</b> ৩	परिणाम	दर् १८०
A 41 A 411 (CA 49	<b>SS</b> 1	417414	100

,

परिग्रहसंग	ક્ષ્ય [	वाद्यनिर्वृत्ति	२३४
परिद्वारशुद्धिसंयत	३७०,३७१,३७२	-	~~-
पर्याप्त 🗌	२५४,२६७	শ	
पर्याप्ति	રલહ	भक्तप्रत्याख्यान	રષ્ઠ
पर्याय	28	भव्य	१५०
पर्यार्थिक	୯୫	भव्यनोभागमद्रज्य	રદ્
पञ्चादानुपूर्वी	કર	भव्यसिद्ध	રૂৎ૨,૨૧૪
पाणिमुक्तागति	300	भाव	૨૧
पारिणामिक	१६१	भावमन	રષ્
पुद्रल	११९	भावमल	રૂર
पुरुष	રક્ષર	भावमंगल	રৎ,રર
पुरुष पूर्वगत	११२	भावलेक्या	કર્
पूर्वानुपूर्वी	હરૂ	भावसत्य	११८
पैशुन्य	११७	भावानुयोग	<b>ર</b> લ્ટ
पंचेन्द्रिय	<b>२४</b> ६,२४८,२६४	भावेन्द्रिय	રરૂદ
पंचेन्द्रियजाति	રદ્દછ	માષાપર્યાપ્તિ	244
पुंचेद	ર્ડર	भोक्ता	११९
पुण्डरीक पुण्डरीक	९८	म	
प्रतिक्रमण	9,0		54-13
प्रतिपक्षपद	৩হ	मतिश्चान	રેલ્ઇ
प्रवीचार	રરે,રર	मत्यज्ञान	३५८
प्रतीत्यसत्य	रे१८	मनस् 	305 - 75 A 75 -
प्रत्यक्ष	१३५	मनःपर्वय	९४,३५८,३६०
प्रत्याख्यान	१२१	मनःपर्याप्ति	२५५
प्रत्येकअनन्तकाय	২৩২	मनःप्रवीचार	<b>ર</b> ર્<
प्रत्येकदारीर	२६८	मनुष्य	२०३
प्रथमानुयोग	११२	मनुष्य्गति	२०२
प्रमत्तसंयत	१७६	मनोयोग	२७९,३०८
प्रम(णपद्		महाकरूप्य	९८
प्ररूपणा	<b>ઝ</b> શ્ર્	महापुंडरीक	९८
प्रश्नव्याकरण	२०४	महामंडलीक	प्ट
সাগ	રંબદ, કશ્ર	महाराज	40
प्रणावाय	१२२	मान	३५०
সাল্যা	११९	मानकषाय	રુષ્ઠ
प्राधान्यपद	પ્રદ	मानी	<b>१</b> २०
प्रायोपगमन	২ঽ	माया	३५०
	1	मायाकषाय	રક્ષ્
	<b>i</b> .	मायागता	११३
बादर	રકર,રદ્દહ	मायूरी	१२०
बाद्रकर्म	રષર !	मार्गण	१३१

••

<b>મિ</b> খ্यা <b>द</b> र्शनवाक्	220	विद्यानुवाद्	१२१
मिथ्यादृष्टि	१६२,२६२,२७४	विपाकसूत्र	१०७
ਸਿ਼ਬਸਂਧਲ	ર૮	विभंगन्नान	રુષ૮
मैथुनसंश	ક્ષરપ	विष्णु	<b>२</b> १०
मोषमनोयोग	२८०,२८१	वीर्यानुप्रवाद	१९५
मंग	રર	<b>बृ</b> ति	ર ૨૭,૧૪૮
ਸ਼ਂਧਲ	રૂર,રૂર,રુઝ	वेद	<b>શ્</b> ર, ૧૪૦, ૧૪૨
मंडलीक 🦾	419	वद्क	ર૬૮
	य	वेदकसम्यग्द <b>ष्टि</b>	१७१
यथाख्यातवि <b>द्वार</b> शुरि	द्वेसंयत ३७१	चेद्कसम्यक्त्व	३९५
यथाख्यातसंयत	રહર	चेदनाकृत्स्नप्राभृत	१२५
यथातथानुपूर्वी	છર	वैक्रियिक	२९१
योग	880, 288	वैन्नियिककाययोग	२९१
योगी	१२०	वैक्रियिकमिश्रकाययोग	૨૬૧,૨૬૨
	-	व्यवहार	<b>4</b> 8
<u>^</u>	र	व्याख्याप्रज्ञति	१०१,११०
रतिबाक्	११७	ब्यंजननय	୵ୡ
रसननिर्न्रुचि	<b>२३</b> ५	व्यंजनावग्रह	રૂપ્પ
ব্যর্জা	40	হা	
रूपगता	११३	-	4.5
रूपप्रवत्विार	રર્	<b>शब्दनय</b>	65 950
रूपसत्य	<i>११७</i>	ज्ञाब्दप्रवीचार 	<b>૨</b> ३९
	ल स्टब्स्	<b>शरीरपर्याप्ति</b>	244
ਲਵਿਖ	રરફ	रारीरी 	१२०
<b>ल्रां</b> गलिका	२००	शुक्ललेश्या	३९०
लेइया	<b>૧</b> ૪૬,૧૫૦,૨૮૬ ૪૨૧	श्रुतज्ञः <b>न</b>	૬૨,૨૬૭,૨૬૬
<b>ळोक</b> बिन्दुसार	१२२	श्रुताज्ञान	ર્વ૮
<b>ਲો</b> મ	<b>३</b> ५०	প্রাম	২৪৩
	व ।	स	
ৰক্ষা	११९	सचित्तमंगल	૨૮
वचस्	305	सत्ता	१२०
चन्द्रमा	9.9	संस्यप्रवाद्	११६
वस्तु	१७४	सत्यमन	૨૮१
बाग्गुप्ति	११६	सत्यमनीयोग	२८०,२८१
व/ग्योग	२७९,३०८	सत्यमोषमनोयोग	२८०,२८१
<b>घायुकायिक</b>	રહર	सदनुयोग	१५८
विक्षेपणी	204	सद्भावस्थापना	20
विक्रिया	રષ્	समभिरूढ	<b>८</b> ९
			,

(५)

For	Priv:	ate 8	ζP	ersonal	LISP.	Only

www.jainelibrary.org

২३৩

શ્પ૮

ર્વઽ

१२०

বয

## २ अवतरण-गाथा-सूची

२५०,२६७

१८६,३७१

ર'ન્ર્

**হ**৩হ

११०

कम सं. पू. अन्यत्र कहां कम सं. गथा गाथा <u>प</u>्र. अन्यत्र कहां २१८ आहार-सर्राहिंदिय- ४१७ गो जी ११९ र२७ तिण्हं दोण्हं दोण्हं ५२४ गो. जी ५३४ ररेर काऊ काऊ काऊ ४५६ गो. जी ५२९ २२६ तेऊ तेऊ तेऊ ५३४ गो. जी. ५३५ २२३ किण्हा भमरसवण्णा ५३३ पञ्च सं १, १८३ २२१ दस सण्णीणं पाणा ४१८ गो. जी. १३३ २१७ गुण जीवा पजात्ती ४१२ गो जी, ₹ २२४ पम्मा पडमसवण्णा ५३३ पञ्चसं १,१८४ ११८ ५०८ २२९ मणपज्जव परिद्वारा ८२४ गो. जी. ७२९ २१९ जह्न पुण्णापुण्णाईं ४१७ गो जी. २२५ णिम्मूलसंघलाहुव- ५३३ गो जी ( अर्धसमता )

समवाय	१०१	सूत्रकृत्	<b>९२</b> े
समवायद्रव्य	१८ -	सूर्यप्रज्ञासि	११०
सम्यक्तव	१५१,३९५	संकुट	१२०
सम्यग्दर्शन	<u> १</u> ५१	संग्रह	28
सम्यग्दर्शनवाक्	११७	्संझ	१५२
सम्यग्मिथ्याद्दष्टि	<i>१६६</i>	संज्ञी	१५२,२५९
सयोग	ર્૬ર,ર્૬૨	संयतासंयत	१७३
सयोगकेवली	ह९१	संथम	ર્ક્ષક,રહદ,રહઇ
साधारणदारीर	रद९	संयोग इच्य	१८
साधु	હર	संयोजनासत्य	११८
सामायिक	९६	संचृतिसत्य	११८
सामायिकशुद्धिसंयम	३६९,३७०	संवेदनी	१०५
सामायिकशुद्धिसंयत	২৩২	स्त्री	३४०
सासादन	१६३	स्त्रीचेद	૨੪∘,૨੪१
सासादनसम्यग्दष्टि	१६६	स्थलगता	११३
सिद्ध	ક્રદ	स्थानांग	१००
सिद्धिगति	२०३	स्थापनामंगळ	१९
सुचक्रधर	46	स्थापनासत्य	११८

रुपरान

स्वयंभू

स्पर्शनानुगम

स्पर्शप्रवीचार

स्वेसमयवक्तब्यता

सूशम

सूत्र

÷ •,

सुक्ष्मकर्म

सूदमसांपराय

सक्षमसांपरायशुद्धिसंयत

## (৩)

## ३ प्रतियोंके पाठ-मेद

বৃদ্ধ	पंक्ति	স	अ	п	क	स	मुद्रित
४११	8	सणिव-असण्णी	षु सण्णीसुः	असण्णीस्	सण्णि-असण्णी	स सां	ण्टे-असण्णीस्
४११	દ	पण्णत्ती	ँ पंज			् पज्जत्ती	29
ક્ષર	લ્	-मापेक्षया	-मापे	क्ष्य	59		-मापेक्षया
<b>ક</b> શ્ર	११	-यस्यैकत्वाभाव				-यस्य	चैकत्वाभ/वात्
કરર	3	~संशायां			· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·		-संज्ञाया
કશ્સ	8	लोभोदयस्य		T ·	33		लोभोदय-
કશ્ર	ی	संज्ञान-	संबाबा		•		स झान
ઝશ્ઝ	१	-संज्ञानां	,,	-संब	यां		-संज्ञानां
ક્ષ્ટ્રક	٢	मायाप्रेमयो-	,,	51		યા <b>છે</b> ∖મયો−	
૪१४	१०	प्रभावा	,,	1,		भवा	33
ક્ષર્ય	૬	इंदिया	,,	,,		विया	
કરદ	8	र	परे	प	ų		
৪१७	ર	<b>गत</b> ~-	-ਸਲ-	गल-		•	,,
४१७	8	–घर्–	–गद्	,,			<b>घड</b>
કશ્ટ	ર	–आणापाजेहि	33	1,	–आणापाण(ग	पणिहि -आ	णापाणपाणेहि
४१८	۲	पज्ज-	अपज्ज-	",	57		",
४१८	88	~पज्जत्तरस	11	31		पज्ज	त्तयरस
<b>ક</b> ર્	ર	पदासिं	पदेसिं	पदासिं		पद्	ાસિં
४२०	ર	-विासिट्टे	. 95	-विसेसे		-चि	<b>से</b> हे
ક્ષર૦	११	-भावेण	",	,,	-भावे	हि	,,
કરર	২	छण्णं भेदं	<b>छ</b> लेरसाभेवं	छ-भेद	छ॰मे	दं	"
પ્રરશ	4	মন্ম থায	,,	"	सत्त पाण	२ सत्त '	पाण सत्त पाण
કરર	ৎ	भणदि	भणिदे	,,		¥	रण्णदे
કરવ	8	~त्ताणे	-त्ताणं		-त्तोघे		**
કરદ્	દ્	−जुत्ता	,, স্	चा वि हों।	ते		जुत्ता वि अत्थि
		ৰি अस्थि	,,				<b>77</b>
ક્ષરદ્	ی	-णमोघालाचे -	णं भण्णमाणे	-णमोघाल	वि		"
		भण्णमाणे	मोघाळावे				
પ્રકૃષ્	۲	अपज्ज—-	,,	,,	पज्ज		**
<b>ક</b> રઽ	8	अणाहारिणो	11	अणाहा०			आद्वारिणो
850	ર	पज्जत्तीओ	,,	- 33		2	भपज्जत्तीओ
830	ও	–अधाण	जीवा ण	-जीवाणं			জীৰা গ
કરર	۳ <b>٤</b>	× -	-मोघालावे	27	-मोंबे		-मोघाळावे

.

ષ્ઠરૂર	ર	दंसच				
૦૧૨ ૪૨૬	ર ગ્ર	વસાળ અહિથ	",	,,	सण्णाओ णस्थि	3 7
०२५ ४३६	-	जात्य -दयाणं सदि	"	""		91
०२५ ४३८	१०	· ·	,,	* *	-द्ये। णस्सदि 	17
	8	-माण- <del>जिल्लान</del> -	,,	<u>, "</u>	-माया-	<b>&gt;</b> 1
૪૪૨	<b>২</b>	णिब्वत-	33	णिवत्त	77	"
888	8	भवंति	हवंति	भवांति		भणंति
888	ور	भवंति	<b>इ</b> चंति	भवंति		**
୫୫୫	ર્	अस्थि ———	णरिथ			13
880	Ŕ	ले <b>व</b> -	णेव-	सेव-		ਲੋਬ-
885	<	करणेत्ति	33	"	सण्णेसि	कण्देत्ति
૪५३	ষ্	वाल	,,	**	,,	अण्याण
846	ঽ	<u>पज्ञ</u> ०	,, е	भपजत्तीमो		71
84९	8	काउसुक-	<b>7</b> 9	37		ক্ষান্ত
४६०	१	काउसुक् –	53	79		দার
४६०	8	पज्ज०	73	,,		अपज्जसीओ
830	২	तदिय	3,9	,,	पवं तदिय	,,
800	સ્	<b>द्वंदिया</b> णं	33	"		दंदयाणं
४७१	१	पदो ओदो	3+	एदाओ दो		33
કહર	8	पंचिंदिय-अप	ডিসনা		पंचितिय	
894	٢	अणाहारिणो	13	<b>,</b>	-	आहारिणो
୫७६	۶	सत्त पणि	,,	,,	दस पाण सत्त पाण	,,
୫७८	ર	पज्ज तीओ	15	**		अपज्जत्तीओ
୪७८	દ્	सम्मामित्थाइई		गं,,	सम्मामिच्छार्डु	Ĵui
४८१	ষ্	– ज्जमाणं		णं ज्जमाणं		~ज्जमाणं
<b>ક</b> ટર	ও	पंचिंदियतिरिक	खाणं पंचित्रिय	ति- पंचिति	यतिरि <del>वर</del> ्ष० व	चिंदिय-तिरिक्साण
				पज्जत्ताणं	•	
୫୯୫	ও	×	खइयस∓	मत्तं खद्यर	नम्माइट्ठी खद्यसम्म	तं ,,
855	છ	आद्वारिणो	,,	"		गरेणो अणाहारिणो,
<b>કલ્</b> ર	ও	णव पाण	3 3	,,		णव पाण सत्त प(ण
86/9	8	दव्यभावेहि	द्य्वभावेण	द्व्यभाषे	it.	37
୫୧.୯	২	असण्णिणीओ	.,	* <del>,</del>	सण्णिणीओ	
<b>ક</b> ષ્ટ	- ق	-काउसुक्रलेस्सा			काउसुकले	'' काउलेस्साओ
400	۲	सत्त पाण	"			त्त पाण सत्त पाण
402	4	अजोगी	अजोगो	19		
५०२	ور	असण्णिणो	असण्णिणो	मसण्णिण	रे चे	" व सण्णिणो लेब
		ৰি भरिয	अणुभया वा			सिंग्णणे। वि अस्थि

( ८ )

 $\cdot \cdot \cdot_{i}$ 

	લ૦ઝ	8	पंच णाण	पंच णाण	मणपज्जवके	ৰন্ত-	पंच णाण केवळणा-
			केषलणाणेण	केवलणाणेण	णाणेण विण	r	णेण छ जाण
			छ जाज	ৰিদ্যা শু দা	দ ন্ত দাদ		
	५१०	٩	দন্জন	""	59	अपउंज-	अपज्जत्तीओ
	<b>પ</b> શ્ર	Ę	- <del>છેર</del> સાओ	11	"	•	-लेस्साहि
	લ્શ્વ	8	सागारू० होति	ते,, साग	गार अणागारे।	हि	सागारुवजुत्ता हॉति
			अणा० वा	जुगव	दुवजुत्ता वा ई	र्देति ।	अणागारुवजुत्ता वा
	ૡશ્૨	٩	सम्मत्तसंजद्रप्प		,,	पमत्तसंजद्प्पहा	डे ,,
	५१३	ی	वेद्रोपि	۔ بر	» <b>,</b>	•	-वेदे पि
	ૡશ્વ	8	तासिं	तस्सेव	तासि		37
	ૡશ્વ	ધ્ય	पज्जत्तीओ	,,	,,		अपज्जसीओ
I	હશ્વ	ક્	×	×	×	चत्तारि कसाय	**
I	५१८	6	सागारुवजुत्त	। सागारअणा-	सागार अणा	-	सागाख्वजुत्ता होति
					गारेहिं अणु-		अणागारुवजुत्ता वा
				वदुवजुत्ता व			-
. 1	<b>ધર</b> ૮	ર	मणुसिणी-उव			,	39
ı	५३०	ह्	णेव सण्णिणाः			-	णेव साण्णिणीओ
							णेव असण्णिणीमो,
e	ૡ૨૧	બ	देवगदीप	देवगदीणं	देवगदीप		देवगदीप
	५३२	હ્		· -	एदं ण घडवे	r	37
	પરૂર	8	•	णीळायण-	णीऌायण-	•	णीळा पुण
	- • •	-		णीलगुणिय-		-	णीलगुलिय-
t	भइइ	ર	पउबसवण्णा	3,	,,	पउमसवण्णा	
•	422	Ę	<mark>द</mark> ुचित्तु	वुभिष्वु	·· ·,		बु <b>चि</b> स्तु
t	ધરૂર	9	-लेस्साणं	-छेस्साइं	-लेस्साणं		छेस्साणं
T	५३५	٤	भावादो	,,	,,	भावदो	**
	439	ę	दो गदि	"	1)		वेत्रगदी
t	<b>લ્</b> ષ્ઠર	৩	<b>433</b> -		33		স্বযুক্ত্য-
,	<b>હ</b> લ્સ	२ः	पज्ज- भाषारिणो अणाव	धरिणे "	,,		आहारिणे।
	<u></u> ધ્યર	فع		,,	• •		अपञ्चलीओ
Ţ	<b>લ્લ</b> ક્ષ	9	पज्यसीओ	37	,,	I.	अपज्यत्तीओ
	نوتعلم	R	जाज	11	,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,		"
t	لوتولع		दम्बेण काउ सुक	द्व्वेण का	उत्तुक दब्बेण र	नारसुक्र०	द्ख्येण काउ-सुक-
			मज्जिमा ्तेउलेस्स्			। तेडळे०	मज्झिम-तेउल्लेस्सा
			भाषेण	लेस्सा भारे		1	भावेण मजिझमा
				मज्झिमा ते	ন্দ্র-		तेउळेस्साः
				ळेस्साभो			

(	१	0	)
---	---	---	---

ૡૡઽ	१	द्ष्वेण काउसुक	• द्वेण काउर्	नुक-दब्वेण स	काउसक-	į	द्ख्वेण काउ-सुक्क-
		_	ेल्सा	मज्झिम	।। तेउलेस्स		ज्झिम- तेउलेस्सा
ૡૡૡ	દ્	−यारुहिय	"	,,		-मारुहिय	
५६०	হ	पुणोहिणा	पुणोर्हाणः	पुणोहि		पुणोदिण्ण	-
બદ્દર્	৩	-सुक्ष-उक्कस्स-	. ,,	,n		जहण्ण	द्व्वेण काउ-सुक्क
		সন্থতা—				য	उक्तरस-तेउ-जहण्ण-
બદ્દા	દ	~पादिं्कर-	,1	पीदिंकर			,,
५६८	হ–৩	एवं देवगदीए	"	"9		q	,, वं देवगदी । सिद्ध-
		सिदमंगो				ब	दीए सिद्धभंगो।
બદ્દર	જ	णेय अस्ंजदा	,,	51		Ì	गेव असंजदा णेव
		संजदा वि				i	संजदा वि ।
५६९	8		,,,	.,	वत्तव्व		55
५६९	ৎ		पुढविवणप्फइ	पुढइ वणष्फ	ίξ.		पुढइ−वणप्फई
400	ધ્ય	सण्णिणो	39	59			असण्णिणो
५७१	દ્	आद्वारिणो	,,				ारिणो अणाहारिणे।
408	१	सण्णिणो	5 9	,,		अस	णिणणो
५७५	ৎ	असंजमोस-	,,	,, अ	स¶्धमोस-		33
५८१	ર		ोसिंचेष	, 1			**
		-	पज्जत्ताणं				
<b>૧૮</b> ૨		द्ध्वेण छलेस्सा	**	13	<b>'</b> 9	<b>स्</b> ब्व	–भावेहि छ लेस्सा
५८६	Ŗ	पज्जत्तीओ	"	,, अ	पज्जत्तीओ		2 <b>9</b>
५९१	१	कायाणुवादेण	3 3	"		काय	णुवादेण ओघाला <b>घे</b>
_	_	•					भूण्णमाणे
५९१		अट्ठावीस वा	,,	,,		_	सोलस वा
५९१	8 4	ोवीस वा तेतीस व	π,,	<b>1</b> 1		तेर्त	सि वा, चउवीस वा
	_	चउतीस वा					•
५९१		रताळीस	"	"			च(यालीस
ૡૡ૱	३	णिब्धसिपज्आत्त-	· ,,	णिब्वत्तिअ			
<b>ૡ</b> ૡ૨	χο	तसकाइया पंचिंदिय	या तसकाइया	तसकाइया	[ दुावहा		तसकाइया दुषिद्दा
		दुविहा पज्जत्ता जन्म					पंचिंदिया अपंचिं-
		अपज्जत्ता । पंचिं दिया दुविहा सर्ण्ण	गर्या दुविहा ने तन्त्रचा आग	पाचाद्या - स्रिणिणणे व	दुावहा भग्ग		देया । पंचिंदिया दुविहा साण्णिणो
		विया खुविहा सण्ण असण्णी सण्णी	ापडजत्ता अप उ <b>जत्ता स</b> ण्णि	- साण्णणाः । तित्तातोः । स्	नत्त- राग्रिस्ट		डु।बहा साण्णणा असण्णिणो । सण्णि-
	-	जसण्ण सण्ण दु <b>षिहा प</b> ज्जत्ता अ					भेताणणणा ग्लाणण- णो दुबिहा पज्जत्ता
		ज्जत्ता । असण्णी				34	पज्जत्ता। असण्णि
		दुविद्दा पज्जत्ता				t	गे दुविद्वा पज्जत्ता
		अपज्जत्ता ।	ज्जता ।	अपज्ज० ।			अपज्जत्ता।
49,4	۲		पत्तेयं पत्तेयं	पत्तेयं			,,

•

## ( ? ? )

Ê00	१	वीप	79	,,	प	पदे
દ્વર	ર	तिण्णि	,		-	दोणिण
६०३	8	अकसाआ	1,	अकसाओ		,,
608	ર	मूलोघब्भुउर्ज्जाव-		,,	मूलोघब्भुत्तजीव	<b>i ,,</b>
६०६	২	पज्जर्ताओ	37	>>		अपजत्तीमो
६०६	,,	तिण्णिगदी	,, ,,	तिरि० व	गदि	तिरिक् <b>खगदी</b>
६०९	â	आहारिणे	, ,,	,,	•	आहारिणो
				<i>,</i> ,		अणाहारिणो,
६०९	१२	-मुवसाणिय-	<b>, 1</b>	79	-मेव पार्णाय-	
६१०	ষ	पदं	,,	,,	प्रबं	"
६१०	હ્	-काइयणिब्बात्ति		3,9	""	-काइयणिव्वत्ति-
		पज्जत्ता-	पज्जत्ता−	×		पजत्तापजत्ताणं
ह१०	ৎ	पजत्तापज्जत्तणाः	- 1,	,,	τ	ाजत्तणामकम्मोदय
		<b>मक</b> म्मे(द्याणं	-			तेउकारयाणं
६११	ર	चणिज्ञ− `	,,	,,	तवाणिज्ज-	
६११	,,	पज्जत्तार्ण	-	<b>उजत्ता</b> पंउजत्त		<u>,,</u> पज्जसाण
દર્શ્ર	ઁર	अण्णेयवण्णालावे		"	अणेयवण्णा	
		गुछिवसा ।			तोवि रूढिवसा	3 <b>9</b>
६१४	৩	भवसिद्धिया	1,	,,		भवसिद्धिया अभव-
		• • • • • • • • • •	•,	.,		सिद्धिया,
દ્દર્પ્	۲	पज्जत्तीओ	,,	<b>5</b> 7	अपज्जत्तीओ	1
६२०	१०	તેસિંર ર	तेसि	तेसिं २		तेसि
દરશ	Ś.	वणप्फइकाओ वण	ष्फइ-भंगो	55		
		त्ति भंगो				
દરર	ħ	सत्त पाण	,	सत्त पाण २		सत्त पाण सत्त पाण
<b>६२</b> ७	१	-इट्टिप्पहुडि -इ	द्विणप्पहुडि	<b>इ</b> ट्रिप्पहुडि		<b>y</b> ,
হ২৩	ঽ	चतुगदिगदाओ स	ब्र बडगदिगदी	ओ	चउगदिमदीदेा	,,
হহও	બ	द्व्व-भावाद्व	,,	"	दब्व-भावेहिं अलेस्स	π,,
		छ लेस्साओ				
દરૂર	8	इट्टिदे।			इदि दो	
દ્રરૂષ્ઠ	8	-जोगीणं भंगो	-जोगीमंगो	در آ		जोगि-भंगो
દરૂક	۲	ताजोवि	,,	,,	ताओ वि	"
		सण्णित्तिब्भु	,,	संषिणत्तब्भु		
દ્દપષ્ઠ				रोगेव उत्ताण	-जोगे वहत्ताणं	-जोगे वहंताणं
	*		उज्जत्ताणं			
દ્વપ્ર	\$	<b>छ्य्वण्णक</b> ालिय-	, <b>7</b>		छन्वण्णेरालिय	
A. J.	<b>x</b>	परमाणाणं	7 <b>7</b>	**	परमाणूणं	
દ્દપુષ્ઠ	5	परमाणादि परमाणादि	·		परमाण्हि सह	:,
4.10	~	परमाजावि सद्दामिलिदाणं	25	<b>33</b>	मिलिदाणं	· 7
		referring de a			1. 1. m. Jr. 1	

		कालोद्-				
e ha		নাভাব− - <b>केव</b> लि			काचोद-	<u></u>
દ્ધુષ્ઠ		-कवाळ अयोग-	"	13	39	केबालेस्स
६५८			• • •	"		आयु
ह५९		समणा	सभणा	समणा	समत्तो •	समणा
६६०	-	<b>एबंध</b> -	59	"	बंध-	53
દ્દ્		विरद्वाक्षाळाव		." 、	विरहकालोच-	" ~ ~ ~ ~
६७२	۲	तंजहा णेद्ववा	तम्हा णेत्व्व	ा जं जहा णंद्	ञा जहा मूलोघो णीवो	
<b>_</b>		<u> </u>			तं जहा णेद्व्या	तहाँ णेदव्वा
६८४		सण्णिणो			55	सार्वणणो असण्णणो
900	X	अणिद्यित्तं अ		अणियहित्तं		अणिदियत्तं
		_ \	पि अस्थि			
900		छ लेस्साओ	"	<b>,</b> ,	अलेस्साओ	**
190.4	4	आहारिणो	<b>9</b> 9	<b>33</b>		आहारिणे
		अणाद्वारिणो				
હશ્ર		मुणं मुप	,,	55	माण-माया-	"
ওথ্ই	ঽ	× १	0.8.2-9	×	_	×
७२६	9	पापाणं	**	1,	-णाणाणि बत्तव्वाणि	"
		वत्तव्वाणं				
७२६		तिरिण्ण	",	59	तेप	**
৩২৩	१	रयकेसु सत्ती	सु "	,, <b>ş</b>	यरेसु संतेसु	19
७२७	ર	-विवक्सियाप	गाण- ,,	<b>'</b> 9	37	विवकिखयणाग-
৩২৩	৩	–तं पिच्छाग	पद्- ,,	"	−तं पच्छायद्∽	त्तपच्छायद्
ওই০	8	मूलोघोव्य ग	पूलोघौब्व म्	<b>र्</b> छोधौ		मूलोघो व्व
ওইই	৩	विवहिदो	,,,	·, ,,	<b>प</b> वं छेदोवट्टावण~	
		बद्धावण			- <b>-</b>	• -
640	१	सीणसण्णावि	ओ ,, स	गैणकसाओ		
७५१	ર	किण्द-णील	किण्णलेस्सा	ओ किण्ण-ण	रिल०	किण्हलेस्सा
		काउलेस्साओ				
હલ્પ્ર	ર	भावेण भावे	ण छ हेस्सा	ओ। ,,		भावेण किण्हलेस्सा
		षि एवं		17		
હદ્દર	৩	पंचिदियजावि		19	पंच जादीओ	3 9
500	8	×	पिटिय		पिंडियाप	,,
હરક	Ę	तिब्व लाह		""	तिव्वलोद्दाणं	-
८०१	ષ્ટે			ন্বন্তি अजोंगि		'' सजोगिकेघछि
८०१	ષ	अण्णलेस्सा		55		भलेस्साणं
८१६	د	वेद्गसम्मा	+ -	>>	वेदगसम्मारहि-	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
~14	-	प् <b>यु</b> हि			पमत्त-	_
		-1810	"	"	<b>171 \1</b>	11

(१२)

. .

૮ર૨	U	<b>मोरा</b> लिय	"	औयरिय	"	99
૮રર	۲	तत्थुप्पत्तिहि- व	तत्थुष्पर्साहि-		तत्थुप्पत्ति-	
		মন্বা-	भवा-	35	સંમવા-	
૮રર	९	प <del>ाच्छम<b>य</b>-</del>	11	पछागद		पच्छागर्-
<২३	१	पडिवज्जति	**	<b>,</b> ,	पडिषज्जंति	"
૮૨૨	२	उबसंघडिद-	उवसंहरिद-	,,		**
૮૨૨	ર	सहो उदिण्णाणं	,,	,,	तत्तो ओव्णिणणं	,,
૮૨૪	ર	सेसपज्जाणे	,,	,,	सेलयं जाणे	39
૮૨५	٩	एसत्था			एसस्थोः	
		वत्तव्या	,,	,,	वत्तव्वे	51
૮૨९	S.	सांसणसम्मा	,,	39		सण्जिसासणसम्मा-
୯३୫	૪	चत्तारि जोग- सब्वजोगो	चत्तारि जोग असंजमो सञ्वजोगो	चत्तारि जे सध्य जोव		चत्तारि जोग- असचमोसबचि- जोगो

(१३)

# ४ प्रतियोंमें छूटे हुए पाठ.

মন্থ	पांक्ति	प्रति	कहांसे			নহানক
છુલ્લ	સ્	અ.				ओरालियकावजोगो
ક્ષક	ર	अ. आ. क.				छ अपजत्तीओ,
400	ی		मणुस्स-सम्मा	मेच्छारट्व	ीणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
<b>ધર</b> 8	છ	આ,	मणुसिणी-विदि	य-		अणागारुबजुत्ता वा।
હરૂર	Ł	आ.	दब्धेण छ लेरस	त्तओ		केवलदंसण,
પક્ષર	ક્ષ	था.	×			सार्यसम्मरोण विणा
ક્ષ્ઠક્ષ	۶	आ.	तेसिं चेय पज्जर	त्रणं		अणागारुबजुत्ता वा।
५६०	و	<b>व</b> ह.	<b>पवमिस्थिपुरिस</b>	<b>i</b> —		माळाषो धत्तव्वो
લદ્દર	१०	अ. आ. क.	पज्जत्तकाले	***	•••	पम्मलेस्सा,
<b>પ</b> દ્દ	Ę	ચ.	मिष्ड्याइट्टीण-		•••	को तत्थ
400	९	थ. था. क.	भावेण		***	काउलेस्सा,
996	ધ્ય	अ. क.				तसकाओ,
<b>૧૮</b> ૬	R	अ. भा. क.				सत्त पाण,
<b>લ્</b> ૧ર	لع	અ. આ.	तसफाइया	•••		विवळिंदिया सि

## (११)

600	t.	क.	पइंदियजादि आदी	अवगद्वेदो वि अरिथ,
•	تم در		0.0	जनगद्वद्या व जात्य, जत्तारि कसाय,
६३०	લ્	भ. आ. क		•
६३६	ف	अ. आ. क.	असम्बमोस	··· णवरि २
દ્દપુષ્ઠ	ৎ	ગ.	क्वाडगद्	चेव भव्दि,
દ્દબદ	ম	आ.	ओरालियमिस्सकायजोगि	तसकाओ,
६६२	र	<b>ጣ</b> .	वेडव्वियकायजोगि	अणागारुवजुत्ता व(।
६७८	१	્ચ.	तेसि चेव पज्जत्ताणं	अणागीरुवजुत्ता वा।
६८७	ર	अ.	तेसि चेव अपजाराणं	अणगारुवजुत्ता वा।
ह९८	લ	अ. अ(. क.	दे जीवसमासा	••• -समासो वि अत्थि
908	९	અ. આ. જા.		छ अपज्जत्तीओ,
900	9	ञ. आ. क.	मणुसगदी	… कोधकसाओ,
৩१२	8	आ.	कोधकसाय-विदिय~ …	अणागारुवजुत्ता वा।
৩१२	१०	અ.	छोभकसायस्स	वस्तक्वो
હશ્છ	২	अ. अ. क.	सागार	… −दुवजुत्ता वा ।
ও१६	8	अ. आ. क.		चत्तारि गर्दाओ,
৩१८	દ્	ञ. आ. क.		चत्तारि गदीओ,
৩ইহ	ર	अ. आ. क.		छ अपज्जत्तीओ,
584	٤	अ, आ, क.		चचारि गदीओ,
644	૪	अ, भा, क,	·	चत्तारि गदीओ,
ওহণ্ড	8	अ. आ. क.		छ अपज्जत्तीओ
७६९	ર	आ.	तेसिं चेव पड्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा।
19199	સ	अ. आ.	तेडलेस्सा-अप	अणागारुवजुत्ता वा।
૭૮૪	٤	<b>अ.</b>	सागारुव	… −रुवज्रुत्ता वा ।
ଌ୵ଌ	ર	ক.	तेसिं चेव पञ्जत्ताणं	अणागाहवजुत्ता वा l
924		অ. আ. ক	तिणिण णाणाणि	असंजमो,
285	. 2	अ.	वेद्कसम्माइडि-पमत्त	अणागारुवजुत्ता वा।
८१७	ર	अ	वेदकसम्माइहि-अप्प	अणागारुवजुत्ता वा।
			अणाहारि~असंजद्	अणागारुवजुत्ता वा।

277. j.

••

۰,

### (१५)

## ५ विशेष टिप्पण ( पुस्तक १ )

पूरु एंठ

R.

१५७

" ण च संतमस्थमागमें। ण परूवेइ तस्स अत्थावयत्तप्पसंगादो " में आये हुए ' अत्थावयत्तप्पसंगादो ' का अर्थ 'अर्थापदत्त्व अर्थात् अनर्थकपदत्वका प्रसंग प्राप्त हो जायगा ' ऐसा किया गया है। जयधवला अ. प्र. पृ. ५१२ में भी ' ण च संतमत्थं ण परूवेदि सुत्तं, तस्स अब्वाखयत्तदोसप्पसंगादो ' इस, भकारका वाक्य पाया जाता है। जिसमें आये हुए 'अब्वाखयत्तदोसप्पसंगादो ' का अर्थ 'अव्यापकत्वदोषका प्रसंग प्राप्त हो जायगा ' होता है। धवलाके पाठसे जयधवलाका पाठ शुद्ध प्रतीत होता है।

### ( पुस्तक २ )

४११ ५ पदासिं विधिं पुध पुध उवसंदरिसणा परूवणा । जयध. अ. पू. ६३१.

४३५ ४ उदीरणाए चेव उदयो उदीरणोद्यो ति । जयध. अ. पू. ५२६.

> इस पंक्तिके अनुसार 'उदीरणामें ही होनेवाले उदयको उद्दीरणोदय कहते हैं ' ऐसा अर्थ होता है। परन्तु हमने अर्थ करते समय उद्दीरणोदयका उद्दीरणा तथा उदय ऐसा अर्थ किया है। इसका कारण यह है कि आठवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें भय प्रकृतिकी उद्दीरणा व्युच्छित्ति तथा उदय व्युच्छित्ति होती है।

४४८ ८ १ 'णिरया किण्हा ' गो. जी. ४९६. णेरइया णं भंते ! सब्बे समघन्ना ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे । से केणट्ठेणं भंते ! एवं युच्चइ— नेरइया नो सब्वे समवन्ना । गोयमा ! णेरइया दुविद्द पन्नत्ता, तं जहा—पुक्वोववन्नगा य पच्छोववन्नगा य । तत्थ णं जे ते पुब्वोववन्नगा ते णं विसुद्धवन्नतरागा, तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते णं अविसुद्धवन्नतरागा । प्रज्ञा. १७. १. ३.

Jain Education International

٩.

~

.

# जैन साहित्य उद्धारक फंड

तथा

कारंजा जैन ग्रंथ मालाओंमें

प्रो. हीरालाल जैन द्वारा आधुनिक ढंगसे सुसम्पादित होकर प्रकाशित

## जैन साहित्यके अनुपम ग्रंथ

प्रत्येक ग्रंथ सुविस्तृत भूमिका, पाठभेद, टिप्पण ब अनुकमणिकाओं आदिसे खूव सुगम और उपयोगी बनाया गया है।

१ पर्खंडागम-( धवलसिद्धान्त ) हिन्दी अनुवाद सहित-

भाग १ पुस्तकाकार १०), शाखाकार १५)

भाग २ ,, १०), ,, १२) यह भगवान् महावीर स्वामीकी द्वादशांग वाणीसे सीधा संबन्ध रखनेवाला, अल्पन्त प्राचीन, जैन सिद्धान्तका खूब गहन और विस्तृत विवेचन करनेवाला सर्वोपीर प्रमाण प्रंथ है। श्रुतपंचमीकी पूजा इसी ग्रंथकी रचनाके उपलक्ष्यमें प्रचलित हुई।

२ यशोधरचरित—पुष्पदंतकृत अपश्रंश काव्य… … … … इसमें यशोधर महाराजका अव्यंत रोचक वर्णन सुन्दर काव्यके रूपमें किया गया है । इसका सम्पादन डा. पी. एल. वैद्य द्वारा हुआ है ।

३ नागकुमारचरित--पुष्पदंतकृत अपभ्रंश काव्य... ... ... ... इसमें नागकुमारके सुन्दर और शिक्षापूर्ण जीवनचरित्र द्वारा श्रुतपंचमी विधानकी महिमा बतलाई गई है। यह काव्य अत्यंत उत्कृष्ट और रोचक है।

8 करकंडुचरित—मुनि कनकामरकृत अपम्रंश काव्य… … … … इसमें करकंडु महाराजका चरित्र वर्णन किया गया है, जिससे जिनपूजाका माहात्म्य प्रगट होता है। इससे धाराशिवकी जैन गुफाओं तथा दक्षिणके शिल्लाहार राजवंशके इतिहास पर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है।

E ]

- ५ श्रावकधर्मदोहा--हिन्दी अनुवाद सहित··· ··· ··· ··· २॥) इसमें श्रावकोंके त्रतों व शीलोंका वड़ाही सुन्दर उपदेश पाया जाता है । इसकी रचना दोहा छंदमें हुई है । प्रत्येक दोहा काव्यकला पूर्ण और मनन करने योग्य है।
- ६ पाहुडदोहा--हिन्दी अनुवाद सहित… … … … … … २॥) इसमें दोहा छंदोंद्रारा अध्यात्मरसकी अनुपम गंगबहाई गई है जो अवगाहन करने योग्य है।